

बृहत्स्तोत्ररत्नाकरः

== द्वितीयो भागः ==

भागद्वयात्मकस्य

स्तोत्रसंख्या ४४५



नारायण राम आचार्य, 'काव्यतीर्थ'

इत्येतैः संकलय्य संशोधितः

चतुर्दशं संस्करणम् १९५३

निर्णयसागर प्रेस, मुंबई २

मूल्यं ३ रूप्यकाः

[ All rights reserved ]

— प्रिंटर पब्लिशर —

श्रीमती लक्ष्मीबाई नारायण चौधरी, निर्णयसागर प्रेस,  
२६।२८ कोलभाट स्ट्रीट, मुंबई नं. २

## निवेदन

भारतीय पुराण-ग्रंथ तो एक अनोखा सागर एवं सद्भक्तिधाराका अमिट स्रोत है। अत एव संसारी या मुमुक्षु जनके लिये वह जीवन ही है। क्योंकि, प्राचीन महर्षियोंने स्वान्तःसुखके लिये और सामान्य जनताके हितार्थ अपने अनुभव तथा प्रतिभाके द्वारा उसमें अपना अन्तर्निधि खोल कर रख दिया है। प्रस्तुत संकलन उस निधिसे चुने हुए कतिपय स्तोत्ररत्नोंका एक संग्रह है।

इस ग्रंथका पहला भाग प्रकाशित होकर आज करीब बारह मास हो चुके; दूसरा भाग भी तुरंतही प्रकाशित करनेका विज्ञापन प्रकट भी हो चुका था; जिस कारण हमारे माननीय पाठक-वर्गसे हरदिन पूछताछ होती रही, कि दूसरा भाग कब प्रकाशित होगा; परन्तु हम अन्य कार्यमें व्यस्त होनेसे आजतक वह प्रकाशित न हो सका, जिसके लिये उनकी क्षमा-याचनाका उल्लेख यहां अनिवार्य समझते हैं।

इस ग्रन्थद्वारा पाठकको ऐहिक या पारत्रिक लाभ प्राप्त हो जाय तो हम अपने श्रम सफल समझेंगे।

**नारायण राम आचार्य**

## हार्दिक धन्यवाद



इस अनमोल ग्रंथकी संकलनामें स्तोत्रग्रंथ या अन्य सहयोग देकर जिन्होंने हमें अनुगृहीत किया है, एवं जिनकी रचनाएँ इसमें अन्तर्गत करनेके कारण इस ग्रंथकी उपादेयतामें वृद्धि हुई है उन सभी महानुभावोंका यहां नामनिर्देश करना असंभाव्य है, अत एव हम उन्हें कृतज्ञतापुरःसर हार्दिक धन्यवाद देते हैं ।

संपादक

# बृहत्स्तोत्ररत्नाकरानुक्रमः

( द्वितीयो भागः )

स्तोत्राङ्कः	स्तोत्रम्	पृ.	स्तोत्राङ्कः	स्तोत्रम्	पृ.
२१२	मन्त्रमातृकापुष्पमा- लास्तवः	४२३		स्तोत्रम्	४७८
२१३	चण्डीकुचपद्माशिका	४२५	२२४	भगवतीपद्यपुष्पां- जलिस्तोत्रम्	४८०
२१४	त्रिपुरसुन्दरीमान- सिकोपचारपूजा- स्तोत्रम्	४३४	२२५	भवानीस्तुतिः	४८३
२१५	श्रीचक्रराजवर्णनम्	४४९	२२६	देवीभुजंगप्रयात- स्तोत्रम्	४८४
२१६	देवीगीतिशतकम्	४५२	२२७	गौरीदशकस्तोत्रम्	४८६
२१७	त्रिपुरसुन्दरीमानस- पूजनस्तोत्रम्	४६०	२२८	देवीपदपंकजाष्टकम्	४८७
२१८	परा मानसिका पूजा	४६७	२२९	मातंगीषड्कम्	४८८
२१९	विन्ध्यवासिनी- स्तोत्रम्	४७४	२३०	श्रीभुवनेश्वरी- स्तोत्रम्	४८९
२२०	वंशवृद्धिकरं वंशकवचम्	४७५	२३१	इन्द्राक्षीस्तोत्रम्	४९५
२२१	ललितापञ्चकम्	४७७	२३२	देवीमहिम्नः स्तोत्रम्	४९७
२२२	विन्ध्येश्वरीस्तोत्रम्	४७८	२३३	कालिकाकवचम्	५०४
२२३	भवानीभुजंग-		२३४	वरदवल्लभास्तोत्रम्	५०६
			२३५	लघुस्तवः	५०७
			२३६	ताराष्टकम्	५१०
			२३७	अंबास्तवः	५११
			२३८	चर्चास्तवः	५१५

स्तोत्राङ्कः	स्तोत्रम्	पृ.
२३९	श्यामलादण्डकम्	५१८
२४०	मोहिनीकवचम्	५२१
२४१	मोहिन्यर्गलास्तोत्रम्	५२२
२४२	अन्नपूर्णास्तोत्रम्	५२४
❀ लक्ष्मीस्तोत्राणि ❀		
२४३	महालक्ष्म्यष्टकस्तवः	५२७
२४४	श्रीकनक ( लक्ष्मी )- धारास्तवः	५२७
२४५	देवकृतलक्ष्मी- स्तोत्रम्	५२९
२४६	राधाकवचम्	५३०
२४७	श्रीस्तोत्रम्	५३२
२४८	लक्ष्मीलहरी	५३३
२४९	सिद्धिलक्ष्मीस्तोत्रम्	५३८
२५०	श्रीस्तवः	५४०
२५१	श्रीलक्ष्म्यष्टोत्तर- शतनामस्तोत्रम्	५४२
२५२	महालक्ष्मीकवचम्	५४५
२५३	श्रीस्तुतिः	५४५
२५४	लक्ष्मीस्तोत्रम्	५४८
२५५	लक्ष्मीहृदयस्तोत्रम्	५५०
❀ सरस्वतीस्तोत्राणि ❀		
२५६	शारदाभुजङ्गम्	५६१

स्तोत्राङ्कः	स्तोत्रम्	पृ.
२५७	सरस्वतीस्तोत्रम्	५६१
२५८	शारदाषड्गस्तोत्रम्	५६२
२५९	सरस्वतीस्तोत्रम्	५६३
२६०	शारदास्तोत्रम्	५६३
२६१	नीलसरस्वतीस्तोत्रम्	५६७
❀ नवग्रहस्तोत्राणि ❀		
२६२	आदित्यस्तोत्रम्	५६८
२६३	सूर्यकवचम्	५६९
२६४	चन्द्राष्टाविंशति- नामस्तोत्रम्	५७१
२६५	चन्द्रकवचम्	५७१
२६६	अङ्गारकस्तोत्रम्	५७२
२६७	ऋणमोचकमंगल- स्तोत्रम्	५७३
२६८	मंगलकवचम्	५७४
२६९	बुधपञ्चविंशतिनाम- स्तोत्रम्	५७५
२७०	बुधकवचम्	५७५
२७१	बृहस्पतिस्तोत्रम्	५७६
२७२	बृहस्पतिकवचम्	५७७
२७३	शुक्रस्तवराजः	५७८
२७४	शुक्रकवचम्	५७९
२७५	शनैश्वरस्तवराजः	५८०

स्तोत्राङ्कः	स्तोत्रम्	पृ.
२७६	शनैश्वरस्तोत्रम्	५८२
२७७	शनिकवचम्	५८२
२७८	राहुस्तोत्रम्	५८४
२७९	राहुकवचम्	५८४
२८०	केतुपञ्चविंशतिनाम- स्तोत्रम्	५८५
२८१	केतुकवचम्	५८६
२८२	नवग्रहस्तोत्रम्	५८६
२८३	नवग्रहपीडाहर- स्तोत्रम्	५८७

### ❧ दत्तात्रेयस्तोत्राणि ❧

२८४	दत्तलहरी	५८९
२८५	दत्तात्मपूजास्तोत्रम्	६००
२८६	शङ्कराचार्यकृत- गुर्वष्टकम्	६०२
२८७	दत्तात्रेयस्तोत्रम्	६०३
२८८	दत्तापराधक्षमापन- स्तोत्रम्	६०४
२८९	श्रीदत्तप्रार्थना- चतुष्कम्	६०५
२९०	दत्तप्रबोधः	६०६
२९१	दत्तात्रेयाष्टोत्तरशत- नामावलिस्तोत्रम्	६०७

स्तोत्राङ्कः	स्तोत्रम्	पृ.
२९२	दत्तवेदपादस्तुतिः	६०८
२९३	श्रीमहावाक्यार्थ- बोधः	६१३
२९४	दत्तात्रेयभक्तिनिरू- पणस्तोत्रम्	६१७
२९५	गुरुवरप्रार्थनापंचरत्न- स्तोत्रम्	६२२
२९६	दक्षिणामूर्तिस्तोत्रम्	६२२
२९७	श्रीदत्तात्रेयवज्र- कवचम्	६२४

### ❧ अवतारस्तोत्राणि ❧

२९८	मत्स्यस्तोत्रम्	६३०
२९९	कूर्मस्तोत्रम्	६३०
३००	वराहस्तोत्रम्	६३२
३०१	नृसिंहस्तोत्रम्	६३३
३०२	लक्ष्मीनृसिंहस्तोत्रम्	६३४
३०३	वामनस्तोत्रम्	६३६
३०४	वामनस्तोत्रम्	६३६

### ❧ रामस्तोत्राणि ❧

३०५	रामहृदयम्	६३९
३०६	रामस्तवराजः	६३९
३०७	रामगीता	६४६
३०८	रामरक्षास्तोत्रम्	६५२

स्तोत्राङ्कः	स्तोत्रम्	पृ.
३०९	रामस्तुतिः (ब्रह्म- देवकृता)	६५५
३१०	जटायुकृतराम- स्तोत्रम्	६५६
३११	रामाष्टकम्	६५७
३१२	रामाष्टकम्	६५७
३१३	रामस्तुतिः (महा- देवकृता)	६५८
३१४	रामस्तोत्रम् (अह- ल्याकृतम्)	६५९
३१५	रामस्तोत्रम् (इन्द्रकृतम्)	६६१
३१६	रामचन्द्राष्टकम्	६६२
३१७	श्रीसीतारामाष्टकम्	६६३
<b>❀ हनुमत्स्तोत्राणि ❀</b>		
३१८	मारुतिस्तोत्रम्	६६६
३१९	हनुमद्वाडवानल- स्तोत्रम्	६६६
३२०	पञ्चमुखहनुमत्क- वचम्	६६८
३२१	हनुमत्लांगूलाख- स्तोत्रम्	६७१
३२२	एकादशमुखहनुम- त्कवचम्	६७२

स्तोत्राङ्कः	स्तोत्रम्	पृ.
३२३	हनुमदष्टकम्	६७४
३२४	हनुमत्पंचरत्नस्तोत्रम्	६७५
<b>❀ कृष्णस्तोत्राणि ❀</b>		
३२५	त्रैलोक्यमंगल- कवचम्	६७८
३२६	श्रीबालरक्षा	६८०
३२७	श्रीकृष्णस्तवराजः	६८१
३२८	भगवन्मानसपूजा	६८२
३२९	देवकृता गर्भस्तुतिः	६८४
३३०	वसुदेवकृतं श्रीकृष्ण- स्तोत्रम्	६८४
३३१	श्रीवेंकटेश्वरमंगल- स्तोत्रम्	६८५
३३२	बालकृतं कृष्ण- स्तोत्रम्	६८६
३३३	गोपालस्तोत्रम्	६८७
३३४	कृष्णाष्टकम्	६८८
३३५	मोहिनीकृतं श्रीकृष्ण- स्तोत्रम्	६८९
३३६	ब्रह्मदेवकृतं कृष्ण- स्तोत्रम्	६९०
३३७	श्रीकृष्णस्तोत्रम्	६९१



स्तोत्राङ्कः	स्तोत्रम्	पृ.
३३८	श्रीकृष्णाष्टोत्तरशत- नामस्तोत्रम्	६९२
३३९	इन्द्रकृतं कृष्णस्तोत्रम्	६९४
३४०	विप्रपत्नीकृतं कृष्ण- स्तोत्रम्	६९५
३४१	गोपालविंशति- स्तोत्रम्	६९६
३४२	श्रीकृष्णलहरी- स्तोत्रम्	६९८
३४३	कृष्णद्वादशनाम- स्तोत्रम्	६९९
३४४	श्रीगोपालाष्टकम्	६९९
३४५	श्रीकृष्णाष्टकम्	७००
३४६	सत्यव्रतोक्तदामोदर- स्तोत्रम्	७०१
३४७	श्रीकृष्णशरणाष्टकम्	७०२
❧ पाण्डुरंगस्तोत्राणि ❧		
३४८	विठ्ठलहृदयस्तोत्रम्	७०४
३४९	विठ्ठलकवचम्	७१०
३५०	श्रीविठ्ठलाष्टोत्तरशत- नामस्तोत्रम्	७११
३५१	पाण्डुरंगाष्टकम्	७१३
३५२	हयग्रीवाष्टोत्तरशत- नामस्तोत्रम्	७१४

स्तोत्राङ्कः	स्तोत्रम्	पृ.
❧ कल्किस्तोत्राणि ❧		
३५३	कल्किस्तवः	७१६
३५४	कल्किस्तोत्रम्	७१७
३५५	दशावतारस्तोत्रम्	७१८
❧ गङ्गादिनदीस्तोत्राणि ❧		
३५६	दशहरागंगास्तुतिः	७२२
३५७	शंकराचार्यकृतं गंगाष्टकम्	७२४
३५८	वाल्मीकिकृतं गंगाष्टकम्	७२५
३५९	कालिदासकृतं गंगाष्टकम्	७२६
३६०	गंगाष्टकम्	७२७
३६१	गंगास्तवः	७२८
३६२	सत्यज्ञानानंदतीर्थकृतं गंगाष्टकम्	७२९
३६३	प्रयागराजमाहा- त्म्याष्टकम्	७३०
३६४	काशीपञ्चकम्	७३१
३६५	यमुनाष्टकम्	७३२
३६६	यमुनाष्टकम्	७३३
३६७	नर्मदाष्टकम्	७३४

स्तोत्राङ्कः	स्तोत्रम्	पृ.	स्तोत्राङ्कः	स्तोत्रम्	पृ.
३६८	पुष्कराष्टकम्	७३५	३८९	साधनपंचकम्	७७०
३६९	श्रीमणिकर्णिकाष्टकम्	७३६	३९०	प्रश्नोत्तरमालिका	७७१
३७०	गङ्गालहरी	७३७	३९१	भ्रष्टाष्टकम्	७७२
३७१	श्रीयमुनाष्टकम्	७४३	३९२	मनीषापंचकम्	७७३
३७२	गोदावर्यष्टकम्	७४४	३९३	कौपीनपञ्चक-	
३७३	काश्यष्टकम्	७४६		स्तोत्रम्	७७४
३७४	त्रिवेणीदशकस्तोत्रम्	७४७	३९४	परा पूजा	७७४
३७५	मुक्तिद्वारस्तोत्रम्	७४८	३९५	वाक्यवृत्तिः	७७५
३७६	यमुनाष्टकम्	७५०	३९६	तत्त्वमसिस्तोत्रम्	७७८
३७७	श्रीयमुनाष्टकम्	७५१	❧ संकीर्णस्तोत्राणि ❧		
३७८	अमृतलहरी	७५२	३९७	कुन्तीस्तुतिः	७८०
❧ वेदांतस्तोत्राणि ❧			३९८	ब्रह्मस्तुतिः	७८२
३७९	आत्मपंचकम्	७५४	३९९	भीष्मस्तुतिः	७८४
३८०	वैराग्यपंचकम्	७५४	४००	जीवस्तुतिः	७८५
३८१	धन्याष्टकम्	७५५	४०१	कर्दमस्तुतिः	७८६
३८२	विज्ञाननौका	७५६	४०२	गजेन्द्रस्तुतिः	७८७
३८३	मोहमुद्गरस्तोत्रम्	७५७	४०३	हंसगुह्यस्तुतिः	७८९
३८४	चर्पटपंजरिका-		४०४	वृत्रस्तुतिः	७९०
	स्तोत्रम्	७५८	४०५	ब्रह्मस्तुतिः	७९१
३८५	वाक्यसुधास्तोत्रम्	७६०	४०६	गर्भस्तुतिः	७९४
३८६	हस्तामलकस्तोत्रम्	७६३	४०७	गुह्यकस्तुतिः	७९६
३८७	आत्मबोधः	७६४	४०८	वेणुगीतम्	७९७
३८८	आत्मावबोधस्तुतिः	७६८	४०९	युगलगीतम्	७९९

स्तोत्राङ्कः	स्तोत्रम्	पृ.	स्तोत्राङ्कः	स्तोत्रम्	पृ.
४१०	गोपिकागीतम्	८०१	४३१	सप्तश्लोकी गीता	८३३
४११	अक्रूरस्तुतिः	८०२	४३२	सुदर्शनस्तोत्रम्	८३३
४१२	भ्रमरगीतम्	८०४	४३३	भारतसावित्री-	
४१३	मुचुकुन्दस्तुतिः	८०६		स्तोत्रम्	८३४
४१४	वेदस्तुतिः	८०७	४३४	श्रीशङ्करदेशिका-	
४१५	देवस्तुतिः	८१०		ष्टकम्	८३५
४१६	पाण्डवगीता	८१२	४३५	मृतसंजीवन-	
४१७	श्रीहरिहरात्मक-			कवचम्	८३६
	स्तोत्रम्	८१५	४३६	नृसिंहसरस्वत्य-	
४१८	श्रीनरसिंहसर-			ष्टकम्	८३७
	स्वतीस्तोत्रम्	८२०	४३७	नृसिंहसरस्वती-	
४१९	शिवरामाष्टकम्	८२१		स्तोत्रम्	८३८
४२०	प्रश्नोत्तररत्नमालिका	८२२	४३८	कामाक्षीस्तोत्रम्	८३९
४२१	भगवत्प्रातःस्मरणम्	८२४	४३९	अमृतसंजीवन-	
४२२	प्रातःस्मरणस्तोत्रम्	८२४		स्तोत्रम्	८४०
४२३	अश्वत्थस्तोत्रम्	८२५	४४०	बन्दीमोचनस्तोत्रम्	८४३
४२४	नवनागनामस्तोत्रम्	८२७	४४१	अश्विनीकुमार-	
४२५	तुलसीकवचम्	८२७		स्तोत्रम्	८४३
४२६	तुलसीस्तोत्रम्	८२८	४४२	ब्रह्मज्ञानावली-	
४२७	वेदव्यासाष्टकम्	८२९		मालास्तोत्रम्	८४५
४२८	अभिलाषाष्टकम्	८३०	४४३	नृसिंहस्तुतिः	८४६
४२९	श्रीहरिशरणाष्टकम्	८३१	४४४	करुणालहरी	८४८
४३०	चतुःश्लोकीभाग-		४४५	शान्तिपाठः	८५३
	वतम्	८३२			

गणेश - विष्णु - शिव - गायत्री - सूर्य - कार्तिकेय - देवी -  
लक्ष्मी - सरस्वती - नवग्रह - दत्तात्रेय - अवतार -  
राम - हनुमत् - कृष्ण - पाण्डुरङ्ग - गंगा -  
वेदान्त - संकीर्ण - स्तोत्राणां  
समुच्चयात्मको

बृहत्स्तोत्ररत्नाकरः

( द्वितीयो भागः )

भागद्वयात्मकस्य

स्तोत्रसंख्या ४४५

२१२. मंत्रमातृकापुष्पमालास्तवः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ कल्लोलोलसितामृताब्धिलहरीमध्ये विराजन्म-  
 णिद्वीपे कल्पकवाटिकापरिवृते कादम्बवाकुज्ज्वले । रत्नस्तम्भसह-  
 स्रनिर्मितसभामध्ये विमानोत्तमे चिन्तारत्नविनिर्मितं जननि ते  
 सिंहासनं भावये ॥ १ ॥ एणाङ्गानलभानुमण्डललसच्छ्रीचक्रमध्ये  
 स्थितां बालार्कद्युतिभासुरां करतलैः पाशाङ्कुशौ विभ्रतीम् । चापं  
 बाणमपि प्रसन्नवदनां कौसुम्भवस्त्रान्वितां तां त्वां चन्द्रकलावतंस-  
 मुकुटां चारुस्मितां भावये ॥ २ ॥ ईशानादिपदं शिवैकफलदं  
 रत्नासनं ते शुभं पाद्यं कुङ्कुमचन्दनादिभरितैरर्प्यं सरत्नाक्षतैः ।  
 शुद्धैराचमनीयकं तव जलैर्भक्त्या मया कल्पितं कारुण्यामृत-  
 वारिधे तदखिलं संतुष्टये कल्पताम् ॥ ३ ॥ लक्ष्ये योगिजनस्य  
 रक्षितजगज्जाले विशालेक्षणे प्रालेयाम्बुपटीरकुङ्कुमलसत्कर्पूर-  
 मिश्रोदकैः । गोक्षीरैरपि नारिकेलसलिलैः शुद्धोदकैर्मन्त्रितैः स्नानं  
 देवि धिया मयैतदखिलं संतुष्टये कल्पताम् ॥ ४ ॥ ह्रींकारा-  
 ङ्कितमन्त्रलक्षिततनो हेमाचलात्संचितै रत्नैरुज्ज्वलमुत्तरीयसहितं  
 कौसुम्भवर्णाशुकम् । मुक्तासंततियज्ञसूत्रममलं सौवर्णतंतूद्भवं  
 दत्तं देवि धिया मयैतदखिलं संतुष्टये कल्पताम् ॥ ५ ॥  
 हंसैरप्यतिलोभनीयगमने हारावलीमुज्ज्वलां हिन्दोलद्युतिहीर-  
 पूरिततरे हेमाङ्गदे कङ्कणे । मञ्जीरौ मणिकुण्डले मुकुटमप्यर्धेन्दु-  
 चूडामणिं नासामौक्तिकमङ्गुलीयकटकौ काञ्चीमपि स्वीकुरु ॥ ६ ॥  
 सर्वाङ्गे घनसारकुङ्कुमघनश्रीगन्धपङ्काङ्कितं कस्तूरीतिलकं च फाल-  
 फलके गोरोचनापत्रकम् । गण्डादर्शनमण्डले नयनयोर्दिव्याञ्जनं  
 तेऽञ्चितं कंठाब्जे मृगनाभिपङ्कममलं त्वत्प्रीतये कल्पताम् ॥ ७ ॥  
 कङ्कारोत्पलमल्लिकामरुबकैः सौवर्णपङ्केरुहैर्जातीचम्पकमालती-

बकुलकैर्मन्दारकुन्दादिभिः । केतक्या करवीरकैर्बहुविधैः क्लृप्ताः  
 स्रजोमालिकाः संकल्पेन समर्पयामि वरदे संतुष्टये गृह्यताम् ॥ ८ ॥  
 हन्तारं मदनस्य नन्दयसि यैरङ्गैरनङ्गोज्ज्वलैर्यैर्भृङ्गावलिनी-  
 लकुन्तलभरैर्बद्धासि तस्याशयम् । तानीमानि तवाम्ब कोमलतरा-  
 ण्यामोदलीलागृहाण्यामोदाय दशाङ्गुगुलुवृत्तैर्धूपैरहं धूपये ॥ ९ ॥  
 लक्ष्मीमुज्ज्वलयामि रत्ननिवहोद्गास्वतरे मन्दिरे मालारूपविलम्बि-  
 तैर्मणिमयस्तम्भेषु संभावितैः । चित्रैर्हाटकपुत्रिकाकरघृतैर्गव्यैर्घृतैर्वर्धि-  
 तैर्दिव्यैर्दीपगणैर्धिया गिरिसुते संतुष्टये कल्पताम् ॥ १० ॥ ह्रींकारे-  
 श्वरि तसहाटककृतैः स्थालीसहस्रैर्भृतं दिव्यान्नं घृतसूपशाकभरितं  
 चित्रान्नभेदं तथा । दुग्धान्नं मधुशर्करादधियुतं माणिक्यपात्रे  
 स्थितं माषापूपसहस्रमम्ब सफलं नैवेद्यमावेदये ॥ ११ ॥  
 सच्छायैर्वरकेतकीदलरुचा ताम्बूलवल्लीदलैः पूगैर्भूरिगुणैः सुग-  
 न्धिमधुरैः कर्पूरखण्डोज्ज्वलैः । मुक्ताचूर्णविराजितैर्बहुविधैर्वक्राम्बु-  
 जामोदनैः पूर्णा रत्नकलाचिका तव मुदे न्यस्ता पुरस्तादुमे ॥ १२ ॥  
 कन्याभिः कमनीयकान्तिभिरलंकारामलारार्तिका पात्रे मौक्तिक-  
 चित्रपङ्क्तिविलसत्कर्पूरदीपावलिः । तत्तत्तालमृदङ्गगीतसहितं नृत्यत्प-  
 दाम्भोरुहं मन्त्राराधनपूर्वकं सुविहितं नीराजनं गृह्यताम् ॥ १३ ॥  
 लक्ष्मीमौक्तिकलक्षकल्पितसितच्छत्रं तु धत्ते रसादिन्द्राणी च रतिश्च  
 चामरवरे धत्ते स्वयं भारती । वीणामेणविलोचनाः सुमनसां  
 नृत्यन्ति तद्रागवद्भावैरांगिकसात्त्विकैः स्फुटरसं मातस्तदाकर्णयताम्  
 ॥ १४ ॥ ह्रींकारत्रयसंपुटेन मनुनोपास्ये त्रयीमौलिभिर्वाक्यैर्ल-  
 क्ष्यतनो तव स्तुतिविधौ को वा क्षमेताम्बिके । सँल्लापाः स्तुतयः  
 प्रदक्षिणशतं संचार एवास्तु ते संवेशो मनसः सहस्रमखिलं त्वधी-  
 तये कल्पताम् ॥ १५ ॥ श्रीमंत्राक्षरमालया गिरिसुतां यः

पूजयेच्चेतसा संध्यासु प्रतिवासरं सुनियतस्तस्यामलं स्यान्मनः ।  
 चित्ताम्भोरुहमण्डपे गिरिसुता नृत्तं विधत्ते रसाद्वाणी वक्रसरोरुहे  
 जलधिजा गेहे जगन्मंगला ॥ १६ ॥ इति गिरिवरपुत्रीपाद-  
 राजीवभूषाभुवनममलयन्ती सूक्तिसौरभ्यसारैः । शिवपदमकरन्द-  
 स्यन्दिनीयं निबद्धा मदयतु कविभृङ्गान्मातृकापुष्पमाला ॥ १७ ॥  
 इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्यश्रीगोविन्दभगवत्पूज्यपादशिष्य-  
 श्रीमच्छंकराचार्यकृतौ मंत्रमातृकापुष्पमालास्तवः संपूर्णः ॥

### २१३. चण्डीकुचपञ्चाशिका ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रियं नौमि देवीं परां पारिजातां पदाम्भोज-  
 रेणूपसेवापराणाम् । यदाद्याक्षरस्याभिधेयेन शूली प्रलीढोऽपि  
 मृत्युप्रजेता गरेण ॥ १ ॥ आशादासीभिरूर्ध्वं करविद्युतचतुष्कोण-  
 भागाभखण्डैः खण्डैराढ्या पदानां विधुरविघटिता शुष्कतावास-  
 येया । खात्मानाधः पतन्तीं सजवमसकृदाकर्षणक्लान्तिपङ्क्तिश्वासो-  
 च्छ्वासौघपूर्णा हिमगिरिदुहितुः पातु वोऽपूर्वकन्या ॥ २ ॥ आसी-  
 द्विरिञ्चिवरदा सुरसार्थतीर्थं तेजोमयी मखभुजामखिलास्ति शक्तिः ।  
 एवं भविष्यति पुरोऽपि पुरारिपती त्रैकालिकं यदिति तन्मह  
 आद्यमीडे ॥ ३ ॥ मध्ये पीयूषसिन्धोर्धनकुसुमलसत्कल्पवृक्षान्त-  
 राले दिव्ये मण्यन्तरीपे त्रिदशपरिवृढप्रौढगीर्वाणवर्ण्या । शर्वाणी  
 पूर्णमण्याभरणरणरणाग्निनाभ्यर्णवाणीं तूर्णं चिन्तामणेर्मांमपि  
 सदसि सदाश्लिष्य सिंहासनेऽस्ति ॥ ४ ॥ वन्दारुवृन्दारकसुन्दरीणां  
 सीमन्तभृङ्गाञ्चितपादपद्मा । संस्तोतृपद्मापतिपद्मजन्मस्वाराद्रूपिका-  
 ल्याभ्रगुणा विभाति ॥ ५ ॥ यत्रोदग्रहरिन्मणिप्रविलसत्सौधाङ्कुराणां  
 गणैरुद्गीर्णैर्निजगर्भतश्च चणकैः साम्यं गतानां नवैः । मुक्तानाम-  
 मृतद्युतेरपि भरं वीक्ष्य स्थितानां हृदि श्रान्त्याखू रभसोत्पपात

हृदये सारङ्ग एतन्मुधा ॥ ६ ॥ पादारविन्दस्य पुरंदरोऽपि सेवां  
विधाताऽस्म्यहमेव देव्याः । नार्हस्त्वमस्मिन्निति वज्रपाणिर्व्या-  
क्षिप्यते यत्र गणैर्विचित्रम् ॥ ७ ॥ विडौजसि पदाम्बुजे निविड-  
तेजसि त्र्यम्बकस्त्रियाः प्रणतिमीप्सितप्रतिपदासये निर्जरैः । हरावपि  
हरे विधौ प्रणतिकर्मकार्मीणके जयाम्ब जगदम्बिके जय जयेति  
यत्र ध्वनिः ॥ ८ ॥ तत्रैकदा निखिललोकचरित्रविद्भिः संप्रार्थिता  
भगवती प्रणिधीनवर्गैः । विज्ञाप्यमस्ति किमपीति रहस्यमस्मद्गुह्या-  
यिनः कविवरस्य कृतेर्विचित्रम् ॥ ९ ॥ किं कुङ्कुमोऽस्ति कलिता-  
मरभोज्यवीचीसारप्रसारवचसां प्रमुखः कवीनाम् । यत्काव्यमन्य-  
कवितां विधुनोति जीर्णा जायामिवाभिनवमुग्धवधूस्तनश्रीः  
॥ १० ॥ असह्यभरसह्यभूधरमणौ महाराष्ट्रके महाबलजटाढ्यनि-  
ष्प्रथितकृष्णवेणी धुनी । तदम्बुलहरीभुता जयति वाजिसंज्ञा पुरी  
स लक्ष्मणकवीश्वरो वसति तत्र वृत्त्या स्वया ॥ ११ ॥ वेणीमाधव  
एव यस्य जनकः प्रख्यातकीर्तिस्तथा राधा यज्जननी सती गुणवती  
रामोऽपि यत्सोदरः । अत्रिर्गोत्रपुमांश्च यस्य कविता चेतोहरा  
सामगोपाह्वो यः किल राजते चरणयोर्देव्या भवान्याः स्वयम्  
॥ १२ ॥ यस्य गुरुर्यो जातो दण्डकराभिन्नपर्वतान्वयतः ।  
रघुनाथमन्दराद्रिर्मथितुं तर्कादिशास्त्रचयजलधिम् ॥ १३ ॥ स  
त्वसत्पदपङ्कजस्फुरदमन्दानन्दसंदोहदस्यन्दन्मञ्जुमरन्दसुन्दरमधु-  
ब्यालोलरोलम्बकः । सत्पोतेतरताविनीतवनितासंभोगशून्यः  
पुनर्योऽसौ संप्रति कथ्यते मम गुणप्रौढिप्रबद्धात्मकः ॥ १४ ॥  
तस्यैव चेत्किमपि काव्यमकव्ययेच्छोरस्मत्सभापरिसरे पठनीय-  
मस्ति । यन्मत्पदाम्बुजमधुप्रतिषेचनेऽस्य मृद्वीकयापि न  
क्यापि न मृद्वीकासः ॥ १५ ॥ श्रुत्वादेशं दूतवर्गैर्भवान्या



न्यासान्धन्यान्वीक्ष्य वाचः कवेस्तान् । न्यस्तो मूर्धा स्वामिनीपाद-  
 पद्मे कर्त्रेत्युक्तं तत्कृतेर्यत्कृतेऽत्र ॥ १६ ॥ सावधाना ततो देवी  
 काव्यश्रवणकर्मणि । जातेत्यालोच्य सहगवर्गैः काव्यं प्रवर्णयते  
 ॥ १७ ॥ यद्यपि पदनुतिरादौ कार्या मातुस्तथापि विश्वस्य । मुख्य-  
 मिति स्तनपानं लक्ष्मणबालेन तत्स्तुतिर्विहिता ॥ १८ ॥ प्रालेयशैल-  
 जनुषः सुहिरण्यवल्लीया गौर्याः पयोधरविचित्रफलं पिबामि ।  
 यत्स्पर्शनादपि बभूव स शूलिनोऽपि मृत्युंजयत्वविभवैकपदे-  
 ऽभिषेकः ॥ १९ ॥ कल्याणावलिमातनोतु नितरां कर्पूरपूराधिक-  
 प्रालेयं तुहिनालिशैलदुहितुस्तुङ्गं तदङ्गं हृदः । येनाकारि पुरारिभाल-  
 नयनज्वालाकरालावलीबाढोल्लीढतनुस्तदीयहृदि सोऽनङ्गोऽपि रङ्गे  
 नटः ॥ २० ॥ आजीवं तदुपास्महेऽद्रिदुहितुः कर्पूरगौरं कुचद्वन्द्वं  
 नीलगलं सुचन्दनयुतं तद्व्याङ्मुखेन्द्रङ्कितम् । यद्वीक्ष्यैव ममर्दं किं  
 नवमिदं जीवत्यशेषे मयि प्रारूढं शिवयुग्ममन्यदबलाहन्मर्मणी-  
 तीर्ष्यया ॥ २१ ॥ प्रत्यूहावलिमालुनातु दयया यश्चार्धनारीकुच-  
 प्रान्तोत्तुङ्गपटीरपङ्कमदनीमीनैकमुद्राङ्कुरः । यं कृत्वा स्वयमेव मन्मथ-  
 रिपुः पाणिश्रितस्वेदतो यातः सात्त्विकतां हि तत्कज इति ध्यात्वा  
 स्मरार्तोऽभवत् ॥ २२ ॥ शर्वाणीकुचकूलमूलविलसत्कर्पूरकस्तूरि-  
 काकाश्मीरत्रितयावलेपरचनाचातुर्यचर्यावतात् । यामुद्दिश्य महेश-  
 मानसमहाहंसः प्रयागस्थिता वेण्येवेत्यवधारयन्निव ममज्जानन्य-  
 वृत्तिश्चिरम् ॥ २३ ॥ नित्यं पायादपायाज्जगदिह तु शरच्चन्द्रगौर-  
 प्रभासौ गौर्या वक्षोजयुग्मद्वयशिखरचरत्तारहीरालिमाला । चण्ड्या  
 मे नाथचेतोविहरणनिपुणेतीर्ष्यया तत्र बद्धां गङ्गां निश्चित्य भर्गः  
 करमपि च ददौ यत्पदे मोक्षकामः ॥ २४ ॥ नुमोऽपर्णारामस्थल-  
 हृदयकासारतटगप्रवलाद्वक्षोजच्छलमिलितचक्राह्वयुगलम् । दरा-

लोकाच्छंभोः शिशिरशशिरेखानखगता स्मरन्ती सापत्न्यं व्यथयति  
 नितान्तं यदिह सा ॥ २५ ॥ वन्दे तत्कुसुमायुधान्तकवधूतुङ्गस्त-  
 नाब्जद्वयं दुग्धामन्दमरन्दमन्दिरमिदं चूचालिलीढं परम् । नित्या-  
 स्येन्दुविकासनान्मुकुलितं षड्वक्त्रवक्त्राम्बुजैः पीतं किं किमिती-  
 श्वरस्य मनसो येनाभवद्विस्मयः ॥ २६ ॥ मल्लीस्रक्फणिभोग-  
 भूषणमणिश्रेणीविदूरोल्लसन्मैनाकाचलसोदरी कुचरसाधारद्वयी  
 मञ्जुला । यस्याः स्पर्शनतस्त्रिलोचनमनोमानव्यपायोऽभवत्पायात्सा  
 निखिलां हि विष्टपलतां संसारझञ्झानिलात् ॥ २७ ॥ तुषार-  
 गिरिकन्यकाकुचतटीपटीराटवी विपाटयतु कङ्कटोद्भवकठोरतापं  
 हि सा । यदीयदरदर्शनादपि गरप्रलीढो हरः सुखेन घनसार-  
 विस्मररिपुर्महोग्रः शिवः ॥ २८ ॥ रचयतु शिवं वक्षोजन्मद्वयं  
 द्रुहिणोज्ज्वलत्कनककलशत्विड्बीजं तन्निशुम्भरिपोश्चिरम् । तदपि  
 च मुहुर्दर्शं दर्शं कपालिकरोच्छ्रितप्रखरनखरप्राञ्चच्चन्द्रोदयोऽपि  
 भवत्यहो ॥ २९ ॥ दूरीकरोतु दुरितानि पुरारिदारवक्षोजशैलमिथुनं  
 जितमन्दराद्रि । येनाभवद्भवमनोऽर्णवतः प्रमोदपीयूषमत्रहुतमन्म-  
 थजीवनाय ॥ ३० ॥ अपारां संपत्तिं दिशतु कुचरत्नक्षितिधरः  
 समुत्तुङ्गस्थानं सुमनस उमे ते मम चिरम् । यदीये मूर्ध्नि  
 श्रीगलकरनखालिद्युतिभरस्फुरद्गङ्गाभङ्गा इह हि विहरन्त्येव सततम्  
 ॥ ३१ ॥ तं कासरासुरविमर्दसमुत्थशोणशोणार्द्रशोणितकणं स्तन-  
 मम्बिकायाः । वन्देऽमरेन्द्रकरिणः कृतशिल्पचित्रं यच्छंभुहृद्यपि  
 कटं स्मरणीबभूव ॥ ३२ ॥ उद्दामद्विपकुम्भदर्पदमनं प्रालेयशैलाङ्ग-  
 जावक्षोजद्वयमत्र भद्रमनिशं धत्तां ममाप्राकृतम् । यच्छ्रीकण्ठ-  
 कठोरकोटिनखरश्रेणीसृणिस्थापनप्रद्योत...धुभाजनं समभवत्पुष्पायु-  
 धायोधने ॥ ३३ ॥ सौवर्णाचलसानुसंमितकुचद्वन्द्वं भवान्याः

स्तुमः सेनानीस्फुरितद्विवेदरसनासंसर्पमञ्चायितम् । ईशो नैज-  
 करोरुभूषणगणं मत्वेति भूयस्तरामादातुं यतते यदीयशिखर-  
 प्राग्भारपाणिभ्रमः ॥ ३४ ॥ मालूरद्रुफलप्रदर्पशमनं प्रालेयभूमीधर-  
 प्रत्युसप्रतिपक्षबीजमपरं दुर्गास्तनाद्रिद्वयम् । यद्भोगैकदृशः पिशाच-  
 नृपतेर्वक्षःस्थले जाग्रती चित्रा कापि विसंस्थुला नमत तत्कण्डूर-  
 खण्डाभवत् ॥ ३५ ॥ दिग्दन्तावलकुम्भमौक्तिकमणिश्रेणीकमेणी-  
 दृशः शर्वाण्याः कुचगुच्छयुग्ममवतात्संसारतापाद्भुतम् । यस्योपान्त-  
 समुत्पतत्पशुपतिव्यालोलसामिस्फुरल्लीलापाङ्गतरङ्गभृङ्गसुभगैः शृङ्गा-  
 ररङ्गायियत् ॥ ३६ ॥ स्मरारातेः स्वान्तप्रकटकुमुदं मोदयति  
 यो हृदाकाशस्थस्तद्दहननयनाब्जं मुकुलयन् । दधञ्चूचं लक्ष्म  
 प्रकटयति चक्राह्वयुगलं निहन्त्वद्रेः कन्याकुचविधुरघध्वान्तपटलीम्  
 ॥ ३७ ॥ प्रालेयाचलकन्यकाकुचतटीपाटीरमोहायितां पापाटोपकठो-  
 रकष्टपटलान्यापाटयन्तीं स्तुमः । यत्रापीनपिनाकपाणिकठिनोरःपीठ-  
 कण्ठोल्लठब्जालालीवल्यावलेखमकरोदालिङ्गनेऽन्योन्यतः ॥ ३८ ॥  
 मातः पर्यभिवादये सुरपुरोद्यानान्तरालोल्लसद्भूजन्यप्रसवासवावसथ-  
 मुद्रक्षोजकोषद्वयम् । यस्यान्तः परमेश्वरस्य करतः संमर्दनव्यापृतौ  
 भूतिः संक्षरति क्षपापरिवृढार्भप्रेढ्यचूडामणेः ॥ ३९ ॥ परिधी-  
 महिते कुचस्थलीं मणिकान्तिद्युनदीनभःस्थलीम् । शिवपाणि-  
 नखेन्दुमण्डलीं निजमौलौ विनिधाय या स्थिता ॥ ४० ॥ मातु-  
 नौमि पयोधरौ त्रिजगतामारम्भकुम्भौ शुभौ भावत्कौ भुवि तौ  
 भवप्रियतमे भाव्यक्षतौ भासुरौ । यौ श्रीकण्ठकरप्रवाललतिकामूर्ध-  
 स्फुरत्पल्लवौ षड्भ्रुद्विरदाननाननवनोज्जन्माभिलीढौ चिरम् ॥ ४१ ॥  
 वक्षःपीठे पटाढ्यं स्मितविबुधधुनीनिर्झरैश्चाभिषिक्तं मातर्वक्षोजराजं  
 श्रितपविमणिरुक्चामरं ते नमामि । छत्रं क्षीरं पिपासोर्निटिलशशि-

कलां यत्र पुत्रस्य मत्वा दुर्गाधीशो महेशः करमपि स ददौ तत्स्थ-  
 माराभिनुन्नः ॥ ४२ ॥ पटासक्तं वक्षोजनियुगमपूर्वं गिरिपतेः सुकन्ये  
 मन्ये ते नवसुभगसारिद्वयमिति । यदुत्तुङ्गोत्सङ्गे मृगधरधराक्षानु-  
 सरणं कराब्जव्यापारैः सममनिशमुन्मूलतितराम् ॥ ४३ ॥ धयत्येतौ  
 धाता जगदखिलमेतद्रचयितुं तथा पातुं विष्णुः पिबति हरजाये तव  
 कुचौ । इति प्रेक्षं प्रेक्षं स्वयमपि हरो मर्दयति तौ जगत्संमर्दाया-  
 भ्यसति किमु विद्यामभिनवाम् ॥ ४४ ॥ भवेतां क्षेमाय स्मरहर-  
 वधूरोजकरिणौ ययोरेका रोमावलिकपटशुण्डाद्भुतकरी । महादेव-  
 स्वान्तप्रचुरतरकासारगतया यया तद्ब्यापारास्बुजमपहृतं क्रीडनविधौ  
 ॥ ४५ ॥ उदञ्चन्तौ मातस्तव कुचहरी हृदरिमुखात्कुरङ्गानां तारौ  
 शिवहृददवीसीमनिहताम् । निहत्यैनःश्रेणीमददुरधिरोहद्विपपतिं  
 प्रकुर्वाणौ मुक्तावलिमयमिदं यौ त्रिभुवनम् ॥ ४६ ॥ तवेमौ वक्षोजौ  
 वृजिनहरणौ दिव्यहरिणावहं ध्याये मातर्दितिजतृणराश्यन्नरवरौ ।  
 विरूपाक्षस्वान्तोपवनवरयात्रा चिरतरं ययोरस्ति स्माराधिशबरधाटी-  
 व्यतिकरे ॥ ४७ ॥ दृढं कूर्पासेन प्रतिपिहितमुर्वीधरसुते भवानि  
 त्वद्रक्षोरुहयुगलमीडे तदनिशम् । स्मरन्तं वैरं तं स्मरमपरमासाद्य  
 सुहृदं स्थितं संलीयेति व्यथयति हरो यत्पटगृहे ॥ ४८ ॥ वक्षस्तर-  
 क्षुवरसंस्थमुमे कुचं ते तं नीलकण्ठपरिलिङ्गितभोगमीडे । यत्रेश्व-  
 रस्य मनसस्तव रूपमेवेत्याकल्पकल्पनमभूत्प्रविलोकनेन ॥ ४९ ॥  
 घनं वक्षोजं ते नवनवहिरण्याकृतिधरं नुमस्तं प्रह्लादावलिजनक-  
 मद्गीश्वरसुते । यदीयाभोगेऽस्मिन्ननुपमनखालिव्रणततिः स्फुरत्या-  
 कल्पं श्रीगलकपटकण्ठीरवकरैः ॥ ५० ॥ वर्धिष्णुर्बलिमस्तकस्थित-  
 पदो वक्षःकृतश्रीः सुखं कुर्यान्नस्तुहिनावनीधरसुते वक्षोजविष्णु-  
 स्तव । विष्णुः शंभुहृदीति वाक्यममलं सत्यं विधातुं स्वयं यस्तूर्ण

कृतसंस्थितिर्विजयते तस्यैव हृन्मन्दिरे ॥ ५१ ॥ मनस्तिमिरशान्तये  
 प्रतिपदं कुचार्कद्वयं भवानि तव चिन्त्यते हृदयदेववर्त्मस्थितम् ।  
 विकासयति संततं शिवमनःसरोजं परं यदेव दिवसे कथं व्यथयतीह  
 कोकानहो ॥ ५२ ॥ स्सरान्तकरवल्लभे तव पयोधरश्रीफलद्वयं स्सरति  
 यो जनः स भवतीह सच्छ्रीफलः । इतीव किल बोधयन् स्मृतभव-  
 त्कुचश्रीः स्वयं समुद्रमथने पपावपि गरं हरः श्रीफलः ॥ ५३ ॥ स्मृता  
 तव कुचद्वयी तुहिनशैलबाले हरत्यसावघभरं भवप्रियतमे नृभिः  
 कैरपि । इतीव हृदि तां दधौ विधिशिरोविभेदोद्भवं प्रचण्डवृजिना-  
 वलीकवलितः कपाली ध्रुवम् ॥ ५४ ॥ उच्चैरुच्चैः पदं या नयति  
 गुरुतरं वर्धयत्येव भोगं भूभृत्सत्तां तनोति क्षितिधरतनये त्वत्कु-  
 चश्रीः श्रिये नः । यद्दीक्षाभिः कपर्दीं प्रथमपरिवृढो भैक्ष्यवृत्तिः  
 कपाली सोऽपि श्रीमान्विचित्रं सपदि च जगतामीश्वरोऽभूत्सुखेन  
 ॥ ५५ ॥ वक्षःस्थं दितिजरिपोस्तवाभिवन्दे तारुण्योदधिजमुरोज-  
 कौस्तुभं तम् । यत्स्थाने स्सरजनकं महो हि किञ्चित्संमोहं सपदि  
 महेशितुश्चकार ॥ ५६ ॥ तारुण्याम्भोधिजन्मा दलितसुमकरः  
 कामदस्त्रे प्रकामं कामं यच्छत्वपर्णे पृथुहृदयजनुः पारिजातद्रुजातः ।  
 दैत्यव्रातातपन्नः पदगतजगतीं छायाया स्वै रसौधै रक्षंस्तृप्तिं च  
 कुर्वन्भवहृदयमहानन्दने नन्दते यः ॥ ५७ ॥ मातः स्तन्यमधुस्त-  
 नस्थमनघं यच्छत्वजस्रं तव प्रौढोल्लासमखण्डितं पशुजनुःपाशच्छिदं  
 सुन्दरि । यत्पानं गणपे प्रकुर्वति शिशौ चेतोदृशौ पश्यतः शंभोर्मु-  
 ग्धमभूद्भ्रूवतुरहो व्याघूर्णिते च क्षणात् ॥ ५८ ॥ शैलेलापालबाले  
 नुम इह विबुधप्राणजीवातुमूर्तिं क्षीरोदन्वत्प्रभूतं भवगदहमुरोज-  
 न्मधन्वन्तारिं ते । यस्योपास्तिप्रभावात्पितृगहनगतो वासुकिं कालकूटं  
 कण्ठे बिभ्रच्च शूली नयनगहुतभुक्सोऽपि मृत्युंजयोऽभूत् ॥ ५९ ॥

चञ्चलीलाभचोलीसलिलदपटलीलीनमम्लानमालालोलाल्पङ्कं दधानं  
 धरणिधरसुते नौमि ते तं कुचेन्दुम् । यस्यालोकैर्विनिद्रं भवति  
 भवमनःकैरवं हर्षितं च क्षीरासारासृताद्यं रसवदनमुखैः पातु-  
 कामैश्चकारैः ॥ ६० ॥ क्षीराशसंसकलकामदमावके ते वक्षोजनुः  
 सुरभिरूपमकं निहन्तु । यत्पातृषण्मुखगजास्यहरीन्द्रमुख्या  
 वत्सा रसस्थरसनावसनैर्विरेजुः ॥ ६१ ॥ विचित्रालेखाढ्यं  
 समरदसुचातुर्यकलितं दधे मातस्तं ते हृदि हृदयजैरावणमहम् ।  
 यदीयाञ्चद्रोमावलिकपटशुण्डा शिवमनःसरोजं तच्चक्षुः सरसि  
 परिविश्यैव हरति ॥ ६२ ॥ भगवति तव वक्षोजन्मरम्भास्वरूपं  
 शुक्लहृदि सुफलस्य भ्रान्तिदं दर्शनेन । दिशतु मम शिवं तन्नृत्य-  
 तीशस्य चेतः कमलमिव सुधर्मा दिव्यदेशे चिरं यत् ॥ ६३ ॥  
 उदग्रग्रीवं तेऽविरलमसृणं नौमि गिरिजे सुवृत्तं हीरोद्यन्मणिरुचमु-  
 रोजेन्द्रतुरगम् । पयः पातुं श्लिष्टद्विरदमुखषड्भ्रुवदनान्यपश्य-  
 त्सप्तेशो गणपतिपिता यत्र सहसा ॥ ६४ ॥ दितिजजनविनाशकं  
 नमस्ते भगवति कुचकूटकालकूटम् । यदिह हृदि हरस्य कण्ठलग्नं  
 किमिति मदन्यदितीर्ष्ययावतस्थे ॥ ६५ ॥ कर्पूरकुङ्कुमसुनाभिज-  
 चित्रलेखं मन्ये कुचं वलयितं जननीन्द्रचापम् । यस्योद्भवे  
 स्मररिपोः प्रववर्षं शंभोरानन्दजाश्रुसलिलं नयनाम्बुवाहः ॥ ६६ ॥  
 शर्वाणि ते तरुणिमोद्गमसिन्धुजातं मन्ये कुचं दरमहं वृजिनाव-  
 लिप्तम् । यं कुर्वतो निजकरे शशिशेखरस्य जातः स्मरैकजनकत्व-  
 पदेऽभिषेकः ॥ ६७ ॥ धराधरसुते सुतत्रिदशपेयमाशास्सहे तव  
 स्तनजनुःसुधारसमसारसंसारहम् । स्मरामि नयनोज्ज्वलज्ज्वलन-  
 जालदग्धोऽप्यसावनङ्ग इह यत्पदे कृतपदेन संजीवितः ॥ ६८ ॥  
 अलमलममलोहैः श्लोकजालैः कवेस्तैर्यदिदमखिलमेतैः क्रीतमेवा-

स्मदीयम् । पुनरपि यदि चैवं वर्ण्यते तर्ह्यहं स्यां तदपि भवतु  
 चेत्किं पारितोषीयमस्य ॥ ६९ ॥ इत्याकर्ण्य वचो विचार्य च  
 चमत्काराञ्चितं चेतसि श्रीदेव्याश्चकिताः प्रभोः प्रणिधयश्चक्रुस्तथा  
 तैः परम् । भूयः किञ्चिदुदञ्चितस्तबकया वाचेदमन्विष्यते यच्चोक्तं  
 किल पारितोषिकमिति स्यात्किं तदुक्तं वद ॥ ७० ॥ स्तोत्रं  
 गृहीतमनघं स्तनपाललक्ष्म्या शुल्कं मदीयमखिलं हि मयास्य  
 दत्त्वा । शिष्टाहमस्मि मदभेदमनर्घमेतं दास्यामि तस्य पारितोषिकं  
 सुखेन ॥ ७१ ॥ एतदेव कविराजमानसे काङ्क्षितं लसति संततं  
 किल । अन्यदेकमपि दीयते स्वतः श्रूयतामनुचरेश्वराः स्फुटम्  
 ॥ ७२ ॥ इति स्तनघटस्तवं पठति यस्तु चण्ड्या मम प्रसन्नहृदयः  
 प्रियो भवति मे सदा सूनवत् । कविर्भवति भूमिपस्तुतवचःप्रपञ्चः  
 क्षितौ लभेत किल वाञ्छितं सहृदि सुन्दरीणां स्मरः ॥ ७३ ॥  
 मदीयचरणाम्बुजे भवति भक्तिभाजां प्रभुः क्षितीशमुकुटस्थित-  
 प्रसवपूज्यपादाम्बुजः । अनेकनवपद्मिनीस्तनगिरीन्द्रकान्तिच्छटा-  
 जटालहृदयान्तरः सदसि संस्थितो राजते ॥ ७४ ॥ यः श्रद्धया  
 मम घनस्तनकुम्भलक्ष्म्याः स्तोत्रं पठेत किल संश्रुणुयात्सलोकः ।  
 गीर्वाणवामनयनानयनारविन्दजालप्रभासरणिकज्जलतामुपैति ॥ ७५ ॥  
 पृथिव्यां भूपालो भवति नववामोरुनयनप्रफुल्लाम्भोजन्मद्युमणिरपि  
 वाचा सुरगुरुः । निरस्तप्रोच्चण्डाखिलरिपुगणो मत्कुचतटीस्तवं  
 कुर्वन्नित्यं जयति निजलक्ष्म्यापि धनदम् ॥ ७६ ॥ यश्चित्ते मम कुच-  
 संस्तवं दधाति प्रावीण्यं सकलकलासु सोऽयमेति । आम्नायस्मरणम-  
 पीह मामकीने पादाम्भोरुहयुगले लभेत भक्तिम् ॥ ७७ ॥ रमापि  
 सद्ने सदा कृतपदा मुदा दासवद्रिपुर्भवति मित्रवद्युवतिसंगमो  
 मोक्षवत् । अवागपि कवीशवद्भवति पातकं पुण्यवद्यशोभिर-

मला दिशो दश भवन्ति यस्तं पठेत् ॥ ७८ ॥ चण्डीकुचपञ्चा-  
 शत्संज्ञमिमं यः स्तवं नवं पठति । स नरो न पुनर्जनुषे भवति हि  
 निःश्रेयसाय मे दयया ॥ ७९ ॥ तथाऽस्तु किल तत्परं तव जयन्तु  
 मातः प्रभो पदाम्बुजमधुच्छदाः कविवरस्य मौलौ वरम् । यतो  
 हि कवितामृतं पिबति यः स मुक्तः श्रुतस्ततः स भविता न किं  
 न जगति मुक्तिकान्तापतिः ॥ ८० ॥ इत्युक्तवत्यनुचरेन्द्रगणे पुरस्ता-  
 दम्बापदाम्बुजनुषो जनिता मकरन्दधारा । या स्यन्दिता शिरसि  
 मे कविलक्ष्मणस्य स्वप्नोत्थितस्य तु पुनातु पुनश्चिलोकीम् ॥ ८१ ॥  
 यावच्छिवार्धगतमस्ति वपुस्त्वदीयं यावत्त्वदङ्गिकमलं च पुनाति  
 विश्वम् । तावत्त्वाम्ब चरणाम्बुजयोर्निपत्य याचामहे किमपि यः  
 शयनोत्थितस्त्वाम् ॥ ८२ ॥ वाक्कायचित्तरणप्रकृतिस्वभावबुद्ध्या-  
 त्मभिः सदसतोरपि संगमेन । यद्यत्कृतं यदपि भाव्यमशेषमातर्य-  
 द्यत्करोम्यखिलमस्तु तवार्पणं तत् ॥ ८३ ॥ इति श्रीमदत्रिगोत्र-  
 माणिक्यसामगोपनामकवेणीमाधवाचार्यसुतरसालंकारपारावारपारी-  
 णलक्ष्मणाचार्यकृता श्रीचण्डीकुचपञ्चाशिका संपूर्णा ॥

२१४. त्रिपुरसुन्दरीमानसिकोपचारपूजास्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ मम न भजनशक्तिः पादयोस्ते न भक्तिर्न च  
 विषयविरक्तिर्ध्यानयोगे न सक्तिः । इति मनसि सदाहं चिन्तय-  
 द्वाद्यशक्ते रुचिरवचनपुष्पैरर्चनं संचिनोमि ॥ १ ॥ व्याप्तं हाटक-  
 विग्रहैर्जलचरैरारूढदेवत्रजैः पोटैराकुलितान्तरं मणिधरैर्भूमिधरै-  
 र्भूषितम् । आरक्तामृतसिन्धुमुद्धरचलद्वीचीचयव्याकुलव्योमानं  
 परिचिन्त्य संततमहो चेतः कृतार्थीभव ॥ २ ॥ तस्मिन्नुज्ज्वलरत्न-  
 जालविलसत्कान्तिच्छटाभिः स्फुटं कुर्वाणं वियदिन्द्रचापनिचयैरा-  
 च्छादितं सर्वतः । उच्चैः शृङ्गनिषण्णादिव्यवनितावृन्दाननप्रोलसद्दी-



ताकर्णननिश्चलाखिलमृगं द्वीपं नमस्कुर्वहे ॥ ३ ॥ जातीचम्पक-  
पाटलादिसुमनःसौरभ्यसंभावितं हींकारध्वनिकण्ठकोकिलकुहूप्रोल्ला-  
सिचूतद्रुमम् । आविर्भूतसुगन्धिचन्दनवनं दृष्टिप्रियं नन्दनं चञ्च-  
ञ्चलचञ्चरीकचटुलं चेतश्चिरं चिन्तय ॥ ४ ॥ परिपतितपरागैः  
पाटलक्षोणिभागो विकसितकुसुमोच्चैः पीतचन्द्रार्करश्मिः । अलि-  
शुकपिकराजीकूजितैः श्रोत्रहारी स्फुरतु हृदि मदीये नूनमुद्यानराजः  
॥ ५ ॥ रम्यद्वारपुरप्रचारतमसां संहारकारिप्रभस्फूर्जत्तोरणभार-  
हारकमहाविस्तारहारद्युते । क्षोणीमण्डलहेमहारविलसत्संसारपार-  
प्रदप्रोद्यद्भक्तमनोविहार कनकप्राकार तुभ्यं नमः ॥ ६ ॥ उद्य-  
त्कान्तिकलापकल्पितनभःस्फूर्जद्वितानप्रभः सत्कृष्णागुरुधूपवासि-  
तवियत्काष्ठान्तरे विश्रुतः । सेवायातसमस्तदैवतगणैरासेव्यमानो-  
ऽनिशं सोऽयं श्रीमणिमण्डपोऽनवरतं मञ्चेतसि द्योतताम् ॥ ७ ॥  
क्वापि प्रोद्भटपद्मरागकिरणव्रातेन संध्यायितं कुत्रापि स्फुटविस्फुर-  
न्मरकतद्युत्या तमिस्रायितम् । मध्यालम्बिविशालमौक्तिकरुचा  
ज्योत्स्नायितं कुत्रचिन्मातः श्रीमणिमन्दिरं तव सदा वन्दामहे  
सुन्दरम् ॥ ८ ॥ उत्तुङ्गालयविस्फुरन्मरकतप्रोद्यत्प्रभामण्डलान्या-  
लोक्याङ्कुरितोत्सवैर्नवनृणाकीर्णस्थलीशङ्कया । नीतो वाजिभिरुपथं  
बत रथः सूतेन तिग्मद्युतेर्वल्गावलिगतहस्तमस्तशिखरं कष्टैरितः  
प्राप्यते ॥ ९ ॥ मणिसदनसमुद्यत्कान्तिधारानुरक्ते वियति  
चरमसंध्याशङ्किनो भानुरध्याः । शिथिलितगतकुप्यत्सूतहुंकार-  
नादैः कथमपि मणिगेहादुच्चकैरुच्चलन्ति ॥ १० ॥ भक्त्या किं  
नु समर्पितानि बहुधा रत्नानि पाथोधिना किं वा रोहणपर्वतेन  
सदनं यैर्विश्वकर्माकरोत् । आ ज्ञातं गिरिजे कटाक्षकलया नूनं त्वया  
तोषिते शंभौ नृत्यति नागराजफणिना कीर्णा मणिश्रेणयः ॥ ११ ॥

विदूरमुक्तवाहनैर्विनम्रमौलिमण्डलैर्निबद्धहस्तसंपुटैः प्रयत्नसंयते-  
 न्द्रियैः । विरञ्चिविष्णुशंकरादिभिर्मुदा तवाम्बिके प्रतीक्ष्यमाण-  
 निर्गमो विभाति रत्नमण्डपः ॥ १२ ॥ ध्वनन्मृदङ्गकाहलः प्रगीत-  
 किंनरीगणः प्रनृत्तदिव्यकन्यकः प्रवृत्तमङ्गलक्रमः । प्रकृष्टसेवकव्रजः  
 प्रहृष्टभक्तमण्डलो मुदे ममास्तु संततं त्वदीयरत्नमण्डपः ॥ १३ ॥  
 प्रवेशनिर्गमाकुलैः स्वकृत्यरत्नमानसैर्बहिःस्थितामरावलीविधीयमान-  
 भक्तिभिः । विचित्रवस्त्रभूषणैरुपेतमङ्गनाजनैः सदा करोतु मङ्गलं  
 ममेह रत्नमण्डपः ॥ १४ ॥ सुवर्णरत्नभूषितैर्विचित्रवस्त्रधारिभि-  
 र्गृहीतहेमयष्टिभिर्निरुद्धसर्वदैवतैः । असंख्यसुन्दरीजनैः पुरःस्थि-  
 तैरधिष्ठितो मदीयमेतु मानसं त्वदीयतुङ्गतोरणः ॥ १५ ॥ इन्द्रा-  
 दींश्च दिगीश्वरान्सहपरीवारानथो सायुधान् योषिद्रूपधरान् स्वदिक्षु  
 निहितानसंचिन्य हृत्पङ्कजे । शङ्खे श्रीवसुधारया वसुमतीयुक्तं च  
 पद्मं स्मरन्कामं नौमि रतिप्रियं सहचरं प्रीत्या वसन्तं भजे ॥ १६ ॥  
 गायन्तीः कलवीणयातिमधुरं हुंकारमातन्वतीद्वाराभ्यासकृतस्थिती-  
 रिह सरस्वत्यादिकाः पूजयन् । द्वारे नौमि मदोन्मदं सुरगणाधीशं  
 मदेनोन्मदां मातङ्गीमसिताम्बरां परिलसन्मुक्ताविभूषां भजे ॥ १७ ॥  
 कस्तूरिकाश्यामलकोमलाङ्गीं कादम्बरीपानमदालसाङ्गीम् । वामस्त-  
 नालिङ्गितरत्नवीणां मातङ्गकन्यां मनसा स्मरामि ॥ १८ ॥ विकीर्ण-  
 चिकुरोत्करे विगलिताम्बराडम्बरे मदाकुलितलोचने विमलभूषणो-  
 द्भासिनि । तिरस्करिणि तावकं चरणपङ्कजं चिन्तयन्करोमि पशु-  
 मण्डलीमलिकमोहदुग्धाशयाम् ॥ १९ ॥ प्रमत्तवारुणीरसैर्विघूर्ण-  
 मानलोचनाः प्रचण्डदैत्यसूदनाः प्रविष्टभक्तमानसाः । उपोढकज्जल-  
 च्छविच्छटाविराजिविग्रहाः कपालशूलधारिणीः स्तुवे त्वदीय-  
 दूतिकाः ॥ २० ॥ स्फूर्जन्नययवाङ्कुरोपलसिताभोगैः पुरःस्थापि-

तैर्दीपोद्भासिशरावशोभितमुखैः कुम्भैर्नवैः शोभिना । स्वर्णाबद्ध-  
 विचित्ररत्नपटलीचञ्चलकाटश्रिया युक्तं द्वारचतुष्टयेन गिरिजे वन्दे  
 मणीमन्दिरम् ॥ २१ ॥ आस्तीर्णारुणकम्बलासनयुतं पुष्पोपहारा-  
 न्वितं दीप्तानेकमणिप्रदीपसुभगं राजद्वितानोत्तमम् । धूपोद्गारिसुग-  
 न्धिसंम्रममिलद्भृङ्गावलीगुञ्जितं कल्याणं वितनोतु मेऽनवरतं श्रीम-  
 ण्डपाभ्यन्तरम् ॥ २२ ॥ कनकरचिते पञ्चप्रेतासनेन विराजिते  
 मणिगणचिते रक्तधेताम्बरास्तरणोत्तमे । कुसुमसुरभौ तल्पे दिव्यो-  
 पधानसुखावहे हृदयकमले प्रादुर्भूतां भजे परदेवताम् ॥ २३ ॥  
 सर्वाङ्गस्थितिरम्यरूपरुचिरां प्रातः समभ्युत्थितां जम्भामञ्जुमुखा-  
 म्बुजां मधुमदव्याघूर्णदक्षित्रयाम् । सेवायातसमस्तसंनिधिसखीः  
 संमानयन्तीं दृशा संपश्यन्परदेवतां परमहो मन्ये कृतार्थ  
 जनुः ॥ २४ ॥ उच्चैस्तोरणवर्तिवाद्यनिवहध्वाने समुज्जृम्भिते भक्तै-  
 र्भूमिविलग्नमौलिभिरलं दण्डप्रणामे कृते । नानारत्नसमूहनद्ध-  
 कथनस्थालीसमुद्भासितां प्रातस्ते परिकल्पयामि गिरिजे नीराजना-  
 मुज्ज्वलाम् ॥ २५ ॥ पाद्यं ते परिकल्पयामि पदयोरर्घ्यं तथा  
 हस्तयोः सौधीभिर्मधुपर्कमम्ब मधुरं धाराभिरास्वादय । तोयेना-  
 चमनं विधेहि शुचिना गाङ्गेन मत्कल्पितं साष्टाङ्गं प्रणिपातमीश-  
 दयिते दृष्ट्या कृतार्थीकुरु ॥ २६ ॥ मातः पश्य मुखाम्बुजं सुवि-  
 मले दत्ते मया दर्पणे देवि स्वीकुरु दन्तधावनमिदं गङ्गाजलेना-  
 न्वितम् । सुप्रक्षालितमाननं विरचयन् स्निग्धाम्बरप्रोञ्छनं द्रागङ्गी-  
 कुरु तत्त्वमम्ब मधुरं ताम्बूलमास्वादय ॥ २७ ॥ निधेहि मणि-  
 पादुकोपरि पदाम्बुजं मज्जनालयं व्रज शनैः सखीकृतकराम्बुजा-  
 लम्बनम् । महेशि करुणानिधे तव दृगन्तपातोत्सुकान्विलोकय  
 मनागमूनुभयसंस्थितान्दैवतान् ॥ २८ ॥ हेमरत्नवरणेन वेष्टितं

विस्तृत्तारुणवितानशोभितम् । सज्जसर्वपरिचारिकाजनं पश्य मज्जन-  
 गृहं मनो मम ॥ २९ ॥ कनककलशजालस्फाटिकस्नानपीठाद्युप-  
 करणविशालं गन्धमत्तलिमालम् । स्फुरदरुणवितानं मञ्जुगन्धर्व-  
 गानं परमशिवमहेले मज्जनागारमेहि ॥ ३० ॥ पीनोत्तुङ्गपयोधराः  
 परिलसत्संपूर्णचन्द्रानना रत्नस्वर्णविनिर्मिताः परिलसत्सूक्ष्माम्बर-  
 प्रावृताः । हेमस्नानघटीस्तथा मृदुपटीरुद्धर्तनं कौसुमं तैलं कङ्कतिकान्  
 करेषु दधतीर्वन्देऽम्ब ते दासिकाः ॥ ३१ ॥ तत्र स्फाटिकपीठमेत्य  
 शनकैरुत्तारितालं कृतिर्नीचैरुज्झितकञ्चक्रोपरिहितारक्तोत्तरीयाम्बरा ।  
 वेणीबन्धमपास्य कङ्कतिकया केशप्रसादं मनाक्कुर्वाणा परदेवता  
 भगवती चित्ते मम द्योतताम् ॥ ३२ ॥ अभ्यङ्गं गिरिजे गृहाण  
 मृदुना तैलेन संपादितं काश्मीरैरगरुद्रवैर्मलयजैरुद्धर्तनं कारय ।  
 गीते किंनरकामिनीभिरभितो वाद्ये मुदा वादिते नृत्यन्तीमिह पश्य  
 देवि पुरतो दिव्याङ्गनामण्डलीम् ॥ ३३ ॥ कृतपरिकरबन्धास्तुङ्ग-  
 पीनस्तनाढ्या मणिनिवहनिबद्धा हेमकुम्भीर्दधानाः । सुरभिसलिल-  
 निर्यद्गन्धलुब्धालिमालाः सविनयमुपतस्थुः सर्वतः स्नानदास्यः  
 ॥ ३४ ॥ उद्गन्धैरगुरुद्रवैः सुरभिणा कस्तूरिकावारिणा स्फूर्ज-  
 त्सौरभयक्षकर्दमजलैः काश्मीरनीरैरपि । पुष्पाम्भोभिरशेषतीर्थ-  
 सलिलैः कर्पूरपाथोभरैः स्नानं ते परिकल्पयामि गिरिजे भक्त्या  
 तदङ्गीकुरु ॥ ३५ ॥ प्रत्यङ्गं परिमार्जयामि शुचिना वस्त्रेण  
 संप्रोञ्छनं कुर्वे केशकलापमायततरं धूपोत्तमैर्धूपितम् । आली-  
 वृन्दविनिर्मितां जवनिकामास्थाप्य रत्नप्रभं भक्तत्राणपरे महेश-  
 गृहिणि स्नानाम्बरं मुच्यताम् ॥ ३६ ॥ पीतं ते परिकल्प-  
 यामि निविडं चण्डातकं चण्डिके सूक्ष्मं स्निग्धमुरीकुरुष्व वसनं  
 सिन्दूरप्रभम् । मुक्तारत्नविचित्रहेमरचनाचारुप्रभाभास्वरं नीलं

कञ्चुकमर्पयामि गिरिशप्राणप्रिये सुन्दरि ॥ ३७ ॥ विलुलित-  
 चिकुरेण च्छादितांसप्रदेशे मणिनिकरविराजत्पादुकान्यस्तपादे ।  
 सुललितमवलम्ब्य द्राक्सखीमंसदेशे गिरिशगृहिणि भूषामण्डपाय  
 प्रयाहि ॥ ३८ ॥ लसत्कनककुट्टिमस्फुरदमन्दमुक्तावलीसमुल्लसित-  
 कान्तिभिः कलितशक्रचापत्रजे । महाभरणमण्डपे निहितहेम-  
 सिंहासनं सखीजनसमावृतं समधितिष्ठ कात्यायनि ॥ ३९ ॥ खिग्धं  
 कङ्कतिकामुखेन शनकैः संशोध्य केशोत्करं सीमन्तं विरचय्य चारु  
 विमलं सिन्दूररेखान्वितम् । मुक्ताभिर्ग्रथितालकां मणितैः  
 सौवर्णसूत्रैः स्फुटं प्रान्ते मौक्तिकगुच्छकोपलतिकां ग्रथामि वेणीमि-  
 माम् ॥ ४० ॥ विलम्बिवेणीभुजगोत्तमाङ्गस्फुरन्मणिभ्रान्तिमुपान-  
 यन्तम् । स्वरोचिषोऽसितकेशपाशं महेशि चूडामणिमर्पयामि  
 ॥ ४१ ॥ त्वामाश्रयद्भिः कबरीतमिस्रैर्बन्दीकृतं द्रागिव भानुबि-  
 म्बम् । मृडानि चूडामणिमादधानं वन्दामहे तावकमुत्तमाङ्गम्  
 ॥ ४२ ॥ स्वमध्यनद्धहाटकस्फुरन्मणिप्रभाकुलं विलम्बिमौक्तिकच्छ-  
 टाविराजितं समन्ततः । निबद्धलक्षचक्षुषा भवेन भूरि भावितं  
 समर्पयामि भास्वरं भवानि भालभूषणम् ॥ ४३ ॥ मीनाम्भोरुह-  
 खञ्जरीटसुषमाविस्तारविस्मारके कुर्वाणे किल कामवैरिमनसः कंदर्प-  
 बाणप्रभाम् । माध्वीपानमदारुणेऽतिचपले दीर्घे दृग्भोरुहे देवि  
 स्वर्णशलाकयोजितमिदं दिव्याञ्जनं दीयताम् ॥ ४४ ॥ मध्यस्था-  
 रुणरत्नकान्तिरुचिरां मुक्तामुगोद्भासितां दैवाद्भार्गवजीवमध्यगरवे-  
 र्लक्ष्मीमधः कुर्वतीम् । उत्सिक्ताधरबिम्बकान्तिविसरैर्भौमीभव-  
 न्मौक्तिकां महत्तामुररीकुरुष्व गिरिजे नासाविभूषामिमाम्  
 ॥ ४५ ॥ उडुकृतपरिवेषस्पर्धया शीतभानोरिव विरचितदेहद्वन्द्व-  
 मादित्यबिम्बम् । अरुणमणिसमुद्यत्प्रान्तविभ्राजिमुक्तं श्रवसि

परिनिधेहि स्वर्णताटङ्कयुग्मम् ॥ ४६ ॥ मरकतवरपद्मारागहीरोत्थितगुलिकात्रितयावनद्धमध्यम् । विततविमलमौक्तिकं च कण्ठाभरणमिदं गिरिजे समर्पयामि ॥ ४७ ॥ नानादेशसमुत्थितैर्मणिगणप्रोद्यत्प्रभामण्डलव्याप्तैराभरणैर्विराजितगलां मुक्ताच्छटालंकृताम् । मध्यस्थारुणरत्नकान्तिरुचिरां प्रान्तस्थमुक्ताफलव्रातामम्बचतुष्किकां परशिवे वक्षःस्थले स्थापय ॥ ४८ ॥ अन्योन्यं प्लावयन्ती सततपरिचलत्कान्तिकल्लोलजालैः कुर्वाणा मज्जदन्तःकरणविमलतां शोभितेव त्रिवेणी । मुक्ताभिः पद्मारागैर्मरकतमणिभिर्निर्मिता दीप्यमानैर्नित्यं हारत्रयी ते परशिवरसिके चेतसि द्योततां नः ॥ ४९ ॥ करसरसिजनाले विस्फुरत्कान्तिकाले विलसदमलशोभे चञ्चदीशाक्षिलोभे । विविधमणिमयूखोद्भासितं देवि दुर्गे कनककटकयुग्मं बाहुयुग्मे निधेहि ॥ ५० ॥ व्यालम्बमानसितपट्टकगुच्छशोभि स्फूर्जन्मणीघटितहारविरोचमानम् । मातर्महेशमहिले तव बाहुमूले केयूरकद्वयमिदं विनिवेशयामि ॥ ५१ ॥ विततनिजमयूखैर्निर्मितामिन्द्रनीलैर्विजितकमलनालालीनमत्तालिमालाम् । मणिगणखचिताभ्यां कङ्कणाभ्यामुपेतां कलय वलयराजां हस्तमूले महेशि ॥ ५२ ॥ नीलपट्टमृदुगुच्छशोभिताबद्धनैकमणिजालमञ्जुलाम् । अर्पयामि वलयात्पुरःसरे विस्फुरत्कनकतैतृपालिकाम् ॥ ५३ ॥ आलवालमिव पुष्पधन्वना बालविद्रुमलतासु निर्मितम् । अङ्गुलीषु विनिधीयतां शनैरङ्गुलीयकमिदं मदर्पितम् ॥ ५४ ॥ विजितहरमनोभूमत्तमातङ्गकुम्भस्थलविलुलितकूजत्किङ्किणीजालतुल्याम् । अविरतकलनादैरीशचेतो हरन्तीं विविधमणिनिबद्धां मेखलामर्पयामि ॥ ५५ ॥ व्यालम्बमानवरमौक्तिकगुच्छशोभिविभ्राजिहाटकपुटद्वयरोचमानम् । हेम्ना विनिर्मितमनेकमणिप्रबन्धं नीवीनिबन्धनगुणं विनिवेदयामि ॥ ५६ ॥

विनिहतनवलाक्षापङ्कबालातपौधे मरकतमणिराजीमञ्जुमञ्जीरघोषे ।  
 अरुणमणिसमुद्यत्कान्तिधाराविचित्रस्तव चरणसरोजे हंसकः प्रीति-  
 मेतु ॥ ५७ ॥ निबद्धशित्तिपट्टकप्रवरगुच्छसंशोभितां कलकणित-  
 मञ्जुलां गिरिशचित्तसंमोहनीम् । अमन्दमणिमण्डलीविमलकान्ति-  
 किर्मीरितां निधेहि पदपङ्कजे कनकघुङ्घुरूमम्बिके ॥ ५८ ॥  
 विस्फुरत्सहजरागरञ्जिते शिञ्जितेन कलितां सखीजनैः । पद्मराग-  
 मणिनूपुरद्वयीमर्पयामि तव पादपङ्कजे ॥ ५९ ॥ पदाम्बुजमुपासितुं  
 परिगतेन शीतांशुना कृतां तनुपरम्परामिव दिनान्तरागारुणाम् ।  
 महेशि नवयावकद्रवभरेण शोणीकृतां नमामि नखमण्डलीं  
 चरणपङ्कजस्थां तव ॥ ६० ॥ आरक्तश्वेतपीतस्फुरदुरुकुसुमैश्चित्रितां  
 पट्टसूत्रैर्देवस्त्रीभिः प्रयत्नादगुरुसमुदितैर्धूपितां दिव्यधूपैः ।  
 उद्यद्गन्धान्धपुष्पन्धयनिवहसमारब्धझांकारगीतां चञ्चत्कल्लारमालां  
 परशिवरसिके कण्ठपीठेऽर्पयामि ॥ ६१ ॥ गृहाण परमामृतं कनक-  
 पात्रसंस्थापितं समर्पय मुखाम्बुजे विमलवीटिकामम्बिके । विलोक्य  
 मुखाम्बुजं मुकुरमण्डले निर्मले निधेहि मणिपादुकोपरि पदाम्बुजं  
 सुन्दरि ॥ ६२ ॥ आलम्ब्य स्वसखीं करेण शनकैः सिंहासनादु-  
 त्थिता कूजन्मन्दमरालमञ्जुलगतिप्रोल्लासिभूषाम्बरा । आनन्दप्रति-  
 पादकैरुपनिषद्वाक्यैः स्तुता वेधसा मच्चित्ते स्थिरतामुपैतु गिरिजा  
 यान्ती सभामण्डपम् ॥ ६३ ॥ चलन्त्यामम्बायां प्रचलति समस्ते  
 परिजने सवेगं संयाते कनकलतिकालङ्कृतिभरे । समन्तादुत्तालस्फु-  
 रितपदसंपातजनितैर्झणत्कारैस्तारैर्झणझणितमासीन्मणिगृहम् ॥ ६४ ॥  
 चञ्चद्वेत्रकराभिरङ्गविलसद्भूषाम्बराभिः पुरोयान्तीभिः परिचारि-  
 काभिरमरवाते समुत्सारिते । रुद्धे निर्जरसुन्दरीभिरभितः कक्षान्तरे  
 निर्गतं वन्दे नन्दितशंभु निर्मलचिदानन्दैकरूपं महः ॥ ६५ ॥

वेधाः पादतले पतत्यमसौ विष्णुर्नमत्यग्रतः शंभुर्देहि दृगञ्चलं  
 सुरपतिं दूरस्थमालोक्य । इत्येवं परिचारिकाभिरुदिते संमाननां  
 कुर्वती दृग्द्वन्द्वेन यथोचितं भगवती भूयाद्विभूयै मम ॥ ६६ ॥  
 मन्दं चारणसुन्दरीभिरभितो यान्तीभिरुत्कण्ठया नामोच्चारणपूर्वकं  
 प्रतिदिशं प्रत्येकमावेदितान् । वेगादक्षिपथं गतान्सुरगणानालोक-  
 यन्ती शनैर्लिप्स(र्दित्स)न्ती चरणाम्बुजं पथि जगत्पायान्महेशप्रिया  
 ॥ ६७ ॥ अग्रे केचन पार्श्वयोः कतिपये पृष्ठे परे प्रस्थिता आकाशे  
 समवस्थिताः कतिपये दिक्षु स्थिताश्चापरे । संमर्दं शनकैरपास्य  
 पुरतो दण्डप्रणामान्मुहुः कुर्वाणाः कतिचित्सुरा गिरिसुते दृक्पात-  
 मिच्छन्ति ते ॥ ६८ ॥ अग्रे गायति किंनरी कल्पदं गन्धर्वकान्ताः  
 शनैरातोद्यानि च वादयन्ति मधुरं सव्यापसव्यस्थिताः । कूजन्नूपुर-  
 नादमञ्जु पुरतो नृत्यन्ति दिव्याङ्गना गच्छन्तः परितः स्तुवन्ति  
 निगमस्तुत्या विरञ्जयादयः ॥ ६९ ॥ कस्मैचित्सुचिरादुपासितमहा-  
 मञ्जौवसिद्धिं क्रमादेकस्मै भवनिःस्पृहाय परमानन्दस्वरूपां गतिम् ।  
 अन्यस्मै विषयानुरक्तमनसे दीनाय दुःखापहं द्रव्यं द्वारसमाश्रिताय  
 ददतीं वन्दामहे सुन्दरीम् ॥ ७० ॥ नम्रोभूय कृताञ्जलिप्रकटित-  
 प्रेमप्रसन्नानने मन्दं गच्छति संनिधौ सविनयात्सोत्कण्ठमोघत्रये ।  
 नानामन्त्रगणं तदर्थमखिलं तत्साधनं तत्फलं व्याचक्षाणमुदग्र-  
 कान्ति कलये यत्किञ्चिदाद्यं महः ॥ ७१ ॥ तव दहनसदृक्षै-  
 रीक्षणैरेव चक्षुर्निखिलपशुजनानां भीषयद्भीषणास्यम् । कृतवसति  
 परेशप्रेयसि द्वारि नित्यं शरभमिथुनमुच्चैर्भक्तियुक्तो नतोऽस्मि  
 ॥ ७२ ॥ कल्पान्ते सरसैकदासमुदितानेकार्कतुल्यप्रभां रत्नस्तम्भ-  
 निबद्धकाञ्चनगुणस्फूर्जद्वितानोत्तमाम् । कर्पूरागुरुगर्भवर्तिकलिका-  
 प्राप्तप्रदीपावलीं श्रीचक्राकृतिमुल्लसन्मणिगणां वन्दामहे वेदिकाम्



॥ ७३ ॥ स्वस्थानस्थितदेवतागणवृते विन्दौ मुदा स्थापितं नाना-  
रत्नविराजिहेमविलसत्कान्तिच्छटादुर्दिनम् । चञ्चत्कौसुमतूलिका-  
सनयुतं कामेश्वराधिष्ठितं नित्यानन्दनिदानमम्ब सततं वन्दे च  
सिंहासनम् ॥ ७४ ॥ वदद्भिरभितो मुदा जय जयेति वृन्दारकैः  
कृताञ्जलिपरम्परा विदधती कृतार्था दृशा । अमन्दमणिमण्डली-  
खचितहेमसिंहासनं सखीजनसमावृतं समधितिष्ठ दाक्षायणि  
॥ ७५ ॥ कर्पूरादिकवस्तुजातमखिलं सौवर्णभृङ्गारकं ताम्बूलस्य  
करण्डकं मणिमयं चैलाञ्चलं दर्पणम् । विस्फूर्जन्मणिपादुके च  
दधतीः सिंहासनस्याभितस्तिष्ठन्तीः परिचारिकास्तव सदा वन्दामहे  
सुन्दरि ॥ ७६ ॥ त्वदमलवपुरुद्यत्कान्तिकल्लोलजालैः स्फुटमिव  
दधतीभिर्बाहुविक्षेपलीलाम् । मुहुरपि च विधूते चामरग्राहिणीभिः  
सितकरकरशुभ्रे चामरे चालयामि ॥ ७७ ॥ प्रान्तस्फुरद्विमल-  
मौक्तिकगुच्छजालं चञ्चन्महामणिविचित्रितहेमदण्डम् । उद्यत्सहस्र-  
करमण्डलचारु हेमछत्रं महेशमहिले विनिवेशयामि ॥ ७८ ॥  
उद्यत्तावकदेहकान्तिपटलीसिन्दूरपूरप्रभाशोणीभूतमुदग्रलोहितमणि-  
च्छेदानुकारिच्छवि । दूरादादरनिर्मिताञ्जलिपुटैरालोक्यमानं  
सुरव्यूहैः काञ्चनमातपत्रमतुलं वन्दामहे सुन्दरम् ॥ ७९ ॥  
संतुष्टां परमामृतेन विलसत्कामेश्वराङ्गस्थितां पुष्पाधैरभिपूजितां  
भगवतीं त्वां वन्दमाना मुदा । स्फूर्जत्तावकदेहरश्मिकलनाप्राप्त-  
स्वरूपाभिदाः श्रीचक्रावरणस्थिताः सविनयं वन्दामहे देवताः  
॥ ८० ॥ आधारशक्त्यादिकमाकलय्य मध्ये समस्ताधिकयोगिनीं  
च । मित्रेशनाथादिकमत्र नाथचतुष्टयं शैलसुते नतोऽस्मि ॥ ८१ ॥  
त्रिपुरासुधारणवासनमारभ्य त्रिपुरमालिनी यावत् । आवरणाष्टक-  
संस्थितमासनषट्कं नमामि परमेशि ॥ ८२ ॥ ईशाने गणपं

स्मरामि विचरद्विघ्नान्धकारच्छिदं वायव्ये बटुकं च कज्जलरुचिं  
 व्यालोपवीतान्वितम् । नैर्ऋत्ये महिषासुरप्रमथिनीं दुर्गां च  
 संपूजयन्नाग्नेयेऽखिलभक्तरक्षणपरं क्षेत्राधिनाथं भजे ॥ ८३ ॥  
 उड्यानजालंधरकामरूपपीठानिमान्पूर्णागिरिप्रसक्तान् । त्रिकोण-  
 दक्षाग्रिमसव्यभागमध्यस्थितान्सिद्धिकराब्जमामि ॥ ८४ ॥ लोकेशः  
 पृथिवीपतिर्निगदितो विष्णुर्जलानां प्रभुस्तेजोनाथ उमापतिश्च  
 मरुतामीशस्तथा चेश्वरः । आकाशाधिपतिः सदाशिव इति प्रेताभि-  
 धामागतानेतांश्चक्रबहिःस्थितान्सुरगणान्वन्दामहे सादरम् ॥ ८५ ॥  
 तारानाथकलाप्रवेशनिगमव्याजाद्द्रुतासुप्रथं (जाड्युताशप्रभं) त्रैलो-  
 क्ये तिथिषु प्रवर्तितकलाकाष्ठादिकालक्रमम् । रत्नालंकृतिचित्र-  
 वल्ललितं कामेश्वरीपूर्वकं नित्याषोडशकं नमामि लसितं चक्रा-  
 त्मनोरन्तरे ॥ ८६ ॥ हृदि भावितदैवतं प्रयत्नाभ्युपदेशानुगृहीत-  
 भक्तसंघम् । स्वगुरुक्रमसंज्ञचक्रराजस्थितमोघत्रयमानतोऽस्मि  
 मूर्धा ॥ ८७ ॥ हृदयमथ शिरः शिखाखिलाद्ये कवचमथो नयनत्रयं  
 च देवि । मुनिजनपरिचिन्तितं तथास्त्रं स्फुरतु सदा हृदये षडङ्ग-  
 मेतत् ॥ ८८ ॥ त्रैलोक्यमोहनमिति प्रथिते तु चक्रे चञ्चद्विभूषण-  
 गणत्रिपुराधिवासे । रेखात्रये स्थितवतीरणिमादिसिद्धीर्मुद्रा नमामि  
 सततं प्रकटाभिधास्ताः ॥ ८९ ॥ सर्वाशापरिपूरके वसुदलद्वन्द्वेन  
 विश्राजिते विस्फूर्जत्रिपुरेश्वरीनिवसतौ चक्रे स्थिता नित्यशः ।  
 कामाकर्षणिकादयो मणिगणभ्राजिष्णुदिव्याम्बरा योगिन्यः प्रदिशन्तु  
 काङ्क्षितफलं विख्यातगुप्ताभिधाः ॥ ९० ॥ महेशि वसुभिर्दलैर्लसति  
 सर्वसंक्षोभणे विभूषणगणस्फुरत्रिपुरसुन्दरीसन्ननि । अनङ्गकुसुमा-  
 दयो विविधभूषणोद्भासिता दिशन्तु मम काङ्क्षितं तनुतराश्च गुप्ता-  
 भिधाः ॥ ९१ ॥ लसद्युगदृशारके स्फुरति सर्वसौभाग्यदे शुभा-

भरणभूषितत्रिपुरवासिनीमन्दिरे । स्थिता दधतु मङ्गलं सुभगसर्व-  
संक्षोभिणीमुखाः सकलसिद्धयो विदितसंप्रदायाभिधाः ॥ ९२ ॥  
बहिर्दशारे सर्वार्थसाधके त्रिपुराश्रयाः । कुलकौलाभिधाः पान्तु  
सर्वसिद्धिप्रदायिकाः ॥ ९३ ॥ अन्तःशोभिदशारकेऽतिललिते सर्वा-  
दिरक्षाकरे मालिन्या त्रिपुराद्यया विरचितावासे स्थितं नित्यशः ।  
नानारत्नविभूषणं मणिगणभ्राजिष्णु दिव्याम्बरं सर्वज्ञादिकशक्ति-  
वृन्दमनिशं वन्दे निगर्भाभिधम् ॥ ९४ ॥ सर्वरोगहरेऽष्टारे त्रिपुरा-  
सिद्धयान्विते । रहस्ययोगिनीर्नित्यं वशिन्याद्या नमाम्यहम् ॥ ९५ ॥  
चूताशोकविकासिकेतकरजःप्रोद्धासिनीलाम्बुजप्रस्फूर्जन्नवमल्लिकास-  
मुदितैः पुष्पैः शराभिर्मितान् । रम्यं पुष्पशरासनं सुललितं पाशं  
तथा चाङ्कुशं वन्दे तावकमायुधं परशिवे चक्रान्तराले स्थितम्  
॥ ९६ ॥ त्रिकोण उदितप्रभे जगति सर्वसिद्धिप्रदे युते त्रिपुरयाम्बया  
स्थितवती च कामेश्वरी । तनोतु मम मङ्गलं सकलशर्म वज्रेश्वरी  
करोतु भगमालिनी स्फुरतु मामके चेतसि ॥ ९७ ॥ सर्वानन्दमये  
समस्तजगतामाकाङ्क्षिते वैन्दवे भैरव्या त्रिपुराद्यया विरचितावासे  
स्थिता सुन्दरी । आनन्दोल्लसितेक्षणा मणिगणभ्राजिष्णुभूषाम्बरा  
विस्फूर्जद्भदना परापररहः सा पातु मां योगिनी ॥ ९८ ॥ उल्लसत्क-  
नककान्तिभासुरं सौरभस्फुरणवासिताम्बरम् । दूरतः परिहृतं मधु-  
व्रतैरर्पयामि तव देवि चम्पकम् ॥ ९९ ॥ वैरमुद्धतमपास्य शंभुना  
मस्तके विनिहितं कलाच्छलात् । गन्धलुब्धमधुपाश्रितं सदा केतकी-  
कुसुममर्पयामि ते ॥ १०० ॥ चूर्णीकृतं द्रागिव पद्मजेन त्वदा-  
ननस्पर्धिसुधांशुबिम्बम् । समर्पयामि स्फुटमञ्जलिस्थं विकासिजाती-  
कुसुमोत्करं ते ॥ १०१ ॥ अगरुबहलधूपाजस्रसौरभ्यरम्यां मरकत-  
मणिराजीराजिहारिस्त्रगाभाम् । दिशि विदिशि विसर्पद्गन्धलुब्धालि-

मालां बकुलकुसुममालां कण्ठपीठेऽर्पयामि ॥ १०२ ॥ ईकारोर्ध्वग-  
 विन्दुराननमधो विन्दुद्वयं च स्तनौ त्रैलोक्ये गुरुगम्यमेतदखिलं  
 हार्दं च रेखात्मकम् । इत्थं कामकलात्मिकां भगवतीमन्तः समा-  
 राधयन्नानन्दाम्बुधिमज्जने प्रलभतामानन्दथुं सज्जनः ॥ १०३ ॥  
 धूपं तेऽगरुसंभवं भगवति प्रोल्लासिगन्धोद्भुरं दीपं चैव निवेदयामि  
 महसा हार्दान्धकारच्छिदम् । रत्नस्वर्णविनिर्मितेषु परितः पात्रेषु  
 संस्थापितं नैवेद्यं विनिवेदयामि परमानन्दात्मिके सुन्दरि ॥ १०४ ॥  
 जातीकोरकतुल्यमोदनमिदं सौवर्णपात्रे स्थितं शुद्धान्नं शुचि मुद्ग-  
 माषचणकोद्भूतास्तथा सूपकाः । प्राज्यं माहिषमाज्यमुत्तममिदं  
 हैयंगवीनं पृथक्पात्रेषु प्रतिपादितं परशिवे तत्सर्वमङ्गीकुरु ॥ १०५ ॥  
 दुर्गे रोहितखण्डमण्डजपलं कौर्माजखाङ्गं पृथक्षट्त्रिंशन्ति(?)  
 सुसाधितानि मृदुना सब्रह्मनान्यग्निना । संपन्नानि च वेसवार-  
 विसरैर्दिव्यानि भक्त्या कृतान्यग्रे ते विनिवेदयामि गिरिजे सौवर्ण-  
 पात्रव्रजे ॥ १०६ ॥ माषव्यञ्जनजातमुत्तमतमं मुद्गप्रकारान्बहू-  
 न्हारिद्रकथिकारसैर्विलुलितापूपांस्तथा चाणकान् । मांसं सर्पिषि  
 साधितं बहुतरं शूलाकृतं मारिचं मत्स्यांश्चैव सुसंस्कृतान्परशिवे  
 संस्थापयाम्यग्रतः ॥ १०७ ॥ निम्बूकार्द्रकचूतकन्दकदलीकोशातकी-  
 कर्कटीधात्रीबिल्वकरीरकैर्विरचितान्यानन्दचिद्विग्रहे । राजीभिः कटु-  
 तैलसैन्धवहरिद्राभिः स्थितान्पातये संधानानि निवेदयामि गिरिजे  
 भूरिप्रकाराणि ते ॥ १०८ ॥ सितयाञ्चितलडुकव्रजान्मृदुपूपान्मृदु-  
 लाश्च पूरिकाः । परमान्नमिदं च पार्वति प्रणयेन प्रतिपादयामि  
 ते ॥ १०९ ॥ दुग्धमेतदनले सुसाधितं चन्द्रमण्डलनिभं तथा  
 दधि । फाणितं शिखरिणीं सितासितां सर्वमम्ब विनिवेदयामि ते  
 ॥ ११० ॥ अग्रे ते विनिवेद्य सर्वममितं नैवेद्यमङ्गीकृतं ज्ञात्वा

तत्त्वचतुष्टयं प्रथमतो मन्ये सुतृप्तां ततः । देवीं त्वां परिशिष्टमम्ब  
कनकामत्रेषु संस्थापितं शक्तिभ्यः समुपाहरामि सकलं देवेशि शंभु-  
प्रिये ॥ १११ ॥ वामेन स्वर्णपात्रीमनुपमपरमाब्जेन पूर्णां दधाना-  
मन्येन स्वर्णदर्वीं निजजनहृदयाभीष्टदां धारयन्तीम् । सिन्दूरा-  
रक्तवस्त्रां विविधमणिलसद्भूषणां मेचकाङ्गीं तिष्ठन्तीमग्रतस्ते मधु-  
मदमुदितामन्नपूर्णां नमामि ॥ ११२ ॥ पङ्कयोपविष्टान्परितस्तु चक्रं  
शक्या स्वयालिङ्गितवामभागान् । सर्वोपचारैः परिपूज्य भक्त्या  
तवाम्बिके पारिषदान्नमामि ॥ ११३ ॥ परमामृतमत्तसुन्दरीगण-  
मध्यस्थितमर्कभासुरम् । परमामृतघूर्णितेक्षणं किमपि ज्योतिरूपा-  
स्महे परम् ॥ ११४ ॥ दृश्यते तव मुखाम्बुजं शिवे श्रूयते स्फुट-  
मनाहतध्वनिः । अर्चने तव गिरामगोचरे न प्रयाति विषयान्तरं  
मनः ॥ ११५ ॥ त्वन्मुखाम्बुजविलोकनोल्लसत्प्रेमनिश्चलविलोचन-  
द्वयीम् । उन्मनीमुपगतां सभामिमां भावयामि परमेशि तावकीम्  
॥ ११६ ॥ चक्षुः पश्यतु नेह किञ्चन परं घ्राणं न वा जिघ्रतु  
श्रोत्रं हन्त शृणोतु न त्वगपि न स्पर्शं समालम्बताम् । जिह्वा  
वेत्तु न वा रसं मम परं युष्मत्स्वरूपामृते नित्यानन्दविघूर्णमान-  
नयने नित्यं मनो मज्जतु ॥ ११७ ॥ यस्त्वां पश्यति पार्वति  
प्रतिदिनं ध्यानेन तेजोमयीं मन्ये सुन्दरि तत्त्वमेतदखिलं वेदेषु  
निष्ठां गतम् । यस्तस्मिन्समये तवार्चनविधावानन्दसान्द्राशयो  
यातोऽहं तदभिन्नतां परशिवे सोऽयं प्रसादस्तव ॥ ११८ ॥  
गणाधिनाथं बटुकं च योगिनीः क्षेत्राधिनाथं च विदिक्चतुष्टये ।  
सर्वोपचारैः परिपूज्य भक्तितो निवेदयामो बलिमुक्तयुक्तिभिः  
॥ ११९ ॥ वीणामुपान्ते खलु वादयन्त्यै निवेद्य शेषं खलु  
शेषिकायै । सौवर्णभृङ्गारविनिर्गतेन जलेन शुद्धाचमनं विधेहि

॥ १२० ॥ ताम्बूलं विनिवेदयामि विलसत्कर्पूरकस्तूरिकाजातीपूग-  
लवङ्गचूर्णखदिरैर्भक्त्या समुल्लासितम् । स्फूर्जद्बलसमुद्गकप्रणिहितं  
सौवर्णपात्रे स्थितैर्दीपैरुज्ज्वलमन्नचूर्णरचितैरारार्तिकं गृह्यताम्  
॥ १२१ ॥ काचिद्वायति किंनरी कलपदं वाद्यं दधानोर्वशी रम्भा  
नृत्यति केलिमंजुलपदं मातः पुरस्तात्तव । कृत्यं प्रोज्ज्य सुरस्त्रियो  
मधुमदव्याघूर्णमानेक्षणं नित्यानन्दसुधाम्बुधिं तव मुखं पश्यन्ति  
हृष्यन्ति च ॥ १२२ ॥ ताम्बूलोद्भासितवक्रैस्त्वदमलवदनालोकनो-  
ल्लासिनेत्रैश्चक्रस्थैः शक्तिसंघैः परिहृतविषयासङ्गमाकर्ण्यमानम् ।  
गीतज्ञाभिः प्रकामं मधुरसमधुरं वादितं किंनरीभिर्वीणाङ्गकारनादं  
कलय परशिवानन्दसंधानहेतोः ॥ १२३ ॥ अर्चाविधौ ज्ञान-  
लवोऽपि दूरे दूरे तदापादकवस्तुजातम् । प्रदक्षिणीकृत्य ततोऽर्चनं  
ते पञ्चोपचारात्मकमर्पयामि ॥ १२४ ॥ यथेप्सितमनोगतप्रकटि-  
तोपचारार्चितां निजावरणदेवतागणवृतां सुरेशस्थिताम् । कृताञ्जलि-  
पुटो मुहुः कलितभूमिरष्टाङ्गकैर्नमामि भगवत्यहं त्रिपुरसुन्दरि  
त्राहि माम् ॥ १२५ ॥ विज्ञप्तीरवधेहि मे सुमहता यत्नेन ते  
संनिधिं प्राप्तं मामिह कांदिशीकमधुना मातर्न दूरीकुरु । चित्तं  
त्वत्पदभावने व्यभिचरेद्गवा च मे जातु चेत्तत्सौम्ये स्वगुणैर्बन्धान  
न यथा भूयो विनिर्गच्छति ॥ १२६ ॥ काहं मन्दमतिः क  
चेदमखिलैरेकान्तभक्तैः स्तुतं ध्यातं देवि तथापि ते स्वमनसा  
श्रीपादुकापूजनम् । कादाचित्कमदीयचिन्तनविधौ संतुष्टया शर्मदं  
स्तोत्रं देवतया तथा प्रकटितं मन्ये मदीयानने ॥ १२७ ॥ नित्यार्च-  
नमिदं चित्ते भाव्यमानं सदा मया । निबद्धं विविधैः पद्यैरनुगृह्णातु  
सुन्दरी ॥ १२८ ॥ इति श्रीपरमहंसपरिवाजकाचार्यश्रीमच्छंकरा-  
चार्यविरचितं श्रीत्रिपुरसुन्दरीमानसिकोपचारपूजास्तोत्रं संपूर्णम् ॥

## २१५. श्रीचक्रराजवर्णनम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अङ्गाधिरूढया श्रीवल्लभयाश्लिष्टसुन्दर-  
 स्वाङ्गम् । कुङ्कुमपङ्किलदेहं शङ्करतनयं नमामि वाक्सिद्धयै ॥ १ ॥  
 जय जय चक्राधीश्वरि जय जय लोकैकपरजननि । जय जय निगमातीते  
 जय जय कामेशवामाक्षि ॥ २ ॥ कदा देवि साङ्गां मुदा पूजयित्वा  
 हृदि ब्रह्ममोदं भजेयं कृतार्थी । भवेयं क्षणार्थी सदा लोकतन्त्रे निमग्न-  
 स्त्वदर्चा विधानेन कर्तुम् । विहीनः स्वशक्त्या स्तवेनापि रार्जीं सदा  
 भावयामीति कृत्वा हृदब्जे । पदाब्जं त्वदीयं सदा भावयित्वा  
 धिया पूजयामि ॥ प्रकृष्टे त्रिरेखाधराश्रेणिमादिप्रसिद्धाभिरीड्यां च  
 मात्रौघसंसेव्यमानां च संक्षोभिणीमुख्यमुद्राधिदेवीभिरारारध्यमानां  
 त्रिलोकैकमोहाख्यचक्राधिदेवीं त्रिपूर्वा पुरां लोकधात्रीं प्रकटाख्य-  
 देवीभिरारारध्यमानां च संक्षोभिणीमुद्रया राजमानां नमामि स्वमूर्ध्ना  
 नमामि स्वमूर्ध्ना ॥ ३ ॥ एणाङ्गचूडालदेवीं द्वितीये च चक्रे कला-  
 ब्जेन युक्तेऽभिवान्छाप्रपूरे कलाकामकर्षादिदेवीभिरर्धेन्दुभास्वच्छि-  
 रोभूषणाभिः प्रवालप्रभाभिश्चतुर्बाहुसंक्रान्तचापासिचर्मप्रबाणाभि-  
 रामाभिरेताभिरीड्यां च गुप्ताभिधानाभिरारक्तनेत्रां पुरेशीं सदा  
 सर्वविद्राविणीमुद्रिकायुक्तहस्तां नमामि स्वमूर्ध्ना नमामि स्वमूर्ध्ना  
 ॥ ४ ॥ ईशाधिदेवीं तृतीयेऽष्टपद्मे स्वनाम्ना जगत्क्षोभणेऽस्मिन्म-  
 नोज्ञे त्वनङ्गप्रसूनादिदेवीभिरत्युप्रविक्रान्तियुक्ताभिरिक्षुं च कोदण्ड-  
 मच्चं च पौष्पं तथा कन्तुकं चोत्पलं धारयन्तीभिरत्यन्तशोणाभिर-  
 त्यन्तगुप्ताभिरासेव्यमानां च चक्राधिनाथां मुदा सुन्दरीं पाणि-  
 पद्मेन चाकर्षिणीमुद्रिकाढ्यां नमामि स्वमूर्ध्ना नमामि स्वमूर्ध्ना  
 ॥ ५ ॥ लक्ष्यां महायोगिवृन्दैस्तुरीये महाचक्रमध्ये तु सौभाग्य-  
 देऽस्मिन्मनोज्ञे जगत्संख्यकाक्षे निषण्णां च संक्षोभिणीमुख्यदेवी-

भिरत्यन्ततीव्राभिरारक्तसिन्दूरपङ्केन भास्वल्ललाटाभिरत्युग्रवह्निप्रभा-  
 भिस्तथा वह्निचापं शरं चक्रखड्गौ वहन्तीभिराराधितां संप्रदाया-  
 भिधाभिश्च चक्रेश्वरीं वासिनीं पाणिपद्मेन वश्यंकरीमुद्रिकां धार-  
 यन्तीं नमामि स्वमूर्ध्नां नमामि स्वमूर्ध्नां ॥ ६ ॥ ह्रींकाररूपां महेशीं  
 भवानीं तथा पञ्चमेऽस्मिन्दशारे बहिर्भूतचक्रे मनोज्ञे सुनाम्ना हि  
 सर्वार्थसाधे निषण्णां च सिद्धिप्रदामुख्यदेवीभिरत्यच्छदेहप्रभाभिः  
 कराब्जैश्चतुर्भिर्गदां पाशघण्टामणी परञ्चुं धारयन्तीभिरेताभिरुत्तीर्ण-  
 देवीभिराराध्यमानां चक्राधिनाथां पुराश्रीसमाख्यां कराब्जेन  
 चोन्मादिनीमुद्रिकां धारयन्तीं सदाहं नमामि स्वमूर्ध्नां नमामि  
 स्वमूर्ध्नां ॥ ७ ॥ हर्यश्चमुख्यैः सुरैः पूजितां तां सुचक्रेऽपि षष्ठे  
 तथान्तर्दशारेऽत्र नाम्ना च रक्षाकरेऽस्मिन्मनोज्ञे च सर्वज्ञदेवीमुखा-  
 भिश्चतुर्बाहुयुक्ताभिरत्यच्छमुक्तातिगौराभिरब्जातहस्तैश्च वज्रं च शक्तिं  
 तथा तोमरं चक्रराजं वहन्तीभिरेताभिरीड्यां निगर्भाभिधाभिश्च  
 चक्रेश्वरीं मालिनीं हस्तपद्मे महाक्रों वहन्तीं नमामि स्वमूर्ध्नां नमामि  
 स्वमूर्ध्नां ॥ ८ ॥ सर्वस्य लोकस्य चाधारभूतां तां सप्तमेऽस्मिन्  
 गजाक्षे मनोज्ञे च रोगप्रणाशे वशिन्यादिवाग्देवताभिश्च संरक्त-  
 पुष्पप्रभाभिः कराब्जैः शरं चापवीणां च पुस्तं वहन्तीभिरत्यच्छ-  
 मुक्तासरेणोल्लसन्तीभिरेताभिरीड्यां रहस्याभिधाभिश्च चक्रेश्वरीं  
 सिद्धनाथां कराब्जेन खेचर्यभिर्यां सुमुद्रां वहन्तीं नमामि स्वमूर्ध्नां  
 नमामि स्वमूर्ध्नां ॥ ९ ॥ कल्याणशीले वशिन्यादिगेहात्परं आज-  
 मानानि दिव्यास्त्रवृन्दानि चापद्वयं चैक्षवं पौष्पमखं च पाशद्वयं  
 चाङ्कुशद्वन्द्वकं लोकपित्रोः सदाहं नमामि स्वमूर्ध्नां नमामि स्वमूर्ध्नां  
 ॥ १० ॥ हराङ्के वसन्तीं त्रिकोणेऽष्टमेऽस्मिन् सुसिद्धिप्रदे चक्रराजे  
 मनोज्ञे च कामेश्वरीवज्रनाथाभगेशीभिरब्जातहस्तेषु चापं शरं



पानपात्रं कृपाणं तथा मातुलिङ्गं च घण्टामणिं कपालं वहन्तीभिर-  
 त्यन्ततुल्याभिरेताभिरीड्यां पुराम्बां च चक्राधिनाथां स्वहस्तेन  
 बीजाख्यमुद्रां वहन्तीं नमामि स्वमूर्धां नमामि स्वमूर्धां ॥ ११ ॥  
 लक्ष्मीशवागीशवन्द्ये त्रिकोणे च मित्रेशनाधादिनाथान् गुरुंश्चापि  
 दिव्यौघसिद्धौघमल्यौघवृन्दं च सालोक्यसासारूप्यसायुज्यसिद्धिं  
 गतं देवि भक्त्या नमामि स्वमूर्धां नमामि स्वमूर्धां ॥ १२ ॥  
 हींबीजगम्ये ततो देवि धिष्ण्ये कलासंख्यकास्ताश्च नित्यास्वरूपाश्च  
 कामेश्वरीमुख्यदेवीः समाना नमामि स्वमूर्धां नमामि स्वमूर्धां  
 ॥ १३ ॥ सत्यस्वरूपस्य विन्दोः समीपे सदा रक्षणार्थं धृतास्त्राः  
 सुवेधाः सदा जागरूकाः षडङ्गाधिदेवीः सुलावण्यपूर्णा नमामि  
 स्वमूर्धां नमामि स्वमूर्धां ॥ १४ ॥ कलानाथवक्त्रां जलाधारकेशीं  
 शषड्वन्द्वनेत्रां पिनाकाभचिल्लीं सितार्धेन्दुफालां सुमाकारनासां  
 सुबिम्बोष्ठरम्यां कदम्बद्विजालिं कनक्कम्बुकण्ठीं लताबाहुयुक्तां  
 कुलागस्तनद्वन्द्वसंशोभमानां वलीशोभमानां वलभे परोक्षां सुरम्भो-  
 रुशोभत्रिकोणस्य मध्ये सदानन्दपीठे शिवाङ्गे लसन्तीं त्रिखण्डा-  
 ख्यमुद्रायुतां चक्रराज्ञीं महाभैरवीं तां नमामि स्वमूर्धां नमामि  
 स्वमूर्धां ॥ १५ ॥ लसद्रक्तसिन्दूरवर्णां कराब्जैः सुपाशं च  
 कोदण्डमिक्षुप्रकाण्डं सुमास्त्रं तथा चाङ्कुशं धारयन्तीं कृपापूर्णलाव-  
 ण्यनेत्रान्तरम्यां सुधास्यन्दिनिकाणवागजन्मभूमिं सुमास्त्रस्य शास्त्रा-  
 र्थसारैकनाडीं नतानां जनानां समस्तप्रदात्रीं नवानां पुराणामधीशां  
 सुगार्त्रीं जगद्रक्षणे दक्षबाहालताढ्यां नमामि स्वमूर्धां नमामि  
 स्वमूर्धां ॥ १६ ॥ हीङ्कारयुक्तेन मन्त्रेण नित्यं भवत्पादुकां ये  
 स्मरन्ति स्वबुद्ध्या न तेषां जरामृत्युदारिद्र्यपीडा च तेषां हि  
 संदर्शमात्रेण सर्वाः प्रबाधाः प्रणश्यन्ति सत्यं त्रिसत्यं च सत्यं

कृतार्थाश्च ते मुक्तिभाजो हि ये वा महाराज्ञि चित्ताम्बुजे त्वां  
 सदा धारयन्तीह श्रीचक्रसाम्राज्ञि भक्त्या नमामि स्वमूर्धा  
 नमामि स्वमूर्धा ॥ १७ ॥ श्रीङ्कारमन्त्राब्जशृङ्गारहंसीं नृपोक्तिप्रपञ्चा-  
 न्तसिद्धान्तवल्लीं लसद्भृङ्गनीलालकश्रेणिरम्यां सदा भक्तिनन्त्रेण  
 चित्तेन गम्यां हराङ्के हरेर्वक्षसि ब्रह्मवक्त्रे त्रिधारूपसंपत्तिविभ्रा-  
 जमानां चिदानन्दवल्लीं तुरीयां परेशीं जगत्सृष्टिसंरक्षणाकर्षकत्रीं  
 गुणातीतरूपां गुणैश्चापि युक्तां महामन्त्ररूपां महापीठरूपां  
 महाशक्तिरूपां महानन्दरूपां नमामि स्वमूर्धा नमामि स्वमूर्धा  
 ॥ १८ ॥ इति श्रीचक्रराजवर्णनं संपूर्णम् ॥

### २१६. देवीगीतिशतकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ किं देवैः किं जीवैः किं भावैस्तेऽपि येन  
 जीवन्ति । तव चरणं शरणं मे दरहरणं देवि कान्तिमत्यम्ब ॥ १ ॥  
 अरूणाम्बुदनिभकान्ते करुणारसपूरपूर्णनेत्रान्ते । शरणं भव शशि-  
 बिम्बद्युतिमुखि जगदम्ब कान्तिमत्यम्ब ॥ २ ॥ कलिहरणं भव-  
 तरणं शुभभरणं ज्ञानसंपदां करणम् । नतशरणं तव चरणं करोतु मे  
 देवि कान्तिमत्यम्ब ॥ ३ ॥ अमितां ममतां मम तां तनु तां तनुतां  
 गतां पदाब्जं ते । कृपया विदितो विहितो यया तवाहं हि कान्तिम-  
 त्यम्ब ॥ ४ ॥ मम चरितं विदितं चेदुदयेन्न दया कदापि ते सत्यम् ।  
 तदपि वदाम्ययि कुरु तां निर्हेतुकमाशु कान्तिमत्यम्ब ॥ ५ ॥  
 न बुधत्वं न विधुत्वं न विधिद्वं नौमि किं तु भृङ्गत्वम् । असकृ-  
 द्दणम्य याचे त्वच्चरणाब्जस्य कान्तिमत्यम्ब ॥ ६ ॥ अभजमहं किं  
 सारे कंसारे वीपदेऽपि संसारे । रुचिमत्तां शुचिमत्तामहह त्वं पाहि  
 कान्तिमत्यम्ब ॥ ७ ॥ मामसकृदप्रसादाद्दुष्कृतकारीति माऽवमन्यस्व ।  
 स्मर किं न मया सुकृतं वर्धितमिदमद्य कान्तिमत्यम्ब ॥ ८ ॥ करुणा-

विषयं यदि मां न तनोषि यथा तथापि वर्तेऽहम् । भवपि कृपा-  
 लुत्वं ते सीदामि मृषेति कान्तिमत्यम्ब ॥ ९ ॥ अतुलितभवानु-  
 रागिणि दुर्वर्णाचलविहारिणि मयि त्वम् । समतेर्ष्यया प्रसादं  
 न विधत्से किं नु कान्तिमत्यम्ब ॥ १० ॥ द्यां गां वाभ्यपतं  
 यदि जीवातुस्त्वामृतेऽन्ततः को मे । हित्वा पयोदपाङ्गं स्तोकस्य  
 गतिः क्व कान्तिमत्यम्ब ॥ ११ ॥ कं वा कटाक्षलक्ष्यं न  
 करोष्येवं मयि त्वमासीः किम् । किं त्वामुपालभेऽहं विधिर्गरी-  
 यान्हि कान्तिमत्यम्ब ॥ १२ ॥ तनुजे जननी जनयत्यहितेऽपि  
 प्रेम हीति तन्मिथ्या । यदुपेक्षसे त्रिलोकीं मातर्मा देवि  
 कान्तिमत्यम्ब ॥ १३ ॥ निन्दामि साधुवर्गं स्तौमि पुनः  
 क्षीणषड्गसंसर्गम् । वन्दे किं ते चरणे किं स्यात्प्रीतिस्तु कान्तिम-  
 त्यम्ब ॥ १४ ॥ गीर्वाणवृन्दजिह्वारसायनस्वीयमाननीयगुणे ।  
 निगमान्तपञ्जरान्तरमरालिके पाहि कान्तिमत्यम्ब ॥ १५ ॥ त्रिनयन-  
 कान्ते शान्ते तान्ते स्वान्ते ममास्तु वद दान्ते । कृपया  
 मुनिजनचिन्तितचरणे निवसाद्य कान्तिमत्यम्ब ॥ १६ ॥ धुतकदने  
 कृतमदने भृशमदने योगिशर्वभक्तानाम् । मणिसदने शुभरदने  
 शशिवदने पाहि कान्तिमत्यम्ब ॥ १७ ॥ गिरितनुजे हतदनुजे  
 वरमनुजेद्वाभिधे च हर्यनुजे । गुहतनुजेऽवितमनुजे कुरु करुणां  
 देवि कान्तिमत्यम्ब ॥ १८ ॥ गजगमने रिपुदमने हरकमने क्लृप्त-  
 पापकृच्छमने । कलिजनने मयि दयया प्रसीद हे देवि कान्तिमत्यम्ब  
 ॥ १९ ॥ यन्मानसे पदाब्जं तव संविद्धास्त्रदाभयाभाति । तत्पाद-  
 दासदासकदासत्वं नौमि कान्तिमत्यम्ब ॥ २० ॥ दुष्करदुष्कृत-  
 राशेर्न विभेमि शिवे यदि प्रसादस्ते । दलने इषदां टङ्कः कल्पेत  
 न किं नु कान्तिमत्यम्ब ॥ २१ ॥ कोमलदेहं किमपि श्यामलशोभं

शरन्मृगाङ्गमुखम् । रूपं तव हृदये मम दीपश्रियमेतु कान्तिम-  
 ल्यम्ब ॥ २२ ॥ किञ्चनवञ्चनदक्षं पञ्चशरारेः प्रपञ्चजीवातुम् ।  
 चञ्चलमञ्चलमक्षणोरयि मयि कुरु देवि कान्तिमल्यम्ब ॥ २३ ॥  
 अञ्चति यं त्वदपाङ्गः किञ्चित्तस्यैव कुम्भदासत्वे । अहमहमिकया  
 विबुधाः कलहं कलयन्ति कान्तिमल्यम्ब ॥ २४ ॥ किमिदं वदाद्भुतं  
 ते कास्मिंश्चिल्लक्षिते कटाक्षेण । बृंहादीनां हृदयं दीनत्वं याति  
 कान्तिमल्यम्ब ॥ २५ ॥ प्रायो रायोपचिते मायोपायोल्बणासुर-  
 क्षपणे । गेयो जायोरुबले श्रेयो भूयोऽस्तु कान्तिमल्यम्ब ॥ २६ ॥  
 करणं शरणं तव लसदलकं कुलकं गिरीशभाग्यानाम् । सरलं  
 विरलं जयति सकरुणं तरुणां हि कान्तिमल्यम्ब ॥ २७ ॥ शंकरि  
 नमांसि वाणी किंकरि दैतेयराड्भयंकरिते । करवै मुरवैर्यनुजे  
 पुरवैर्यसिक्रेऽद्य कान्तिमल्यम्ब ॥ २८ ॥ तव सेवां भुवि के वा  
 नाकाङ्क्षन्ते क्षमाभृतस्तनये । त्वमिव भवेयुर्यदि ते भजन्ति ये यां हि  
 कान्तिमल्यम्ब ॥ २९ ॥ भवदवशिखाभिवीतं शीतलयेर्मा कटाक्षवि-  
 क्षेपैः । कादम्बिनीव सलिलैः शिखण्डिनं देवि कान्तिमल्यम्ब ॥ ३० ॥  
 त्वद्गुणपयःकणं मे निपीय मुक्तेरलंक्रियां गिरतु । चेतःशुक्तिर्मुक्तां  
 भक्तिमिषां देवि कान्तिमल्यम्ब ॥ ३१ ॥ गुणगणमहामणीनामागम-  
 पाथोधिजन्मभाजां ते । गुणतां कदा नु भजतां मम धिषणा देवि  
 कान्तिमल्यम्ब ॥ ३२ ॥ पाटीरचर्चितस्तनि कोटीरकृतक्षपाधिराह-  
 कलिके । वीटीरसेन कविताघाटीं कुरु मेऽद्य कान्तिमल्यम्ब ॥ ३३ ॥  
 तव करुणां किं ब्रूमस्त्वामप्येषानवेक्ष्य तूष्णीकाम् । उरीकरोति  
 पापिनमपि विनतं देवि कान्तिमल्यम्ब ॥ ३४ ॥ ईशोऽपि विना  
 भवतीं न चलितुमपि किं पुनर्वयं शक्ताः । किमुपेक्षसे प्रसीद क्षिति-  
 धरकन्येऽद्य कान्तिमल्यम्ब ॥ ३५ ॥ मन्मानसाम्प्रशाखी पल्लवितः

पुष्पितोऽनुरागेण । हर्षेण च प्रसादाल्लघु तव फलिनोऽस्तु कान्ति  
 मत्यम्ब ॥ ३६ ॥ ध्यानाम्बरवसतेर्मम मानसमेघस्य दैन्यवर्षस्य ।  
 पदयुगली तव शम्पा लक्ष्मीं विदधातु कान्तिमत्यम्ब ॥ ३७ ॥  
 कलितपनभानुतप्तं चित्तचकोरं ममातिशीताभिः । जीवय कटाक्ष-  
 दम्भज्योत्स्नाभिर्देवि कान्तिमत्यम्ब ॥ ३८ ॥ ज्योत्स्नासधीचीभि-  
 र्दुग्धश्रीभिः कटाक्षवीचीभिः । शीतलयानीचीभिः कृपया मां देवि  
 कान्तिमत्यम्ब ॥ ३९ ॥ रुष्टा त्वमागसा यदि तर्जय दृष्ट्यापि नेक्षसे  
 यदि माम् । बाल इव लोलचक्षुः कं शरणं यामि कान्तिमत्यम्ब  
 ॥ ४० ॥ विभवः के किं कर्तुं प्रभवः करुणा न चेत्त्वान्तेऽपि ।  
 नोच्छ्वसितुं कृतमेभिस्त्वामीश्वरि नौमि कान्तिमत्यम्ब ॥ ४१ ॥  
 जित्वा मदमुखरिपुगणमित्वा त्वद्भक्तभावसाम्राज्यम् । गत्वा सुखं  
 जनोऽयं वर्तेत कदा नु कान्तिमत्यम्ब ॥ ४२ ॥ अखिलदिविषदा-  
 लम्बे पदयुग्मं देवि ते सदालम्बे । जगतां गोमत्यम्ब क्षितिधर-  
 कन्येऽद्य कान्तिमत्यम्ब ॥ ४३ ॥ अत्रैव कल्पवल्लीचिन्तामणिरस्ति  
 कामधेनुरपि । वेद्मि न किं यदि बुधता पुंसा लभ्येत कान्तिमत्यम्ब  
 ॥ ४४ ॥ नाहं भजामि दैवं मनसाप्यन्यत्त्वमेव दैवं मे । न मृषा  
 भणामि शोधय मानसमाविश्य कान्तिमत्यम्ब ॥ ४५ ॥ खेदयसि  
 मां मृगं किं मृगतृण्णेव प्रसीद नौमि शिवे । मोदय कृपया नो  
 चेत्क नु यायां देवि कान्तिमत्यम्ब ॥ ४६ ॥ कार्यं स्वेन स्वहितं  
 को नाम वदेदयं जनो वेत्ति । त्वं वा वदसि किमस्माद्भूतिस्त्व-  
 मेवास्य कान्तिमत्यम्ब ॥ ४७ ॥ धन्योऽस्ति को मदन्यो दिवि वा  
 भुवि वा करोषि चेत्करुणाम् । इदमपि विश्वं विश्वं मम हस्ते किं च  
 कान्तिमत्यम्ब ॥ ४८ ॥ तरुणेन्दुचूडजाये त्वां मनुजा ये भजन्ति  
 तेषां ते । भूतिः पदाब्जधूलिर्धूलिर्भूतिस्तु कान्तिमत्यम्ब ॥ ४९ ॥

त्वामत्र सेवते यस्त्वत्सारूप्यं समेत्य सोऽमुत्र । हरकेल्यां त्वद-  
 सूयापात्रति चित्राङ्गि कान्तिमत्यम्ब ॥ ५० ॥ चित्रोयते मनस्त्वां  
 दृष्ट्वा भाग्यावतारमूर्तिं मे । किं व सुधाब्धेर्लहरीविहारितामेति कान्ति-  
 मत्यम्ब ॥ ५१ ॥ किरतु भवती कटाक्षाञ्जलजसदक्षात्रसेन तादृक्षान् ।  
 कृतसुररक्षान्मोहनदक्षान्भीमस्य कान्तिमत्यम्ब ॥ ५२ ॥ मानसवा-  
 र्धिनिलीनौ रागद्वेषौ प्रबोधवेदमुषौ । मधुकैटभौ तवेक्षणमीनो मे  
 हरतु कान्तिमत्यम्ब ॥ ५३ ॥ मञ्जुलभाषिणि वञ्जुलकुड्मलललि-  
 तालके लसत्तिलके । पालय कुवलयनयने बालं मां देवि कान्ति-  
 मत्यम्ब ॥ ५४ ॥ पुरमथनविलोलाभिः पटुलीलाभिः कटाक्षमा-  
 लाभिः । शुभशीलाभिः कुवलयनीलाभिः पश्य कान्तिमत्यम्ब  
 ॥ ५५ ॥ कहणारसार्द्रनयने शरणागतपालनैककृतदीक्षे । प्रगुणा-  
 भरणे पालय दीनं मां देवि कान्तिमत्यम्ब ॥ ५६ ॥ नरजन्मैव  
 वरं त्वद्भजनं येन क्रियेत चेदस्मात् । किमवरमेवं नो चेदतस्त-  
 देवास्तु कान्तिमत्यम्ब ॥ ५७ ॥ यद्दुर्लभं सुरैरपि तन्नरजन्मादिशो  
 नमास्येत् । सार्थय दानाद्भक्तैर्व्यर्थय मान्येन कान्तिमत्यम्ब  
 ॥ ५८ ॥ जीवति पञ्चभिरेभिर्न विनाऽस्त्येभिर्जनस्तनुं भजते ।  
 तदपि तदासीनां त्वां दरमपि नो वेत्ति कान्तिमत्यम्ब ॥ ५९ ॥  
 यत्प्रेमद्विपवदने षड्वदने वा कुरुष्व तन्मयि ते । जात्वपि मा  
 भूद्भेदः स्तोत्रैश्चस्मासु कान्तिमत्यम्ब ॥ ६० ॥ शम्बररुहरुचिवदने  
 शम्बररिपुजीविके हिमाद्रिसुते । अम्बरमध्ये बम्बरडम्बरचिकुरेऽव  
 कान्तिमत्यम्ब ॥ ६१ ॥ मन्मानसपाठीनं कलिपुलिने क्रोधभानु-  
 संतप्ते । सिञ्च परितो भ्रमन्तं कृपोर्मिभिर्देवि कान्तिमत्यम्ब ॥ ६२ ॥  
 यमिनः क्व वेद मुकुटान्यपि भवतीं भावयन्ति वा नो वा ।  
 यद्येवं मम हृदयं वेतु कथं ब्रूहि कान्तिमत्यम्ब ॥ ६३ ॥ क्लिश्य-

त्ययं जनो बत जननाद्यैरित्यहं श्रितो भवतीम् । तत्राप्येवं यदि  
वद तव किं महिमात्र कान्तिमत्यम्ब ॥ ६४ ॥ वृजिनानि सन्तु  
किमतस्तेषां धूल्यै न किं भवेद्बद ते । स्मरणं दृषदुल्लेपणमिव काक-  
गणस्य कान्तिमत्यम्ब ॥ ६५ ॥ प्रसरति तव प्रसादे किमलभ्यं  
व्यत्यये तु किं लभ्यम् । लभ्यमलभ्यं किं नस्तेन विना देवि  
कान्तिमत्यम्ब ॥ ६६ ॥ किं चिन्तयामि संविच्छरदुदयं त्वत्पद-  
च्छलं कतकम् । घृष्टं यदि प्रसीदेद्दुदयजलं मेऽद्य कान्तिमत्यम्ब  
॥ ६७ ॥ विभजतु तव पदयुगली हंसीयोगीन्द्रमानसैकचरी ।  
संविदसंवित्पयसी मिलिते हृदि मेऽद्य कान्तिमत्यम्ब ॥ ६८ ॥  
कियदायुस्तत्रार्धं स्वप्ने न हतं कियच्च बाल्याद्यैः । कियदस्ति केन  
भजनं तृप्तिस्तव केन कान्तिमत्यम्ब ॥ ६९ ॥ वेद्मि न धर्ममधर्मं  
कायक्लेशोऽस्त्यदो विचारफलम् । जानाम्येकं भजनं तव शुभदं  
हीति कान्तिमत्यम्ब ॥ ७० ॥ स्निह्यति भोगे द्रुह्यति योगायेदं  
वृथाद्य मुह्यति मे । हृदयं किमु स्वतो वा परतो वा वेत्ति कान्ति-  
मत्यम्ब ॥ ७१ ॥ न विभीमो भवजलधेर्दरमपि दनुजारिसोदरि  
शिवे ते । आस्ते कटाक्षवीक्षातरणिर्ननु देवि कान्तिमत्यम्ब ॥ ७२ ॥  
चिन्तामणौ करस्थेऽप्यटनं वीथीषु किं ब्रुवे मातः । वद किं मे  
त्वयि सत्यामन्याश्रयणे न कान्तिमत्यम्ब ॥ ७३ ॥ नरवर्णनेन रसना  
परवनितावीक्षणेन नेत्रमपि । क्रौर्येण मनोऽपि हतं भाव्यं तु न  
वेद्मि कान्तिमत्यम्ब ॥ ७४ ॥ त्रासितसुरपतितसं तसं किं धर्ममेव  
वा क्लृप्तम् । किमपि न संचितममितं वृजिनमये किं तु कान्तिम-  
त्यम्ब ॥ ७५ ॥ पापीत्युपेक्षसे चेत्पातुं काऽन्या भवेद्विना भव-  
तीम् । किमिदं न वेद्मि सोऽयं बकमन्नः कस्य कान्तिमत्यम्ब  
॥ ७६ ॥ वञ्चयितुं वृजिनाद्यैर्मुग्धान्भवतीं विनेतराद्धेक्षे । किमतः

परं करिष्यसि विदितमिदं मेऽद्य कान्तिमत्यम्ब ॥ ७७ ॥ वञ्चयसि  
मां रुदन्तं बालमिव फलेन मां धनाढ्येन । माऽस्तु कापि ममेदं  
कैवल्यं देहि कान्तिमत्यम्ब ॥ ७८ ॥ त्रय्या किं मेऽद्य गुणे तव  
विदिते यो यतस्तु संभवति । आस्तां मौक्तिकलाभे सति शुक्त्या  
किं नु कान्तिमत्यम्ब ॥ ७९ ॥ अद्भुतमिदं सकृद्येन ज्ञाता वा  
श्रियो दिशस्येभ्यः । ये खलु भक्तास्तेभ्यः कैवल्यं दिशसि कान्ति-  
मत्यम्ब ॥ ८० ॥ सुरनैचिकीव विबुधान्कादम्बिनि केव नीलकण्ठ-  
मपि । प्रीणयसि मानसं मे शोभय हंसीव कान्तिमत्यम्ब ॥ ८१ ॥  
कर्तुं मनःप्रसादं तव मयि चेकिं करिष्यति वृजिनम् । जलजविकासे  
भानोः परिपन्थितमो नु कान्तिमत्यम्ब ॥ ८२ ॥ तव तु कृष्णा  
स्त्रवन्त्यां प्रवहन्त्यां स्तोकता गतेति मया । लुठति स्फुटति मनो मे  
नेदं जानासि कान्तिमत्यम्ब ॥ ८३ ॥ शोधयितुमुदासीना यदि मां  
पात्रं किमस्य पश्याहम् । मादृशि का वा वार्ता दासजने कान्ति-  
मत्यम्ब ॥ ८४ ॥ अभजमनन्यगतिस्त्वां किं कुर्यास्त्वं न वेद्म्यतःप्र-  
भृति । अवने वाऽनवने वा न विचारो मेऽस्ति कान्तिमत्यम्ब  
॥ ८५ ॥ किं वर्तते ममास्मान्निखिलजगन्मस्तलालितं भाग्यम् ।  
यमिहृदयपद्महंसीं यत्त्वां सेवेऽद्य कान्तिमत्यम्ब ॥ ८६ ॥ कर्तुं  
जगन्ति विधिवद्भर्तुं हरिवद्विरीशवद्भर्तुम् । लीलावती त्वमेव प्रती-  
यसे देवि कान्तिमत्यम्ब ॥ ८७ ॥ केचिद्विदन्ति भवतीं केचिन्न  
विदन्ति देवि सर्वमिदम् । त्वत्कृत्यं वद सत्यं किं लब्धं तेन  
कान्तिमत्यम्ब ॥ ८८ ॥ शास्त्राणि कुक्षिपूत्यै स्फूर्त्यै निगमाश्च  
कर्मणां किं तैः । किं तव तत्त्वं ज्ञेयं यैस्त्वत्कृपयैव कान्तिमत्यम्ब  
॥ ८९ ॥ किं प्रार्थये पुनः पुनरवने भवतीं विना विचारः स्यात् ।  
कस्याः क इति विदन्नपि दूये मोहेन कान्तिमत्यम्ब ॥ ९० ॥



विदुषस्त्वां शरणं मे शास्त्रश्रमलेशवार्तयापि कृतम् । करजुषि  
 नवनीते किं दुग्धविचारेण कान्तिमत्यम्ब ॥ ९१ ॥ प्रणवोपनिष-  
 न्निगमागमयोगिमनःस्विवातितुङ्गेषु । भाहि प्रमेव तरणेर्मम हृदि  
 निम्नेऽपि कान्तिमत्यम्ब ॥ ९२ ॥ स्फुटितारुणमणिशोभं त्रुटिताभि-  
 नवप्रवालमृदुलत्वम् । श्रुतिशिखरशेखरं ते चरणाब्जं स्तौमि  
 कान्तिमत्यम्ब ॥ ९३ ॥ तव चरणाम्बुजभजनादमृततरसस्यन्दिनः  
 कदाप्यन्यत् । स्वप्नेऽपि किञ्चिदपि मे मा स्म भवेद्देवि कान्तिम-  
 त्यम्ब ॥ ९४ ॥ विस्मापनं पुरारेरस्माद्गजीविकां परात्परमम् ।  
 सुषमामयं स्वरूपं सदा निषेवेय कान्तिमत्यम्ब ॥ ९५ ॥ मङ्गलम-  
 स्त्विति पिष्टं पिनष्टि गीः सर्वमङ्गलायास्ते । वशितजयायाश्च तथा  
 जयेति वादोऽपि कान्तिमत्यम्ब ॥ ९६ ॥ आशासितुर्विभूत्यै भवति  
 भवत्यै हि मङ्गलाशास्तिः । स्वामिसमृद्ध्याशंसा भृत्योन्नत्यै हि  
 कान्तिमत्यम्ब ॥ ९७ ॥ निगमैरपरिच्छेद्यं क्व वैभवं तेऽल्पधीः क्व  
 चाहमिति । तूष्णीकं मां भक्तिस्तव मुखरयति स्म कान्तिमत्यम्ब  
 ॥ ९८ ॥ अनुकम्पापरवशितं कम्पातटसीम्नि कल्पितावसथम् ।  
 उपनिषदां तात्पर्यं तव रूपं स्तौमि कान्तिमत्यम्ब ॥ ९९ ॥ जय  
 धरणीधरतनये जय वेणुवनाधिराट्प्रिये देवि । जय जम्भभेदिविनुते  
 जय जगतामम्ब कान्तिमत्यम्ब ॥ १०० ॥ गुणमञ्जरिपिञ्जरितं  
 सुन्दररचितं विभूषणं सुदृशाम् । गीतिशतकं भवत्या क्षयतु  
 कटाक्षेण कान्तिमत्यम्ब ॥ १०१ ॥ वसा यस्य मनीषिहारतरलः  
 श्रीवेङ्कटेशो महान्माता यस्य पुनः सरोजनिलया साध्वीशिरो-  
 भूषणम् । श्रीवत्साभिजनामृताम्बुधिविधुः सोऽयं कविः सुन्दरो  
 देव्या गीतिशतं व्यधत् महितं श्रीकान्तिमत्या मुदे ॥ १०२ ॥  
 इति श्रीसुन्दराचार्यप्रणीतं देवीगीतिशतकं संपूर्णम् ॥

## २१७. त्रिपुरसुन्दरीमानसपूजनस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अमृतजलधिमध्योल्लासिरत्नान्तरीपप्रसृम-  
रकिरणालीकल्पितोद्यानशोभे । सुरतरुनिकुरम्बस्पृष्टवातायनान्तश्च-  
लदलपटलीभिः क्लृप्तधूपादिकृत्ये ॥ १ ॥ मणिमयभवनेऽन्तःप्रौढ-  
माणिक्यशालामधिवसति विशाला कापि ते रत्नवेदी । तदुपरि  
कृतवासं दत्तबालार्कहासं दिशतु शुभमनन्ते देवि सिंहासनं ते  
॥ २ ॥ तदुपरि घृतनानाहेतिभूषाश्मरश्मिव्यतिकरपुनरुक्तीभूतर-  
म्योत्तरीयाम् । गलदमलदयाम्भःसिक्तभक्तप्ररोहां प्रणवनलिनभृङ्गीं  
भावये ज्ञानभङ्गीम् ॥ ३ ॥ द्रुहिणहरिहराणां मौलिसंचारशीलं  
मणिघटितविभूषारश्मिनिर्णेजितं च । निजमतिदृषदाहं भक्तिगङ्गा-  
पयोभिः पद्मयुगममलं ते देवि निर्णेजयामि ॥ ४ ॥ गरुडमणिमयू-  
खस्पर्धिदूर्वासनाथैः कुशशिशुपरिजुष्टैः स्फीतसिद्धार्थसाथैः ।  
उपहितसितगन्धैः साक्षतैर्वारिभिस्ते जननि चरणपद्मे पाद्यमाद्यं  
ददामि ॥ ५ ॥ फलकुसुमसनार्थं नूत्तरत्नप्ररोहं मलयजरसदिग्धं  
स्निग्धमुग्धाक्षतं च । दरनियमितभक्तानीकवाब्जप्रदाने करसरसि-  
रुहेऽस्मिन्नर्घ्यमध्ये ददामि ॥ ६ ॥ शिशिरकिरणजातीपत्रदेवप्रसू-  
नस्फुटितदलनवैलाकान्तकक्कोलगन्धम् । शिशिरममलमेतद्बद्धपी-  
यूषसख्यं सलिलमखिलमातस्त्वं प्रसन्नाचमेथाः ॥ ७ ॥ नवमणिह-  
यपीठे प्रेतपद्मस्थितापि प्रपदतरलशोभास्पृष्टसद्विष्टरश्रि । दधिमधु-  
घृतमिश्रं त्रिविराजोपनीतं शशिमुखि मधुपर्कं त्वं मुखान्तर्नयेथाः  
॥ ८ ॥ पुनराचमनं कार्यं जगज्जननि सुव्रते । त्वच्छिक्षितेन मार्गेण  
यतो लोकः प्रवर्तते ॥ ९ ॥ त्वरितसहचरीभिर्दत्तहस्तावलम्बं  
चरणनलिनमेतत्पादुकास्थं विधाय । प्रविश विविधशालं स्नानगेहा-  
न्तरालं पशुपतिसहितैवाभ्यङ्गमङ्गीकुरुष्व ॥ १० ॥ अपि रसिक-

विगीतं भक्तचित्तानुमत्यै सद्यहृदयभावे स्नाहि पञ्चामृतेन ।  
शशिमृगमदमुस्तागौरसिद्धार्थचूर्णैः कुसुमजलविमिश्रैः स्वैरमुद्वर्त-  
याङ्गम् ॥ ११ ॥ परिजनपरिमृष्टे त्वच्छरीरे न यावच्छशिरसलिल-  
धारां कापि चिक्षेप तावत् । उदयिनि जनमातः सीत्कृते  
बद्धभावैस्त्रिपुरमथनहासैव्रीडितं क्रीडितं ते ॥ १२ ॥ अथ विमलि-  
तरत्नस्वर्णदुर्वर्णकुम्भैस्त्रिभुवनगततीर्थानीतपानीयपूर्णैः । स्नपयति  
सुरनारीवृन्दमेतत्तथापि प्रणयजलमिदं नः स्नानकृत्यं करोतु  
॥ १३ ॥ विमलधवलचीनप्रच्छदप्रावृताङ्गयास्तव शिरसिरुहेभ्यो  
निर्हरेऽम्बाम्बुविन्दून् । अगरुशकलधूपैर्धूप्यतां चाङ्गमङ्गं सह  
पशुपतिना त्वं याहि वासोगृहान्तः ॥ १४ ॥ नवविमलविचित्रे  
वाससी नूत्तरत्नद्युतिकृतपुनरुक्तायामसंशोभिनी ते । अथ कुचपरि-  
णाहाच्छादिनीं शुभनेत्रत्रितयभवदसूयां कंचुकीमर्पयामि ॥ १५ ॥  
नहनमपि कचानां कङ्कतीभिर्विधाय ग्रथितमणिविभूषां देवि वेणीं  
करोमि । निहितनवकिरीटालम्बिमुक्तालताभिस्ततबहलमयूखां  
चन्द्रलेखां विदध्याम् ॥ १६ ॥ अलिकतलविलम्बिस्फीतसीमन्त-  
मुक्तासरणिघटितहीरस्पष्टचन्द्रात्ततन्द्रे । विविधमणिगणाङ्कोत्तंस-  
संश्लिष्यदश्मा श्रवणयुगविभूषा देवि तोषाय भूयात् ॥ १७ ॥  
विविधविरचनाभिर्भिन्नभिन्ना विभूषा जनयतु तव कण्ठे देवि  
कामप्यभिल्याम् । गुणिनमपि गिरीशश्लेषदत्तान्तरायं कठिनकुच-  
युगाग्रे हारमारोपयामि ॥ १८ ॥ दरतरलविलम्बिस्वर्णसूत्रान्तगुच्छे  
जननि तव दिशेतामङ्गदे शर्मकर्म । अथ वलयमणीनां रश्मि-  
संभिन्नमुद्रां जनयतु पुनरुक्तां शृङ्खलामन्तरीणाम् ॥ १९ ॥  
मणिमयरशनाधःक्षुद्रघण्टानिनादा मणितगुणनिकानां स्मारकाः  
स्युः शिवस्य । मरकतमणिजातं मञ्जुमञ्जीरयुग्मं रचयतु शशिमौले

रञ्जनं सिञ्जितेन ॥ २० ॥ अरुणमणिकृतानामङ्गुलीभूषणानां  
 प्रभवतु पदमुत्त्रैर्लाक्ष्या रञ्जितं ते । मृगमदरचितायां पत्रभङ्गील-  
 तायामनुभवतु दृगन्तो बन्धनं भूतभर्तुः ॥ २१ ॥ भज जननि  
 हरिद्रां दत्तहारिद्रमुद्रां कुसुमसलिलतैलाक्रान्तकाश्मीरकोशाम् ।  
 अथ नसि कुरु मुक्तां दन्तवासोनुषक्तां स्मितरुचिपुनरुक्तां नन्दि-  
 तानेकभक्ताम् ॥ २२ ॥ सहजनलिननीले खञ्जने खञ्जनानां  
 भवनिगडगतानां मोचने लोचने ते । जननि गिरिशचेतोरञ्जने  
 मन्दमन्दं मसृणिमसृणितैस्तैरञ्जनैरञ्जनेयम् ॥ २३ ॥ प्रणतिभिरु-  
 पनीतं दीप्तलालाटनेत्रप्रतिभटमिव शंभोर्मृत्युबाधाविरोधि । शशिन  
 इव मुखेन्दोर्भेदकः कोऽपि धर्मो जनयतु मुदमुच्चैः कुङ्कुमं रङ्कुनेत्रे  
 ॥ २४ ॥ युगपदुपगतेन्द्रोपेन्द्ररुद्रादिमौलिस्थलमुकुटविघट्टच्चण्डद-  
 ण्डाभिघातैः । कृतसरणिरजस्रक्रुद्धदौवारिकैस्ते जननि भव विभूषा  
 प्रेतपद्मासनस्य ॥ २५ ॥ अहमहमिकयाधःपातुकानां सुराणां  
 प्रपदमपि शरीरे देवि संयोज्य शीघ्रम् । करुणरसमयीनां लोचना-  
 न्तश्छटानां कतिपयवलनाभिर्देहि पूजावकाशम् ॥ २६ ॥ अगुरुधु-  
 सृणचोरीशीरगोरोचनाभिर्मलयजमृगनाभिस्फीतकर्पूरपूरैः । कुसुम-  
 सलिलघृष्टैः कल्पयित्वाङ्गरागं पटुतरपटवासैर्वासये तेऽङ्गकानि  
 ॥ २७ ॥ कमलकुमुदमल्लीमालतीकुन्दजातीबकुलकनकनीपाशो-  
 कचाम्पेयकाद्यैः । मरुब्रकतुलसीभिः केतकीबिल्वपत्रैर्दमनकशतप-  
 त्रैरर्चये त्वत्पदाब्जम् ॥ २८ ॥ हारशेखरवतंसशाटिकाप्रच्छकातुलि-  
 तकञ्जुकीमुखैः । मण्डपैर्जवनिकाभिरुच्चकैः कौसुमैस्तव मुदं  
 कदम्बये ॥ २९ ॥ कनकमयहसन्तीकोटिमध्यस्थितानां मृदुपवन-  
 धुतानां दीप्तवैश्वानराणाम् । अगुरुमुपरि हुत्वा गुग्गुलुं सर्जखण्डा-  
 न्वृतजतुपरिमिश्रं त्वां शिवे धूपयामि ॥ ३० ॥ धूपवर्तितरुमन्त-

रान्तरा गन्धतैलपरिपूर्णदीपिकाः । आवहन्तु तव पार्श्वयोस्तरामम्बिके जवनिकापटश्रियम् ॥ ३१ ॥ सुरसुरभिजसर्पिःपूरिते रत्नपात्रे हिमकिरणरजोभिर्लोडितां तूलवर्तीम् । तरुणदहनयुक्तामम्बकृत्वा ददेयं निरयनिरसनाय प्रस्फुरन्तं प्रदीपम् ॥ ३२ ॥ रजतकनकहीराद्यश्मपात्रेषु मातर्विविधरससनाथैश्चोष्यलेह्यप्रपेयैः । उपहितबहुभक्ष्यैर्व्यञ्जनैश्चारुखाद्यैर्जठरदहनवृत्तिं नित्यवृत्ते चरेथाः ॥ ३३ ॥ परस्परकुतूहलैः कवलदानरूपैः शिवे पुराणतरुणौ युवां चरतमत्र लीलाशितम् । सुगन्धि सलिलं तथा पिबतमेणनाभीरसैः सकेसरनिशाकरै रचयतं करोद्धर्तनम् ॥ ३४ ॥ पनसकदलजम्बूकर्कटीहारहूरामलकबदरनिम्बूदुम्बरैर्वीजपूरैः । अमृतलकुचबिल्वैर्दाडिमीनालिकेरै रुचिरुचितफलैस्ते वर्धतां बद्धरागा ॥ ३५ ॥ शशिकरधवलानां नागवल्लीदलानां क्रमुककदरजातीचन्द्रसंयोगभाजाम् । मृगमदसुरसूनुस्फीतचूर्णावृतानां भजतु जननि रागं त्वन्मुखाभोजमेतत् ॥ ३६ ॥ कनकभरितपृथ्वीं मानुषानन्दमाहुस्तदुपरि शतकोटिक्रामुकानन्दमाहुः । जननि तव ददेयं दक्षिणां कां तथापि प्रथय मयि दृगन्तं दक्षिणावीक्षणेन ॥ ३७ ॥ त्रिभुवनकुहरेऽस्मिन्पूरिते वेणुवीणापटुपटहकझिल्लीतालघण्टानिनादैः । उरगसुरवधूभिर्गीयमानं समन्ताज्जनयतु पदमुच्चैर्देवि नीराजनं ते ॥ ३८ ॥ प्राणेषु पञ्चसु निधाय षडात्मवृत्तिवर्तींश्चिदभिपरिचुम्बितजातशोभाः । नीराजयामि भवतीं भवतीव्रतापनिर्वापहेतुमधुना मधुनाऽलसाक्षि ॥ ३९ ॥ उरगतुरगहंसीकेकिशालूरभृङ्गीमदकलकलविङ्कीश्येनपारावतानाम् । गतिभिरुपचितोऽयं मौलितः पादमूलं हरतु दुरितजातं देवि कर्पूरदीपः ॥ ४० ॥ जय देवि जय देवि जय विश्वाधारे दीनानाथोद्धरणप्रवणे जनसारे ।

त्वत्पदपद्मे पद्मे विधृतव्यापारे मयि दीने कुरु करुणां करुणामृत-  
 पारे ॥ ४१ ॥ अमृतोदधिमध्यस्थितनवरत्नद्वीपे विष्वग्विकसित-  
 सुरतरुनवचम्पकनीपे । नानाकुसुमामोदिनि विधुतागरुधूपे चिन्ता-  
 मणिभवनेऽङ्गनतिष्ठत्सुरभूपे ॥ ४२ ॥ माणिक्योज्ज्वलचत्वरसिंहासन-  
 शोभे शवपञ्चकमञ्चेऽञ्चितजनलोचनलोभे । सुश्वेतातपवारणचल-  
 चामरदम्भे ध्याये भवतीमनिशं कृतजगदारम्भे ॥ ४३ ॥ दलित-  
 जपाकुसुमोपमवसनच्छन्नाङ्गीं तरुणारुणकरुणप्रदकिरणावलिभङ्गीम् ।  
 दधतीं रचनां नयने यमुनातारङ्गीं कलयन्तीं कुचकोशे सुषमां  
 नारङ्गीम् ॥ ४४ ॥ शरपञ्चकबाणासनसृणिपाशोल्लसितां मलयानिल-  
 परिवाददमुखपद्मश्वसिताम् । बालामृतकरमण्डितचूडातटमहितां  
 ज्योतिस्त्रितयालंकृतनयनत्रयसहिताम् ॥ ४५ ॥ पशुपतियन्त्रणपटु-  
 तररोमावलियूपां मन्मथतस्करगुप्तक्षमनाभीकूपाम् । प्रपदालम्बि-  
 शिखामणिवृन्दारकभूपां कमलासनहरिहरमुखचिन्त्यामितरूपाम्  
 ॥ ४६ ॥ काली बगला बाला तारा भुवनेशी वाराही मातङ्गी  
 कमला वचनेशी । छिन्ना दुर्गा गङ्गा काशी कामेशी त्वत्तो नान्य-  
 त्किंचित्त्वं चिद्रसपेशी ॥ ४७ ॥ त्वं भूमिस्त्वं सलिलं त्वं तेजः  
 प्रबलं त्वं वायुस्त्वं व्योम त्वं चित्तं विमलम् । त्वं जीवस्त्वं चेशस्त्वं  
 ब्रह्मास्यमलं सत्यानृतयोरन्यत्त्वत्तः किं सकलम् ॥ ४८ ॥ कुलकुण्डे  
 त्वं कुरुषे शयने प्रस्वापं स्वाधिष्ठाने मिहिरायुतदीधितितापम् ।  
 नीला नाभौ कण्ठे शशिभा हृतपापं वर्षस्यमृतं विन्दावानन्दावापम्  
 ॥ ४९ ॥ त्वत्पदपद्मे चित्तं त्रिपुरे मे रमतां तत्रैव प्रतिवेलं मौलिर्मे  
 नमताम् । यातायातक्लेशः सद्यः संशमतां याचे भूयो भूयो भवता  
 मे भवताम् ॥ ५० ॥ नृत्यति गायति सुरसं सुरनारीवृन्दे करताली-  
 दानोत्सुकसुरविततानन्दे । नीराजनकाले तव मुनिजननुतवेदे चरणा-

नतसम्राजः परिहृतभवखेदे ॥ ५१ ॥ मिलदलिपटलीभिः केवलं  
 घ्रातपूर्वः स्फुटितकुसुमगर्भः स्वैरसंचारिणीभिः । उपहितपटवासः  
 पुष्पधूलीकदम्बैः प्रभवतु पदपाती देवि पुष्पाञ्जलिस्ते ॥ ५२ ॥  
 सकृदपि विनताङ्घ्रिस्त्वां परिक्रम्य मातर्भवति मखफलेषु क्षीणलोलं  
 मनो नः । सरसिजमकरन्दास्वादतृप्तो मिलिन्दः क्वचिदपि पिचुमन्दे  
 चित्तवृत्तिं तनोति ॥ ५३ ॥ जननि खलकपोतन्यायतः पादुका-  
 नामधिपदकमलं ते मन्दवृन्दारकाणाम् । भवतु नयनयोस्ते गोचरः  
 क्वानतिर्मे न लसति पुनरुच्चैः स्वैरमुद्गीविका चेत् ॥ ५४ ॥ विमल-  
 मुकुरविम्बं पुण्डरीकातपत्रं शिशिरकरसमाने चामरे चामरेशि ।  
 करितुरगकदम्बं शक्तिभिर्दिश्यमानं जनय सफलमञ्जलोचनालोच-  
 नाभिः ॥ ५५ ॥ अथ कृतपरिवाराभ्यर्चनं ते समर्प्य स्तुतिभिर-  
 नुपमाभिः पावये स्वां रसज्ञाम् । यदपि न रविरश्मिः स्वोपकारं  
 विधत्ते तदपि कमलमालाम्लानहानिं तनोति ॥ ५६ ॥ श्रवसि  
 विशति यस्य त्वन्मनोरेकवर्णः सकृदपि विधियोगादम्बिके मानवस्य ।  
 लघुतरफलमेतद्यन्निवर्गाश्रयत्वं परिचरति पुरस्तात्पूरुषार्थश्चतुर्थः  
 ॥ ५७ ॥ हृदयकमलमध्ये त्वां समानीय मातः पवनभरितनाडी-  
 रन्ध्रमुद्राविधिज्ञाः । दधति परमधन्याः कुण्डलीस्पर्शहृष्यच्छशि-  
 गलदमृतौघप्लावजन्यप्रमोदम् ॥ ५८ ॥ वदति विधिकलत्रं त्वां शिवे  
 कोऽपि कश्चिन्निपुरमथनपुण्यं श्रीपतेः कोऽपि भाग्यम् । प्रकृतिमिति  
 परेऽपि प्रौढविज्ञानमेके निखिलनिगममूलं मन्महे बोधमेव ॥ ५९ ॥  
 कदा तव पदाम्बुजस्मरणजातरोमोद्गमः सदाशिवमदालसे जननि  
 मातरित्युद्गिरन् । निलीनकरणक्रियस्त्रिदशगर्वसर्वकषामखर्वपदवीं  
 भजे हरिहरादिभिर्भाविताम् ॥ ६० ॥ त्वदीयमुखचन्दिरे चलित-  
 लोचनेन्दिन्दिरे प्रसादकुलमन्दिरे स्थगितपद्मचन्द्रेन्दिरे । प्रभा-

पटलतन्तुरे ललितहावकेलीपुरे हृतस्मरहरान्तरे धृतमतिर्भवं संतरे  
 ॥ ६१ ॥ त्वदीयं यद्रूपं जनजननि बिन्दुत्रययुतं स्मरन्नन्तर्योगात्रि-  
 दिवपतितामाप सुरपः । इदं को जानीते क्षणमपि हरार्धं प्रजपतां  
 हसार्धं व्यालम्ब्य प्रतिफलति हंसः परिणतिः ॥ ६२ ॥ जननि  
 निभृतं यत्ते रूपं वदत्यतिशाश्वतं लसतु हृदि नो दीपप्रायः स कोऽपि  
 हसात्मकः । स्मरणविषये येन स्वैरं स्वरेण विजृम्भता त्रिपुरमथनः  
 प्रापेशत्वं तदात्मकतां गतः ॥ ६३ ॥ ऋचामाचार्यासि स्तुतिशत-  
 जुषां चापि यजुषां महाधाम्नां साम्नां प्रथितयशसोऽथर्वशिरसः ।  
 हरिब्रह्मेशाद्याः प्रपदकिरणोत्तंसमुकुटास्तवातस्त्वां स्तोतुं जनजननि  
 को वा प्रभवतु ॥ ६४ ॥ त्रस्यत्वञ्जनगञ्जनव्यसनिनीमुन्माथिनीं  
 माद्यतो जीवजीवकुलस्य भृङ्गपटलीन्यक्कारबद्धव्रताम् । रङ्गच्छङ्कुवि-  
 धायिनीं च नलिनश्रीगर्वमर्वकषां कारुण्यामृतवाषिणीं मयि शिवे  
 दृष्टिं मनाङ्घोष्य ॥ ६५ ॥ रिङ्गद्गुङ्गकदम्बडम्बरपरिष्वङ्गप्रसङ्गाकु-  
 लप्रत्यूषस्फुरमाणपङ्कजवनीसौभाग्यसर्वकषः । दृक्कोणः करुणाङ्कुरा-  
 ङ्किततनुः कोऽप्यद्रिजे मद्गुणुःपान्थत्वे तरसा भवेत्परिकरी  
 धन्यस्तदा स्यां न किम् ॥ ६६ ॥ समुद्यन्मार्तण्डप्रसृमरकरालीम-  
 सृणया पदद्वन्द्वानन्दप्रणयिजनरिङ्गत्करुणया । लललीलाभाजा  
 परशिवपरिष्वङ्गपरया धिया चेतः कालं नय गतनय त्वं क्षणमपि  
 ॥ ६७ ॥ वेदैरङ्घ्रिभिरुज्ज्वलोपनिषदां वृन्दैरधःकल्पितैः शास्त्राद्यैरपि  
 तिर्यगूर्ध्वकलितैरौकारमार्गेण च । विष्वङ्गात्रनिबन्धनैः परिचि-  
 तेऽस्मिन्वाङ्घ्रये पञ्जरे कीरी काचन चेतनैकविभवा चित्ते-  
 चकास्ताच्चिरम् ॥ ६८ ॥ तरुणारुणप्रतिमरम्यरुचिं कुसुमेषुचाप-  
 सृणिपाशकराम् । त्रिगुणात्परां त्रिगुणरूपमयीं भवतीमहर्निशमहं  
 कलये ॥ ६९ ॥ इति निजमतिवैभवानुरूपामकृत कविर्भुवि



सामराजनामा । समयिजनमुदेऽम्बिकासपर्याममृतसुखात्मकताविकासपर्याम् ॥ ७० ॥ इति श्रीसत्यानन्दनाथापरनामधेयसामराजदीक्षितविरचिते पूजारत्ने स्थितं त्रिपुरसुन्दरीमानसपूजनस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### २१८. परा मानसिका पूजा ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ उषसि मागधमङ्गलायनैर्झटिति जागृहि जागृहि जागृहि । अतिकृपार्द्रकटाक्षनिरीक्षणैर्जगदिदं जगदम्ब सुखीकुरु ॥ १ ॥ कनकमयवितर्दिशोभमानं दिशि दिशि पूर्णसुवर्णकुम्भयुक्तम् । मणिमयगृहमध्यमेहि मातर्मथि कृपया हि समर्चनं ग्रहीतुम् ॥ २ ॥ कनककलशशोभमानशीर्षं जलधरलम्बि समुल्लसत्पताकम् । भगवति तव संनिवासहेतोर्मणिमयमन्दिरमेतदर्पयामि ॥ ३ ॥ तपनीयमयी सुतूलिकाकमनीया मृदुलोत्तरच्छदा । नवरत्नविभूषिता मया शिबिकेयं जगदम्ब तेऽर्पिता ॥ ४ ॥ कनकमयवितर्दिस्थापिते तूलिकाढ्ये विविधकुसुमकीर्णे कोटिबालार्कवर्णे । भगवति रमणीये रत्नसिंहासनेऽस्मिन्नपविश पदयुगं हेमपीठे निधेहि ॥ ५ ॥ मणिमौक्तिकनिर्मितं महान्तं कनकस्तम्भचतुष्टयेन युक्तम् । कमनीयतमं भवानि तुभ्यं नवमुल्लोचमहं समर्पयामि ॥ ६ ॥ दूर्वया सरसिजान्वितविष्णुकान्तयापि सहितं कुसुमाढ्यम् । पद्मयुगमसदृशे पदयुगमे पाद्यमेतदुररीकुरु मातः ॥ ७ ॥ गन्धपुष्पयवसर्षपदूर्वासंयुतं तिलकुशाक्षतमिश्रम् । हेमपात्रनिहितं सह रत्नैरर्घ्यमेतदुररीकुरु मातः ॥ ८ ॥ जलजद्युतिना करेण

\* इदमेव स्तोत्रं 'चतुःषष्ट्युत्तरमानसपूजास्तोत्र' नाम्नाऽऽस्मत्काव्यमाला नवमगुच्छके मुद्रितं वरीवर्तते । क्वचिच्च 'परा पूजा' ख्ययापि प्रसिद्धम् ।

जातीफलकङ्कोललवङ्गगन्धयुक्तैः । अमृतैरमृतैरिवातिशीतैर्भगवत्या-  
चमनं विधीयताम् ॥ ९ ॥ निहितं कनकस्य संपुटे पिहितं रत्नपिधान-  
केन यत् । तदिदं भवतीकरेऽर्पितं मधुपर्कं जननि प्रगृह्यताम्  
॥ १० ॥ एतच्चम्पकतैलमम्ब विविधैः पुष्पैर्मुहुर्वासितं न्यस्तं  
रत्नमये सुवर्णचषके भृङ्गैर्भ्रमद्विर्तुतम् । सानन्दं सुरसुन्दरीभिर-  
भितो हस्ते घृतं तन्मया केशेषु भ्रमरप्रभेषु सकलेष्वङ्गेषु चालिष्यते  
॥ ११ ॥ मातः कुङ्कुमपङ्कनिर्मितमिदं देहे तवोद्वर्तनं भक्त्याऽहं  
कलयामि हेमरजसा संमिश्रितं केशरैः । केशानामलकैर्विशोधय  
विशदान्कस्तूरिकाद्यर्चितैः स्नानं ते नवरत्नकुम्भविधिना संवासितो-  
ष्णोदकैः ॥ १२ ॥ दधिदुग्धघृतैः समाक्षिकैः सितया शर्करया  
समन्वितैः । स्नपयामि बताहमादृतो जननि त्वां पुनरुष्णवारिभिः  
॥ १३ ॥ एलोशीरसुवासितैः सकुसुमैर्गङ्गादितीर्थोदकैर्माणिक्यद्रव-  
मौक्तिकामृतरसैः स्वच्छैः सुवर्णोदकैः । मन्त्रान्वैदिकतात्रिकान्परि-  
पठन् सानन्दमत्यादरात्स्नानं ते परिकल्पयामि जननि स्नानं त्वम-  
ङ्गीकुरु ॥ १४ ॥ बालार्कद्युति दाडिमीयकुसुमप्रस्पर्धि सर्वोत्तमं  
मातस्त्वं परिधेहि दिव्यवसनं भक्त्या मया कल्पितम् । मुक्ताभि-  
र्प्रथितं सुकञ्चुकमिदं स्वीकृत्य पीतप्रभं तप्तस्वर्णसमानवर्णमतुलं  
प्रावर्णमङ्गीकुरु ॥ १५ ॥ नवरत्नमये मयार्पिते कमनीये तपनीय-  
पादुके । सविलासमिदं पदद्वयं कृपया देवि तयोर्निधीयताम्  
॥ १६ ॥ बहुभिरगुरुधूपैः सादरं धूपयित्वा भगवति तव केशान्क-  
ङ्कतैर्मारजयित्वा । सुरभिभिररविन्दैश्चम्पकैश्चार्चयित्वा झटिति  
कनकसूत्रैर्जूटयन् वेष्टयामि ॥ १७ ॥ सौवीराञ्जनमिदमम्ब चक्षुषोस्ते  
विन्यस्तं कनकशलाकया मया यत् । तद्यूनं मलिनमपि त्वदक्षि-  
सङ्गाद्ब्रह्मेन्द्राद्यभिलषणीयतामियाय ॥ १८ ॥ मञ्जीरे पदयो-

निधाय रुचिरां विन्यस्य काञ्चीं कटौ मुक्ताहारमुरोजयोरनुपमां  
 नक्षत्रमालां गले । केयूराणि भुजेषु रत्नवलयश्रेणीं करेषु क्रमात्ता-  
 टङ्के तव कर्णयोर्विनिदधे शीर्षं च चूडामणिम् ॥ १९ ॥ धम्मिल्ले  
 तव देवि हेमकुसुमान्याधाय भालस्थले मुक्ताराजिविराजमानतिलकं  
 नासापुटे मौक्तिकम् । मातमौक्तिकजालिकां च कुचयोः सर्वाङ्गुली-  
 धूमिकाः कठ्यां काञ्चनकिङ्किणीर्विनिदधे रत्नावतंसं श्रुतौ ॥ २० ॥  
 मातर्भालतले तवातिविमले काश्मीरकस्तूरिकाकर्पूरागरुभिः करोमि  
 तिलकं देहाङ्गरागं तव । वक्षोजादिषु यक्षकर्दमरसं सिक्तासु  
 पुष्पाक्षतैः पादौ कुङ्कुमलेपनादिभिरहं संपूजयामि क्रमात् ॥ २१ ॥  
 रत्नाक्षतैस्त्वां परिपूजयामि मुक्ताफलैर्वा रुचिरैरविद्वैः । अखण्डितै-  
 र्देवि यवादिभिर्वा काश्मीरपङ्काङ्किततण्डुलैर्वा ॥ २२ ॥ जननि  
 चम्पकतैलमिदं पुरो ऋगमदोऽयमिदं पटवासकम् । सुरभिगन्धमिदं  
 च चतुःसमं सपदि सर्वमिदं प्रतिगृह्यताम् ॥ २३ ॥ सीमन्ते ते  
 भगवति मया सादरं न्यस्तमेतत्सिन्दूरं ते हृदयकमले हर्षवर्षं  
 तनोतु । बालादित्यद्युतिरिव सदा लोहिता यस्य कान्तिरन्तर्ध्वान्तं  
 हरतु सततं चेतसा चिन्तयामि ॥ २४ ॥ मन्दारकुन्दकरवीरलवङ्ग-  
 पुष्पैस्त्वां देवि संततमहं परिपूजयामि । जातीजपाबकुलचम्पक-  
 केतकानि नानाविधानि कुसुमानि च तेऽर्पयामि ॥ २५ ॥ मालती-  
 बकुलहेमपुष्पिकाकाञ्चनारकरवीरकेतकैः । कर्णिकारगिरिकर्णिकादिभिः  
 पूजयामि जगदम्ब ते वपुः ॥ २६ ॥ पारिजातशतपत्रपाटलैर्मल्लि-  
 काबकुलचम्पकादिभिः । अम्बुजैः सुकुसुमैश्च सादरं पूजयामि  
 जगदम्ब ते वपुः ॥ २७ ॥ लाक्षासंमिलितैः सिताभ्रसहितैः  
 श्रीवाससंमिश्रितैः कर्पूराकलितैः सितामधुयुतैर्गोसर्पिषाऽऽलोडितैः ।  
 श्रीखण्डागरुगुग्गुलुप्रभृतिभिर्नानाविधैर्वस्तुभिर्धूपं ते परिकल्पयामि

जननि स्नेहात्वमङ्गीकुरु ॥ २८ ॥ रत्नालंकृतहेमपात्रनिहितैर्गोसर्पिषा  
दीपितैर्दीपैर्दीर्घतरान्धकारभिदुरैर्बालार्ककोटिप्रभैः । आताम्रज्वलदु-  
ज्ज्वलज्वलनवद्रत्नप्रदीपैः सदा मातस्त्वामहमादरादनुदिनं नीराज-  
याम्युच्चकैः ॥ २९ ॥ मातस्त्वां दधिदुग्धपायसमहाशाल्यन्नसंता-  
निकाः सूपापूपसिताघृतैः सवटकैः सक्षुद्ररम्भाफलैः । एलाजीरक-  
हिङ्गुनागरनिशाकस्तूरिकासंस्कृतैः शाकैः साकमहं सुधाधिकरसैः  
संतर्पयाम्यम्बिके ॥ ३० ॥ सापूपसूपदधिदुग्धसिताघृतानि सुस्वादु-  
भक्ष्यपरमान्नपुरःसराणि । शाकोल्लसन्मरिचजीरकबालिहकानि  
भक्ष्याणि भक्ष जगदम्ब मयार्पितानि ॥ ३१ ॥ क्षीरमेतदिदमुत्त-  
मोत्तमं प्राज्यमाज्यमिदमुत्तमं मधु । मातरेतदमृतोपमं त्वया  
संभ्रमेण परिपीयतां मुहुः ॥ ३२ ॥ उष्णोदकैः पाणियुगं मुखं च  
प्रक्षाल्य मातः कलधौतपात्रे । कर्पूरमिश्रेण सकुङ्कुमेन हस्तौ  
समुद्धर्तय चन्दनेन ॥ ३३ ॥ अतिशीतमुशीरवासितं तपनीयावपने  
निवेदितम् । पटपूतमिदं जितामृतं शुचि गङ्गामृतमम्ब पीयताम्  
॥ ३४ ॥ जम्बवात्ररम्भाफलसंयुतानि द्राक्षाफलाक्रोडसमन्वितानि ।  
सनालिकेराणि सदाडिमानि फलानि ते देवि समर्पयामि ॥ ३५ ॥ कलि-  
ङ्गकोशातकिसंयुतानि जम्बीरनारङ्गसमन्वितानि । सबीजपूराणि सबा-  
दराणि फलानि ते चाम्ब समर्पयामि ॥ ३६ ॥ कर्पूरेण युतैर्लवङ्ग-  
सहितैः कङ्कोलचूर्णान्वितैः सुस्वादुक्रमुकैः सगौरखदिरैः सुस्निग्ध-  
जातीफलैः । मातः केतकपत्रपाण्डुरुचिभिस्ताम्बूलवल्लीदलैः सानन्दं  
मुखमण्डनीयमनुलं ताम्बूलमङ्गीकुरु ॥ ३७ ॥ एलालवङ्गादिसम-  
न्वितानि कङ्कोलकर्पूरसमिश्रितानि । ताम्बूलवल्लीदलसंयुतानि  
पूगानि ते देवि समर्पयामि ॥ ३८ ॥ ताम्बूलवल्लिदलनिर्जितहेमवर्ण  
स्वर्णाक्तपूगफलमौक्तिकचूर्णयुक्तम् । रत्नस्थगिस्थितमिदं खदिरेण

युक्तं ताम्बूलमम्ब वदनाम्बुरुहे गृहाण ॥ ३९ ॥ महति कनकपात्रे  
स्थापयित्वा विशालान् डमरुसदृशरूपान् बद्धगोधूमदीपान् । बहु-  
घृतमथ तेषु न्यस्य दीपानुकम्पान् भुवनजननि कुर्वे नित्यमारार्तिकं  
ते ॥ ४० ॥ सविनयमथ दत्त्वा जानुयुग्मं धरण्यां सपदि शिरसि  
धृत्वा पात्रमारार्तिकस्य । मुखकमलसमीपे तेऽम्ब सार्धं त्रिवारं  
भ्रमयति मयि भूयात्ते कृपार्द्रः कटाक्षः ॥ ४१ ॥ अथ  
बहुमणिमिश्रैर्मौक्तिकैस्त्वां विकीर्य त्रिभुवनकमनीयैः पूजयित्वा च  
वस्त्रैः । मिलितविविधमुक्तादिन्यलावण्ययुक्तां जननि कनकवृष्टिं  
दक्षिणां तेऽर्पयामि ॥ ४२ ॥ मातः काञ्चनदण्डमण्डितमिदं  
पूर्णेन्दुबिम्बप्रभं नानारत्नविशोभिहेमकलशं लोकत्रयाह्लादकम् ।  
भास्वनमौक्तिकजालिकापरिवृतं प्रीत्यात्महस्ते धृतं छत्रं ते परिकल्प-  
यामि शिरसि त्वद्वा स्वयं निर्मितम् ॥ ४३ ॥ शरदिन्दुमरीचिगौर-  
वर्णैर्मणिमुक्ताविलसत्सुवर्णदण्डैः । जगदम्ब विचित्रचामरैस्त्वामह-  
मानन्दभरेण वीजयामि ॥ ४४ ॥ मार्तण्डमण्डलनिभो जगदम्ब  
योऽयं भक्त्या मया मणिमयो मुकुरोऽर्पितस्ते । पूर्णेन्दुबिम्बरुचिरं  
वदनं स्वकीयमस्मिन्विलोकय विलोलविलोचने त्वम् ॥ ४५ ॥  
इन्द्रादयो नतिनतैर्मुकुटप्रदीपैर्नीराजयन्ति सततं तव पादपीठम् ।  
तस्मादहं तव समस्तशरीरमेतन्नीराजयामि जगदम्ब सहस्रदीपैः  
॥ ४६ ॥ प्रियगतिरतितुङ्गो रत्नपल्लाणयुक्तः कनकमयविभूषः  
स्निग्धगम्भीरघोषः । भगवति कलितोऽयं वाहनार्थं मया ते  
तुरगशतसमेतो वायुवेगस्तुरंगः ॥ ४७ ॥ मधुकरवृतकुम्भे न्यस्त-  
सिन्दूररेणुः कनककलितघण्टः किङ्किणीशोभिकण्ठः । श्रवणयुगल-  
चञ्चामरो मेघतुल्यो जननि तव मुदे स्तान्मत्तमातङ्ग एषः ॥ ४८ ॥  
द्रुततरतुरगैर्विराजमानं मणिमयचक्रचतुष्टयेन युक्तम् । कनकमय-

महं वितानवन्तं भगवति ते हि रथं समर्पयामि ॥ ४९ ॥  
 ह्यगजरथपत्तिशोभमानं दिशि दिशि दुंदुभिमेघनादयुक्तम् ।  
 अतिबहुचतुरङ्गसैन्यमेतद्भगवति भक्तिभरेण तेऽर्पयामि ॥ ५० ॥  
 परिखीकृतसप्तसागरं बहुसंपत्सहितं मयाम्ब ते । विपुलं धरणी-  
 तलाभिधं प्रबलं दुर्गमिदं समर्पितम् ॥ ५१ ॥ शतपत्रयुतैः स्वभाव-  
 शीतैरतिसौरभ्ययुतैः परागपीतैः । अमरीमुखराकृतैरनन्तैर्व्यजनैस्त्वां  
 जगदम्ब वीजयामि ॥ ५२ ॥ अमरलुलितलोलकुन्तलाली विगलित-  
 माल्यविकीर्णरङ्गभूमिः । इयमतिरुचिरा नटी नटन्ती तव हृदये  
 मुदमातनोतु मातः ॥ ५३ ॥ मुखनयनविलासलोलवेणीविलसित-  
 निर्जितलोलभृङ्गमालाः । युवजनसुखकारिचारुलीला भगवति ते  
 पुरतो नटन्ति बालाः ॥ ५४ ॥ रुचिरकुचतटीनां नाट्यकाले  
 नटीनां प्रतिगृहमथ तत्र प्रत्यहं प्रादुरासीत् । धिमिकितिधिमिधिद्धी  
 धिद्धिधिद्धीधिमिद्धी धिमिकितिधिमितत्ताथेयथेयेति शब्दः ॥ ५५ ॥  
 अमदलिकुलतुल्या लोलधम्मिल्लभारा स्मितमुखकमलोद्यद्दिव्यला-  
 वण्यपूरा । अनुपमतमवेषा वारयोषा नटन्ती परभृतकलकण्ठी  
 देवि धैर्यं तनोतु ॥ ५६ ॥ डमरुडिण्डिमञ्जुर्भल्ली मृदुरवार्द्रघ-  
 टार्द्रघटाहयः । झटिति झाङ्कतिभिर्जगदम्बिके मुहुरिमे हृदयं  
 सुखयन्तु ते ॥ ५७ ॥ विपञ्चीषु सप्त स्वरान्वादयन्त्यस्तव द्वारि  
 गायन्ति गन्धर्वकान्ताः । क्षणं सावधानेन चित्तेन मातः समाकर्णय  
 त्वं मया प्रार्थितासि ॥ ५८ ॥ अभिनवकमनीयैर्नर्तनैर्नर्तकीनां  
 क्षणमथ रमयित्वा चेत एवं त्वदीयम् । स्वयमहमपि चित्रैर्नृत्यवाद्य-  
 प्रगीतैर्भगवति भवदीयं मानसं रञ्जयामि ॥ ५९ ॥ तव देवि  
 गुणानुवर्णने चतुरा नो चतुराननादयः । तदिहैकमुखेषु जन्तुषु  
 स्तवनं कस्तव कर्तुमीश्वरः ॥ ६० ॥ पदे पदे या परिपूजकेभ्यः

सद्योऽश्वमेधादिफलं ददाति । तां सर्वपापक्षयहेतुभूतां प्रदक्षिणां ते  
परिकल्पयामि ॥ ६१ ॥ रक्तोत्पलारक्तलताप्रभाभ्यां ध्वजोर्ध्वरेखा-  
कुलिशाङ्किताभ्याम् । अशेषवृन्दारकवन्दिताभ्यां नमो भवानीपद-  
पङ्कजाभ्याम् ॥ ६२ ॥ चरणनलिनयुग्मं पङ्कजैः पूजयित्वा कनक-  
कमलमालां कण्ठदेशेऽर्पयित्वा । शिरसि विनिहितोऽयं रत्नपुष्पा-  
ञ्जलिस्ते हृदयकमलमध्ये देवि हर्षं तनोतु ॥ ६३ ॥ अथ मणिमय-  
मञ्चकारभरामे द्युतिमति पुष्पवितानराजमाने । प्रसरदगरुधूप-  
धूपितेऽस्मिन्भगवति वासगृहेऽस्तु ते निवासः ॥ ६४ ॥ तव देवि  
सरोजचिह्नयोः पदयोर्निर्जितपद्मरागयोः । अतिरक्ततरैरलक्तकैः  
पुनरुक्तां रचयामि रक्तताम् ॥ ६५ ॥ अथ मारुतशीतवासितं  
निजताम्बूलरसेन रञ्जितम् । तपनीयमये हि पट्टके मुखगण्डूषजलं  
निधीयताम् ॥ ६६ ॥ एतस्मिन्मणिखचिते सुवर्णपीठे त्रैलोक्याभय-  
वरदे निधाय पादौ । विस्तीर्णे मृदुतरलोत्तरच्छदेऽस्मिन्पर्यङ्के  
कनकमये निषीद मातः ॥ ६७ ॥ क्षणमथ जगदम्ब मञ्चकेऽस्मि-  
न्मृदुतरतूलिकया विराजमाने । अतिरहसि मुदा शिवेन सार्धं  
सुखशयनं कुरु मां हृदि स्मरन्ती ॥ ६८ ॥ मुक्ताकुन्देन्दुगौरां  
मणिमयमुकुटां रत्नताटङ्कयुक्तामक्षत्रकपुष्पहस्तामभयवरकरां चन्द्र-  
चूडां त्रिनेत्राम् । नानालंकारयुक्तां सुरमुकुटमणिद्योतितस्वर्णपीठां  
सानन्दां सुप्रसन्नां त्रिभुवनजननीं चेतसा चिन्तयामि ॥ ६९ ॥  
एषा भक्त्या तव विरचिता या मया देवि पूजा स्वीकृत्यैनां सपदि  
सकलान्मेऽपराधान्क्षमस्व । न्यूनं यत्तत्तव करुणया पूर्णतामेति  
सर्वं सानन्दं मे हृदयकमले तेऽस्तु नित्यं निवासः ॥ ७० ॥  
पूजामिमां पठेत्प्रातः पूजां कर्तुमनीश्वरः । पूजाफलमवाप्नोति  
वाञ्छितार्थं च विन्दति ॥ ७१ ॥ प्रत्यहं भक्तिसंयुक्तो यः पूजन-

मिदं पठेत् । वाग्वादिन्याः प्रसादेन वत्सरात्स कविर्भवेत् ॥ ७२ ॥  
 पूजामिमां यः पठति प्रभाते मध्याह्नकालेऽप्यथवा प्रदोषे ।  
 धर्मार्थकामान्पुरुषोऽभ्युपैति देहावसाने शिवतामुपैति ॥ ७३ ॥  
 इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्यश्रीमच्छंकराचार्यविरचिता परा  
 मानसिका पूजा संपूर्णा ॥

### २१९. विन्ध्यवासिनीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीनन्दगोपगृहिणीप्रभवा तनोतु भद्रं  
 सदा मम सुरार्थपरा प्रसन्ना । विन्ध्याद्रिगह्वरगताष्टभुजा प्रसिद्धा  
 सिद्धैः सुसेवितपदाब्जयुगा त्रिरूपा ॥ १ ॥ वेदैरगम्यमहिमा  
 निजबोधतुष्टा नित्या गुणत्रयपराऽखिलभेदशून्या । एका प्रपञ्चकरणे  
 त्रिगुणोरुशक्तिरुच्चावचाकृतिरथोऽचलजङ्गमात्मा ॥ २ ॥ पीयूष-  
 सिन्धुसुरपादपवाटिरत्नद्वीपे सुनीपवनशालिनि दुष्प्रवेशे । चिन्ता-  
 मणिप्रखचिते भवने निषण्णा विन्ध्येश्वरी श्रियमनल्पतरां करोतु  
 ॥ ३ ॥ श्रुत्वा स्तुतिं विधिकृतां करुणार्द्रचित्ता नारायणेन सबलौ  
 मधुकैटभाख्यौ । या संजहार जगतां प्रलये तथा सा विन्ध्येश्वरी  
 वितनुतां सुमनोरथान्मे ॥ ४ ॥ ब्रह्मेशविष्णुपुरुहूतहुताशनादि-  
 तेजोभवा महिषपीडितनिर्जराणाम् । स्थानाप्तयेऽतिकृपया महिषं  
 ममर्दं विन्ध्येश्वरी हरतु रोगविपत्तिमाशु ॥ ५ ॥ या धूम्रचण्ड-  
 बलिमुण्डनिशुम्भशुम्भरक्तान्पिपेष सुरकार्यरताप्यनेका । दुःखाम्बुधौ  
 निपतितस्य विमूढबुद्धेर्विन्ध्येश्वरी मम ददातु सुबुद्धिमम्बा ॥ ६ ॥  
 या दुर्गमं दनुभवं परिमर्द्य नाम्ना दुर्गा बभूव च ततान शुभं  
 सुराणाम् । स्वाचारकर्मविमुखस्य जुगुप्सितस्य विन्ध्येश्वरी दहतु  
 वैरिगणान्समस्तान् ॥ ७ ॥ संप्राप्य जन्म वपुषः परिपोषणाय  
 संख्यातिगवृजिनपुञ्जविधायिनो मे । चण्डासुरप्रमथिनी ललिता



च नास्मा विन्ध्येश्वरी हरतु जाड्यमहान्धकारम् ॥ ८ ॥ या तारय-  
त्यखिलदुष्कृतिलोकपुञ्जात्तारेति नाम गदिता भुवनेषु देवी ।  
अज्ञानसिन्धुतरणे दृढनौस्वरूपा विन्ध्येश्वरी मम गुणाग्र्यसुतं ददातु  
॥ ९ ॥ रक्ताम्बरा तरुणभानुरुचिः प्रसन्ना रक्ताम्बुजासनकृतां-  
घ्रियुगा घृतास्त्रा । रक्तैः स्वलंकृततनुर्मणिभूषणैश्च विन्ध्येश्वरी मम  
गिरं विशदां करोतु ॥ १० ॥ रात्रीशकान्तमणिकान्ततनुर्विशालमु-  
क्तालताललितवृत्तकुचा कृशाङ्गी । श्वेताम्बरा सितसरोजकृताधि-  
वासा विन्ध्येश्वरी मम वचांसि पुनातु नित्यम् ॥ ११ ॥ आकर्ण्य  
दीनवचनं जननीव देवी पुत्रस्य मे सपदि सर्वगदान् जहार । लेखाङ्ग-  
नामुकुटगुम्फितचित्रपुष्परेणूत्करार्चितपदाग्रनखांशुचन्द्रा ॥ १२ ॥  
देवान्विहाय सकलानथ कर्म सर्वं लब्ध्वा जनुर्न कृतवांस्तव देवि  
पूजाम् । मातर्नमामि सततं मनसा च वाचा देहेन पादकमलं  
शरणागतोऽहम् ॥ १३ ॥ देहीष्टमाशु विपुलं निजसेवकेभ्यो दारिद्र्य-  
मम्ब हर चारिवधं कुरुष्व । शान्तिं च सर्वजगतां विशदां च  
बुद्धिं त्वं पालयातिकृपया चरणाब्जगं माम् ॥ १४ ॥ देव्याः स्तवं  
पठति यः शिवदं मनुष्यः पूतः शृणोति च मनो विविधैरभीष्टैः ।  
पूर्णं हि तस्य भवति प्रसभं गदाश्च यान्ति क्षयं झटिति मायुकफा-  
निलोत्थाः ॥ १५ ॥ त्र्यर्ष्यष्टभूमिमितसर्वजिदाख्यवर्ष ईषे च मासि  
सितपक्षयुते कवीशः । स्तोत्रं लिलेख मथुरेश्वरमालवीयः सन्नाह-  
मोचनभवो विधुरुद्रशम्याम् ॥ १६ ॥ इति श्रीमन्मालवीयशुक्ल-  
मथुरानाथविरचितं विन्ध्यवासिनीस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

२२०. वंशवृद्धिकरं वंशकवचम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ भगवन्देवदेवेश कृपया त्वं जगत्प्रभो । वंशाख्य-  
कवचं ब्रूहि मह्यं शिष्याय तेऽनघ । यस्य प्रभावाद्देवेश वंशवृद्धिर्हि

जायते ॥ १ ॥ सूर्य उवाच ॥ शृणु पुत्र प्रवक्ष्यामि वंशाख्यं कवचं  
 शुभम् । संतानवृद्धिर्यत्पाठाद्गर्भरक्षा सदा नृणाम् ॥ २ ॥ वन्ध्यापि  
 लभते पुत्रं काकवन्ध्या सुतैर्युता । मृतवत्सा सपुत्रा स्यात्स्त्रवद्गर्भा  
 स्थिरप्रजा ॥ ३ ॥ अपुष्पा पुष्पिणी यस्य धारणाच्च सुखप्रसूः ॥  
 कन्याप्रजा पुत्रिणी स्यादेतत्स्तोत्रप्रभावतः ॥ ४ ॥ भूतप्रेतादिजा  
 बाधा या बाधा कुलदोषजा । ग्रहबाधा देवबाधा बाधा शत्रुकृता  
 च या ॥ ५ ॥ भस्मीभवन्ति सर्वास्ताः कवचस्य प्रभावतः । सर्वे  
 रोगा विनश्यन्ति सर्वे बालग्रहाश्च ये ॥ ६ ॥ पूर्वे रक्षतु वाराही  
 चाग्नेय्यामम्बिका स्वयम् । दक्षिणे चण्डिका रक्षेत्रैर्कृत्यां शव-  
 वाहिनी ॥ ७ ॥ वाराही पश्चिमे रक्षेद्वायव्यां च महेश्वरी । उत्तरे  
 वैष्णवी रक्षेदीशाने सिंहवाहिनी ॥ ८ ॥ ऊर्ध्वं तु शारदा रक्षेदधो  
 रक्षतु पार्वती । शाकंभरी शिरो रक्षेन्मुखं रक्षतु भैरवी ॥ ९ ॥  
 कण्ठं रक्षतु चामुण्डा हृदयं रक्षताच्छिवा । ईशानी च भुजौ  
 रक्षेत्कुक्षिं नाभिं च कालिका ॥ १० ॥ अपर्णा ह्युदरं रक्षेत्कटिं  
 बस्तिं शिवप्रिया । ऊरु रक्षतु कौमारी जया जानुद्वयं तथा  
 ॥ ११ ॥ गुल्फौ पादौ सदा रक्षेद्ब्रह्माणी परमेश्वरी । सर्वाङ्गानि  
 सदा रक्षेद्दुर्गा दुर्गार्तिनाशिनी ॥ १२ ॥ नमो देव्यै महादेव्यै  
 दुर्गायै सततं नमः । पुत्रसौख्यं देहि देहि गर्भरक्षां कुरुष्व नः  
 ॥ १३ ॥ ॐ ह्रीं ह्रीं ह्रीं श्रीं श्रीं श्रीं ऐं ऐं ऐं महाकालीमहालक्ष्मी-  
 महासरस्वतीरूपायै नवकोटिमूर्त्यै दुर्गायै नमः । ह्रीं ह्रीं ह्रीं दुर्गार्ति-  
 नाशिनि संतानसौख्यं देहि देहि वन्ध्यत्वं मृतवत्सत्वं च हर हर  
 गर्भरक्षां कुरु कुरु सकलां बाधां कुलजां बाह्यजां कृतामकृतां च  
 नाशय नाशय सर्वगात्राणि रक्ष रक्ष गर्भं पोषय पोषय सर्वोपद्रवं  
 शोषय शोषय स्वाहा । अनेन कवचेनाङ्गं सप्तवाराभिमन्त्रितम् ।  
 ऋतुस्नाता जलं पीत्वा भवेद्गर्भवती ध्रुवम् ॥ १४ ॥ गर्भपातभये

पीत्वा दृढगर्भा प्रजायते । अनेन कवचेनाथ मार्जिताया निशागमे  
 ॥ १५ ॥ सर्वबाधाविनिर्मुक्ता गर्भिणी स्यान्न संशयः । अनेन  
 कवचेनेह ग्रन्थितं रक्तदोरकम् ॥ १६ ॥ कटिदेशे धारयन्ती  
 सुपुत्रसुखभागिनी । असूत पुत्रमिन्द्राणी जयन्तं यत्प्रभावतः  
 ॥ १७ ॥ गुरूपदिष्टं वंशाख्यं कवचं तदिदं सखे । गुह्याद्गुह्यतरं  
 चेदं न प्रकाश्यं हि सर्वतः । धारणात्पठनादस्य वंशच्छेदो न जायते  
 ॥ १८ ॥ बाला विनश्यन्ति पतन्ति गर्भास्तत्राबलाः कष्टयुताश्च  
 वन्ध्याः । बालग्रहैर्भूतगणैश्च रोगैर्न यत्र धर्माचरणं गृहे स्यात्  
 ॥ १९ ॥ इति श्रीज्ञानभास्करे वंशवृद्धिकरं वंशकवचं संपूर्णम् ॥

### २२१. ललितापञ्चरत्नम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ प्रातः स्मरामि ललितावदनारविन्दं  
 विम्बाधरं पृथुलमौक्तिकशोभिनासम् । आकर्णदीर्घनयनं मणिकुण्ड-  
 लाढ्यं मन्दस्मितं मृगमदोब्जलफालदेशम् ॥ १ ॥ प्रातर्भजामि  
 ललिताभुजकल्पवल्लीं रक्तांगुलीयलसदंगुलिपल्लवाढ्याम् । माणिक्य-  
 हेमवलयान्मदशोभमानां पुण्ड्रेक्षुचापकुसुमेषु सृणीर्दधानाम् ॥ २ ॥  
 प्रातर्नमामि ललिताचरणारविन्दं भक्तेष्टदाननिरतं भवसिन्धुपोतम् ।  
 पद्मासनादिसुरनायकपूजनीयं पद्माङ्कुशध्वजसुदर्शनलान्छनाढ्यम्  
 ॥ ३ ॥ प्रातः स्तुवे परशिवां ललितां भवानीं त्रय्यंतवेद्यविभवां  
 करुणानवद्याम् । विश्वस्य सृष्टिविलयस्थितिहेतुभूतां विद्येश्वरीं  
 निगमवाङ्मनसातिदूराम् ॥ ४ ॥ प्रातर्वदामि ललिते तव पुण्यनाम  
 कामेश्वरीति कमलेति महेश्वरीति । श्रीशाम्भवीति जगतां जननी  
 परेति वाग्देवतेति वचसा त्रिपुरेश्वरीति ॥ ५ ॥ यः श्लोकपञ्चकमिदं  
 ललिताम्बिकायाः सौभाग्यदं सुललितं पठति प्रभाते । तस्मै ददाति

ललिता झटिति प्रसन्ना विद्यां श्रियं विमलसौख्यमनन्तकीर्तिम् ॥ ६ ॥  
इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्यस्य श्रीगोविन्दभगवत्पूज्यपाद-  
शिष्यस्य श्रीमच्छंकरभगवतः कृतौ ललितापञ्चरत्नं संपूर्णम् ॥

### २२२. विन्ध्येश्वरीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ निशुम्भशुम्भमर्दिनीं प्रचण्डमुण्डखण्ड-  
नीम् । वने रणे प्रकाशिनीं भजामि विन्ध्यवासिनीम् ॥ १ ॥  
त्रिशूलमुण्डधारिणीं धराविघातहारिणीम् । गृहे गृहे निवासिनीं  
भजामि विन्ध्य० ॥ २ ॥ दरिद्रदुःखहारिणीं सतां विभूतिकारिणीम् ।  
वियोगशोकहारिणीं भजामि विन्ध्य० ॥ ३ ॥ लसत्सुलोललोचनं  
लतासदेवरप्रदम् । कपालशूलधारिणीं भजामि विन्ध्य० ॥ ४ ॥  
करो मुदा गदाधरो शिवां शिवप्रदायिनीम् । वरावराननां  
शुभां भजामि विन्ध्य० ॥ ५ ॥ ऋषीन्द्रजामिनिप्रदं त्रिधास्यरूपधारि-  
णीम् । जले स्थले निवासिनीं भजामि विन्ध्य० ॥ ६ ॥ विशिष्टसृष्टिका-  
रिणीं विशालरूपधारिणीम् । महोदरे विशालिनीं भजामि विन्ध्य०  
॥ ७ ॥ पुरन्दरादिसेवितां मुरादिवंशखण्डनीम् । विशुद्धबुद्धिकारिणीं  
भजामि विन्ध्यवासिनीम् ॥ ८ ॥ इति विन्ध्येश्वरीस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### २२३. भवानीभुजंगस्तोत्रम् ।

श्रीभवान्यै नमः ॥ षडाधारपंकेरुहांतर्विराजत्सुषुम्नांतरालेऽतितेजो-  
ल्लसंतीम् । सुधामंडलं द्रावयंतीं पिबंतीं सुधामूर्तिमीडेऽहमानंद-  
रूपाम् ॥ १ ॥ ज्वलत्कोटिबालार्कभासारुणांगीं सुलावण्यश्रृंगार-  
शोभाभिरामाम् । महापद्मकिंजल्कमध्ये विराजत्रिकोणोल्लसंतीं भजे  
श्रीभवानीम् ॥ २ ॥ कृष्णकिंकिणीनूपुरोद्भासिरत्नप्रभालीढलाक्षार्द्र-  
पादारविंदाम् । अजेशाच्युताद्यैः सुरैः सेव्यमानां महादेवि मन्मूर्धि  
ते भावयामि ॥ ३ ॥ सुशोणांबरबद्धनीवीविराजन्महारत्नकांची-

कलापं नितंबम् । स्फुरद्दक्षिणावर्तनाभिं च तिस्रो वली रम्यते रोम-  
 राजीं भजेऽहम् ॥ ४ ॥ लसद्दृत्तमुत्तुंगमाणिक्यकुम्भोपमश्रीस्तनद्वंद्व-  
 मंबांबुजाक्षीम् । भजे पूर्णदुग्धाभिरामं तवेदं महाहारदीप्तं सदा  
 प्रसन्नतास्यम् ॥ ५ ॥ शिरीषप्रसूनोल्लसद्वाहुदंडैर्ज्वलद्वाणकोदंडपाशां-  
 कुशैश्च । चलत्कंकणोदारकेयूरभूषाज्वलद्भिः स्फुरंतीं भजे श्रीभवानी-  
 नीम् ॥ ६ ॥ शरत्पूर्णचंद्रप्रभापूर्णबिंबाधरस्मेरवक्त्रारविंदश्रियं ते ।  
 सुरत्नात्रलीहारताटकशोभां भजे सुप्रसन्नामहं श्रीभवानीम् ॥ ७ ॥  
 सुनासापुटं पद्मपत्रायताक्षं यजंतः श्रियं दानदक्षं कटाक्षम् । लला-  
 टोल्लसद्बंधकस्तूरिभूषोज्ज्वलद्भिः स्फुरंतीं भजे श्रीभवानीम् ॥ ८ ॥  
 चलत्कुंडलां ते भ्रमद्भृंगवृंदां घनस्निग्धधमिल्लभूषोज्ज्वलंतीम् ।  
 स्फुरन्मौलिमाणिक्यमध्येन्दुरेखाविलासोल्लसद्विव्यमूर्धानमीडे ॥ ९ ॥  
 स्फुरत्त्वांब बिंबस्य मे हृत्सरोजे सदा वाङ्मयं सर्वतेजोमयं च । इति  
 श्रीभवानीस्वरूपं तदेवं प्रपंचात्परं चातिसूक्ष्मं प्रसन्नम् ॥ १० ॥  
 गणेशाणिमाद्याखिलैः शक्तिवृद्धैः स्फुरच्छ्रीमहाचक्रराजोल्लसंतीम् ।  
 परां राजराजेश्वरीं त्वां भवानीं शिवांकोपरिस्थां शिवां भावयेऽहम्  
 ॥ ११ ॥ त्वमर्कस्त्वमग्निस्त्वमिंदुस्त्वमापस्त्वमाकाशभूवायवस्त्वं  
 चिदात्मा । त्वदन्यो न कश्चित्प्रकाशोऽस्ति सर्वं सदानंदसंवित्स्वरूपं  
 तवेदम् ॥ १२ ॥ गुरुस्त्वं शिवस्त्वं च शक्तिस्त्वमेव त्वमेवासि  
 माता पिताऽसि त्वमेव । त्वमेवासि विद्या त्वमेवासि बुद्धिर्गतिर्मे  
 मतिर्देवि सर्वं त्वमेव ॥ १३ ॥ श्रुतीनामगम्यं सुवेदागमाद्यैर्महिम्नो  
 न जानाति पारं तवेदम् । स्तुतिं कर्तुमिच्छामि ते त्वं भवानि क्षम-  
 स्वेदमंब प्रमुग्धः किलाहम् ॥ १४ ॥ शरण्ये वरेण्ये सुकारुण्यपूर्णं  
 हिरण्योदराद्यैरगम्येऽतिपुण्ये । भवारण्यभीतं च मां पाहि भद्रे  
 नमस्ते नमस्ते नमस्ते भवानि ॥ १५ ॥ इमामन्वहं श्रीभवानीभुजंग-

स्तुतिं यः पठेच्छ्रोतुमिच्छेत तस्मै । स्वकीयं पदं शाश्वतं चैव सारं  
श्रियं चाष्टसिद्धीश्च देवी ददाति ॥ १६ ॥ इति श्रीमत्परमहंस-  
श्रीमच्छंकराचार्यप्रणीतं भवानीभुजंगस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### २२४. भगवतीपद्यपुष्पांजलिस्तोत्रम् ।

श्रीभगवत्यै नमः ॥ भगवति भगवत्पदपंकजं भ्रमरभूतसुरा-  
सुरसेवितम् । सुजनमानसहंसपरिस्तुतं कमलयाऽमलया निभृतं  
भजे ॥ १ ॥ ते उभे अभिवंदेऽहं विघ्नेशकुलदैवते । नरनागानन-  
स्त्वेको नरसिंह नमोऽस्तु ते ॥ २ ॥ हरिगुरूपदपद्मं शुद्धपद्मेऽनु-  
रागाद्विगतपरमभागे सन्निधायादरेण । तदनुचरि करोमि प्रीतये  
भक्तिभाजां भगवति पदपद्मे पद्यपुष्पांजलिं ते ॥ ३ ॥ केनैते  
रचिताः कुतो न निहिताः शुभादयो दुर्मदाः केनैते तव पालिता  
इति हि तत् प्रश्ने किमाचक्ष्महे । ब्रह्माद्या अपि शंकिताः स्वविषये  
यस्याः प्रसादावधि प्रीता सा महिषासुरप्रमथिनी चिञ्चिद्यादवद्यानि  
मे ॥ ४ ॥ पातु श्रीस्तु चतुर्भुजा किमु चतुर्बाहोर्महौजान्भुजाम्  
धत्तेऽष्टादशधा हि कारणगुणाः कार्ये गुणारंभकाः । सत्यं दिक्पतिदंति-  
संब्यभुजभृच्छंभुः स्वयंभूः स्वयं धामैकप्रतिपत्तये किमथवा पातुं  
दशाष्टौ दिशः ॥ ५ ॥ प्रीत्याऽष्टादशसंमितेषु युगपद्द्वीपेषु दातुं  
वरान् त्रातुं वा भयतो विभर्षि भगवत्यष्टदाशैतान् भुजान् । यद्वा-  
ऽष्टादशधा भुजांस्तु बिभृतः काली सरस्वत्युभे मीलित्वैकमिहा-  
नयोः प्रथयितुं सा त्वं रमे रक्ष माम् ॥ ६ ॥ [छंदः] ॥ अयि गिरि-  
नंदिनि नंदितमेदिनि विश्वविनोदिनि नंदनुते, गिरिवरविंध्यशिरोधि-  
निवासिनि विष्णुविलासिनि जिष्णुनुते । भगवति हे शितिकंठ-  
कुटुंबिनि भूरिकुटुंबिनि भूरिकृते, जय जय हे महिषासुरमर्दिनि  
रम्यकपर्दिनि शैलसुते ॥ ७ ॥ सुरवरवर्षिणि दुर्धरवर्षिणि दुर्मुख-

मर्षिणि हर्षरते, त्रिभुवनपोषिणि शंकरतोषिणि किल्बिषमोषिणि  
घोषरते । दनुजनिरोषिणि दितिसुतरोषिणि दुर्मदशोषिणि सिंधु-  
सुते, जय जय हे० ॥ ८ ॥ अयि जगदंब मदंब कदंबवनप्रिय-  
वासिनी हासरते शिखरिशिरोमणितुंगहिमालयशृंगनिजालयमध्य-  
गते । मधुमधुरे मधुकैटभगंजिनि कैटभभंजिनि रासरते, जय जय०  
॥ ९ ॥ अयि शतखंडविखंडितखंडवितुंडितशुंडगजाधिपते, रिपु-  
गजगंडविदारणचंडपराक्रमशुंड मृगाधिपते । निजभुजदंडनिपातित-  
खंडनिपातितमंडभटाधिपते, जय जय हे० ॥ १० ॥ अयि रणदुर्मद-  
शत्रुवधोदितदुर्धरनिर्जरशक्तिभृते चतुरविचारधुरीणमहाशिवदूतकृत-  
प्रमथाधिपते । दुरितदुरीहदुराशयदुर्मतिदानवदूतकृतांतमते, जय  
जय० ॥ ११ ॥ अयि शरणागतवैरिवधूवरवीरवराभयदायकरे,  
त्रिभुवनमस्तकशूलविरोधिशिरोधिकृतामलशूलकरे । दुमिदुमितामर-  
दुंदुभिनादमहोमुखरीकृततिग्मकरे, जय जय हे० ॥ १२ ॥ अयि  
निजहुंकृतिमात्रनिराकृतधूम्रविलोचनधूम्रशते, समरविशोषितशो-  
णितबीजसमुद्भवशोणितबीजलते । शिव शिव शुभनिशुंभमहाहव-  
तर्पितभूतपिशाचरते, जय जय हे० ॥ १३ ॥ धनुरनुसंगरणक्षण-  
संगपरिस्फुरदंगनटक्कबके, कनकपिशंगपृषत्कनिषंगरसद्भटशृंगहता-  
वटुके । कृतचतुरंगबलक्षितिरंगघटद्वहुरंगरटद्वटुके, जय जय हे०  
॥ १४ ॥ सुरललनाततथेयितथेयितथाभिनयोत्तरनृत्यरते, धिमि-  
कटकटधिकटधिमिध्वनिधीरमृदंगनिनादरते, जय जय हे०  
॥ १५ ॥ जय जय जप्यजये जयशब्दपरस्तुतितत्परविश्वनुते  
झणझणर्झिंजिमिर्झिंकृतनूपुरसिंजितमोहितभूतपते । नदितनटार्धन-  
टीनटनायकनाटितनाट्यसुगानरते, जय० ॥ १६ ॥ अयि सुमनः-  
सुमनःसुमनःसुमनःसुमनोहरकांतियुते, श्रितरजनीरजनीरजनीरज-

नीरजनीकरवक्त्रवृते । सुनयनविभ्रमरभ्रमरभ्रमरभ्रमरभ्रमराधि-  
पते, जय० ॥ १७ ॥ सहितमहाहवमल्लमतल्लिकमल्लितरल्लकमल्लरते,  
विरचितवल्लिकपल्लिकमल्लिकझिल्लिकभिल्लिकवर्गवृते, सितकृतफुल्लि-  
समुल्लसितारुणतल्लजपल्लवसल्ललिते, जय० ॥ १८ ॥ अविरलगंड-  
गलन्मदमेदुरमत्तमतंगजराजपते, त्रिभुवनभूषणभूतकलानिधिरूप-  
पयोनिधिराजसुते । अयि सुदती जनलालसमानसमोहनमन्मथ-  
राजसुते, जय जय० ॥ १९ ॥ कमलदलामलकोमलकांति-  
कलाकलितामलभाललते । सकलविलासकलानिलयक्रमकैलिचलत्क-  
लहंसकुले । अलिकुलसंकुलकुवलयमंडलमौलिमिलद्रकुलालिकुले,  
जय० ॥ २० ॥ करमुरलीरववीजितकूजितलजितकोकिलमंजुमते,  
मिलितपुलिंदमनोहरगुंजितरंजितशैलनिकुंजगते । निजगुणभूतमहा-  
शबरीगणसद्गुणसंभृतकेलितले जय० ॥ २१ ॥ कटितटपीतदुकूल-  
विचित्रमयूखतिरस्कृतचंद्ररुचे प्रणतसुरासुरमौलिमणिस्फुरदंशुलसन्न-  
खचंद्ररुचे । जितकनकाचलमौलिपदोर्जितनिर्झरकुंजरकुंभकुचे, जय०  
॥ २२ ॥ विजितसहस्रकरैकसहस्रकरैकसहस्रकरैकनुते, कृतसुरतारक-  
संगरतारकसंगरतारकसूनुसुते । सुरथसमाधिसमानसमाधिसमाधि-  
समाधिसुजातरते, जय जय० ॥ २३ ॥ पदकमलं करुणानिलये  
वरिवस्यति योऽनुदिनं, स शिवे अयि कमले कमलानिलये कमला-  
निलयः स कथं न भवेत् । तव पदमेव परंपदमेमनुशीलयतो मम  
किं न शिवे, जय० ॥ २४ ॥ कनकलसत्कलसिंधुजलैरनुसिंचिनुते  
गुणरंगभुवं भजति स किं न शचीकुचकुंभतटीपरिरंभसुखानुभवम् ।  
तव चरणं शरणं करवाणि नतामरवाणिनिवासि शिवं, जय० ॥ २५ ॥  
तव विमलेंदुकुलं वदनेंदुमलं सकलं ननु कूलयते किमु पुरुहूत-  
पुरींदुमुखीसुमुखीभिरसौ विमुखीक्रियते । मम तु मतं शिवनाम-



धने भवती कृपया किमुत क्रियते, जय० ॥ २६ ॥ अयि मयि दीन-  
 दयालुतया कृपयैव त्वया भवितव्यमुमे, अयि जगतो जननी कृप-  
 यासि यथासि तथाऽनुमितासि रते । यदुचितमत्र भवत्युररीकुरुता-  
 दुरुतापमपाकुरुते, जय० ॥ २७ ॥ स्तुतिमितस्तिमितः सुसमाधिना  
 नियमतोऽयमतोऽनुदिनं पठेत् । परमया रमयापि निषेव्यते परि-  
 जनोऽरिजनोऽपि च तं भजेत् ॥२८॥ रमयति किल कर्षस्तेषु चित्तं  
 नराणामवरजवरयस्माद्रामकृष्णः कवीनाम् । अकृत सुकृतगम्यं  
 रम्यपद्यैकहर्म्यं स्तवनमवनहेतुं प्रीतये विश्वमातुः ॥ २९ ॥ इंदुरम्यो  
 मुहुर्बिंदुरम्यो मुहुर्बिंदुरम्यो यतः साऽनवद्यं स्मृतः । श्रीपतेः  
 सूनुना कारितो योऽधुना विश्वमातुः पदे पद्यपुष्पांजलिः ॥ ३० ॥  
 इति श्रीभगवतीपद्यपुष्पांजलिस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### २२५. भवानीस्तुतिः ।

श्रीभवान्यै नमः ॥ आनंदमंथरपुरंदरमुक्तमाल्यं मौलौ हठेन निहितं  
 महिषासुरस्य । पादांबुजं भवतु वो विजयाय मंजु मंजीरशिंजितम-  
 नोहरमंबिकायाः ॥ १ ॥ ब्रह्मादयोऽपि यदपांगतरंगभंग्या सृष्टि-  
 स्थितिप्रलयकारणतां व्रजंति । लावण्यवारिनिधिवीचिपरिप्लुतायै तस्यै  
 नमोऽस्तु सततं हरवल्लभायै ॥ २ ॥ पौलस्त्यपीनभुजसंपदुदस्यमान-  
 कैलाससंभ्रमविलोलदृशः प्रियायाः । श्रेयांसि वो दिशतु निहुतकोप-  
 चिह्नमालिंगनोत्पुलकमासितसिंदुमौलेः ॥ ३ ॥ दिश्यान्महासुर-  
 शिरःसरसीप्सितानि प्रेखन्नखावलिमयूखमृणालनालम् । चंड्या-  
 श्रलच्चटुलनूपुरचंचरीकझांकारहारि चरणांबुरुहद्वयं वः ॥ ४ ॥  
 इति श्रीभवानीस्तुतिः संपूर्णा ॥

## २२६. देवीभुजङ्गप्रयातस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ विरिञ्चयादिभिः पञ्चभिलोकपालैः समूढे महानन्दपीठे निषण्णम् । धनुर्बाणपाशाङ्कुशप्रोतहस्तं महस्त्रैपुरं शंकराद्वैतमव्यात् ॥ १ ॥ यदन्नादिभिः पञ्चभिः कोशजालैः शिरःपक्ष-पुच्छात्मकैरन्तरन्तः । निगूढे महायोगपीठे निषण्णं पुरारेरथान्तःपुरं नैमि नित्यम् ॥ २ ॥ विरिञ्चादिरूपैः प्रपञ्चे विहृत्य स्वतन्त्रा यदा स्वात्मविश्रान्तिरेषा । तदा मानमातृप्रमेयातिरिक्तं परानन्द-मीडे भवानि त्वदीयम् ॥ ३ ॥ विनोदाय चैतन्यमेकं विभज्य द्विधा देवि जीवः शिवश्चेति नाम्ना । शिवस्यापि जीवत्वमापादयन्ती पुनर्जीवमेनं शिवं वा करोषि ॥ ४ ॥ समाकुञ्चय मूलं हृदि न्यस्य वायुं मनो भ्रूविलं प्रापयित्वा निवृत्ताः । ततः सच्चिदानन्दरूपे पदे ते भवन्त्यम्ब जीवाः शिवत्वेन केचित् ॥ ५ ॥ शरीरेऽतिकष्टे रिपौ पुत्रवर्गे सदा भीतिमूले कलत्रे धने वा । न कश्चिद्विरज्यस्यहो देवि चित्रं कथं त्वत्कटाक्षं विना तत्त्वबोधः ॥ ६ ॥ शरीरे धनेऽपत्यवर्गे कलत्रे विरक्तस्य सद्देशिकादिष्टबुद्धेः । यदाकस्मिकं ज्योतिरानन्दरूपं समाधौ भवेत्तत्त्वमस्यम्ब सत्यम् ॥ ७ ॥ मृषान्यो मृषान्यः परो मिश्रमेनं परः प्राकृतं चापरो बुद्धिमात्रम् । प्रपञ्चं मिमीते मुनीनां गणोऽयं तदेतत्तत्त्वमेवेति न त्वां जहीमः ॥ ८ ॥ निवृत्तिः प्रतिष्ठा च विद्या च शान्तिस्तथा शान्त्यतीतेति पञ्चीकृताभिः । कलाभिः परे पञ्चविंशत्तिकाभिस्त्वमेकैव सेव्या शिवाभिन्नरूपा ॥ ९ ॥ अगाधेऽत्र संसारपङ्के निमग्नं कलत्रादिभारेण खिन्नं नितान्तम् । महामोहपाशौघबद्धं चिरान्मां समुद्धर्तुमम्ब त्वमेकैव शक्ता ॥ १० ॥ समारभ्य मूलं गतो ब्रह्मचक्रं भवद्विव्य-चक्रेश्वरीधामभाजः । महासिद्धिसंघातकल्पद्रुमाभानवाप्याम्ब

नादानुपास्ते च योगी ॥ ११ ॥ गणेशैर्ग्रहेरम्ब नक्षत्रपङ्क्या तथा  
 योगिनीराशिपीठैरभिन्नम् । महाकालमात्मानमामृश्य लोकं विधत्से  
 कृतिं वा स्थितिं वा महेधि ॥ १२ ॥ लसत्तारहारमतिस्वच्छचेलां  
 वहन्तीं करे पुस्तकं चाक्षमालाम् । शरच्चन्द्रकोटिप्रभाभासुरां त्वां  
 सकृद्भावयन् भारतीवल्लभः स्यात् ॥ १३ ॥ समुद्यत्सहस्रार्कबिम्बा-  
 भवक्रां स्वभासैव सिन्दूरिताजाण्डकोटिम् । धनुर्बाणपाशाङ्कुशान्  
 धारयन्तीं स्मरन्तः स्मरं वाऽपि संमोहयेयुः ॥ १४ ॥ मणिस्यूत-  
 ताटङ्कशोणास्यबिम्बां हरित्पट्टवस्त्रां त्वगुल्लासिभूषाम् । हृदा  
 भावयंस्तप्तहेमप्रभां त्वां श्रियो नाशयत्यम्ब चाञ्चल्यभावम्  
 ॥ १५ ॥ महामन्नराजान्तबीजं पराख्यं स्वतो न्यस्तबिन्दु स्वयं  
 न्यस्तहार्दम् । भवद्भ्रूवक्षोजगुह्याभिधानं स्वरूपं सकृद्भावयेत्स  
 त्वमेव ॥ १६ ॥ तथान्ये विकल्पेषु निर्विण्णचित्तास्तदेकं समाधाय  
 बिन्दुत्रयं ते । परानन्दसंधानसिन्धौ निमग्नाः पुनर्गर्भरन्ध्रं न  
 पश्यन्ति धीराः ॥ १७ ॥ त्वदुन्मेषलीलानुबन्धाधिकारान्विरि-  
 ष्यादिकांस्त्वद्गुणाम्भोधिबिन्दून् । भजन्तस्तितीर्षन्ति संसारसिन्धुं  
 शिवे तावकीनां सुसंभावनयम् ॥ १८ ॥ कदा वा भवत्पादपोतेन  
 तूर्णं भवाम्भोधिमुत्तीर्य पूर्णांतरङ्गः । निमज्जन्तमेनं दुराशाविषाढौ  
 समालोक्य लोकं कथं पर्युदास्से ॥ १९ ॥ कदा वा हृषीकाणि  
 साम्यं भजेयुः कदा वा न शत्रुर्न मित्रं भवानि । कदा वा दुराशा-  
 विषूचीविलोपः कदा वा मनो मे समूलं विनश्येत् ॥ २० ॥  
 नमोवाकमाशास्महे देवि युष्मत्पदाम्भोजयुग्माय तिग्माय गौरि ।  
 विरिञ्चयादिभास्वत्किरीटप्रतोलीप्रदीपायमानप्रभाभास्वराय ॥ २१ ॥  
 कचे चन्द्ररेखं कुचे तारहारं करे स्वादुचापं शरे षट्पदौघम् ।  
 स्मरामि स्मरारेरभिप्रायमेकं मदाघूर्णनेत्रं मदीयं निधानम् ॥ २२ ॥

शरेष्वेव नासा धनुःष्वेव जिह्वा जपापाटले लोचने ते स्वरूपे ।  
 त्वगेषा भवच्चन्द्रखण्डे श्रवो मे गुणे ते मनोवृत्तिरम्ब त्वयि स्यात्  
 ॥ २३ ॥ जगत्कर्मवीरान्वचोधूतकीरान्कुचन्यस्तहारान्कृपासिन्धु-  
 पूरान् । भवान्भोधिपारान्महापापदूरान् भजे वेदसाराच्छिवप्रेम-  
 दारान् ॥ २४ ॥ सुधासिन्धुसारे चिदानन्दनीरे समुत्फुल्लनीपे  
 सुरत्वान्तरीपे । मणिव्यूहसाले स्थिते हैमशाले मनोजारिवामे  
 निषण्णं मनो मे ॥ २५ ॥ दृगन्ते विलोला सुगन्धीषुमाला  
 प्रपञ्चेन्द्रजाला विपत्सिन्धुकूला । मुनिस्वान्तशाला नमल्लोकपाला  
 हृदि प्रेमलोलामृतस्वादुलीला ॥ २६ ॥ जगज्जालमेतत्त्वयैवाम्ब  
 सृष्टं त्वमेवाद्य पासीन्द्रियैरर्थजालम् । त्वमेकैव कर्त्री त्वमेकैव  
 भोक्त्री न मे पुण्यपापे न मे बन्धमोक्षौ ॥ २७ ॥ इति प्रेमभारेण  
 किञ्चिन्मयोक्तं न बुद्ध्वैव तत्त्वं मदीयं त्वदीयम् । विनोदाय  
 बालस्य मौख्यं हि मातस्तदेतत्प्रलापस्तुतिं मे गृहाण ॥ २८ ॥  
 इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्यस्य श्रीगोविन्दभगवत्पूज्यपाद-  
 शिष्यस्य श्रीमच्छंकरभगवतः कृतौ देवीभुजङ्गस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### २२७. गौरीदशकस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ लीलालब्धस्थापितलुप्ताखिललोकां लोकाती-  
 तैर्योगिभिरन्तश्चिरमृग्याम् । बालादित्यश्रेणिसमानद्युतिपुञ्जां  
 गौरीमम्बामम्बुरुहाक्षीमहमीडे ॥ १ ॥ आशापाशक्लेशविनाशं  
 विदधानां पादाभोजध्यानपराणां पुरुषाणाम् । ईशामीशार्धाङ्गहरां  
 तामभिरामां गौरीमम्बामम्बुरुहाक्षीमहमीडे ॥ २ ॥ नानाकारैः  
 शक्तिकदम्बैर्भुवनानि व्याप्य स्वैरं क्रीडति येयं स्वयमेका ।  
 कल्याणीं तां कल्पलतामानतिभाजां गौरीमहमीडे ॥ ३ ॥ मूलाधारा-  
 दुस्थितवीथ्या विधिरन्ध्रं सौरं चान्द्रं व्याप्य विहारज्वलिताङ्गीम् ।

येयं सुक्ष्मात्सूक्ष्मतनुस्तां सुखरूपां गौरीमहमीडे ॥ ४ ॥ यस्यामोतं  
 प्रोतमशेषं मणिमालासूत्रे यद्ब्रह्मापि चरं चाप्यचरं च । तामध्यात्म-  
 ज्ञानपदव्या गमनीयां गौरीमहमीडे ॥ ५ ॥ प्रत्याहारध्यान-  
 समाधिस्थितिभाजां नित्यं चित्ते निर्वृतिकाष्ठां कलयन्तीम् । सत्य-  
 ज्ञानानन्दमयीं तां तनुमध्यां गौरीमहमीडे ॥ ६ ॥ चन्द्रापीडा-  
 नन्दितमन्दस्मितवक्त्रां चन्द्रापीडालंकृतनीलालकभाराम् । इन्द्रो-  
 पेन्द्राद्यर्चितपादाम्बुजयुग्मां गौरीमहमीडे ॥ ७ ॥ आदिक्षान्ताम-  
 क्षरमूर्त्या विलसन्तीं भूते भूते भूतकदम्बप्रसवित्रीम् । शब्दब्रह्मा-  
 नन्दमयीं तां तडिदाभां गौरीमहमीडे ॥ ८ ॥ यस्याः कुक्षौ  
 लीनमखण्डं जगदण्डं भूयो भूयः प्रादुरभूदुत्थितमेव । पत्या  
 सार्धं तां रजताद्रौ विहरन्तीं गौरीमहमीडे ॥ ९ ॥ नित्यः शुद्धो  
 निष्कल एको जगदीशः साक्षी यस्याः स्वर्गविधौ संहरणे च ।  
 विश्वत्राणक्रीडनलोलां शिवपत्नीं गौरीमहमीडे ॥ १० ॥ प्रातःकाले  
 भावविशुद्धः प्रणिधानाद्भक्त्या नित्यं जल्पति गौरीदशकं यः ।  
 वाचां सिद्धिं संपदमग्न्यां शिवभक्तिं तस्यावश्यं पर्वतपुत्री  
 विदधाति ॥ ११ ॥ इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्यश्रीम-  
 च्छंकराचार्यविरचितं गौरीदशकस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### २२८. देवीपदपंकजाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ मातस्त्वत्पदपंकजं कलयतां चेतोऽम्बुजे संततं  
 मानथाम्बुजसंभवाद्वितनयाकान्तैः समाराधितम् । वाञ्छापूरणनि-  
 र्जितामरमहीरुद्गर्वसर्वस्वकं वाचः सूक्तिसुधारसद्रवमुचो निर्यान्ति  
 वक्त्रोदरात् ॥ १ ॥ मातस्त्वत्पदपंकजं मुनिमनःकासारवासादरं  
 भायामोहमहान्धकारमिहिरं मानातिगप्राभवम् । मातङ्गाभिमतिं  
 स्वकीयगमनैर्निर्मूलयत्कौतुकाद्वेद्वेऽमन्दतपःफलाप्यनमनस्तोत्रार्च-

नाप्रक्रमम् ॥ २ ॥ मातस्त्वत्पदपंकजं प्रणमतामानन्दवारांनिधे  
 राकाशारदपूर्णचन्द्रनिकरं कामाहिपक्षीश्वरम् । वृन्दं प्राणभृतां  
 स्वनाम वदतामत्यादरात्सत्वरं षड्भाषासरिदीश्वरं प्रविद्धत्षाण्मा-  
 तुरार्च्यं भजे ॥ ३ ॥ कामं फालतले दुरक्षरततिदैवीममस्तां न  
 भीर्मातस्त्वत्पदपङ्कजोत्थरजसा लुम्पामि तां निश्चितम् । मार्कण्डेय-  
 मुनिर्यथा भवपदाम्भोजार्चनाप्राभवात्कालं तद्ब्रह्मं चतुर्मुखमुखा-  
 म्भोजातसूर्यप्रभे ॥ ४ ॥ पापानि प्रशमं नयाशु ममतां देहेन्द्रिय-  
 प्राणगां कामादीनपि वैरिणो दृढतरान्मोक्षाध्वविघ्नप्रदान् । स्निग्धा-  
 न्पोषय सन्ततं शमदमध्यानादिमान्मोदतो मातस्त्वत्पदपंकजं हृदि  
 सदा कुर्वे गिरां देवते ॥ ५ ॥ मातस्त्वत्पदपंकजस्य मनसा वाचा  
 क्रियातोऽपि वा ये कुर्वन्ति मुदान्वहं बहुविधैर्दिव्यैः सुमैरर्च-  
 नाम् । शीघ्रं ते प्रभवन्ति भूमिपतयो निन्दन्ति च स्वश्रिया  
 जम्भारातिमपि ध्रुवं शतमखीकष्टासनाकश्रियम् ॥ ६ ॥ मातस्त्व-  
 त्पदपंकजं शिरसि ये पद्माटवीमध्यतश्चन्द्राभं प्रविचिन्तयन्ति  
 पुरुषाः पीयूषवर्ष्यन्वहम् । ते मृत्युं प्रविजित्य रोगरहिताः सम्यग्द-  
 ढाङ्गाश्विरं जीवन्येव मृणालकोमलवपुष्मन्तः सुरूपा भुवि ॥ ७ ॥  
 मातस्त्वत्पदपंकजं हृदि मुदा ध्यायन्ति ये मानवाः सच्चिद्रूपमशेष-  
 वेदशिरसां तात्पर्यगम्यं मुहुः । अत्यागोऽपि तनोरखण्डपरमानन्दं  
 वहन्तः सदा सर्वं विश्वमिदं विनाशि तरसा पश्यन्ति ते पुरुषाः  
 ॥ ८ ॥ इति देवीपदपङ्कजाष्टकं संपूर्णम् ॥

### २२९. मातंगीषङ्कम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अंब शशिबिंबवदने कंबुग्रीवे कठोरकुचकुम्भे ।

अंबरसमानमध्ये शंबररिपुवैरिदेवि मां पाहि ॥ १ ॥ कुंदमुकुलाग्र-

दंतां कुंकुमपंकेन लिप्तकुचभाराम् । आनीलनीलदेहामंबामखिलांड-  
नायकीं वंदे ॥ २ ॥ सरिगमपधनिसतान्तां वीणासंक्रान्तचारु-  
हस्तां ताम् । शांतां मृदुलस्वान्तां कुचभरतान्तां नमामि शिव-  
कांताम् ॥ ३ ॥ अरटतटघटितजूटीताडिततालीकपालताटंकाम् ।  
वीणावादनवेलाकंपितशिरसं नमामि मातंगीम् ॥ ४ ॥ वीणारसानु-  
षंगं विकचमदामोदमाधुरीभृङ्गम् । करुणापूरितरंगं कलये मातंग-  
कन्यकापांगम् ॥ ५ ॥ दयमानदीर्घनयनां देशिकरूपेण दर्शिताभ्यु-  
दयाम् । वामकुचनिहितवीणां वरदां संगीतमातृकां वंदे ॥ ६ ॥  
माणिक्यवीणामुपलालयंतीं मंदालसां मंजुलवाग्विलासाम् । माहेंद्र-  
नीलद्युतिकोमलांगीं मातंगकन्यां मनसा स्मरामि ॥ ७ ॥ इति  
श्रीकालिकापुराणे मातंगीषट्कं संपूर्णम् ॥

२३०. मन्त्रगर्भं श्रीभुवनेश्वरीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ कर्णस्वर्णविलोककुंडलधरामापीनवक्षोरुहां  
मुक्ताहारविभूषणां परिलसद्धंमिलसन्मल्लिकाम् । लीलालोलित-  
लोचनां शशिमुखीमाबद्धकांचीस्रजं दीव्यंतीं भुवनेश्वरीमनुदिनें  
वंदामहे मातरम् ॥ १ ॥ ऐंदव्या कलयावतंसितशिरोविस्ता-  
रिनादात्मकं तद्रूपं जननि स्मरामि परमं सन्मात्रमेकं तव ।  
यत्रोदेति परामिधा भगवती भासां हि तासां पदं पश्यंती  
तनुमध्यमा विहरति स्वैरं च सा वैखरी ॥ २ ॥ आदिक्षांतविला-  
सलालसतया तासां तुरीया तु या क्रोडीकृत्य जगत्रयं विजयते  
वेदादिविद्यामयी । तां वाचं मयि संप्रसादय सुधाकल्लोलकोला-  
हलक्रीडाकर्णनवर्णनीयकवितासाम्राज्यसिद्धिप्रदाम् ॥ ३ ॥ कल्पादौ  
कमलासनोऽपि कलया विद्धः कयाचित्किल त्वां ध्यात्वांकुरयां-  
चकार चतुरो वेदांश्च विद्याश्च ताः । तन्मातर्ललिते प्रसीद सरलं

सारस्वतं देहि मे यस्यामोदमुदीरयन्ति पुलकैरन्तर्गता देवताः  
 ॥ ४ ॥ मातर्देहभृतामहो धृतिमयी नादैकरेखामयी सा त्वं  
 प्राणमयी हुताशनमयी बिंदुप्रतिष्ठामयी । तेन त्वां भुवनेश्वरीं  
 विजयिनीं ध्यायामि जायां विभोस्त्वत्कारुण्यविकाशिपुण्यमतयः  
 खेलंतु मे सूक्तयः ॥ ५ ॥ त्वामश्वत्थदलानुकारमधुरामाधारबद्धो-  
 दरां संसेवे भुवनेश्वरीमनुदिनं वाग्देवतामेव ताम् । तन्मे शारद-  
 कौमुदीपरिचयोदंचत्सुधासागरस्वैरोज्जागरवीचिविभ्रमजितो दीव्यंतु  
 दिव्या गिरः ॥ ६ ॥ लेखप्रस्तुतवेद्यवस्तुसुरभिःश्रीपुस्तकोत्तंसितो  
 मातः स्वस्तिकृदस्तु मे तव करो वामोऽभिरामः श्रिया । सद्यो  
 विद्रुमकंदलीसरलतासंदोहसांद्रांगुलिर्मुद्रां बोधमयीं दधत्तदपरोऽ-  
 प्यास्तामपास्तभ्रमः ॥ ७ ॥ मातः पातकजालमूलदलनक्रीडाकठोरा  
 दृशः कारुण्यामृतकोमलास्तव मयि स्फूर्जतु सिद्ध्यर्जिताः । आभिः  
 स्वाभिमतप्रबंधलहरीसाकृतकौतूहलाचांतस्वांतचतुर्मुखोचितगुणो-  
 द्दारां करिष्ये गिरम् ॥ ८ ॥ त्वामाधारचतुर्दलांबुजगतां वाग्बीज-  
 गर्भे यजे प्रत्यावृत्तिभिरादिभिः कुसुमितां मायालतामुन्नताम् ।  
 चूडामूलपवित्रपत्रकमलप्रेखोलखेलत्सुधाकल्लोलासु कुचक्रचंक्रमच-  
 मत्कारैकलोकोत्तराम् ॥ ९ ॥ सोऽहं त्वत्करुणाकटाक्षशरणः पंचा-  
 ध्वसंचारतः प्रत्याहृत्य मनो वसामि रसनालिंगं ममालिंगतु ।  
 श्रीसर्वज्ञविभूषणीकृतकलानिस्यंदमानामृतस्वच्छंदस्फटिकाद्रिसांद्रि-  
 तपयःशोभावती भारती ॥ १० ॥ मातर्मातृकया विदर्भितमिदं  
 गर्भीकृतानाहतस्वच्छंदध्वनिपेयमध्वनिरतं चंद्रार्कनिद्रागिरौ । संसेवे  
 विपरीतरीतिरचनोच्चारदकारावधिस्वाधीनामृतसिंधुबंधुरमहो माया-  
 मयं ते महः ॥ ११ ॥ तस्मान्नंदनचारुचंदनतरुच्छायासु पुष्पासव-  
 स्वैरास्वादनमोदमानमनसामुहासवामभ्रुवाम् । वीणासंगितरंगित-



स्वरचमत्कारोऽपि सारोज्झितो येन स्यादिह देहि मे तदभितः  
 संचारि सारस्वतम् ॥ १२ ॥ आधारे हृदये शिखापरिसरे संधाय  
 मेधामयीं त्रेधाबीजतनूमनूनकरुणापीयूषकलोलिनीम् । त्वां मातर्ज-  
 पतो निरंकुशनिजाद्वैतामृतास्वादनप्रज्ञांभश्रुलकैः स्फुरंतु पुलकै-  
 रंगानि तुंगानि मे ॥ १३ ॥ वाणीबीजमिदं जपामि परमं तत्काम-  
 राजाभिधं मातः सांतपरं विसर्गसहितौकारोत्तरं तेन मे । दीर्घादो-  
 लितमौलिकीलितमणिप्रारब्धनीराजनैर्धौरैः पीतरसा निरंतरमसौ  
 वागजृभतामद्भुता ॥ १४ ॥ चूडाचंद्रकलानिरंतरगल्पीयूषबिंदुश्रिया  
 संदेहोचितमक्षसूत्रवलयं या विभ्रती निर्भरम् । अंतर्मन्त्रमयं स्वमेव  
 जपसि प्रत्यक्षवृत्त्यक्षरं सा त्वं दक्षिणपाणिनां वितर श्रेयांसि  
 भूयांसि मे ॥ १५ ॥ बध्वा स्वस्तिकमासनं सितरुचिच्छेदावदात-  
 च्छविश्रेणिश्रीसुभगं भविष्णुसततव्याजृभमाणेऽबुजे । दीव्यंतीमधि-  
 वामजानु रुचिरन्यस्तेन हस्तेन तां नित्यं पुस्तकधारणप्रणयिनीं सेवे  
 गिरामीश्वरीम् ॥ १६ ॥ तन्मे विश्वपथीनपीनविलसन्निःसीमसार-  
 स्वतस्त्रोतोवीचिविचित्रभंगिसुभगा विभ्राजतां भारती । यामाकर्ण्य  
 विघूर्णमानमनसः प्रेखोलितैर्मौलिभिर्मौलिकिर्नयनांचलैः सुमनसो  
 निंदेयुरिंदोः कलाम् ॥ १७ ॥ आदौ वाग्भवमिंदुबिंदुमधुरं ज्ञांते च  
 कामात्मकं योगांते कषयोस्तृतीयमिति ते बीजत्रयं ध्यायताम् ।  
 सार्धं मातृकया विलोमविषमं संधाय बंधच्छिदा वाचांतर्गतया  
 महेश्वरि मया मात्राशतं जप्यते ॥ १८ ॥ तत्सारस्वतसार्वभौम-  
 पदवी सद्यो मम द्योततां यत्राज्ञाविहितैर्महाकविशतैः स्फीतां गिरं  
 चुंबताम् । चैत्रोन्मीलितकेलिकोकिलकुहूकारावतारांचितश्लाघासंचि-  
 तपंचमश्रुतिसमाहारोऽपि भारोपमः ॥ १९ ॥ वाग्बीजं भुवनेश्वरीं  
 वद वदेत्युच्चार्य वाग्वादिनि स्वाहावर्णविशीर्णपातकभरां ध्यायामि

नित्यां गिरम् । वीणापुस्तकमक्षसूत्रवलयं व्याजृभमंभोरुहं बिभ्रा-  
 णामरुणांशुभिः करतलैराविर्भवद्विभ्रमाम् ॥ २० ॥ तं मातः कृपया  
 तरंगयतरां विद्याधिपत्यं मयि ज्योत्स्नासौरभचौरकीर्तिकविता-  
 सेव्यैकसिंहासनम् । कालाज्ञादिशिवावसानभवनप्राग्भारकुक्षिंभरि  
 प्रज्ञांभःपरिपाकपीवरपरानंदप्रतिष्ठास्पदम् ॥ २१ ॥ लेखाभिस्तु-  
 हिनद्युतेरिव कृतं वाग्बीजमुच्चैः स्फुरत्ताराकारकरालबिंदु परितो  
 मायात्रिधावेष्टितम् । पूर्णदोरुदरे तदेतदखिलं पीयूषगौराक्षरं स्रोतः-  
 संभ्रमसंभृतं स्मरति यो जिह्वांचले निश्चलः ॥ २२ ॥ तस्य त्वत्क-  
 रुणाकटाक्षकणिकासंक्रांतिमात्रादपि स्वांते शांतिमुपैति दीर्घजडता  
 जाग्रद्विकाराग्रणीः । तस्मादाशु जगत्रयाद्भुतरसाद्वैतप्रतीतिप्रदं  
 सौरभ्यं परमभ्युदेति वदनांभोजे गिरां विभ्रमैः ॥ २३ ॥ आद्यो  
 मौलिरथापरो मुखमिदं नेत्रे च कर्णावुज नासावंशपुटे ऋऋ तद-  
 नुजौ वर्णौ कपोलद्वयम् । दंताश्रोर्ध्वमधस्तथोष्ठयुगलं सन्ध्यक्षराणि  
 क्रमाज्जिह्वामूलमुदग्रबिंदुरपि च ग्रीवा विसर्गां स्वरः ॥ २४ ॥  
 कादिर्दक्षिणतो भुजस्तदपरो वर्गश्च वामो भुजष्ठादिस्तादिरनुक्रमेण  
 चरणौ कुक्षिद्वयं ते पङ्क्तौ । वंशः पृष्ठभवोऽथ नाभिहृदये बादित्रयं  
 धातवो याद्याः सप्त समीरणश्च सपरः क्षः क्रोध इत्यंबिके ॥ २५ ॥  
 एवं वर्णमयं वपुस्तव शिवे लोकत्रयव्यापकं योऽहंभावनया भजत्य-  
 वयवेऽप्यारोपितैरक्षरैः । मूर्तीभूय दिनावसानकमलाकारैः शिरः-  
 शायिभिस्तं विद्याः समुपासते करतलैर्दृष्टिप्रसादोत्सुकाः ॥ २६ ॥  
 ये जानन्ति यजन्ति संततमभिध्यायन्ति गायन्ति वा तेषामास्यमुपास्यते  
 मृदुपदन्यासैर्विलासैर्गिराम् । किंच क्रीडति भूर्भुवःस्वरभितः  
 श्रीचंदनस्यंदिनी कीर्तिः कार्तिकरात्रिकैरवसमा सौभाग्यशोभाकरी  
 ॥ २७ ॥ मायाबीजविदभिंतं पुनरिदं श्रीकूर्मचक्रोदितं दीपास्त्राय-

विदो जपन्ति खलु ये तेषां नरेंद्राः सदा । सेवन्ते चरणौ किरीट-  
वलभीविश्रांतरत्नांकुरज्योत्स्नामेदुरमेदिनीतलरजोमिश्रांगरागश्रियः  
॥ २८ ॥ श्रीबीजं सकलाक्षरादिषु पुनः क्रोधाक्षरांते भवेदेवं यो  
भजतेऽब ते तनुमिमां तस्याग्रतो जाग्रती । लक्ष्मीः सिंदुरदानगंध-  
लहरीलोलांघपुष्पंधयश्रेणीबंधुरशृखलानियमितेवापैति नैव क्वचित्  
॥ २९ ॥ यस्त्वां विद्रुमपल्लवद्रवमयीं लेखामिवालोहितामात्मानं  
परितः स्फुरन्निवलयामायामभिध्यायति । तस्मै निंदितवंदनेन्दुकद-  
लीकांतरहारस्त्रजो निःश्वासभ्रमबाष्पदाहगहना मूर्च्छति तास्ताः  
स्त्रियः ॥ ३० ॥ मातः श्रीभगमालिनीत्यभिधया दिव्यागमोत्तंसितां  
त्वामानंदमयीमनुस्मरति यस्तं नाम वामभ्रुवः । बाहुस्वस्तिक-  
पीडितैः स्तनतटैर्दैन्यांचितैश्चाटुभिर्नीरंघ्रैः पुलकांकितैर्मुकुलितैर्ध्यायति  
नेत्रांचलैः ॥ ३१ ॥ यस्त्वां ध्यायति रागसागरतरत्सिंदूरनौकांतरस्वैरो-  
जागरपद्मरागनलिनीपुष्पासनाध्यासिनीम् । बालादित्यसपत्नरत्न-  
रचितप्रत्यंगभूषारुचिश्रेणीसंमिलितांगरागवसनास्तस्य स्मरंत्यंगनाः  
॥ ३२ ॥ कर्पूरं कुमुदाकरं कमलिनीपत्रं कलाकौशलं कूजत्कोकिल-  
कामिनीकुलकुहूकल्लोलकोलाहलम् । शंकन्ते प्रलयानलं स्मरमहाप-  
स्सारवेगातुराः कंपन्ते निपतन्ति हंत न गिरं मुंचन्ति शोचन्ति च  
॥ ३३ ॥ श्रीमृत्युंजयनामधेयभगवच्चैतन्यचंद्रात्मिके हींकारि प्रथ-  
मातमांसि दलय त्वं हंससंजीविनि । जीवं प्राणविजृंभमाणहृदय-  
ग्रंथिस्थितं मे कुरु त्वां सेवे निजबोधलाभरभसा स्वाहाभुजा-  
मीश्वरीम् ॥ ३४ ॥ एवं त्वाममृतेश्वरीमनुदिनं राकानिशाकामुक्त्यांतः  
संततभासमानवपुषं साक्षाद्यजन्ते तु ये । ते मृत्योः कवलीकृत-  
त्रिभुवना भोगस्य मौलौ पदं दत्त्वा भोगमहोदधौ निरवधि क्रीडन्ति  
तैस्तैः सुखैः ॥ ३५ ॥ जाग्रद्वोधसुधामयूखनिचयैराप्लाव्य सर्वा

दिशो यस्याः कापि कला कलंकरहिता षट्चक्रमाक्रामति । दैन्य-  
ध्वांतविदारणैकचतुरा वाचं परां तन्वती सा नित्या भुवनेश्वरी  
विहरतां हंसीव मन्मानसे ॥ ३६ ॥ त्वं मातापितरौ त्वमेव सुहृदस्त्वं  
भ्रातरस्त्वं सखा त्वं विद्या त्वमुदारकीर्तिचरितं त्वं भाग्यमत्यद्भुतम् ।  
किं भूयः सकलं त्वमीहितमिति ज्ञात्वा कृपाकोमले श्रीविश्वेश्वरि  
संप्रसीद शरणं मातः परं नास्ति मे ॥ ३७ ॥ श्रीसिद्धनाथ इति  
क्रोऽपि युगे चतुर्थे प्रादुर्बभूव करुणावरुणालयोऽस्मिन् । श्रीशंभु-  
रित्यभिधया स मयि प्रसन्नं चेतश्चकार सकलागमचक्रवर्ती ॥ ३८ ॥  
तस्याज्ञया परिणतान्वयसिद्धविद्याभेदास्पदैः स्तुतिपदैर्वचसां  
विलासैः । तस्मादनेन भुवनेश्वरिवेदगर्भं सद्यः प्रसीद वदने मम  
सन्निधेहि ॥ ३९ ॥ येषां परं न कुलदैवतमंबिके त्वं तेषां गिरा मम  
गिरो न भवंतु मिश्राः । तैस्तु क्षणं परिचिते विषयेऽपि वासो मा  
भूत्कदाचिदिति संततमर्थये त्वाम् ॥ ४० ॥ श्रीशंभुनाथ करुणा-  
कर सिद्धनाथ श्रीसिद्धनाथ करुणाकर शंभुनाथ । सर्वापराधमलि-  
नेऽपि मयि प्रसन्नं चेतः कुरुष्व शरणं मम नान्यदस्ति ॥ ४१ ॥  
इत्थं प्रतिक्षणमुदश्रुविलोचनस्य पृथ्वीधरस्य पुरतः स्फुटमाविरा-  
सीत् । दत्त्वा वरं भगवती हृदयं प्रविष्टा शास्त्रैः स्वयं नवनवैश्च  
मुखेऽवतीर्णा ॥ ४२ ॥ वाक्सिद्धिमेवमतुलामवलोक्य नाथः श्रीशंभु-  
रस्य महतीमपि तां प्रतिष्ठाम् । स्वस्मिन्पदे त्रिभुवनागमवंद्यविद्या-  
सिंहासनैकरुचिरे सुचिरं चकार ॥ ४३ ॥ भूमौ शय्या वचसि  
नियमः कामिनीभ्यो निवृत्तिः प्रातर्जातीविटपसमिधा दंतजिह्वा-  
विशुद्धिः । पत्रावहृयां मधुरमशनं ब्रह्मवृक्षस्य पुष्पैः पूजाहोमौ  
कुसुमवसनालेपनान्युज्ज्वलानि ॥ ४४ ॥ इत्थं मासत्रयमविकलं  
यो व्रतस्थः प्रभाते मध्याह्ने वाऽस्तमितसमये कीर्तयेदेकचित्तः ।

तस्योह्लासैः सकलभुवनाश्चर्यभूतैः प्रभूतैर्विद्याः सर्वाः सपदि वदने  
 शंभुनाथप्रसादात् ॥ ४५ ॥ व्रतेन हीनोऽप्यनवासमंत्रः श्रद्धा-  
 विशुद्धोऽनुदिनं जपेद्यः । तस्यापि वर्षादनवद्यसद्यः कवित्वहृद्याः  
 प्रभवन्ति विद्याः ॥ ४६ ॥ कोऽप्यर्चित्यप्रभावोऽस्य स्तोत्रस्य प्रत्यया-  
 वहः । श्रीशंभोराज्ञया सर्वाः सिद्धयोऽस्मिन्प्रतिष्ठिताः ॥ ४७ ॥  
 इति मन्त्रगर्भं श्रीभुवनेश्वरीस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### २३१. इन्द्राक्षीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ अस्य श्रींद्राक्षीस्तोत्रमंत्रस्य सहस्राक्ष  
 ऋषिः, इंद्राक्षी देवता, अनुष्टुप् छंदः, महालक्ष्मीर्बीजम्,  
 भुवनेश्वरीति शक्तिः, भवानीति कीलकम्, ॐ श्रीं ह्रीं क्लीं इति  
 बीजानि, मम सर्वाभीष्टसिद्ध्यर्थे श्रीमदिंद्राक्षीस्तोत्रजपे विनि-  
 योगः ॥ ॐ इंद्राक्षी इत्यंगुष्ठाभ्यां नमः ॥ ॐ महालक्ष्मीति  
 तर्जनीभ्यां नमः ॥ ॐ माहेश्वरीति मध्यमाभ्यां नमः ॥ ॐ अंबु-  
 जाक्षीत्यनामिकाभ्यां नमः ॥ ॐ कात्यायनीति कनिष्ठिकाभ्यां  
 नमः ॥ ॐ कौमारीति करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः ॥ ॐ इंद्राक्षीति  
 हृदयाय नमः ॥ ॐ महालक्ष्मीति शिरसे स्वाहा ॥ ॐ माहेश्व-  
 रीति शिखायै वौषट् ॥ ॐ अंबुजाक्षीति कवचाय हुम् ॥ ॐ कात्या-  
 यनीति नेत्रत्रयाय वौषट् ॥ ॐ कौमारीत्यस्त्राय फट् ॥ ॐ भूर्भुवः-  
 स्वरोम् इति दिग्बंधनम् ॥ पूर्वस्यां पातु मां ब्राह्मी चाग्नेय्यां तु  
 महेश्वरी ॥ कौमारी पातु याम्ये वै नैर्ऋत्यां पातु भैरवी ॥ १ ॥  
 पश्चिमे पातु वाराही वायव्ये नारसिंहिका ॥ कालरात्रिरुदीच्यां वा  
 ऐशान्यां सर्वशक्तिधृक् ॥ २ ॥ ऊर्ध्वं मे भैरवी पातु चाधःस्थं  
 विंध्यवासिनी ॥ यद्यद्विषमकं स्थानं तत्तद्रक्षतु चेश्वरी ॥ ३ ॥ अथ  
 ध्यानम् ॥ इंद्राक्षीं द्विभुजां देवीं पीतवस्त्रद्वयान्विताम् । वामहस्ते

वज्रधरां दक्षिणेन वरप्रदाम् ॥ ४ ॥ इंद्राक्षीं युवतीं देवीं नाना-  
 लंकारभूषिताम् । प्रसन्नवदनांभोजामप्सरोगणसेविताम् ॥ ५ ॥  
 द्विभुजां सौम्यवदनां पाशांकुशधरां पराम् । त्रैलोक्यमोहिनीं देवी-  
 मिन्द्राक्षीनामकीर्तिताम् ॥ ६ ॥ अथ मंत्रः ॥ ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं  
 क्लृम् इंद्राक्ष्यै नमः ॥ इंद्र उवाच ॥ इंद्राक्षी नाम सा देवी दैवतैः  
 समुदाहता ॥ गौरी शाकंभरी देवी दुर्गानाम्नीति विश्रुता ॥ ७ ॥  
 कात्यायनी महादेवी चंद्रघंटा महातपा । सावित्री सा च गायत्री  
 ब्रह्माणी ब्रह्मवादिनी ॥ ८ ॥ नारायणी भद्रकाली रुद्राणी कृष्ण-  
 पिंगला । अग्निज्वाला रौद्रमुखी कालरात्रिस्तपस्विनी ॥ ९ ॥ मेघ-  
 श्यामा सहस्राक्षी मुक्तकेशी जलोदरी । महादेवी मुक्तकेशी घोर-  
 रूपा महाबला ॥ १० ॥ अजिता भद्रदा नंदा रोगहंत्री शिवप्रिया ।  
 शिवदूती कराली च प्रत्यक्षा परमेश्वरी ॥ ११ ॥ सदा संमोहिनी  
 देवी सुंदरी भुवनेश्वरी । इंद्राक्षी इंद्ररूपा च इंद्रशक्तिः परायणा  
 ॥ १२ ॥ महिषासुरसंहर्त्री चामुंडा गर्भदेवता । वाराही नारसिंही  
 च भीमा भैरवनादिनी ॥ १३ ॥ श्रुतिः स्मृतिर्दृष्टिर्मेधा विद्या  
 लक्ष्मीः सरस्वती । अनंता विजया पूर्णा मानस्तोकाऽपराजिता  
 ॥ १४ ॥ भवानी पार्वती दुर्गा हैमवत्यंबिका शिवा । एतैर्नामशतै-  
 र्दिव्यैः स्तुता शक्रेण धीमता ॥ १५ ॥ आयुरारोग्यमैश्वर्यं वित्तं  
 ज्ञानं यशो बलम् । नाभिमात्रजले स्थित्वा सहस्रपरिसंख्यया  
 ॥ १६ ॥ जपेत्स्तोत्रमिमं मंत्रं वाचां सिद्धिर्भवेत्ततः । अनेन विधिना  
 भक्त्या मंत्रसिद्धिश्च जायते ॥ १७ ॥ संतुष्टा च भवेद्देवी प्रत्यक्षा  
 संप्रजायते । शतमावर्तयेद्यस्तु मुच्यते नात्र संशयः ॥ १८ ॥  
 आवर्तनसहस्रेण लभ्यते वांछितं फलम् । सायं शतं पठेन्नित्यं  
 षण्मासात्सिद्धिरुच्यते ॥ १९ ॥ चोरव्याधिभयस्थाने मनसा ह्यनु-

चिंतयन् । संवत्सरमुपाश्रित्य सर्वकामार्थसिद्धये । राजानं  
वश्यमाप्नोति षण्मासान्नात्र संशयः ॥ २० ॥ इति इंद्राक्षीस्तोत्रं  
संपूर्णम् ॥

### २३२. देवीमहिम्नः स्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ दुर्वासा उवाच ॥ मातस्ते महिमां वक्तुं  
शिवेनापि न शक्यते । भक्त्याऽहं स्तोतुमिच्छामि प्रसीद मम सर्वदा  
॥ १ ॥ श्रीमातस्त्रिपुरे परात्परतरे देवि त्रिलोकीमहासौंदर्यार्णव-  
मंथनोद्भवसुधाप्राचुर्यवर्णोज्ज्वलम् । उद्यद्भानुसहस्रनूतनजपापुष्पप्रभं  
ते वपुः स्वांते मे स्फुरतु त्रिकोणनिलयं ज्योतिर्मयं वाङ्मयम् ॥२॥  
आदिक्षांतसमस्तवर्णसुमणिप्रोते वितानप्रभे ब्रह्मादिप्रतिमाभिक्रीलित-  
षडाधाराब्जकक्षोन्नते । ब्रह्मांडाब्जमहासने जननि ते मूर्तिं भजे  
चिन्मयीं सौषुम्नायतपीतपंकजमहामध्यत्रिकोणस्थिताम् ॥ ३ ॥ या  
बालेंदुदिवाकराक्षिमधुरा या रक्तपद्मासना रत्नाकल्पविराजितांग-  
लतिका पूर्णेंदुवक्त्रोज्ज्वला । अक्षस्रकसृणिपाशपुस्तककरा या बाल-  
भानुप्रभा तां देवीं त्रिपुरां शिवां हृदि भजेऽभीष्टार्थसिद्धयै सदा  
॥ ४ ॥ वंदे वाग्भवमैदवात्मसदृशं वेदादिविद्यागिरो भाषा देश-  
समुद्भवाः पञ्चगताश्छंदांसि सप्त स्वरान् । तालान् पंच महाध्वनीन्  
प्रकटयत्यात्मप्रकाशेन यत्तद्बीजं पदवाक्यमानजनकं श्रीमातृके ते  
परम् ॥ ५ ॥ त्रैलोक्यस्फुटमंत्रतंत्रमहिमा स्वात्मोक्तिरूपं विना  
यद्बीजं व्यवहारजालमखिलं नास्त्येव मातस्तव । तज्जाप्यस्मरण-  
प्रसक्तसुमतिः सर्वज्ञतां प्राप्य कः शब्दब्रह्मनिवासभूतवदनो नेंद्रा-  
दिभिः स्पर्धते ॥ ६ ॥ मात्रा यात्र विराजतेऽतिविशदा तामष्टधा  
मातृकां शक्तिं कुंडलिनीं चतुर्विधतनुं यस्तत्त्वविन्मन्यते । सोऽवि-  
द्याखिलजन्मकर्मदुरितारण्यं प्रबोधाग्निना भस्मीकृत्य विकल्पजाल-

रहितो मातुः पदं तद्भजेत् ॥ ७ ॥ तत्ते मध्यमबीजमंब कलयाम्या-  
दित्यवर्णं क्रियाज्ञानेच्छाद्यमनंतशक्तिविभवव्यक्तिं व्यनक्ति स्फुटम् ।  
उत्पत्तिस्थितिकल्पकल्पिततनु स्वात्मप्रभावेन यत्काम्यं ब्रह्महरी-  
श्वरादिविबुधैः कामं क्रियायोजितैः ॥ ८ ॥ कामान्कारणतां  
गतानगणितान् कार्यैरनंतैर्महीमुख्यैः सर्वमनोगतैरधिगतान्मानैरनैकैः  
स्फुटम् । कामक्रोधसलोभमोहमदमात्सर्यारिषट्कं च यद्बीजं आज-  
यति प्रणौमि तदहं ते साधु कामेश्वरि ॥ ९ ॥ यद्भक्ताखिलकाम-  
पूरणचणस्वात्मप्रभावं महाजाड्यध्वांतविदारणैकतरणिज्योतिः प्रबोध-  
प्रदम् । यद्वेदेषु च गीयते श्रुतिमुखं मात्रात्रयेणोमिति श्रीविद्ये तव  
सर्वराजवशकृत्तत्कामराजं भजे ॥ १० ॥ यत्ते देवि तृतीयबीज-  
मनलज्वालावलीसंनिभं सर्वाधारतुरीयशक्तिपरमब्रह्माभिधाशब्दि-  
तम् । मूर्धन्यान्तविसर्गभूषितमहौकारात्मकं तत्परं आजद्रूपमनन्य-  
तुल्यममितः स्वांते मम द्योतताम् ॥ ११ ॥ सर्वं सर्वत एव सर्ग-  
समये कार्यैर्द्रियाण्यंतरा तत्तद्विव्यहृषीककर्मभिरियं संव्यश्रुवाना  
परा । वागर्थव्यवहारकारणतनुः शक्तिर्जगद्रूपिणी यद्बीजात्मकतां  
गता तव शिवे तं नौमि बीजं परम् ॥ १२ ॥ अग्नींदुद्युमणिप्रभंजन-  
धरानीरांतरस्थायिनी शक्तिर्ब्रह्महरीशवासवमुखामर्त्या सुरात्म-  
स्थिता । सृष्टस्थावरजंगमस्थितमहाचैतन्यरूपा च या यद्बीज-  
स्मरणेन सैव भवती प्रादुर्भवत्यंबिके ॥ १३ ॥ स्वात्मश्रीविजिताज-  
विष्णुमधवश्रीपूरणैकव्रतं सद्विद्याकविताविलासलहरीकल्लोलिनीदीप-  
कम् । बीजं यन्निगुणप्रवृत्तिजनकं ब्रह्मेति यद्योगिनः शांता सत्यमु-  
पासते तदिह ते चित्ते दधे श्रीपरे ॥ १४ ॥ एकैकं तव मातृके  
परतरं संयोगि वा योगि वा विद्यादिप्रकटप्रभावजनकं जाड्यान्ध-  
कारापहम् । यन्निष्ठाश्च महोत्पलासनमहाविष्णुप्रहर्त्रादयो देवाः



स्वेषु विधिष्वनन्तमहिमस्फूर्तिं दधत्येव तत् ॥ १५ ॥ इत्थं त्रीण्यपि  
मूलवाग्भवमहाश्रीकामराजस्फुरच्छक्वत्याख्यानि चतुःश्रुतिप्रकटिता-  
न्युत्कृष्टकूटानि ते । भूतर्तुश्रुतिसंख्यवर्णविदितान्यारक्तकांते शिवे  
यो जानाति स एव सर्वजगतां सृष्टिस्थितिध्वंसकः ॥ १६ ॥  
ब्रह्मायोनिरमासुरेश्वरसुहृल्लेखाभिरुक्तैस्तथा मार्तण्डेन्दुमनोजहंसवसु-  
धामायाभिरुत्तंसितैः सोमांबुक्षितिशक्तिभिः प्रकटितैर्बाणांगवेदैः  
क्रमाद्गणैः श्रीशिवदेशिकेन विदितां विद्यां तवांबाश्रये ॥ १७ ॥  
नित्यं यस्तव मातृकाक्षरसखीं सौभाग्यविद्यां जपेत् संपूज्याखिल-  
चक्रराजनिलयां सायंतनाग्निप्रभाम् । कामाख्यं शिवनामतत्त्वमुभयं  
व्याप्यात्मना सर्वतो दीव्यंतीमिह तस्य सिद्धिरचिरात्स्यात्तत्स्वरूपै-  
कता ॥ १८ ॥ काव्यैर्वा पठितैः किमल्पविदुषां जोघुष्यमाणैः पुनः  
किं तैर्व्याकरणैर्विबोबुधिषया किं वाभिधानश्रिया । एतैरंब न  
बोभवीति सुकविस्तावत्तव श्रीमतोर्यावन्नानुसरीसरीति सरणिं पादा-  
ब्जयोः पावनीम् ॥ १९ ॥ गेहं नाकृति गर्वितः प्रणमति स्त्रीसंगमो  
मोक्षति द्वेषो मित्रति पातकं सुकृतति क्षमावल्लभो दासति । मृत्यु-  
वैद्यति दूषणं सुगुणति त्वत्पादसंसेवनात् त्वां वंदे भवभीतिभंजन-  
करिं गौरीं गिरीशप्रियाम् ॥ २० ॥ आद्यैरग्निरवीन्दुर्बिंबनिलयैरंब  
त्रिलिंगात्मभिर्मिश्रारक्तसितप्रभैरनुपमैर्युष्मत्पदैस्तैस्त्रिभिः । स्वात्मो-  
त्पादितकाललोकनिगमावस्थामरादित्रयैरुद्भूतं त्रिपुरेति नाम कल-  
येद्यस्ते स धन्यो बुधः ॥ २१ ॥ आद्यो जाप्यतमार्थवाचकतया रूढः  
स्वरः पंचमः सर्वोत्कृष्टतमार्थवाचकतया वर्णः पवर्गातकः । वक्तृत्वेन  
महाविभूतिसरणिस्त्वाधारगो हृद्गतो भ्रूमध्ये स्थित इत्यतः प्रणवता  
ते गीयतेऽम्बागमैः ॥ २२ ॥ गायत्री सशिरास्तुरीयसहिता संध्या-  
मयीत्यागमैराख्याता त्रिपुरे त्वमेव महतां शर्मप्रदा कर्मणाम् ।

तत्तद्दर्शनमुख्यशक्तिरपि च त्वं ब्रह्मकर्मेश्वरी कर्ताहंन्पुरुषो हरिश्च  
 सविता बुद्धः शिवस्त्वं गुरुः ॥ २३ ॥ अन्नप्राणमनःप्रबोधपरमान-  
 नंदैः शिरःपक्षयुकपुच्छात्मप्रकटैर्महोपनिषदां वाग्भिः प्रसिद्धीकृतैः ।  
 कोशः पंचभिरेभिरंब भवतीमेतत्प्रलीनामिति ज्योतिः प्रज्वलद्बुज्ज्व-  
 लात्मचपलां यो वेद स ब्रह्मवित् ॥ २४ ॥ सच्चित्तत्वमसीति वाक्य-  
 विदितैरध्यात्मविद्या-शिव-ब्रह्माख्यैरखिलप्रभावमहितैस्तत्त्वैस्त्रिभिः  
 सद्गुरोः । त्वद्रूपस्य मुखारविंदविवरात्संप्राप्य दीक्षामतो यस्त्वां  
 विंदति तत्त्वतस्तदहमित्यार्ये स मुक्तो भवेत् ॥ २५ ॥ सिद्धांतै-  
 र्बहुभिः प्रमाणगदितैरन्यैरविद्यातमो नक्षत्रैरिव सर्वमंधतमसं तावन्न  
 निर्भिद्यते । यावत्ते सवितेव संमतमिदं नोदेति विश्वांतरे जंतोर्जन्म-  
 विमोचनैकभिदुरं श्रीशांभवं श्रीशिवे ॥ २६ ॥ आत्मासौ सकलें-  
 द्रियाश्रयमनोबुद्ध्यादिभिः शोचितः कर्माबद्धतनुर्जनिं च मरणं  
 प्रैतीति यत्कारणम् । तत्ते देवि महाविलासलहरी दिव्यायुधानां  
 जयस्तस्मात्सद्गुरुमभ्युपेत्य कलये त्वामेव चेंमुच्यते ॥ २७ ॥ नाना-  
 योनिसहस्रसंभववशाज्जाता जनन्यः कति प्रख्याता जनकाः कियंत  
 इति मे सेत्स्यंति चाग्रे कति । एतेषां गणनैव नास्ति महतः संसार-  
 सिंधोर्विधेर्भीतं मां नितरामनन्यशरणं रक्षानुकंपानिधे ॥ २८ ॥  
 देहक्षोभकरैर्व्रतैर्बहुविधैर्दानैश्च होमैर्जपैः संतानैर्हयमेधमुख्यसुमखै-  
 र्नानाविधैः कर्मभिः । यत्संकल्पविकल्पजालमलिनं प्राप्यं पदं तस्य  
 ते दूरादेव निवर्तते परतरं मातः पदं निर्मलम् ॥ २९ ॥ पंचाश-  
 न्निजदेहजाक्षरमयैर्नानाविधैर्धातुभिर्बह्वैः पदवाक्यमानजनकैरर्था-  
 विनाभावितैः । साभिप्रायवदर्थकर्मफलदैः ख्यातैरनंतैरिदं विश्वं  
 व्याप्य चिदात्मनाहमहमित्युज्जृंभसे मातृके ॥ ३० ॥ श्रीचक्रं श्रुति-  
 मूलकोश इति ते संसारचक्रात्मकं विख्यातं तदधिष्ठिताक्षरशिव-

ज्योतिर्मयं सर्वतः । एतन्मंत्रमयात्मिकाभिररुणं श्रीसुन्दरीभिर्वृतं  
 मध्ये वैदवसिंहपीठललिते त्वं ब्रह्मविद्या शिवे ॥ ३१ ॥ बिंदुप्राण-  
 विसर्गजीवसहितं बिंदुत्रिवीजात्मकं षट् कूटानि विपर्ययेण निग-  
 देत्तारत्रिबालाक्षरैः । एभिः संपुटितं प्रजप्य विहरेत्प्रासादमंत्रं परं  
 गुह्याद्गुह्यतमं सयोगजनितं सद्भोगमोक्षप्रदम् ॥ ३२ ॥ आताम्रार्क-  
 सहस्रदीप्तिपरमा सौंदर्यसारैरलं लोकातीतमहोदयैरुपयुता सर्वोपमा-  
 गोचरैः । नानानर्घ्यविभूषणैरगणितैर्जाज्वल्यमानाऽभितस्त्वं मातस्त्रि-  
 पुरारिसुन्दरि कुरु स्वांते निवासं मम ॥ ३३ ॥ शिंजन्नूपुरपादकंकण-  
 महामुद्रासु लाक्षारसालंकारांकितपादपंकजयुगं श्रीपादुकालंकृतम् ।  
 उद्गास्वन्नखचंडखंडरुचिरं राजजपासंनिभं ब्रह्मादित्रिदशासुरार्चित-  
 महं मूर्ध्नि स्मराम्यंबिके ॥ ३४ ॥ धारक्तच्छविनातिमार्दवयुजा  
 निःश्वासहार्येण यत्कौशेयेन विचित्ररत्नघटितैर्मुक्ताफलैरुज्ज्वलैः ।  
 कूजत्कांचनकिंकिणीभिरभितः संनद्धकांचीगुणैरादीप्तं सुनितंबर्बिब-  
 मरुणं ते पूजयाम्यंबिके ॥ ३५ ॥ कस्तूरीघनसारकुंकुमरजो गंधो-  
 त्कटैश्चंदनैरालिप्तं मणिमालयातिरुचिरं प्रैवेयहारादिभिः । दीप्तं  
 दिव्यविभूषणैर्जननि ते ज्योतिर्विभास्वत्कुचव्याजस्वर्णघटद्वयं हरिहर-  
 ब्रह्मादिपीतं भजे ॥ ३६ ॥ मुक्तारत्नसुवर्णकांतिकलितैस्तैर्बाहुवल्ली-  
 रहं केयूरोत्तमबाहुदंडवल्यैर्हस्तांगुलीभूषणैः । संपृक्ताः कलयामि  
 हीरमणिमन्मुक्ताफलाकीलितग्रीवापट्टविभूषणेन सुभगे कंठं च कंबु-  
 श्रियम् ॥ ३७ ॥ तप्तस्वर्णकृतोरुकुंडलयुगं माणिक्यमुक्तोल्लसद्दीरा-  
 बद्धमनन्यतुल्यमपरं हैमं च चक्रद्वयम् । शुक्राकारनिकारदक्षमपरं  
 मुक्ताफलं सुंदरं बिभ्रत्कर्णयुगं नमामि ललितं नासाग्रभागं शिवे  
 ॥ ३८ ॥ उद्यत्पूर्णकलानिधिश्चि वदनं भक्तप्रसन्नं सदा संफुल्लंबुज-  
 पत्रचित्रसुषमाधिकारदक्षेक्षणम् । सानंदं कृतमंदहासमसकृत्प्रादु-

भवत्कौतुकं कुंदाकारसुदंतपङ्क्तिशशिभापूर्णं स्मराम्यंबिके ॥ ३९ ॥  
 शृङ्गारादिरसालयं त्रिभुवनीमाल्यैरतुल्यैर्वृतं सर्वाङ्गीणसदंगारागसुरभि  
 श्रीमद्रुपुर्धूपितम् । तांबूलारूपपल्लवाधरयुतं रम्यं त्रिपुण्ड्रं दधद्भालं  
 नंदनचंदनेन जननि ध्यायामि ते मंगलम् ॥ ४० ॥ जातीचंपककुंद-  
 केसरमहागंधोद्गिरत्केतकीनीपाशोकशिरीषमुख्यकुसुमैः प्रोत्तंसिता  
 धूपिता । आनीलांजनतुल्यमत्तमधुपश्रेणीव वेणी तव श्रीमातः  
 श्रयतां मदीयहृदयांभोजं सरोजालये ॥ ४१ ॥ रेखालभ्यविचित्र-  
 रत्नवटितं हैमं किरीटोत्तमं मुक्ताकांचनकिंकिणीगणमहाहीरप्रबद्धो-  
 ज्ज्वलम् । चंचच्चंद्रकलाकलापमहितं देवद्रुपुष्पार्चितैर्माल्यैरंब विलं-  
 बितं सशिखरं विभ्रच्छिरस्ते भजे ॥ ४२ ॥ उल्लिखितोच्चसुवर्णदंड-  
 कलितं पूर्णदुर्बिंबाकृति च्छत्रं मौक्तिकचित्ररत्नखचितं श्रौमांशुकोत्तं-  
 सितम् । मुक्ताजालविलंबितं सकलशं नानाप्रसूनार्चितं चंद्रोडुामर-  
 चामराणि दधते श्रीदेवि ते स्वश्रियः ॥ ४३ ॥ विद्यामंत्ररहस्य-  
 विन्मुनिगणकृतोपचारार्चनां वेदादिस्तुतिगीयमानचरितां वेदांततत्त्वा-  
 त्मिकाम् । सर्वास्ताः खलु तुर्यतामुपगतास्त्वद्द्रश्मिदेव्यः परास्त्वां  
 नित्यं समुपासते स्वविभवैः श्रीचक्रनाथे शिवे ॥ ४४ ॥ एवं यः  
 स्मरति प्रबुद्धसुमतिः श्रीमत्स्वरूपं परं वृद्धोऽप्याशु युवा भवत्य-  
 नुपमः स्त्रीणामनंगायते । सोऽष्टैश्वर्यतिरस्कृताखिलसुरश्रीजृम्भणै-  
 कालयः पृथ्वीपालकिरीटकोटिवलभीपुष्पार्चितांघ्रिर्भवेत् ॥ ४५ ॥  
 अथ तव धनुः पुण्ड्रेक्षुत्वात्प्रसिद्धमतिद्युति त्रिभुवनवधूसुद्यज्यो-  
 त्स्नाकलानिधिमंडलम् । सकलजननि स्मारंस्मारं नतः स्मरतां नर-  
 स्त्रिभुवनवधूसोहांभोधेः प्रपूर्णविधुर्भवेत् ॥ ४६ ॥ प्रसूनशरपंचक-  
 प्रकटजृम्भणागुंफितत्रिलोकमवलोकयत्यमलचेतसा चंचलम् । अशे-  
 षतरुणीजनस्मरविजृम्भणे यः सदा पटुर्भवति ते शिवे त्रिजगदं-

गणाक्षोभणे ॥ ४७ ॥ पाशं प्रपूरितमहासुमतिप्रकाशो यो वा तव  
 त्रिपुरसुंदरि सुंदरीणाम् । आकर्षणेऽखिलवशीकरणे प्रवीणं चित्ते  
 दधाति स जगन्नयवश्यकृत्स्यात् ॥ ४८ ॥ यः स्वांते कलयति  
 कोविदस्त्रिलोकीस्तंभारंभणचणमल्युदारवीर्यम् । मातस्ते विजय-  
 निजांकुशं सयोषा देवांस्तम्भयति च भूभुजोऽन्यसैन्यम् ॥ ४९ ॥  
 चापध्यानवशाद्भवोद्भवमहामोहं महाजृम्भणं प्रख्यातं प्रसवेषु चिंत-  
 नवशात्तत्तच्छरव्यं सुधीः । पाशध्यानवशात्समस्तजगतां मृत्योर्व-  
 शित्वं महादुर्गस्तंभमहांकुशस्य मननान्मायाममेयां तरेत् ॥ ५० ॥  
 न्यासं कृत्वा गणेशग्रहभगणमहायोगिनीराशिपीठैः षड्भिः श्रीमातृ-  
 काणैः सहितबहुकलैरष्टवाग्देवताभिः । सश्रीकंठादियुग्मैर्विमल-  
 निजतनौ केशवाद्यैश्च तत्त्वैः षट्त्रिंशद्भिश्च तत्त्वैर्भगवति भवतीं यः  
 स्मरेत्स त्वमेव ॥ ५१ ॥ सुरपतिपुरलक्ष्मीर्जृम्भणातीतलक्ष्मीः  
 प्रभवति निजगेहे यस्य दैवं त्वमार्ये । विविधनवकलानां पात्रभूतस्य  
 तस्य त्रिभुवनविदिता सा जृम्भते कीर्तिरच्छा ॥ ५२ ॥ मातस्त्वं  
 भूर्भुवःस्वर्महरसि नृतपःसत्यलोकैश्च सूर्यैर्द्वाराज्ञाचार्यशुक्रार्किभिरपि  
 निगमब्रह्मभिः प्रोतशक्तिः । प्राणायामादियत्नैः कलयसि सकलं  
 मानसं ध्यानयोगं येषां तेषां सपर्या भवति सुरकृता ब्रह्म ते जानते  
 च ॥ ५३ ॥ क्व मे बुद्धिर्वाचा परमविदुषो मंदसरणिः क्व ते मात-  
 र्ब्रह्मप्रमुखविदुषामाप्तवचसाम् । अभून्मे विस्फूर्तिः परतरमहिम्नस्तव  
 नुतिः प्रसिद्धं क्षतव्यं बहुलतरचापल्यमिह मे ॥ ५४ ॥ प्रसीद  
 परदेवते मम हृदि प्रभूतं भयं विदारय दरिद्रतां दलय देहि सर्व-  
 ज्ञताम् । निधेहि करुणानिधे चरणपद्मयुग्मं स्वकं निवारय जरामृती  
 त्रिपुरसुंदरि श्रीशिवे ॥ ५५ ॥ इति त्रिपुरसुंदरीस्तुतिमिमां पठेद्यः  
 सुधीः स सर्वदुरिताटवीपटलचंडदावानलः । भवेन्मनसि वाञ्छितं

प्रथितसिद्धिवृद्धिर्भवेदनेकविधसंपदां पदमनन्यतुल्यो भवेत् ॥ ५६ ॥  
 पृथ्वीपालप्रकटमुकुटस्रग्जोराजितांघ्रिर्विद्वत्पुंजानतिनुतिसमाराधितो  
 बाधितारिः । विद्याः सर्वाः कलयति हृदा व्याकरोति प्रवाचा  
 लोकाश्चर्यैर्नवनवपदैरिदुर्बिम्बप्रकाशैः ॥ ५७ ॥ संगीतं गिरिजे कवि-  
 त्वसरणिं चाभ्नायवाक्यस्मृतेर्व्याख्यानं हृदि तावकीनचरणद्वंद्वं च  
 सर्वज्ञताम् । श्रद्धां कर्मणि कालिकेऽतिविपुलश्रीजृम्भणं मंदिरे  
 सौंदर्यं वपुषि प्रकाशमतुलं प्राप्नोति विद्वान्कविः ॥ ५८ ॥ भूष्यं  
 वैदुष्यमुद्यद्दिनकरणाकारमाकारतेजः सुव्यक्तं भक्तिमार्गं निगम-  
 निगदितं दुर्गमं योगमार्गम् । आयुष्यं ब्रह्मपोष्यं हरगिरिविशदां  
 कीर्तिमभ्येत्य भूमौ देहांते ब्रह्मपारं परशिवचरणाकारमभ्येति विद्वान्  
 ॥ ५९ ॥ दुर्वाससा महितदिव्यमुनीश्वरेण विद्याकलायुवतिमन्मथ-  
 मूर्तिनैतत् । स्तोत्रं व्यधायि रुचिरं त्रिपुरांबिकाया वेदागमैकपटली-  
 विदितैकमूर्तेः ॥ ६० ॥ सदसदनुग्रहनिग्रहगृहीतमुनिविग्रहो भग-  
 वान् । सर्वासामुपनिषदां दुर्वासा जयति देशिकः प्रथमः ॥ ६१ ॥  
 इति श्रीदुर्वासमहामुनिविरचितं देवीमहिम्नः स्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### २३३. कालिकाकवचम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ कैलासशिखरासीनं देवदेवं जगद्गुरुम् । शंकरं  
 परिपप्रच्छ पार्वती परमेश्वरम् ॥ १ ॥ पार्वत्युवाच ॥ भगवन् देव-  
 देवेश देवानां भोगद प्रभो । प्रब्रूहि मे महादेव गोप्यं चेद्यदि हे  
 प्रभो ॥ २ ॥ शत्रूणां येन नाशः स्यादात्मनो रक्षणं भवेत् । परमै-  
 श्वर्यमतुलं लभेधेन हि तद्ब्रू ॥ ३ ॥ भैरव उवाच ॥ वक्ष्यामि ते  
 महादेवि सर्वधर्मविदां वरे । अद्भुतं कवचं देव्याः सर्वकामप्रसाधकम्  
 ॥ ४ ॥ विशेषतः शत्रुनाशं सर्वरक्षाकरं नृणाम् । सर्वारिष्टप्रशमनं  
 सर्वाभद्रविनाशनम् ॥ ५ ॥ सुखदं भोगदं चैव वशीकरणमुत्तमम् ।

शत्रुसंघाः क्षयं यांति भवंति व्याधिपीडिताः ॥ ६ ॥ दुःखिनो  
ज्वरिणश्चैव स्वाभीष्टद्रोहिणस्तथा । भोगमोक्षप्रदं चैव कालिका-  
कवचं पठेत् ॥ ७ ॥ ॐ अस्य श्रीकालिकाकवचस्य भैरव ऋषिः,  
अनुष्टुप् छंदः, श्रीकालिका देवता, जपे विनियोगः ॥ ॐ ध्याये-  
त्कालीं महामायां त्रिनेत्रां बहुरूपिणीम् । चतुर्भुजां ललज्जिह्वां  
पूर्णचंद्रनिभाननाम् ॥ ८ ॥ नीलोत्पलदलश्यामां शत्रुसंघविदारि-  
णीम् । नरमुण्डं तथा खड्गं कमलं च वरं तथा ॥ ९ ॥ निर्भयां  
रक्तवदनां दंष्ट्रालीघोररूपिणीम् । साट्टहासाननां देवीं सर्वदां च  
दिगंबरिम् ॥ १० ॥ शवासनस्थितां कालीं मुण्डमालाविभूषिताम् ।  
इति ध्यात्वा महाकालीं ततस्तु कवचं पठेत् ॥ ११ ॥ ॐ कालिका  
घोररूपा सर्वकामप्रदा शुभा । सर्वदेवस्तुता देवी शत्रुनाशं करोतु  
मे ॥ १२ ॥ ॐ ह्रीं ह्रींरूपिणीं चैव हां ह्रीं हांरूपिणीं तथा ।  
हां ह्रीं क्षौं क्षौंस्वरूपा सा सदा शत्रून्विदारयेत् ॥ १३ ॥ श्रीं-ह्रीं-  
ऐंरूपिणी देवी भवबंधविमोचनी । हुंरूपिणी महाकाली रक्षास्मान्  
देवि सर्वदा ॥ १४ ॥ यया शुंभो हतो दैत्यो निशुंभश्च महासुरः ।  
वैरिनाशाय वंदे तां कालिकां शंकरप्रियाम् ॥ १५ ॥ ब्राह्मी शैवी  
वैष्णवी च वाराही नारसिंहिका । कौमार्यैन्द्री च चामुंडा खादंतु मम  
विद्विषः ॥ १६ ॥ सुरेश्वरी घोररूपा चंडमुंडविनाशिनी । मुंडमाला-  
वृतांगी च सर्वतः पातु मां सदा ॥ १७ ॥ ह्रीं ह्रीं ह्रीं कालिके घोरे  
दंष्ट्रेव रुधिरप्रिये । रुधिरापूर्णवक्त्रे च रुधिरेणावृतस्तनि ॥ १८ ॥  
मम शत्रून् खादय खादय हिंस हिंस मारय मारय भिन्धि भिन्धि  
छिन्धि छिन्धि उच्चाटय उच्चाटय द्रावय द्रावय शोषय शोषय  
स्वाहा । हां ह्रीं कालिकायै मदीयशत्रून् समर्पयामि स्वाहा ॥  
ॐ जय जय किरि किरि किटि किटि कट कट मर्द मर्द मोहय

मोहय हर हर मम रिपून् ध्वंस ध्वंस भक्षय भक्षय त्रोटय त्रोटय  
यातुधानान् चामुंडे सर्वजनान् राज्ञो राजपुरुषान् स्त्रियो मम  
वश्यान् कुरु कुरु तनु तनु धान्यं धनं मेऽश्वान् गजान् रत्नानि  
दिव्यकामिनीः पुत्रान् राजश्रियं देहि यच्छ क्षां क्षीं क्षूं क्षैं क्षौं क्षः  
स्वाहा । इत्येतत्कवचं दिव्यं कथितं शंभुना पुरा । ये पठन्ति सदा  
तेषां ध्रुवं नश्यन्ति शत्रवः ॥ १९ ॥ वैरिणः प्रलयं यांति व्याधिता  
वा भवंति हि । बलहीनाः पुत्रहीनाः शत्रवस्तस्य सर्वदा ॥ २० ॥  
सहस्रपठनात्सिद्धिः कवचस्य भवेत्तदा । तत्कार्याणि च सिध्यन्ति  
यथा शंकरभाषितम् ॥ २१ ॥ श्मशानांगारमादाय चूर्णं कृत्वा  
प्रयत्नतः । पादोदकेन पिष्ट्वा तल्लिखेल्लोहशलाकया ॥ २२ ॥ भूमौ  
शत्रून् हीनरूपानुत्तराशिरसस्तथा । हस्तं दत्त्वा तु हृदये कवचं तु  
स्वयं पठेत् ॥ २३ ॥ शत्रोः प्राणप्रतिष्ठां तु कुर्यान्मंत्रेण मंत्रवित् ।  
हन्यादस्त्रं प्रहारेण शत्रो गच्छ यमक्षयम् ॥ २४ ॥ ज्वलदंगारतापेन  
भवंति ज्वरिता भृशम् । प्रोञ्छनैर्वामपादेन दरिद्रो भवति ध्रुवम्  
॥ २५ ॥ वैरिनाशकरं प्रोक्तं कवचं वश्यकारकम् । परमैश्वर्यदं चैव  
पुत्रपौत्रादिवृद्धिदम् ॥ २६ ॥ प्रभातसमये चैव पूजाकाले च  
यत्नतः । सायंकाले तथा पाठात्सर्वसिद्धिर्भवेद्भुवम् ॥ २७ ॥  
शत्रुरुच्चाटनं याति देशाद्वा विच्युतो भवेत् । पश्चात्किङ्करतामेति  
सत्यं सत्यं न संशयः ॥ २८ ॥ शत्रुनाशकरे देवि सर्वसंपत्करे  
शुभे । सर्वदेवस्तुते देवि कालिके त्वां नमाम्यहम् ॥ २९ ॥ इति  
श्रीरुद्रयामले कालिकाकल्पे कालिकाकवचं संपूर्णम् ॥

### २३४. वरदवल्लभास्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ कान्तस्ते पुरुषोत्तमः फणिपतिः शय्यासनं  
वाहनं वेदात्मा विहगेश्वरो जवनिका माया जगन्मोहिनी । ब्रह्मेशा-



दिसुरव्रजः सदयितस्त्वद्दासदासीगणः श्रीरित्येव च नाम ते भगवति  
 ब्रूमः कथं त्वां वयम् ॥ १ ॥ यस्यास्ते महिमानमात्मन इव त्वद्ब्र-  
 ह्मभोऽपि प्रभुर्नालं मातुमियत्तया निरवधिं नित्यानुकूलं स्वतः ।  
 तां त्वां दास इति प्रपन्न इति च स्तोष्याम्यहं निर्भयो लोकैकेश्वरि  
 लोकनाथदयिते दान्ते दयां ते विदन् ॥ २ ॥ ईषत्त्वत्करुणानिरीक्षण-  
 सुधासंधुक्षणाद्रक्षसे नष्टं प्राक्त्वदलाभतस्त्रिभुवनं संप्रत्यनन्तो-  
 दयम् । श्रेयो न ह्यरविन्दलोचनमनःकान्ताप्रसादादृते संसृत्याक्षर-  
 वैष्णवाध्वसु नृणां संभाव्यते कर्हिचित् ॥ ३ ॥ शान्तानन्तमहा-  
 विभूतिपरमं यद्ब्रह्मरूपं हरे मूर्तं ब्रह्म ततोऽपि यत्प्रियतरं रूपं  
 यदत्यद्भुतम् । यान्यन्यानि यथासुखं विहरतो रूपाणि सर्वाणि  
 तान्याहुः स्वैरनुरूपरूपविभवैर्गाढोपगाढानि ते ॥ ४ ॥ आकार-  
 त्रयसंपन्नामरविन्दविलासिनीम् । अशेषजगदीशित्रीं वन्दे वरदवल्ल-  
 भाम् ॥ ५ ॥ इति श्रीवरदवल्लभास्तोत्रं संपूर्णम् ॥

२३५. लघुस्तवः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ऐन्द्रस्येव शरासनस्य दधती मध्येललाटं प्रभां  
 शौक्लीं कान्तिमनुष्णगोरिव शिरस्यातन्वती सर्वतः । एषासौ  
 त्रिपुरा हृदि द्युतिरिवोष्णांशोः सदाहःस्थिता छिंद्यान्नः सहसा पदै-  
 स्त्रिभिरघं ज्योतिर्मयी वाङ्मयी ॥ १ ॥ या मात्रा त्रपुसीलता-  
 तनुलसत्तनुस्थितिस्पर्धिनी वाग्बीजे प्रथमे स्थिता हृदि सदा तां  
 मन्महे ते वयम् । शक्तिः कुंडलिनीति विश्वजननी व्यापारबद्धोद्यमा  
 ज्ञात्वेत्थं न पुनः स्पृशन्ति जननीगर्भेऽर्भकत्वं सुराः ॥ २ ॥ दृष्ट्वा  
 संभ्रमकारि वस्तु सहसा ऐ ऐ इति व्याहृतं येनाकूतवशादपीह  
 वरदे बिंदुं विनाप्यक्षरम् । तस्यापि ध्रुवमेव देवि तरसा कान्ते

१ स्तवोऽयं काव्यमाला-तृतीयगुच्छके प्रकाशितोऽस्ति ।

तवानुग्रहे वाचः सूक्तिसुधारसद्रवमुचो निर्याति वक्रांबुजात्  
 ॥ ३ ॥ यन्नित्ये तव कामराजमपरं मंत्राक्षरं निष्कलं तत्सारस्वत-  
 मित्यवैति विरलः कश्चिद्बुधश्चेद्भुवि । आख्यानं प्रतिपर्व सत्यतपसो  
 यत्कीर्तयंतो द्विजाः प्रारंभे प्रणवास्पदप्रणयितां नीत्वोच्चरन्ति  
 स्फुटम् ॥ ४ ॥ यत्सद्यो वचसां प्रवृत्तिकरणे दृष्टप्रभावं बुधै-  
 स्तार्तीयं बत हं नमामि मनसा त्वद्वीजमिन्दुप्रभम् । अस्त्वौर्वोऽपि  
 सरस्वतीमनुगतो जाड्यांबुविच्छित्तये गोशब्दो गिरि वर्तते स नियतं  
 योगं विना सिद्धिदः ॥ ५ ॥ एकैकं तव देवि बीजमनघं सव्यंज-  
 नाव्यंजनं कूटस्थं यदि वा पृथक् क्रमगतं यद्वा स्थितं व्युत्क्रमात् । यं  
 यं काममपेक्ष्य येन विधिना केनापि वा चिंतितं जप्तं वा सफलीकरोति  
 तरसा तं तं समस्तं नृणाम् ॥ ६ ॥ वामे पुस्तकधारिणीमभयदां  
 साक्षस्त्रजं दक्षिणे भक्तेभ्यो वरदानपेशलकरां कर्पूरकुंदोज्ज्वलाम् ।  
 उज्जृम्भांबुजपत्रकांतिनिवहस्त्रिग्धप्रभालोकिनीं ये त्वामंब न शील-  
 यन्ति मनसा तेषां कवित्वं कुतः ॥ ७ ॥ ये त्वां पांडुरपुंडरीकपटल-  
 स्पष्टाभिरामप्रभां सिंचन्तीममृतद्रवैरिव शिवे ध्यायन्ति मूर्ध्नि  
 स्थिताम् । अश्रांतं विकटस्फुटाक्षरपदा निर्याति वक्रांबुजात्तेषां  
 भारति भारती सुरसरिक्लोललोलोर्मिवत् ॥ ८ ॥ ये सिंदूरपराग-  
 पुञ्जपिहितां त्वत्तेजसा ध्यामिमासुर्वीं चापि विलीनयावकरस-  
 प्रस्तारमग्न्यामिव । ध्यायन्ति क्षणमप्यनन्यमनसस्तेषामनङ्गज्वर-  
 क्तांतास्त्रस्तकुरंगशावकदृशो वश्या भवंति स्फुटम् ॥ ९ ॥  
 चंचत्कांचनकुंडलांगदधरामाबद्धकांचीस्त्रजं ये त्वां चेतसि तद्गते  
 क्षणमपि ध्यायन्ति कृत्वा स्थिराम् । तेषां वेष्मसु विभ्रमादहरहः  
 स्फारीभवंत्यश्रिरं माद्यत्कुंजरकर्णतालतरलाः स्थैर्यं भवंति श्रियः  
 ॥ १० ॥ आर्भक्या शशिखण्डमण्डितजटाजूटां नृमुण्डस्त्रजं बंधूकप्र-

सवारुणांबरधरां प्रेतासनाध्यासिनीम् । त्वां ध्यायन्ति चतुर्भुजां  
 त्रिनयनामापीनतुङ्गस्तीर्णा मध्ये निम्नवलित्रयांकिततनुं त्वद्रूप-  
 संवित्तये ॥ ११ ॥ जातोऽप्यल्पपरिच्छदे क्षितिभुजां सामान्यमात्रे  
 कुले निःशेषावनिचक्रवर्तिपदवीं लब्ध्वा प्रतापोन्नतः । यद्विद्याधर-  
 वृन्दवंदितपदः श्रीवत्सराजोऽभवद्देवित्वच्चरणांबुजप्रणतिजः सोऽयं  
 प्रसादोदयः ॥ १२ ॥ चंडि त्वच्चरणांबुजार्चनविधौ बिल्वीदलोच्छुंठन-  
 त्रुद्यत्कंटककोटिभिः परिचयं येषां न जग्मुः कराः । ते दंडांकुश-  
 चक्रचापकुलिशश्रीवत्समत्स्यांकितैर्जायन्ते पृथिवीभुजः कथमिवा-  
 म्भोजप्रभैः पाणिभिः ॥ १३ ॥ विप्राः क्षोणिभुजो विशस्तदितरे  
 क्षीराज्यमध्वासवैस्त्वां देवि त्रिपुरे परापरमयीं संतर्प्य पूजाविधौ ।  
 यां यां प्रार्थयते मनः स्थिरतया तेषां त एते ध्रुवं तां तां सिद्धिमवा-  
 मुवंति तरसा विघ्नैरनिघ्नीकृताः ॥ १४ ॥ शब्दानां जननि त्वमत्र  
 भुवने वाग्वादिनीत्युच्यसे त्वत्तः केशववासवप्रभृतयोऽप्याविर्भवन्ति  
 ध्रुवम् । लीयन्ते खलु यत्र कल्पविरमे ब्रह्मादयस्तेऽप्यमी सा त्वं  
 काचिद्विल्यरूपगरिमा शक्तिः परा गीयसे ॥ १५ ॥ देवानां त्रितयं  
 त्रयी हुतभुजां शक्तित्रयं त्रिस्वरास्त्रैलोक्यं त्रिपदी त्रिपुष्करमथ  
 त्रिब्रह्मवर्णास्त्रयः । यत्किञ्चिज्जगति त्रिधा नियमितं वस्तु त्रिवर्गात्मकं  
 तत्सर्वं त्रिपुरेति नाम भगवत्यन्वेति ते तत्त्वतः ॥ १६ ॥ लक्ष्मीं  
 राजकुले जयां रणमुखे क्षेमंकरीमध्वनि क्रव्यादद्विपसर्पभाजि  
 शबरीं कांतारदुर्गे गिरौ । भूतप्रेतपिशाचजम्बुकभये स्मृत्वा महा-  
 भैरवीं व्यामोहे त्रिपुरां तरन्ति विपदस्तारां च तोयप्लवे ॥ १७ ॥  
 मायाकुंडलिनी क्रिया मधुमती काली कलामालिनी मातंगी विजया  
 जया भगवती गौरी शिवा शांभवी । शक्तिः शङ्करवल्लभा त्रिनयना  
 वाग्वादिनी भैरवी ह्रींकारी त्रिपुरे परापरमयी माता कुमारी-

त्यसि ॥ १८ ॥ आईपल्लवितैः परस्परयुतैर्द्वित्रिक्रमाद्यक्षरैः काद्यैः  
 क्षांतगतैः स्वरादिभिरथ क्षांतैश्च तैः सस्वरैः । नामानि त्रिपुरे  
 भवंति खलु यान्यत्यंतगुह्यानि ते तेभ्यो भैरवपत्नि विंशतिसहस्रेभ्यः  
 परेभ्यो नमः ॥ १९ ॥ बोद्धव्या निपुणं पदैः स्तुतिरियं कृत्वा  
 मनस्तद्गतं भारत्यास्त्रिपुरेत्यनन्यमनसा यत्राद्यवृत्ते स्फुटम् ।  
 एकद्वित्रिपदक्रमेण कथितस्त्वत्पादसंख्याक्षरैर्मन्त्रोद्धारनिधिर्विशेष-  
 सहितः सत्संप्रदायान्वितः ॥ २० ॥ सावद्यं निरवद्यमस्तु यदि वा  
 किं वानया चिंतया नूनं स्तोत्रमिदं पठिष्यति जनो यस्यास्ति  
 भक्तिस्त्वयि । संचिंत्यापि लघुत्वमात्मनि दृढं संजायमानं हठा-  
 च्चन्द्रक्त्या मुखरीकृतेन सुचिरं यस्मान्मयापि ध्रुवम् ॥ २१ ॥  
 इति लघुस्तवः संपूर्णः ॥

### २३६. ताराष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ मातर्नीलसरस्वति प्रणमतां सौभाग्यसंपत्प्रदे  
 प्रत्यालीढपदस्थिते शिवहृदि स्मेराननांभोरुहे । फुल्लेंदीवरलोचनत्रय-  
 युते कर्त्री कपालोत्पले खड्गं चादधती त्वमेव शरणं त्वामीश्वरी-  
 माश्रये ॥ १ ॥ वाचामीश्वरि भक्तकल्पलतिके सर्वार्थसिद्धिप्रदे  
 गद्यप्राकृतपद्यजातरचना सर्वत्र सिद्धिप्रदे । नीलेंदीवरलोचनत्रययुते  
 कारुण्यवारांनिधे सौभाग्यामृतवर्षणेन कृपया सिंच त्वमस्मादृशम्  
 ॥ २ ॥ शर्वे गर्वसमूहपूरिततनो सर्पादिवेषोज्ज्वले व्याघ्रत्वक्परि-  
 वीतसुंदरकटिव्याधूतघंटांकिते । सद्यःकृत्तगलद्रजःपरिमिलन्मुंडद्वयी-  
 मूर्धजग्रंथिश्रेणिन्मुंडदामललिते भीमे भयं नाशय ॥ ३ ॥  
 मायानंगविकाररूपललनाबिंद्वर्धचंद्रात्मिके हुंफटकारमयि त्वमेव  
 शरणं मंत्रात्मिके मादृशः । मूर्तिस्ते जननि त्रिधामघटिता स्थूलाऽति-  
 सूक्ष्मा परा वेदानां नहि गोचरा कथमपि प्राप्तां नुतामाश्रये ॥ ४ ॥

त्वत्पादांबुजसेवया सुकृतिनो गच्छन्ति सायुज्यतां तस्य स्त्री  
 परमेश्वरी त्रिनयनब्रह्मादिसाम्यात्मनः । संसारांबुधिमज्जने पटुतनून्  
 देवेंद्रमुख्यान्सुरान् मातस्त्वत्पदसेवने हि विमुखो यो मंदधीः सेवते  
 ॥ ५ ॥ मातस्त्वत्पदपंकजद्वयरजोमुद्रांककोटीरिणस्ते देवा जयसंगरे  
 विजयिनो निःशंकमंके गताः । देवोऽहं भुवने न मे सम इति  
 स्पर्धा वहतः परे तत्तुल्यं नियतं यथाऽसुभिरमी नाशं व्रजन्ति  
 स्वयम् ॥ ६ ॥ त्वन्नामस्मरणात्पलायनपरा द्रष्टुं च शक्ता न ते  
 भूतप्रेतपिशाचराक्षसगणा यक्षाश्च नागाधिपाः । दैत्या दानव-  
 पुंगवाश्च खचरा व्याघ्रादिका जंतवो डाकिन्यः कुपितांतकाश्च मनुजं  
 मातः क्षणं भूतले ॥ ७ ॥ लक्ष्मीः सिद्धगणाश्च पादुकमुखाः  
 सिद्धास्तथा चारणाः स्तंभश्चापि रणांगणे गजघटास्तंभस्तथा मोहनम् ।  
 मातस्त्वत्पदसेवया खलु नृणां सिध्यन्ति ते ते गुणाः कांतिः कांत-  
 मनोभवस्य भवति क्षुद्रोऽपि वाचस्पतिः ॥ ८ ॥ ताराष्टकमिदं रम्यं  
 भक्तिमान्यः पठेन्नरः । प्रातर्मध्याह्नकाले च सायाह्ने नियतः शुचिः  
 ॥ ९ ॥ लभते कवितां दिव्यां सर्वशास्त्रार्थविद्भवेत् । लक्ष्मीमनश्चरां  
 प्राप्य भुक्त्वा भोगान्यथेप्सितान् ॥ १० ॥ कीर्तिं कांतिं च नैरुज्यं  
 सर्वेषां प्रियतां व्रजेत् । विख्यातिं चापि लोकेषु प्राप्यांते मोक्ष-  
 मामुयात् ॥ ११ ॥ इति नीलतंत्रे ताराष्टकं संपूर्णम् ॥

२३७. अंबास्तवः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ यामामनन्ति मुनयः प्रकृतिं पुराणीं विद्येति यां  
 श्रुतिरहस्यविदो वदन्ति । तामर्धपल्लवितशंकररूपमुद्रां देवीमन-  
 न्यशरणः शरणं प्रपद्ये ॥ १ ॥ अंब स्तवेषु तव तावदकर्तृकानि  
 कुंठीभवन्ति वचसामपि गुंफनानि । डिंभस्य मे स्तुतिरसावसमंज-  
 सापि वात्सल्यनिघ्नहृदयां भवतीं धिनोतु ॥ २ ॥ व्योमेति बिंदु-

रिति नाद इतींदुलेखारूपेति वाग्भवतनूरिति मातृकेति । निःस्यंद-  
मानसुखबोधसुधास्वरूपा विद्योतसे मनसि भाग्यवतां जनानाम्  
॥ ३ ॥ अविर्भवत्पुलकसंततिभिः शरीरैर्निःस्यंदमानसलिलैर्नयनैश्च  
नित्यम् । वाग्भिश्च गद्गदपदाभिरूपासते ये पादौ तवांब भुवनेषु  
त एव धन्याः ॥ ४ ॥ वक्त्रं यदुद्यतमभिष्टुतये भवत्यास्तुभ्यं नमो  
यदपि देवि शिरः करोति । चेतश्च यत्त्वयि परायणमंब तानि  
कस्यापि कैरपि भवंति तपोविशेषैः ॥ ५ ॥ मूलालवालकुहरादुदिता  
भवानि निर्भिद्य षट्सरसिजानि तडिल्लतेव । भूयोऽपि तत्र विशसि  
ध्रुवमंडलेंदुनिःस्यंदमानपरमामृततौरुपा ॥ ६ ॥ दग्धं यदा  
मदनमेकमनेकधा ते मुग्धः कटाक्षविधिरंकुरयांचकार । धत्ते तदा  
प्रभृति देवि ललाटनेत्रं सत्यं हियैव मुकुलीकृतमिंदुमौलिः ॥ ७ ॥  
अज्ञातसंभवमनाकलितान्ववायं भिक्षुं कपालिनमवाससमद्वि-  
तीयम् । पूर्वं करग्रहणमंगलतो भवत्याः शंभुं क एव बुबुधे गिरि-  
राजकन्ये ॥ ८ ॥ चर्मांबरं च शवभस्मविलेपनं च भिक्षाटनं च  
नटनं च परेतभूमौ । वेतालसंहतिपरिग्रहिता च शंभोः शोभां  
बिभर्ति गिरिजे तव साहचर्यात् ॥ ९ ॥ कल्पोपसंहरणक्रेलिषु पंडि-  
तानि चंडानि खंडपरशोरपि तांडवानि । आलोकनेन तव कोमलितानि  
मातर्लास्यात्मना परिणमंति जगद्विभूतयै ॥ १० ॥ जंतोरपश्चिम-  
तनोः सति कर्मसाम्ये निःशेषपाशपटलच्छिदुरा निमेषात् । कल्याणि  
देशिककटाक्षसमाश्रयेण कारुण्यतो भवति शांभववेधदीक्षा ॥ ११ ॥  
मुक्ताविभूषणवती नवविद्रुमाभा यच्चेतसि स्फुरसि तारकितेव  
संध्या । एकः स एव भुवनत्रयसुंदरीणां कंदर्पतां व्रजति पंचशरीं  
विनापि ॥ १२ ॥ ये भावयंत्यमृतवाहिभिरंशुजालैराप्यायमान-  
भुवनाममृतेश्वरीं त्वाम् । ते लंघयंति ननु मातरलंघनीयां ब्रह्मा-

दिभिः सुरवरैरपि कालकक्षाम् ॥ १३ ॥ यः स्फाटिकाक्षगुण-  
 पुस्तककुंडिकाढ्यां व्याख्यासमुद्यतकरां शरदिदुशुभ्राम् । पद्मासनां  
 च हृदये भवतीमुपास्ते मातः स विश्वकवितार्किकचक्रवर्ती ॥ १४ ॥  
 बर्हावतंसयुतबर्बरकेशपाशां गुंजावलीकृतघनस्तनहारशोभाम् ।  
 श्यामां प्रवालवदनां शरचापहस्तां त्वामेव नौमि शबरीं शबरस्य  
 जायाम् ॥ १५ ॥ अर्धेन किं नवलता ललितेन मुग्धे क्रीतं विभोः  
 परुषमर्धमिदं त्वयेति । आलीजनस्य परिहासवचांसि मन्ये  
 मंदस्मितेन तव देवि जडीभवंति ॥ १६ ॥ ब्रह्मांडबुहुदकदंबक-  
 संकुलोऽयं मायोदधिर्विविधदुःखतरंगमालः । आश्चर्यमंब इदिति  
 प्रलयं प्रयाति त्वद्भ्यानसंततिमहावडवामुखाग्नौ ॥ १७ ॥ दाक्षा-  
 यणीति कुटिलेति गुहारणीति कात्यायनीति कमलेति कलावतीति ।  
 एका सती भगवती परमार्थतोऽपि संदृश्यसे बहुविधा ननु नर्तकीव  
 ॥ १८ ॥ आनंदलक्षणमनाहतनाम्नि देशे नादात्मना परिणतं तव  
 रूपमीशे । प्रत्यङ्मुखेन मनसा परिचीयमानं शंसन्ति नेत्रसलिलैः  
 पुलकैश्च धन्याः ॥ १९ ॥ त्वं चंद्रिका शशिनि तिग्मरुचौ रुचिस्त्वं  
 त्वं चेतनाऽसि पुरुषे पवने बलं त्वम् । त्वं स्वादुताऽसि सलिले  
 शिखिनि त्वमूष्मा निःसारमेव निखिलं त्वद्वते यदि स्यात् ॥ २० ॥  
 ज्योतींषि यद्विवि चरन्ति यदंतरिक्षं सूते पयांसि यदहिर्धरणिं च  
 धत्ते । यद्वाति वायुरनलो यदुदर्विरास्ते तत्सर्वमंब तव केवलमाज्ञ-  
 यैव ॥ २१ ॥ संकोचमिच्छसि यदा गिरिजे तदानीं वाक्कर्कयोस्त्व-  
 मसि भूमिरनामरूपा । यद्वा विकासमुपयासि यदा तदानीं त्वन्ना-  
 मरूपगणनाः सुकरा भवंति ॥ २२ ॥ भोगाय देवि भवतीं कृतिनः  
 प्रणम्य भ्रूकिकरीकृतसरोजगृहाः सहस्राः । चिंतामणिप्रचयकल्पित-

केलिशैले कल्पद्रुमोपवन एव चिरं रमन्ति ॥ २३ ॥ हर्तुं त्वमेव  
 भवसि त्वदधीनमीशे संसारतापमखिलं दयया पशूनाम् । वैकर्तनी  
 किरणसंहतिरेव नूनं धर्मं निजं शमयितुं निजयैव दृष्ट्या ॥ २४ ॥  
 शक्तिः शरीरमधिदैवतमंतरात्मा ज्ञानं क्रियाकरणमानसजाल-  
 मिच्छा । ऐश्वर्यमायतनमावरणानि च त्वं किं तन्न यद्भवसि देवि  
 शशांकमौलेः ॥ २५ ॥ भूमौ निवृत्तिरुदिता पयसि प्रतिष्ठा  
 विद्यानले मरुति शांतिरतीतशांतिः । व्योम्नीति याः किल कलाः  
 कलयन्ति विश्वं तासां हि दूरतरमंब पदं त्वदीयम् ॥ २६ ॥  
 याक्त्वपदं पदसरोजयुगं त्वदीयं नांगीकरोति हृदयेषु जगच्छरण्ये ।  
 तावद्विकल्पजटिलाः कुटिलप्रकारास्तग्रहाः समयिनां प्रलयं न  
 यांति ॥ २७ ॥ यद्देवयानपितृयानविहारमेके कृत्वा मनः करण-  
 मंडलसार्धभौमम् । याने निवेश्य तव कारणपंचकस्य पर्वाणि पार्श्वति  
 नयन्ति निजासनत्वम् ॥ २८ ॥ स्थूलासु मूर्तिषु महीप्रमुखासु  
 शंभोः कस्याश्चनापि तव वैभवमंब यस्याः । पत्या गिरामपि न  
 शक्यत एव वक्तुं साऽसि स्तुता किल मयेति तितिक्षितव्यम्  
 ॥ २९ ॥ कालाग्निकोटिरुचिमंब षडध्वशुद्धावाप्लावनेषु भवती-  
 ममृतौघवृष्टिम् । श्यामां घनस्तनतटां सकलीकृतौ च ध्यायन्ति  
 एव जगतां गुरवो भवन्ति ॥ ३० ॥ विद्यां परां कतिचिदंबरमंब  
 केचिदानंदमेव कतिचित्कतिचिच्च मायाम् । त्वां विश्वमाहुरपरे  
 वयमासनामः साक्षादपारकरुणां गुरुमूर्तिमेव ॥ ३१ ॥ कुवलय-  
 दलनीलं बर्बरस्निग्धकेशं पृथुतरकुचभारकांतकांतावलग्नम् । किमिह  
 बहुभिरुक्तैस्त्वस्वरूपं परं नः सकलजननिमातः संततं सन्निधत्ताम्  
 ॥ ३२ ॥ इत्यंबास्तवः संपूर्णः ॥



## २३८. चर्चास्तवः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ सौन्दर्यविभ्रमभुवो भुवनाधिपत्यसंकल्प-  
कल्पतरवस्त्रिपुरे जयंति । एते कवित्वकुमुदप्रकरावबोधपूर्णंदवस्त्वयि  
जगज्जननि प्रणामाः ॥ १ ॥ देवि स्तुतिव्यतिकरे कृतबुद्धयस्ते वाच-  
स्पतिप्रभृतयोऽपि जडीभवन्ति । तस्मान्निसर्गजडिमा कतमोऽहमत्र  
स्तोत्रं तव त्रिपुरतापनपत्नि कर्तुम् ॥ २ ॥ मातस्तथापि भवतीं  
भवतीव्रतापविच्छिद्ये स्तवमहार्णवकर्णधारः । स्तोतुं भवानि स  
भवच्चरणारविंदभक्तिग्रहः किमपि मां मुखरीकरोति ॥ ३ ॥ सूते  
जगन्ति भवती भवती विभर्ति जागर्ति तत्क्षयकृते भवती भवानि ।  
मोहं भिनत्ति भवती भवती रुणद्धि लीलायितं जगति चक्रमिदं  
भवत्याः ॥ ४ ॥ यस्मिन्मनागपि नवांबुजपत्रगौरि गौरि प्रसाद-  
मधुरां दशमादधासि । तस्मिन्निरंतरमनंगशरावकीर्णसीमंतिनीनयन-  
सन्ततयः पतन्ति ॥ ५ ॥ पृथ्वीभुजोऽप्युदयनप्रवरस्य तस्य विद्याधर-  
प्रणतिचुंबितपादपीठः । यच्चक्रवर्तिपदवीप्रणयः स एष त्वत्पाद-  
पंकजरजःकणजः प्रसादः ॥ ६ ॥ त्वत्पादपंकजरजःप्रणिपातपूर्वैः  
पुण्यैरनल्पमतिभिः कृतिभिः कवीन्द्रैः । क्षीरक्षपाकरदुकूलहिमाव-  
दाता कैरप्यवापि भुवनत्रितयेऽपि कीर्तिः ॥ ७ ॥ कल्पद्रुमप्रस-  
वकल्पितचित्रपूजामुदीपितप्रियतमामदरक्तगीतम् । नित्यं भवानि  
भवतीमुपवीणयन्ति विद्याधराः कनकशैलगृहागृहेषु ॥ ८ ॥ लक्ष्मी-  
वशीकरणकर्मणि कामिनीनामाकर्षणव्यतिकरेषु च सिद्धमंत्रः ।  
नीरंध्रमोहतिमिरच्छिदुरप्रदीपो देवि त्वदंघ्रिजनितो जयति प्रसादः  
॥ ९ ॥ देवि त्वदंघ्रिनखरत्नभुवो मयूखाः प्रत्युप्तमौक्तिकरुचो

१ स्तवोऽयमस्मत्काव्यमाला-तृतीयगुच्छके पञ्चस्तवीनाम्ना  
प्रकाशितोऽस्ति ।

मुदमुद्रहंति । सेवानतिव्यतिकरे सुरसुंदरीणां सीमंतसीम्नि कुसुम-  
स्तबकायितं यैः ॥ १० ॥ मूर्ध्नि स्फुरत्तुहिनद्गोधितिदीप्तिदीप्तं  
मध्येललाटममरायुधरश्मिचित्रम् । हृच्चक्रचुंबि हुतभुक्कणिकानुकारि  
ज्योतिर्यदेतदिदमंब तव स्वरूपम् ॥ ११ ॥ रूपं तव स्फुरितचंद्र-  
मरीचिगौरमालोक्ते शिरसि वागधिदैवतं यः । निःसीमसूक्तिरचना-  
मृतनिर्झरस्य स्तस्य प्रकाममधुराः प्रसरंति वाचः ॥ १२ ॥ सिंदूर-  
पांसुपटलच्छुरितामिव द्यां त्वत्तेजसा जतुरसस्त्रपितामिवोर्वीम् । यः  
पश्यति क्षणमपि त्रिपुरे विहाय व्रीडां मृडानि सुदृशस्तमनुद्रवंति  
॥ १३ ॥ मातर्मुहूर्तमपि यः स्मरति स्वरूपं लाक्षारसप्रसरतंतुनिभं  
भवत्याः । ध्यायंत्यनन्यमनसस्तमनंगतप्ताः प्रद्युम्नसीम्नि सुभगत्व-  
गुणं तरुण्यः ॥ १४ ॥ योऽयं चकास्ति गगनार्णवरत्नमिन्दुर्योऽयं  
सुरासुरगुरुः पुरुषः पुराणः । यद्ग्राममर्धमिदमंधकसूदनस्य देवि  
त्वमेव तदिति प्रतिपादयंति ॥ १५ ॥ इच्छानुरूपमनुरूपगुण-  
प्रकर्षं संकर्षिणि त्वमभिमृष्य यदा विभर्षि । जायेत स त्रिभुवनैक-  
गुरुस्तदानीं देव शिवोऽपि भुवनत्रयसूत्रधारः ॥ १६ ॥ ध्यातासि  
हैमवति येन हिमांशुरश्मिमालामलद्युतिरकल्मषमानसेन । तस्या-  
विलम्बमनवद्यमनन्तकल्पमल्पैर्दिनैः सृजसि सुन्दरि वाग्विलासम्  
॥ १७ ॥ आधारमारुतनिरोधवशेन एषां सिंदूररंजितसरोजगुणा-  
नुकारि । तीव्रं हृदि स्फुरति देवि वपुस्त्वदीयं ध्यायंति तानिह  
समीहितसिद्धसाध्याः ॥ १८ ॥ ये चिंतयंत्यरुणमंडलमध्यवर्ति रूपं  
तवांब नवयावकंपकपिंगम् । तेषां सदैव कुसुमायुधबाणभिन्नवक्षः-  
स्थला मृगदृशो वशगा भवंति ॥ १९ ॥ त्वामैदवीमिव कलामनु-  
भालदेशमुद्गासितांबरतलामवलोकयंतः । सद्यो भवानि सुधियः  
कवयो भवंति त्वं भावनाहितधियां कुलकामधेनुः ॥ २० ॥ शर्वाणि

सर्वजनवन्दितपादपद्मे पद्मच्छदद्युतिविडम्बितनेत्रलक्ष्मि । निष्पाप-  
 मूर्तिजनमानसराजहंसि हंसि त्वमापदमनेकविधां जनस्य ॥ २१ ॥  
 उत्तसहेमरुचिरे त्रिपुरे पुनीहि चेतश्चिरंतनमधौघवनं पुनीहि ।  
 कारागृहे निगडबंधनयंत्रितस्य त्वत्संस्मृतौ झटिति मे निगडा गलति  
 ॥ २२ ॥ त्वां व्यापिनीति सुमना इति कुंडलीति त्वां कामिनीति  
 कमलेति कलावतीति । त्वां मालिनीति ललितेत्यपराजितेति देवि  
 स्तुवंति विजयेति जयेत्युमेति ॥ २३ ॥ उद्दामकामपरमार्थसरोज-  
 खण्डचण्डद्युतिद्युतिमपासितषड्विकाराम् । मोहद्विपेन्द्रकदनोद्यत-  
 बोधासिंहलीलागुहां भगवतीं त्रिपुरां नमामि ॥ २४ ॥ गणेशबटुक-  
 स्तुता रतिसहायकामान्विता स्मरारिवरविष्टरा कुसुमबाणबा-  
 णैर्युता । अनङ्गकुसुमादिभिः परिवृता च सिद्धैस्त्रिभिः कदम्बवन-  
 मध्यगा त्रिपुरसुन्दरी पातु नः ॥ २५ ॥ रुद्राणि विद्रुममयीं  
 प्रतिमामिव त्वां ये चिन्तयन्त्यरुणकान्तिमनन्यरूपाम् । तानेत्य  
 पक्षमलदशः प्रसभं भजन्ते कण्ठावसक्तमृदुबाहुलतास्तरुण्यः  
 ॥ २६ ॥ त्वद्रूपैकरूपणप्रणयिताबन्धो दृशोस्त्वद्गुणग्रामाकर्णन-  
 रागिता श्रवणयोस्त्वत्संस्मृतिश्चेतसि । त्वत्पादार्चनचातुरी करयुगे  
 त्वत्कीर्तनं वाचि मे कुत्रापि त्वदुपासनव्यसनिता मे देवि मा  
 शाम्यतु ॥ २७ ॥ त्वद्रूपमुल्लसितदाडिमपुष्परक्तमुद्गावयेन्मदन-  
 दैवतमक्षरं यः । तं रूपहीनमपि मन्मथनिर्विशेषमालोकयन्त्युरु-  
 नितम्बतटास्तरुण्यः ॥ २८ ॥ ब्रह्मेन्द्ररुद्रहरिचन्द्रसहस्ररश्मिस्कन्द-  
 द्विपाननहुताशनवन्दितायै । वागीश्वरि त्रिभुवनेश्वरि विश्वमातरन्त-  
 र्बहिश्च कृतसंस्थितये नमस्ते ॥ २९ ॥ यः स्तोत्रमेतदनुवासर-  
 मीश्वरायाः श्रेयस्करं पठति वा यदि वा शृणोति । तस्येप्सितं फलति  
 राजभिरीड्यतेऽसौ जायेत स प्रियतमो मदिरेक्षणानाम् ॥ ३० ॥  
 इति चर्चास्तवः संपूर्णः ॥

## २३९. श्यामलादण्डकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ माणिक्यवीणामुपलालयन्तीं . मदालसां  
मंजुलवाग्विलासाम् । माहेन्द्रनीलद्युतिकोमलाङ्गीं मातङ्गकन्यां सततं  
स्मरामि ॥ १ ॥ चतुर्भुजे चन्द्रकलावतंसे कुचोन्नते कुङ्कुमरागशोणे ।  
पुण्ड्रेक्षुपाशाङ्कुशपुष्पबाणहस्ते नमस्ते जगदेकमातः ॥ २ ॥ माता  
मरकतश्यामा मातङ्गी मदशालिनी । कटाक्षयतु कल्याणी कदम्बवन-  
वासिनी ॥ ३ ॥ जय मातङ्गतनये जय नीलोत्पलद्युते । जय संगीत-  
रसिके जय लीलाशुकप्रिये ॥ ४ ॥ जय जननि सुधासमुद्रांतहृद्य-  
न्मणिद्वीपसंरूढविल्वाटवीमध्यकल्पद्रुमाकल्पकादम्बकांतारवासप्रिये  
कृत्तिवासप्रिये सर्वलोकप्रिये । सादरारब्धसंगीतसंभावनासंभ्रमालो-  
लनीपस्त्रगावद्धचूलीसनाथत्रिके सानुमत्पुत्रिके । शेखरीभूतशीतांशु-  
रेखामयूखावलीवद्धसुस्त्रिग्धनीलालकश्रेणिशृङ्गारिते लोकसंभाविते ।  
कामलीलाधनुःसंनिभभ्रूलतापुष्पसंदोहसंदेहकृल्लोचने वाक्सुधा-  
सेचने । चारुगोरोचनापङ्ककेलीललामाभिरामे सुरामे रमे । प्रोल्ल-  
सद्वालिकामौक्तिकश्रेणिकाचन्द्रिकामण्डलोद्भासिलावण्यगण्डस्थल-  
न्यस्तकस्तूरिकापत्ररेखासमुद्भूतसौरभ्यसंभ्रांतभृङ्गाङ्गनागीतसांद्रीभ-  
वन्मंदतत्रीस्वरे सुस्वरे भास्वरे । वल्लकीवादनप्रक्रियालोलतालीद-  
लावद्धताटङ्कभूषाविशेषान्विते सिद्धसंमानिते । दिव्यहालामदोद्वेल-  
हेलालसच्चक्षुरांदोलनश्रीसमाक्षिसकण्ठैकनीलोत्पले पूरिताशेषलोका-  
भिवाञ्छाफले श्रीफले । स्वेदाबिंदूलसत्फाललावण्यनिःप्यंदसंदोह-  
संदेहकृन्नासिकामौक्तिके सर्वविश्वात्मिके कालिके । मुग्धमंदस्मितो-  
दारवक्रस्फुरत्पूगताम्बूलकपूर्खण्डोत्करे ज्ञानमुद्राकरे सर्वसंपत्करे  
पद्मभास्वत्करे । कुंदपुष्पद्युतिस्त्रिग्धदंतावलीनिर्मलालोलकल्लोलसं-  
मेलनस्मेरशोणाधरे चारुश्रीणाधरे पक्वबिम्बाधरे ॥ १ ॥ सुललित-

नवयौवनारम्भचंद्रोदयोद्वेललावण्यदुग्धार्णवाविर्भवत्कम्बुविम्बोक-  
भृत्कंधरे सत्कलामन्दिरे मंथरे । दिव्यरत्नप्रभार्वधुरच्छन्नहारादिभू-  
षासमुद्द्योतमानानवद्यांशुशोभे शुभे । रत्नकेयूररश्मिच्छटापल्लवप्रो-  
ल्लसद्दोर्लताराजिते योगिभिः पूजिते । विश्वदिङ्गाण्डलव्यापिमाणि-  
क्यतेजःस्फुरत्कङ्कणालंकृते विभ्रमालंकृते साधकैः सत्कृते । वासरा-  
रम्भवेलासमुज्जृम्भमाणारविंदप्रतिद्विन्द्रिपाणिद्वये संततोद्यद्दये  
अद्वये । दिव्यरत्नोर्मिकादीधितिस्तोमसंध्यायमानाङ्गुलीपल्लवोद्यन्न-  
खेन्दुप्रभामण्डले संनताखण्डले चित्रभामण्डले प्रोल्लसत्कुण्डले ।  
तारकाराजिनीकाशहारावलिस्मेरचारुस्तनाभोगभारानममध्यवल्लीव-  
लिच्छेदवीचीसमुल्लाससंदर्शिताकारसौन्दर्यत्नाकरे वल्लकीभृत्करे  
किंकरश्रीकरे । हेमकुम्भोपमोत्तुङ्गवक्षोजभारावनम्रे त्रिलोकावनम्रे ।  
लसद्दृत्तगम्भीरनाभीसरस्तीरशैवालशङ्काकरश्यामरोमावलीभूषणे  
मञ्जुसंभाषणे । चारुशिञ्जत्कटीसूत्रनिर्भर्त्सितानङ्गुलीलाधनुःशिञ्जि-  
नीडम्बरे दिव्यरत्नाम्बरे । पद्मरागोल्लसन्मेखलाभास्वरश्रोणिभाजित-  
स्वर्णभूभृत्तले चन्द्रिकाशीतले ॥ २ ॥ विकसितनवकिंशुकाताम्रदि-  
व्यांशुकच्छन्नचारुशोभापराभूतसिंदूरशोणायमानेन्द्रमातङ्गहस्तार्गले  
वैभवानर्गले श्यामले । कोमलस्निग्धनीलोत्पलोत्पादितानङ्गुलीर-  
शङ्काकरोदारजङ्गालते चारुलीलागते । नम्रदिक्पालसीमन्तिनीकुंत-  
लस्निग्धनीलप्रभापुञ्जसञ्जातदूर्वाङ्कुराशङ्कसारङ्गसंयोगरिङ्गन्नखेन्दू-  
ज्वलेप्रोज्वले निर्मले । प्रह्वदेवेशलक्ष्मीशभूतेशतोयेशवाणीशकी-  
नाशदैत्येशयक्षेशवायवग्निकोटीरमाणिक्यसंघृष्टबालातपोद्दामलाक्षार-  
सारुण्यतारुण्यलक्ष्मीगृहीतांघ्रिपद्मे सुपद्मे उमे ॥ ३ ॥ सुरुचिर-  
नवरत्नपीठस्थिते सुस्थिते । रत्नपद्मासने रत्नसिंहासने शङ्कपद्मद्वयो-  
पाश्रिते । तत्र विघ्नेशदूर्वाबटुक्षेत्रपालैर्युते मत्तमातङ्गकन्यासमूहा-

न्विते मञ्जुलामेनकाद्यङ्गनामानिते भैरवैरष्टभिर्वेष्टिते । देवि  
 वामादिभिः शक्तिभिः सेविते धात्रिलक्ष्म्यादिशक्त्यष्टकैः संयुते ।  
 मातृकामण्डलैर्मण्डिते । यक्षगंधर्वसिद्धाङ्गनामण्डलैरर्चिते । पञ्च-  
 बाणात्मिके पञ्चबाणेन रत्या च संभाविते । प्रीतिभाजा वसंतेन  
 चानन्दिते भक्तिभाजां परं श्रेयसे कल्पसे । योगिनां मानसे द्योतसे  
 छंदसामोजसा भ्राजसे । गीतविद्याविनोदातितृष्णेन कृष्णेन  
 संपूज्यसे । भक्तिमत्तसा वेधसा स्तूयसे । विश्वहृद्येन वाद्येन  
 विद्याधरैर्गीयसे ॥ ४ ॥ श्रवणहरणदक्षिणक्राणया वीणया किन्नरै-  
 र्गीयसे । यक्षगंधर्वसिद्धाङ्गनामण्डलैरर्च्यसे । सर्वसौभाग्यवाञ्छा-  
 वतीभिर्वधूभिः सुराणां समाराध्यसे । सर्वविद्याविशेषात्मकं चाटु-  
 गाथासमुच्चाटनं कण्ठमूलोल्लसद्गर्णराजित्रयं कोमलश्यामलोदारपक्ष-  
 द्रयं तुण्डशोभातिदूरीभवत्किंशुकं तं शुकं ललायंती परिक्रीडसे ।  
 पाणिपद्मद्वयेनाक्षमालामपि स्फाटिकीं ज्ञानसारात्मकं पुस्तकं चाङ्कुशं  
 पाशमाविभ्रती येन संचित्यसे तस्य वक्त्रांतराद्गद्यपद्यात्मिका  
 भारती निःसरेत् । येन वा यावकाभाकृतिर्भाव्यसे तस्य वश्या  
 भवन्ति स्त्रियः पूरुषाः । येन वा शातकुम्भद्युतिर्भाव्यसे सोऽपि  
 लक्ष्मीसहस्रैः परिक्रीडते । किं न सिध्येद्द्रुपुः श्यामलं कोमलं  
 चंद्रचूडान्वितं तावकं ध्यायतः । तस्य लीलासरोवारिधिस्तस्य  
 केलीवनं नंदनं तस्य गीर्देवता किंकरी तस्य चाज्ञाकरी श्रीः  
 स्वयम् । सर्वतीर्थात्मिके सर्वमंत्रात्मिके सर्वतंत्रात्मिके सर्वयंत्रात्मिके  
 सर्वपीठात्मिके सर्वतत्त्वात्मिके सर्वशक्त्यात्मिके सर्वविद्यात्मिके सर्व-  
 योगात्मिके सर्वनादात्मिके सर्वशणत्मिके सर्वविश्वात्मिके सर्वदीक्षा-  
 त्मिके सर्वसर्वात्मिके सर्वगे पाहि मां पाहि मां पाहि मां देवि तुभ्यं  
 नमो देवि तुभ्यं नमः ॥ ५ ॥ इति श्यामलादण्डकस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

## २४०. मोहिनीकवचम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ भगवन् सर्वधर्मज्ञ सर्वागमविशारद । कवचं देव-  
 तायास्तु कृपया कथय प्रभो ॥ १ ॥ ब्रह्मोवाच ॥ शृणु देव महाप्राज्ञ  
 सर्वशास्त्रविशारद । कवचं मोहिनीदेव्या महासिद्धिकरं परम् ॥ २ ॥  
 मोहिनी मे शिरः पातु भालं नेत्रयुगं तथा । भ्रुवौ च कामिनी रक्षे-  
 न्मुखं वागीश्वरी तथा ॥ ३ ॥ श्रोत्रे मंगलरूपा च कंठं महिष-  
 मर्दिनी । भुजौ सौंदर्यनिलया हस्तौ रक्षेद्यशस्विनी ॥ ४ ॥ सर्वदा  
 नाभिदेशे तु कमला पातु चोदरम् । विजया हृदयं पातु कटिं सुर-  
 वरार्चिता ॥ ५ ॥ करौ महालया रक्षेदंगुलीर्भक्तवत्सला । वैष्णवी  
 पातु जंघे च माया मेढूं गुदं तथा ॥ ६ ॥ पादौ च देवजननी तलं  
 पातालवासिनी । पूर्वे तु मोहिनी रक्षेदक्षिणे सुखदायिनी ॥ ७ ॥  
 पश्चिमे वारुणी रक्षेदुत्तरेऽमृतवासिनी । ईशान्यां पातु चेशानी  
 आग्नेय्यामग्निदेवता ॥ ८ ॥ नैर्ऋत्यां खड्गधृग्देवी वायव्यां मृग-  
 वाहिनी । ऊर्ध्वं ब्रह्माणी मे रक्षेदधस्ताद्वैष्णवी तथा ॥ ९ ॥ अग्रतः  
 पातु चेंद्राणी वाराही पृष्ठतस्तथा । कौबेरी चोत्तरे पातु दक्षिणे  
 विष्णुवल्लभा ॥ १० ॥ इदं कवचमज्ञात्वा यो भजेन्मोहिनीं नरः ।  
 वृथा श्रमो भवेत्तस्य न मंत्रः सिद्धिदायकः ॥ ११ ॥ भूर्जपत्रे  
 समालिख्य कुंकुमादिकचंदनैः । शतमष्टोत्तरं जाप्यं स्वर्णस्थं धार्यते  
 यदि ॥ १२ ॥ कंठे वा दक्षिणे बाहावष्टसिद्धिर्भवेद्भुवम् । सर्वथा  
 सर्वदा नित्यं जपेन्मोहिनिकं तथा ॥ १३ ॥ राजद्वारे सभास्थाने  
 कारागृहनिबंधने । जलमध्ये चाग्निमध्ये तथा निर्जनके वने ॥ १४ ॥  
 अरण्ये प्रांतरे घोरे शत्रुसंघे महाहवे । शस्त्रघाते विषे पीते जपन्  
 सिद्धिमवाप्नुयात् ॥ १५ ॥ ब्रह्मराक्षसवेतालाः कूष्मांडा भैरवादयः ।  
 नश्यन्ति दर्शनात्तस्य कवचे हृदि संस्थिते ॥ १६ ॥ मनसा चिंतितं

कार्यं सहस्रं जपतस्तथा । पलाशमूले प्रजपेत्सहस्रत्रितयं मुदा ॥ १७ ॥ शत्रुहानिर्धुवं चात्र जायते नात्र संशयः । अर्कमूले जपे-  
न्नित्यं मंत्रराजमिमं शुभम् ॥ १८ ॥ भोजयेद्ब्राह्मणांश्चैव लक्ष्मीर्वि-  
सति सर्वदा । यदिदं कवचं नित्यं भक्त्या तव मयोदितम् ॥ १९ ॥  
यो जपेत्सर्वदा भक्त्या मोहिन्याः कवचं शुभम् । वाञ्छितं फलमाप्नोति  
नात्र कार्या विचारणा ॥ २० ॥ इति श्रीभविष्योत्तरपुराणे ब्रह्मप्रोक्तं  
मोहिनीकवचं स्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### २४१. मोहिन्यर्गलास्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ देवा ऊचुः ॥ जय मंगलरूपे त्वं जय त्वं भक्त-  
वत्सले । जय सौंदर्यनिलये जय कारुण्यवारिधे ॥ १ ॥ महालये  
भो करुणालये मां त्वं त्राहि दीनार्तिहरे प्रपन्नम् । त्वत्पादपद्मावन-  
तोत्तमांगं प्रसीद नित्यं वरदे शरण्ये ॥ २ ॥ त्वं विष्णुरूपिणी देवि  
त्वं च रुद्रस्वरूपिणी । त्वं ब्राह्मी त्वं च शर्वाणी त्वमिन्द्राणीति  
गीयसे ॥ ३ ॥ त्वं कल्याणी च श्रीर्वाणी सैहिकेयविदारिणी ।  
त्वमिन्द्राणी च सौपर्णी काद्रवेयविदारिणी ॥ ४ ॥ वैकुण्ठपदनिःश्रेणी  
निर्जरणां तरंगिणी । गंगाधरस्य रमणी निधिवासप्रवासिनी ॥ ५ ॥  
संहारिणी च विपदां संपत्संततिकारिणी । भवपाशमहापाशगेहपाश-  
विदारिणी ॥ ६ ॥ स्कंद उवाच ॥ इति ते त्रिदशाः स्तुत्वा जनार्दन-  
मनन्तरम् । स्त्रीरूपेणातिशोभाढ्यं मोहिनीरूपकं जगुः ॥ ७ ॥  
देवा ऊचुः ॥ शृंगारलावण्यसमुद्ररूपिणी स्वरूपशोभारतिकोटि-  
जित्वरा । त्वमेव कामीप्सितदातृदानदा देवी मुदा रक्षतु दैत्य-  
मोहिनी ॥ ८ ॥ प्रतारणाभिज्ञतमा सुरारिणां नमः शिरश्छेदनकारि  
विक्रमा । स्वरूपसंमोहितदानवव्रजादेवी मुदा रक्षतु दैत्यमो-



हिनी ॥९॥ ददाति दोर्भ्यामपि या चतुर्भुजा श्रियं हितर्वेतिविभूषणां-  
कनैः । आपत्यदारिद्र्यविनाशकारिणी देवी मुदा रक्षतु दैत्यमोहिनी  
॥ १० ॥ पीयूषदात्री सुतनुर्दिवोकसां दितेः सुतानां च सुराप्रदात्री ।  
गृहीतमाया मयकामिनीवपुर्देवी मुदा रक्षतु दैत्यमोहिनी ॥ ११ ॥  
सुवर्णपंकेरुहकेतकीश्रियं शरीरवर्णेन च जित्वरा प्रसूः । स्वकंठ-  
धिक्कारितवल्लकीगुणा देवी मुदा रक्षतु दैत्यमोहिनी ॥ १२ ॥ स्वदी-  
प्तकोटींदुकृतप्रभाश्रया प्रभाविनी दैवतकामपूरिणी । अखंडमाखंडल-  
निर्जरस्तुता देवी मुदा रक्षतु दैत्यमोहिनी ॥ १३ ॥ यस्याः प्रभावं  
द्विसहस्रजिह्वः सहस्रवक्त्रोऽप्युरगाधिराजः । वक्तुं प्रभुर्न क्व तदेतरे  
जना देवी मुदा रक्षतु दैत्यमोहिनी ॥ १४ ॥ स्कंद उवाच ॥ इति  
स्तुता तैस्त्रिदशैः स्वभावैः सा मोहिनीरूपमधोक्षजस्य । उवाच वाक्यं  
विनयप्रसन्ना श्लक्ष्णं तदा तान्प्रणतानुदारान् ॥ १५ ॥ मोहिन्युवाच ॥  
आदौ पुरुषरूपेण संस्तुतोऽहं जनार्दनः । ततः सीमंतिनीरूपा भव-  
द्भिर्मोहिनी स्तुता ॥ १६ ॥ अथ चैष महापुण्यपुरुषप्रकृतिस्तवः ।  
य एनं पठते नित्यं प्रातरुत्थाय मानवः ॥ १७ ॥ मत्समीपे विशेषे-  
ण शुचिर्भूत्वा धृतव्रतः । न दारिद्र्यं भवेत्तस्य न संकटमवाप्नुयात्  
॥ १८ ॥ आरोग्यं सततं गच्छेन्न स रोगैः प्रबाधते । भूतप्रेतपिशा-  
चानां न बाधाभिः स भूयते ॥ १९ ॥ मरणेऽपि शुभाँल्लोकान्प्राप्नो-  
तीति विनिश्चितम् । इदं क्षेत्रं महापुण्यं वृद्धातीरमिति श्रुतम् ॥ २० ॥  
विशेषेणाधुना जातं युष्मत्पंक्तिनिषेवणात् । महालयेति विख्यातिं  
याताहं मोहिनी स्वयम् ॥ २१ ॥ वसाम्यत्र सुराः सर्वे भवंतोऽपि  
वसिष्यथ । त्रिरात्रं मत्समीपे यो मोहिन्या अर्गलास्तवम् ॥ २२ ॥  
सदा पठति सश्रद्धस्तस्याहं वाञ्छितप्रदा । महर्शनकृतां पुंसां  
मुक्तिरेव न संशयः ॥ २३ ॥ इति मोहिन्यर्गलास्तोत्रं संपूर्णम् ॥

## २४२. अन्नपूर्णास्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ नित्यानंदकरी वराभयकरी सौंदर्यरत्नाकरी  
निर्धूताखिलघोरपावनकरी प्रत्यक्षमाहेश्वरी । प्रालियाचलवंशपावन-  
करी काशीपुराधीश्वरी भिक्षां देहि कृपावलंबनकरी माताऽन्नपूर्णेश्वरी  
॥ १ ॥ नानारत्नविचित्रभूषणकरी हेमांबरारंडंबरी मुक्ताहारविलंब-  
मानविलसद्भ्रक्षोजकुंभांतरी । काश्मीरागुरुवासिता रुचिकरी  
काशीपुराधीश्वरी भिक्षां देहि० ॥ २ ॥ योगानंदकरी रिपुक्षयकरी  
धर्मार्थनिष्ठाकरी चंद्रार्कानलभासमानलहरी त्रैलोक्यरक्षाकरी ।  
सर्वैश्वर्यसमस्तवाञ्छितकरी काशीपुराधीश्वरी भिक्षां देहि० ॥ ३ ॥  
कैलासाचलकंदरालयकरी गौरी उमा शंकरी कौमारी निगमार्थगोचर-  
करी ओंकारत्रीजाक्षरी । मोक्षद्वारकपाटपाटनकरी काशीपुराधीश्वरी  
भिक्षां देहि० ॥ ४ ॥ दृश्यादृश्यप्रभूतवाहनकरी ब्रह्मांडभांडोदरी  
लीलानाटकसूत्रभेदनकरी विज्ञानदीपांकुरी । श्रीविश्वेशमनःप्रसा-  
दनकरी काशीपुराधीश्वरी भिक्षां देहि० ॥ ५ ॥ उर्वी सर्वजने-  
श्वरी भगवती मातान्नपूर्णेश्वरी वेणीनीलसमानकुंतलहरी नित्यान-  
दानेश्वरी । सर्वानंदकरी दशां शुभकरी काशीपुराधीश्वरी भिक्षां देहि०  
॥ ६ ॥ आदिक्षांतसमस्तवर्णनकरी शंभोस्त्रिभावाकरी काश्मीरा  
त्रिजलेश्वरी त्रिलहरी नित्यांकुरा शर्वरी । कामाकांक्षकरी जनोदय-  
करी काशीपुराधीश्वरी भिक्षां० ॥ ७ ॥ देवी सर्वविचित्ररत्नरचिता  
दाक्षायणी सुंदरी वामस्वादुपयोधरप्रियकरी सौभाग्यमाहेश्वरी ।  
भक्ताभीष्टकरी दशाशुभकरी काशीपुराधीश्वरी भिक्षां देहि० ॥ ८ ॥  
चंद्रार्कानलकोटिकोटिसदृशा चंद्रांशुर्बिबाधरी चंद्रार्काग्निसमानकुंतल-  
धरी चंद्रार्कवर्णेश्वरी । मालापुस्तकपाशसांकुशधरी काशीपुराधीश्वरी  
भिक्षां देहि० ॥ ९ ॥ क्षत्रत्राणकरी महाभयकरी माता कृपासागरी

साक्षान्मोक्षकरी सदाशिवकरी विश्वेश्वरश्रीधरी । दक्षाकंदकरी निरामयकरी काशीपुराधीश्वरी भिक्षां देहि० ॥ १० ॥ अन्नपूर्णे सदापूर्णे शंकरप्राणवल्लभे । ज्ञानवैराग्यसिद्धयर्थं भिक्षां देहि च पार्वति ॥ ११ ॥ माता च पार्वती देवी पिता देवो महेश्वरः । बांधवाः शिवभक्ताश्च स्वदेशो भुवनत्रयम् ॥ १२ ॥ इति श्रीमच्छंकराचार्यविरचितमन्नपूर्णास्तोत्रं संपूर्णम् ॥



## लक्ष्मीस्तोत्राणि ।



वन्दे लक्ष्मीं परशिवमयीं शुद्धजाम्बूनदाभां  
तेजोरूपां कनकवसनां सर्वभूषोज्ज्वलांगीम् ॥  
बीजापूरं कनककलशं हेमपद्मं दधाना-  
माद्यां शक्तिं सकलजननीं विष्णुवामांकसंस्थाम् ॥

## लक्ष्मीस्तोत्राणि

२४३. महालक्ष्म्यष्टकस्तवः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ इंद्र उवाच ॥ नमस्तेऽस्तु महामाये श्रीपीठे  
सुरपूजिते । शंखचक्रगदाहस्ते महालक्ष्मि नमोऽस्तु ते ॥ १ ॥  
नमस्ते गरुडारूढे कोलासुरभयंकरि । सर्वपापहरे देवि महालक्ष्मि०  
॥ २ ॥ सर्वज्ञे सर्ववरदे सर्वदुष्टभयंकरि । सर्वदुःखहरे देवि  
महालक्ष्मि० ॥ ३ ॥ सिद्धिबुद्धिप्रदे देवि भुक्तिमुक्तिप्रदायिनि ।  
मंत्रमूर्ते सदा देवि महालक्ष्मि० ॥ ४ ॥ आद्यंतरहिते देवि  
आद्यशक्ति महेश्वरि । योगजे योगसंभूते महालक्ष्मि० ॥ ५ ॥  
स्थूलसूक्ष्ममहारौद्रे महाशक्ते महोदरे । महापापहरे देवि  
महालक्ष्मि० ॥ ६ ॥ पद्मासनस्थिते देवि परब्रह्मस्वरूपिणि ।  
परमेशि जगन्मातर्महालक्ष्मि० ॥ ७ ॥ श्वेतांबरधरे देवि नाना-  
लंकारभूषिते । जगत्स्थिते जगन्मातर्महालक्ष्मि० ॥ ८ ॥ महा-  
लक्ष्म्यष्टकस्तोत्रं यः पठेद्भक्तिमान्नरः । सर्वसिद्धिमवाप्नोति राज्यं  
प्राप्नोति सर्वदा ॥ ९ ॥ एककालं पठेन्नित्यं महापापविनाशनम् ।  
द्विकालं यः पठेन्नित्यं धनधान्यसमन्वितः ॥ १० ॥ त्रिकालं या-  
पठेन्नित्यं महाशत्रुविनाशनम् । महालक्ष्मी भवेन्नित्यं प्रसन्ना वरदः  
शुभा ॥ ११ ॥ इतींद्रकृतः श्रीमहालक्ष्म्यष्टकस्तवः संपूर्णः ॥

२४४. 'श्रीकनक ( लक्ष्मी ) धारास्तवः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अङ्गं हरेः पुलकभूषणमाश्रयन्ती भृङ्गाङ्गनेव

१ अयं स्तवः स्वामिना शंकरभगवत्पादेन ब्रह्मव्रतस्थेन कालटि-  
नाम्नि स्वप्नाम एवाकिंचन्यपरेखिन्नाया द्विजगृहिण्याः खेदमार्जनाय  
निरमायीति शंकरविजयतः प्रतीयते, 'स मुनिर्मु रजिष्कुटुम्बिनीं पद-  
चित्रैर्नवनीतकोमलैः । मधुरैरुपतस्थिवांस्तवैः' इत्यत्र ॥ एते श्रीमन्मा-  
तुरभ्यर्थनया स्तवमेतमतनिषतेति कालटिग्रामनिकटवर्तिनां विदुषां  
मतम् । तदारभ्य कर्णाकर्णिकया तथानुश्रुतम् ।

मुकुलाभरणं तमालम् । अङ्गीकृताखिलविभूतिरपाङ्गलीला मङ्गल्य-  
दाऽस्तु मम मङ्गलदेवतायाः ॥ १ ॥ मुग्धा मुहुर्विदधती वदने सुरारेः  
प्रेमत्रपाप्रणिहितानि गतागतानि । माला दशोर्मधुकरीव महोत्पले या  
सा मे श्रियं दिशतु सागरसंभवायाः ॥ २ ॥ आमीलितार्धमधिगम्य  
मुदा मुकुन्दमानन्दमन्दमनिमेषमनङ्गतत्रम् । आकेकरस्थितकनीनि-  
कपक्षमनेत्रं भूल्यै भवेन्मम भुजंगशयाङ्गनायाः ॥ ३ ॥ बाह्वन्तरे  
मधुजितः श्रितकौस्तुभे या हारावली च हरिनीलमयी विभाति ।  
कामप्रदा भगवतोऽपि कटाक्षमाला कल्याणमावहतु मे कमला-  
लयायाः ॥ ४ ॥ कालांबुदालिललितोरसि कैटभारेधाराधरे स्फुरति  
या तडिदंगनेव । मातुः समस्तजगतां महनीयमक्षि भद्राणि मे  
दिशतु भार्गवनन्दनायाः ॥ ५ ॥ प्राप्तं पदं प्रथमतः खलु यत्प्रभा-  
वान्मङ्गल्यभाजि मधुमाथिनि मन्मथेन । मय्यापतेत्तदिह मन्थर-  
मीक्षणार्धं मन्दालसाक्षि मकराकरकन्यकायाः ॥ ६ ॥ विश्वामरेन्द्र-  
पदविभ्रमदानदक्षमानन्दहेतुरधिकं मधुविद्विषोऽपि । ईषन्निषीदतु  
मयि क्षणमीक्षणार्धमिन्दीवरोदरसहोदरमिन्दिरायाः ॥ ७ ॥ इष्टा  
विशिष्टमतयोऽपि नरा यथा द्वाग्दृष्टास्त्रिविष्टपसदश्च पदं भजन्ते ।  
दृष्टिः प्रहृष्टकमलोदरदीप्तिरिष्टां पुष्टिं कृषीष्ट मम पुष्करविष्टरायाः  
॥ ८ ॥ दद्याद्दयानुपवनो द्रविणांबुधारासिन्नकिञ्चनविहंगशिशौ  
निषण्णे । दुष्कर्मधर्ममपनीय चिराय दूरान्नारायणप्रणयिनीनयनां-  
बुवाहः ॥ ९ ॥ धीर्देवतेति गरुडध्वजभामिनीति शाकंभरीति शशि-  
शेखरवल्लभेति । सृष्टिस्थितिप्रलयसिद्धिषु संस्थितायै तस्यै नमस्त्रि-  
भुवनैकगुरोस्तरुण्यै ॥ १० ॥ श्रुत्यै नमोऽस्तु शुभकर्मफलप्रसूत्यै  
रत्यै नमोऽस्तु रमणीयगुणाश्रयायै । शक्त्यै नमोऽस्तु शतपत्रनिकेत-  
नायै पुष्ट्यै नमोऽस्तु पुरुषोत्तमवल्लभायै ॥ ११ ॥ नमोऽस्तु नाली-

कविभावनायै नमोऽस्तु दुग्धोदधिजन्मभूल्यै । नमोऽस्तु सोमामृत-  
सोदरायै नमोऽस्तु नारायणवल्लभायै ॥ १२ ॥ नमोऽस्तु हेमां-  
बुजपीठिकायै नमोऽस्तु भूमण्डलनायिकायै । नमोऽस्तु देवादिद्रया-  
परायै नमोऽस्तु शार्ङ्गायुधवल्लभायै ॥ १३ ॥ नमोऽस्तु देव्यै भृगु-  
नन्दनायै नमोऽस्तु विष्णोरुरसि स्थितायै । नमोऽस्तु लक्ष्म्यै  
कमलालयायै नमोऽस्तु दामोदरवल्लभायै ॥ १४ ॥ नमोऽस्तु कान्त्यै  
कमलेक्षणायै नमोऽस्तु भूल्यै भुवनप्रसूल्यै । नमोऽस्तु देवादिभिर-  
र्चितायै नमोऽस्तु नन्दात्मजवल्लभायै ॥ १५ ॥ स्तुवन्ति ये स्तुति-  
भिरमूभिरन्वहं त्रयीमयीं त्रिभुवनमातरं रमाम् । गुणाधिका गुरु-  
धनभाग्यभागिनो भवन्ति ते भवमनु भाविताशयाः ॥ १६ ॥  
हरिः ॐ इति श्रीमद्भगवत्पादशंकराचार्यकृतः कनक(लक्ष्मी)-  
स्तवः संपूर्णः ॥

### २४५. देवकृतलक्ष्मीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ क्षमस्व भगवत्यंब क्षमाश्रीले परा-  
त्परे । शुद्धसत्त्वस्वरूपे च कोपादिपरिवर्जिते ॥ १ ॥ उपमे  
सर्वसाध्वीनां देवीनां देवपूजिते । त्वया विना जगत्सर्वं  
मृततुल्यं च निष्फलम् ॥ २ ॥ सर्वसंपत्स्वरूपा त्वं  
सर्वेषां सर्वरूपिणी । रासेश्वर्यधिदेवी त्वं त्वत्कलाः सर्वयोषितः  
॥ ३ ॥ कैलासे पार्वती त्वं च क्षीरोदे सिंधुकन्यका । स्वर्गे च  
स्वर्गलक्ष्मीस्त्वं मर्त्यलक्ष्मीश्च भूतले ॥ ४ ॥ वैकुण्ठे च महालक्ष्मी-  
र्देवदेवी सरस्वती । गंगा च तुलसी त्वं च सावित्री ब्रह्मलोकतः  
॥ ५ ॥ कृष्णप्राणाधिदेवी त्वं गोलोके राधिका स्वयम् । रासे  
रासेश्वरी त्वं च वृंदावनवने वने ॥ ६ ॥ कृष्णप्रिया त्वं भांडीरे  
चंद्रा चंदनकानने । विरजा चंपकवने शतशृंगे च सुंदरी ॥ ७ ॥ पद्मावती

पद्मवने मालती मालतीवने । कुंददंती कुंदवने सुशीला केतकीवने  
 ॥ ८ ॥ कदंबमाला त्वं देवी कदंबकाननेऽपि च । राजलक्ष्मी  
 राजगेहे गृहलक्ष्मीर्गृहे गृहे ॥ ९ ॥ इत्युक्त्वा देवताः सर्वा मुनयो  
 मनवस्तथा । हरुदुर्नम्रवदनाः शुष्ककंठोष्ठतालुकाः ॥ १० ॥ इति  
 लक्ष्मीस्तवं पुण्यं सर्वदेवैः कृतं शुभम् । यः पठेत्प्रातरुत्थाय स त्रै  
 सर्वं लभेद्भुवम् ॥ ११ ॥ अभायौ लभते भार्या विनीतां सुसुतां  
 सतीम् । सुशीलां सुंदरीं रम्यामतिसुप्रियवादिनीम् ॥ १२ ॥  
 पुत्रपौत्रवतीं शुद्धां कुलजां कोमलां वराम् । अपुत्रो लभते पुत्रं  
 वैष्णवं चिरजीविनम् ॥ १३ ॥ परमैश्वर्ययुक्तं च विद्यावंतं यशस्वि-  
 नम् । भ्रष्टराज्यो लभेद्राज्यं भ्रष्टश्रीर्लभते श्रियम् ॥ १४ ॥ हत-  
 बंधुर्लभेद्बंधुं धनभ्रष्टो धनं लभेत् । कीर्तिहीनो लभेत्कीर्तिं प्रतिष्ठां  
 च लभेद्भुवम् ॥ १५ ॥ सर्वमंगलदं स्तोत्रं शोकसंतापनाशनम् ।  
 हर्षानंदकरं शश्वद्धर्ममोक्षसुहृत्प्रदम् ॥ १६ ॥ इति श्रीदेवकृतं  
 लक्ष्मीस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### २४६. राधाकवचम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ पार्वत्युवाच ॥ कैलासवासिन् भगवन् भक्ता-  
 नुग्रहकारक । राधिकाकवचं पुण्यं कथयस्व मम प्रभो ॥ १ ॥  
 यद्यस्ति करुणा नाथ त्राहि मां दुःखतो भयात् । त्वमेव शरणं नाथ  
 शूलपाणे पिनाकधृक् ॥ २ ॥ शिव उवाच । शृणुष्व गिरिजे तुभ्यं  
 कवचं पूर्वसूचितम् । सर्वरक्षाकरं पुण्यं सर्वहत्याहरं परम् ॥ ३ ॥  
 हरिभक्तिप्रदं साक्षाद्भुक्तिमुक्तिप्रसाधनम् । त्रैलोक्याकर्षणं देवि  
 हरिसान्निध्यकारकम् ॥ ४ ॥ सर्वत्र जयदं देवि सर्वशत्रुभयावहम् ।  
 सर्वेषां चैव भूतानां मनोवृत्तिहरं परम् ॥ ५ ॥ चतुर्धा मुक्तिजनकं



सदानंदकरं परम् । राजसूयाश्वमेधानां यज्ञानां फलदायकम् ॥ ६ ॥  
 इदं कवचमज्ञात्वा राधामंत्रं च यो जपेत् । स नाम्नोति फलं तस्य  
 विघ्नास्तस्य पदे पदे ॥ ७ ॥ ऋषिरस्य महादेवोऽनुष्टुप् छंदश्च  
 कीर्तितम् । राधाऽस्य देवता प्रोक्ता रां बीजं कीलकं स्मृतम्  
 ॥ ८ ॥ धर्मार्थकाममोक्षेषु विनियोगः प्रकीर्तितः । श्रीराधा मे शिरः  
 पातु ललाटं राधिका तथा ॥ ९ ॥ श्रीमती नेत्रयुगलं कर्णौ गोपेन्द्र-  
 नंदिनी । हरिप्रिया नासिकां च भ्रूयुगं शशिशोभना ॥ १० ॥ ओष्ठं  
 पातु कृपादेवी अधरं गोपिका तथा । वृषभानुसुता दन्तांश्चिबुकं  
 गोपनंदिनी ॥ ११ ॥ चंद्रावली पातु गंडं जिह्वां कृष्णप्रिया तथा ।  
 कंठं पातु हरिप्राणा हृदयं विजया तथा ॥ १२ ॥ बाहू द्वौ चंद्र-  
 वदना उदरं सुबलस्वसा । कोटियोगान्विता पातु पादौ सौभद्रिका  
 तथा ॥ १३ ॥ नखांश्चंद्रमुखी पातु गुल्फौ गोपालवल्लभा । नखान्  
 विधुमुखी देवी गोपी पादतलं तथा ॥ १४ ॥ शुभप्रदा पातु पृष्ठं  
 कुक्षौ श्रीकांतवल्लभा । जानुदेशं जया पातु हरिणी पातु सर्वतः  
 ॥ १५ ॥ वाक्यं वाणी सदा पातु धनागारं धनेश्वरी । पूर्वा दिशं  
 कृष्णरता कृष्णप्राणा च पश्चिमाम् ॥ १६ ॥ उत्तरां हरिता पातु  
 दक्षिणां वृषभानुजा । चंद्रावली नैशमेव दिवा क्ष्वेडितमेखला  
 ॥ १७ ॥ सौभाग्यदा मध्यदिने सायाह्ने कामरूपिणी । रौद्री प्रातः  
 पातु मां हि गोपिनी रजनीक्षये ॥ १८ ॥ हेतुदा संगवे पातु केतु-  
 माला दिवार्धके । शेषाऽपराह्णसमये शमिता सर्वसंधिषु ॥ १९ ॥  
 योगिनी भोगसमये रतौ रतिप्रदा सदा । कामेशी कौतुके नित्यं  
 योगे रत्नावली मम ॥ २० ॥ सर्वदा सर्वकार्येषु राधिका कृष्ण-  
 मानसा । इत्येतत्कथितं देवि कवचं परमाद्भुतम् ॥ २१ ॥ सर्व-  
 रक्षाकरं नाम महारक्षाकरं परम् । प्रातर्मध्याह्नसमये सायाह्ने

प्रपठेद्यदि ॥ २२ ॥ सर्वार्थसिद्धिस्तस्य स्याद्यद्यन्मनसि वर्तते ।  
 राजद्वारे सभायां च संग्रामे शत्रुसंकटे ॥ २३ ॥ प्राणार्थनाश-  
 समये यः पठेत्प्रयतो नरः । तस्य सिद्धिर्भवेद्देवि न भयं विद्यते  
 क्वचित् ॥ २४ ॥ आराधिता राधिका च तेन सत्यं न संशयः ।  
 गंगास्नानाद्धरेर्नामग्रहणाद्यत्फलं लभेत् ॥ २५ ॥ तत्फलं तस्य  
 भवति यः पठेत्प्रयतः शुचिः । हरिद्रारोचनाचंद्रमंडितं हरिचंदनम्  
 ॥ २६ ॥ कृत्वा लिखित्वा भूर्जे च धारयेन्मस्तके भुजे । कंठे वा  
 देवदेवेशि स हरिर्नात्र संशयः ॥ २७ ॥ कवचस्य प्रसादेन ब्रह्मा  
 सृष्टिं स्थितिं हरिः । संहारं चाहं नियतं करोमि कुरुते तथा ॥ २८ ॥  
 वैष्णवाय विशुद्धाय विरागगुणशालिने । दद्यात्कवचमव्यग्रमन्यथा  
 नाशमाप्नुयात् ॥ २९ ॥ इति श्रीनारदपंचरात्रे ज्ञानामृतसारे  
 राधाकवचं संपूर्णम् ॥

### २४७. श्रीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ पुष्कर उवाच ॥ राजलक्ष्मीस्थिरत्वाय  
 यथेन्द्रेण पुरा श्रियः । स्तुतिः कृता तथा राजन् जयार्थं स्तुतिमा-  
 चरेत् ॥ १ ॥ इंद्र उवाच ॥ नमोऽस्तु सर्वलोकानां जननीमब्धि-  
 संभवाम् । श्रियमुन्निद्रपद्माक्षीं विष्णुवक्षःस्थलस्थिताम् ॥ २ ॥  
 त्वं सिद्धिस्त्वं स्वधा स्वाहा सुधा त्वं लोकपावनी । संध्या रात्रिः  
 प्रभा मूर्तिर्मेधा श्रद्धा सरस्वती ॥ ३ ॥ यज्ञविद्या महाविद्या गुह्य-  
 विद्या च शोभने । आत्मविद्या च देवि त्वं विमुक्तिफलदायिनी  
 ॥ ४ ॥ आन्वीक्षिकी त्रयी वार्ता दंडनीतिस्त्वमेव च । सौम्यासौम्यै-  
 र्जगद्रूपैस्त्वयैतद्देवि पूरितम् ॥ ५ ॥ का त्वन्या त्वामृते देवि  
 सर्वयज्ञमयं वपुः । अध्यास्ते देवदेवस्य योगिर्चित्यं गदाभृतः ॥ ६ ॥

त्वया देवि परित्यक्तं सकलं भुवनत्रयम् । विनष्टप्रायमभवत्  
 त्वयेदानीं समेधितम् ॥ ७ ॥ दाराः पुत्रास्तथागारं सुहृद्वा-  
 न्यधनादिकम् । भवत्येतन्महाभागे नित्यं त्वद्वीक्षणान्नृणाम् ॥ ८ ॥  
 शरीरारोग्यमैश्वर्यमरिपक्षक्षयः सुखम् । देवि त्वदृष्टिदृष्टानां पुरुषाणां  
 न दुर्लभम् ॥ ९ ॥ त्वमंबा सर्वलोकानां देवदेवो हरिः पिता ।  
 त्वयैतद्विष्णुना चांब जगद्भासं चराचरम् ॥ १० ॥ मानं कोपं  
 तथा कोषं मा गृहं मा परिच्छदम् । मा शरीरं कलत्रं च त्यजेथाः  
 सर्वपावनि ॥ ११ ॥ मा पुत्रान्मा सुहृद्गान् मा पशून्मा विभूष-  
 णम् । त्यजेथा मम देवस्य विष्णोर्वक्षःस्थलालये ॥ १२ ॥ सत्त्वेन  
 सत्यशौचाभ्यां तथा शीलादिभिर्गुणैः । त्यजंते ते नराः सद्यः  
 संत्यक्ता ये त्वयामले ॥ १३ ॥ त्वयावलोकिताः सद्यः शीलाद्यैर-  
 खिलैर्गुणैः । कुलैश्वर्यैश्च युज्यंते पुरुषा निर्गुणा अपि ॥ १४ ॥ स  
 श्लाघ्यः स गुणी धन्यः स कुलीनः स बुद्धिमान् । स शूरः स च  
 विक्रान्तो यस्त्वया देवि वीक्षितः ॥ १५ ॥ सद्यो वैगुण्यमायांति  
 शीलाद्याः सकला गुणाः । पराङ्मुखी जगद्दात्री यस्य त्वं विष्णु-  
 वल्लभे ॥ १६ ॥ न ते वर्णयितुं शक्ता गुणान् जिह्वापि वेधसः ।  
 प्रसीद देवि पद्माक्षि माऽस्मांस्त्याक्षीः कदाचन ॥ १७ ॥ पुष्कर  
 उवाच ॥ एवं स्तुता ददौ श्रीश्च वरमिन्द्राय चेप्सितम् । सुस्थिरत्वं  
 च राज्यस्य संग्रामविजयादिकम् ॥ १८ ॥ स्वस्तोत्रपाठश्रवणकर्तृणां  
 भुक्तिमुक्तिदम् । श्रीस्तोत्रं सततं तस्मात्पठेच्च शृणुयान्नरः ॥ १९ ॥  
 इत्यग्निपुराणांतर्गतं श्रीस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

२४८. लक्ष्मीलहरी ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ समुन्मीलनीलाम्बुजनिकरनीराजितरुचाम-  
 पाङ्गानां भङ्गैरमृतलहरीश्रेणिमसृणैः । हिया हीनं दीनं भृशमुदर-

लीनं करुणया हरिश्चामा सा मामवतु जडसामाजिकमपि ॥ १ ॥  
 समुन्मीलत्वन्तःकरणकरुणोद्गारचतुरः करिप्राणत्राणप्रणयिनि दृगन्त-  
 स्तव मयि । यमासाद्योन्माद्यद्विपनियुतगण्डस्थलगलन्मदक्लिन्नद्वारो  
 भवति सुखसारो नरपतिः ॥ २ ॥ उरस्यस्य भ्रश्यत्कबरभरनिर्यत्सु-  
 मनसः पतन्ति स्वर्वालाः स्मरशरपराधीनमनसः । सुरास्तं गायन्ति  
 स्फुरिततनु गङ्गाधरमुखास्तवायं दृक्पातो यदुपरि कृपातो विलसति  
 ॥ ३ ॥ समीपे संगीतस्वरमधुरभङ्गी मृगदृशां विदूरे दानान्धद्विर-  
 दकलभोद्दामनिनदः । बहिर्द्वारि तेषां भवति ह्यहेषाकलकलो  
 दृगेषा ते येषामुपरि कमले देवि सदया ॥ ४ ॥ अगण्यैरिन्द्राद्यै-  
 रपि परमपुण्यैः परिचितो जगज्जन्मस्थानप्रलयरचनाशिल्पनिपुणः ।  
 उदञ्चत्पीयूषाम्बुधिलहरिलीलामनुहरन्नपाङ्गस्तेऽमन्दं मम कलुष-  
 वृन्दं दलयतु ॥ ५ ॥ नमन्मौलिश्रेणित्रिपुरपरिपन्थिप्रतिलसत्कपर्द-  
 व्यावृत्तिस्फुरितफणिफूत्कारचकितः । लसत्फुल्लाम्भोजम्रदिमहरणः  
 कोऽपि चरणश्चिरं चेतश्चारी मम भवतु वारीशदुहितुः ॥ ६ ॥  
 प्रवालानां दीक्षागुरुरपि च लाक्षारुणरुचां नियत्री बन्धूकद्युतिनिकर-  
 बन्धूकृतिपटुः । नृणामन्तर्धान्तं निबिडमपहर्तुं तव किल प्रभात-  
 श्रीरेषा चरणरुचिवेषा विजयते ॥ ७ ॥ प्रभातप्रोन्मीलत्कमलवन-  
 संचारसमये शिखाः किंजल्कानां विदधति रुजं यत्र मृदुलाः ।  
 तदेतन्मातस्ते चरणमरुणश्लाघ्यकरुणं कठोरा मद्वाणी कथमियमि-  
 दानीं प्रविशतु ॥ ८ ॥ स्मितज्योत्स्नामज्जद्विजमणिमयूखामृतझरै-  
 र्निषिञ्चन्तीं विश्वं तव विमलमूर्तिं स्मरति यः । अमन्दं स्यन्दन्ते  
 वदनकमलादस्य कृतिनो विविकौ वै कल्पाः सततमविकल्पा  
 नवगिरः ॥ ९ ॥ शरौ मायाबीजौ हिमकरकलाक्रान्तशिरसौ विधा-  
 योर्ध्वं बिन्दुं स्फुरितमिति बीजं जलधिजे । जपेद्यः स्वच्छन्दं स

हि पुनरमन्दं गजघटामदभ्राम्यङ्गैर्मुखरयति वेश्मानि विदुषाम्  
 ॥ १० ॥ स्मरो नामं नामं त्रिजगदभिरामं तव पदं प्रपेदे सिद्धिं  
 यां कथमिव नरस्तां कथयतु । यया पातं पातं पदकमलयोः  
 पर्वतचरो हरो हा रोषार्द्रामनुनयति शैलेन्द्रतनयाम् ॥ ११ ॥  
 हरन्तो निःशङ्कं हिमकरकलानां रुचिरतां किरन्तः स्वच्छन्दं  
 किरणमयपीयूषनिकरम् । विलुम्पन्तु प्रौढा हरिहृदयहाराः प्रियतमा  
 ममान्तःसंतापं तव चरणशोणाम्बुजनखाः ॥ १२ ॥ मिषान्माणि-  
 क्यानां विगलितनिमेषं निमिषताममन्दं सौन्दर्यं तव चरणयो-  
 रम्बुधिसुते । पदालंकाराणां जयति कलनिक्राणनपटुरुदञ्चलुद्दामः  
 स्तुतिवचनलीलाकलकलः ॥ १३ ॥ मणिज्योत्स्नाजालैर्निजतनुरुचां  
 मांसलतया जटालं ते जङ्घायुगलमघभङ्गाय भवतु । भ्रमन्ती  
 यन्मध्ये दरदलितशोणाम्बुजरुचां दृशां माला नीराजनमिव विधत्ते  
 मुररिपोः ॥ १४ ॥ हरद्वर्वं सर्वं करिपतिकराणां मृदुतया भृशं  
 भाभिर्दम्भं कनकमयरम्भावनिरुहाम् । लसज्जानुज्योत्स्ना तरणि-  
 परिणद्धं जलधिजे तवोरुद्वन्द्वं नः श्लथयतु भवोरुज्वरभयम्  
 ॥ १५ ॥ कलक्काणां काञ्चीं मणिगणजटालामधिवहन्वसानः कौसुम्भं  
 वसनमसनं कौस्तुभरुचाम् । मुनिव्रातैः प्रातः शुचिवचनजातै-  
 रतिनुतं नितम्बस्ते विम्बं हसति नवमम्बाम्बरमणेः ॥ १६ ॥  
 जगन्मिथ्याभूतं मम निगदतां वेदवचसामभिप्रायो नाद्यावधि  
 हृदयमध्याविशदयम् । इदानीं विश्वेषां जनकमुदरं ते विमृशतो  
 विसन्देहं चेतोऽजनि गरुडकेतोः प्रियतमे ॥ १७ ॥ अनल्पैर्वादी-  
 न्द्रैरगणितमहायुक्तिनिवहैर्निरस्ता विस्तारं क्वचिदकलयन्ती तनुमपि ।  
 असत्ख्यातिव्याख्याधिकचतुरिमाख्यातमहिमा वलभे लभ्येयं सुगत-  
 मतसिद्धान्तसरणिः ॥ १८ ॥ निदानं शृङ्गारप्रकरमकरन्दस्य कमले

महानेवालम्बो हरिनयनरोलम्बवरयोः । निधानं शोभानां निधन-  
 मनुतापस्य जगतो जवेनाभीतिं मे दिशतु तव नाभीसरसिजम्  
 ॥ १९ ॥ गभीरामुद्वेलां प्रथमरसकलोलमिलितां विगाढुं ते नाभी-  
 विमलसरसीं गौर्मम मनाक् । पदं यावद्यस्यत्यहह विनिमग्नैव  
 सहसा नहि क्षेमं सूते गुरुमहिमभूतेष्वविनयः ॥ २० ॥ कुचौ ते  
 दुग्धाम्भोनिधिकुलशिखामण्डनमणे हरेते सौभाग्यं यदि सुरगिरे-  
 श्चित्रमिह किम् । त्रिलोकीलावण्याहरणनवलीलानिपुणयोर्ययोर्दत्ते  
 भूयः करमखिलनाथो मधुरिपुः ॥ २१ ॥ हरक्रोधत्रस्यन्मदनव-  
 दुर्गद्वयतुलां दधत्कोकद्वन्द्वद्युतिदमनदीक्षाधिगुरुताम् । तवैतद्वक्षो-  
 जद्वितयमरविन्दाक्षमहिले मम स्वान्तध्वान्तं किमपि च नितान्तं  
 गमयतु ॥ २२ ॥ अनेकब्रह्माण्डस्थितिनियमलीलाविलसिते  
 दयापीयूषाम्भोनिधिसहजसंवासभवने । विधोश्चित्तायामे हृदय-  
 कमले ते तु कमले मनाङ् मन्निस्तारस्मृतिरपि च कोणे निवसतु  
 ॥ २३ ॥ मृणालीनां लीलाः सहजलवणिम्ना लघयतां चतुर्णां  
 सौभाग्यं तव जननि दोष्णां वदतु कः । लुठन्ति स्वच्छन्दं मरकत-  
 शिलामांसलरुचः श्रुतीनां स्पर्धां ये दधत इव कण्ठे मधुरिपोः  
 ॥ २४ ॥ अलभ्यं सौरभ्यं कविकुलनमस्या रुचिरता तथापि  
 त्वद्धस्ते निवसदरविन्दं विकसितम् । कलापे काव्यानां प्रकृतिकम-  
 नीयस्तुतिविधौ गुणोत्कर्षाधानं प्रथितमुपमानं समजनि ॥ २५ ॥  
 अनल्पं जल्पन्तु प्रतिहतधियः पल्लवतुलां रसज्ञामज्ञानां क इव  
 कमले मन्थरयतु । त्रपन्तु श्रीभिक्षावितरणवशीभूतजगतां कराणां  
 सौभाग्यं तव तुलयितुं तुङ्गरसनाः ॥ २६ ॥ समाहारः श्रीणां  
 विरचितविहारो हरिदृशां परीहारो भक्तप्रभवभवसंतापसरणेः ।  
 प्रहारः सर्वासामपि च विपदां विष्णुदयिते ममोद्धारोपायं तव

सपदि हारो विमृशतु ॥ २७ ॥ अलंकुर्वाणानां मणिगणघृणीनां  
 लवणिमा यदीयाभिर्भाभिर्भजति महिमानं लघुरपि । सुपर्वश्रेणीनां  
 जनितपरसौभाग्यविभवास्तवाङ्गुल्यस्ता मे ददतु हरिवामेऽभि-  
 लषितम् ॥ २८ ॥ तपस्तेपे तीव्रं किमपि परितप्य प्रतिदिनं तव  
 ग्रीवालक्ष्मीलवपरिचयादासविभवम् । हरिः कम्बुं चुम्बत्यथ वहति  
 पाणौ किमधिकं वदामस्तत्रायं प्रणयवशतोऽस्यै स्पृहयति ॥ २९ ॥  
 अभूदप्रत्यूहः सकलहरिदुल्लासनविधिर्विलीनो लोकानां स हि  
 नयनतापोऽपि कमले । तवास्मिन्पीयूषं किरति वदने रम्यवदने  
 कुतो हेतोश्चेतो विधुरयमुदेति स्म जलधेः ॥ ३० ॥ मुखाम्भोजे  
 मन्दस्मितमधुरकान्त्या विकसतां द्विजानां ते हीरावलिबिहितनीरा-  
 जनरुचाम् । इयं ज्योत्स्ना कापि स्रवदमृतसंदोहसरसा ममोद्यद्वा-  
 रिद्यज्वरतरुणतापं तिरयतु ॥ ३१ ॥ कुलैः कस्तूरीणां भृशमनिश-  
 माशास्यमपि च प्रभातप्रोन्मीलन्नलिननिवहैरश्रुतचरम् । वहन्तः  
 सौरभ्यं मृदुगतिविलासा मम शिवं तव श्वासा नासापुटविहितवासा  
 विदधताम् ॥ ३२ ॥ कपोले ते दोलायितललितलोलालकवृते  
 विमुक्ता धम्मिल्लादभिलसति मुक्तावलिरियम् । स्वकीयानां बन्दी-  
 कृतमसहमानैरिव बलान्निबध्योर्ध्वं कृष्टा तिमिरनिकुरम्बैर्विधुकला  
 ॥ ३३ ॥ प्रसादो यस्यायं नमदमितगीर्वाणमुकुटप्रसर्पज्योत्स्नाभि-  
 श्ररणतलपीठार्चितविधिः । दृग्भोजं तत्ते गतिहसितमत्तेभगमने  
 वने लीनैर्दीनैः कथय कथमीयादिह तुलाम् ॥ ३४ ॥ दुरापा  
 दुर्वृत्तैर्दुरितदमने दारणभरा दयार्द्रा दीनानामुपरि दलदिन्दीवर-  
 निभा । दहन्ती दारिद्र्यद्रुमकुलमुदारद्रविणदा त्वदीया दृष्टिर्मे  
 जननि दुरदृष्टं दलयतु ॥ ३५ ॥ तव श्रोत्रे फुल्लोत्पलसकलसौभाग्य-  
 जयिनी सदैव श्रीनारायणगुणगणौघप्रणयिनी । रवैर्दीनां लीना-

मनिशमवधानातिशयिनी ममाप्येतां वाचं जलधितनये गोचरयताम्  
 ॥ ३६ ॥ प्रभाजालैः प्राभातिकदिनकराभापनयनं तवेदं खेदं मे  
 विघटयतु ताटङ्कयुगलम् । महिम्ना यस्यायं प्रलयसमयेऽपि  
 ऋतुभुजां जगत्पायं पायं स्वपिति निरपायं तव पतिः ॥ ३७ ॥  
 निवासो मुक्तानां निविडतरनीलाम्बुदनिभस्तवायं धम्मिल्लो विम-  
 लयतु मल्लोचनयुगम् । भृशं यस्मिन्कालागुरुबहुलसौरभ्यनिवहैः  
 पतन्ति श्रीभिक्षार्थिन इव मदान्धा मधुलिहः ॥ ३८ ॥ विलग्नौ  
 ते पार्श्वद्वयपरिसरे मत्तकरिणौ करोन्नीतैरञ्चन्मणिकलशमुग्धास्य-  
 गलितैः । निषिञ्चन्तौ मुक्तामणिगणजयैस्त्वां जलकणैर्नमस्यामो  
 दामोदरगृहिणि दारिद्र्यदलिताः ॥ ३९ ॥ अये मातर्लक्ष्मि त्वदरुण-  
 षदाम्भोजनिकटे लुठन्तं बालं मामविरलगलद्वाष्पजटिलम् ।  
 सुधासेकस्त्रिगैरतिमसृणमुग्धैः करतलैः स्पृशन्ती मा रोदीरिति  
 वद समाश्रास्यसि कदा ॥ ४० ॥ रमे पद्मे लक्ष्मि प्रणतजनकल्प-  
 द्रुमलते सुधाम्भोधेः पुत्रि त्रिदशनिक्करोपास्तचरणे । परे नित्यं  
 मातर्गुणमयि परब्रह्ममहिले जगन्नाथस्याकर्णय मृदुलवर्णावलि-  
 मिमाम् ॥ ४१ ॥ इति पण्डितराजश्रीजगन्नाथविरचिता लक्ष्मी-  
 लहरी समाप्ता ॥

### २४९. सिद्धिलक्ष्मीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ अस्य सिद्धिलक्ष्मीस्तोत्रस्य हिरण्य-  
 गर्भं ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, सिद्धिलक्ष्मीर्देवता, मम समस्त-  
 दुःखक्लेशपीडादारिद्र्यविनाशार्थं सर्वलक्ष्मीप्रसन्नकरणार्थं महा-  
 कालीमहालक्ष्मीमहासरस्वतीदेवताप्रीत्यर्थं च सिद्धिलक्ष्मीस्तोत्रजपे  
 विनियोगः । ॐ सिद्धिलक्ष्मी अङ्गुष्ठाभ्यां नमः । ॐ ह्रीं विष्णुहृदये  
 तर्जनीभ्यां नमः । ॐ क्लीं अमृतानन्दे मध्यमाभ्यां नमः । ॐ



श्रीं दैत्यमालिनी अनामिकाभ्यां नमः । ॐ तं तेजःप्रकाशिनी कनिष्ठिकाभ्यां नमः । ॐ ह्रीं क्लीं श्रीं ब्राह्मी वैष्णवी माहेश्वरी कर-  
 तलकरपृष्ठाभ्यां नमः । एवं हृदयादिन्यासः । ॐ सिद्धिलक्ष्मी  
 हृदयाय नमः । ॐ हां वैष्णवी शिरसे स्वाहा । ॐ क्लीं अमृतान-  
 नन्दे शिखायै वौषट् । ॐ श्रीं दैत्यमालिनी कवचाय हुम् । ॐ  
 तं तेजःप्रकाशिनी नेत्रद्वयाय वौषट् । ॐ ह्रीं क्लीं श्रीं ब्राह्मीं वैष्णवीं  
 फट् ॥ अथ ध्यानम् ॥ ब्राह्मीं च वैष्णवीं भद्रां षड्भुजां च चतुर्मु-  
 खाम् । त्रिनेत्रां च त्रिशूलां च पद्मचक्रगदाधराम् ॥ १ ॥ पीता-  
 म्बरधरां देवीं नानालंकारभूषिताम् । तेजःपुञ्जधरां श्रेष्ठां ध्याये-  
 द्वालकुमारिकाम् ॥ २ ॥ ॐकारलक्ष्मीरूपेण विष्णुहृदयमव्ययम् ।  
 विष्णुमानन्दमध्यस्थं ह्रींकारबीजरूपिणी ॥ ३ ॥ ॐ क्लीं अमृतान-  
 न्दभद्रे सद्य आनन्ददायिनी । ॐ श्रीं दैत्यभक्षरदां शक्तिमालिनी  
 शत्रुमर्दिनी ॥ ४ ॥ तेजःप्रकाशिनी देवी वरदा शुभकारिणी । ब्राह्मी  
 च वैष्णवी भद्रा कालिका रक्तशाम्भवी ॥ ५ ॥ आकारब्रह्मरूपेण  
 ॐकारं विष्णुमव्ययम् । सिद्धिलक्ष्मि परालक्ष्मि लक्ष्यलक्ष्मि  
 नमोऽस्तु ते ॥ ६ ॥ सूर्यकोटिप्रतीकाशं चन्द्रकोटिसमप्रभम् ।  
 तन्मध्ये निकरे सूक्ष्मं ब्रह्मरूपव्यवस्थितम् ॥ ७ ॥ ॐकारपरमा-  
 नन्दं क्रियते सुखसंपदा । सर्वमङ्गलमाङ्गल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके  
 ॥ ८ ॥ प्रथमे त्र्यम्बका गौरी द्वितीये वैष्णवी तथा । तृतीये  
 कमला प्रोक्ता चतुर्थे सुरसुन्दरी ॥ ९ ॥ पञ्चमे विष्णुपत्नी च षष्ठं  
 च वैष्णवी तथा । सप्तमे च वरारोहा अष्टमे वरदायिनी ॥ १० ॥  
 नवमे खड्गत्रिशूला दशमे देवदेवता । एकादशे सिद्धिलक्ष्मीर्द्वादशे  
 ललितात्मिका ॥ ११ ॥ एतत्स्तोत्रं पठन्तस्त्वां स्तुवन्ति भुवि  
 मानवाः । सर्वोपद्रवमुक्तास्ते नात्र कार्या विचारणा ॥ १२ ॥ एक-

मासं द्विमासं वा त्रिमासं च चतुर्थकम् । पञ्चमासं च षण्मासं  
 त्रिकालं यः पठेन्नरः ॥ १३ ॥ ब्राह्मणा क्लेशता दुःखदरिद्रा भय-  
 पीडिता । जन्मान्तरसहस्रेषु मुच्यते सर्वक्लेशतः ॥ १४ ॥ अल-  
 क्ष्मीर्लभते लक्ष्मीमपुत्रो पुत्रमुत्तमम् । धन्यं यशस्यमायुष्यं वह्नि-  
 चौरभयेषु च ॥ १५ ॥ शाकिनीभूतवेतालसर्वव्याधिनिपातके ।  
 राजद्वारे महाघोरे संग्रामे रिपुसंकटे ॥ १६ ॥ सभास्थाने इमशाने  
 च कारागेहारिबन्धने । अशेषभयसंप्राप्तौ सिद्धिलक्ष्मीं जपेन्नरः  
 ॥ १७ ॥ ईश्वरेण कृतं स्तोत्रं प्राणिनां हितकारणम् । स्तुवन्ति  
 ब्राह्मणा नित्यं दारिद्र्यं न च वर्धते ॥ १८ ॥ या श्रीः पद्मवने  
 कदम्बशिखरे राजगृहे कुञ्जरे श्वेते चाश्वयुते वृषे च युगले यज्ञे च  
 यूपस्थिते । शङ्खे देवकुले नरेन्द्रभवने गङ्गातटे गोकुले सा श्रीस्ति-  
 ष्ठु सर्वदा मम गृहे भूयात्सदा निश्चला ॥ १९ ॥ इति  
 श्रीब्रह्माण्डपुराणे ईश्वरविष्णुसंवादे दारिद्र्यनाशनं सिद्धिलक्ष्मीस्तोत्रं  
 संपूर्णम् ॥

### २५०. श्रीस्तवः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ स्वस्ति श्रीर्दिशतादशेषजगतां स्वर्गापवर्गस्थि-  
 तीः स्वर्गं दुर्गतिमापवर्गिकपदं सर्वं च कुर्वन्हरिः । यस्या वीक्ष्य  
 मुखं तदिङ्गितपराधीनो विधत्तेऽखिलं क्रीडेयं खलु नान्यथाऽस्य  
 रसदा स्यादैकरस्यात्तया ॥ १ ॥ हे श्रीर्देवि समस्तलोकजननि त्वां  
 स्तोतुमीहामहे युक्तां भावय भारतीं प्रगुणय प्रेमप्रधानां धियम् ।  
 भक्तिं बन्धय नन्दयाश्रितमिमं दासं जनं तावकं लक्ष्यं लक्ष्मि  
 कटाक्षवीचिविसृतेस्ते स्याम चामी वयम् ॥ २ ॥ स्तोत्रं नाम कि-  
 मामनन्ति कवयो यद्यन्यदीयान्गुणानन्यत्र त्वसतोऽधिरोप्य भणितिः  
 MPL Sastry Library Free Digitisation indoscripts.org (ISRT)

सा तर्हि वन्ध्या त्वयि । सम्यक्सत्यगुणाभिवर्णनमथो ब्रूयुः कथं  
तादृशी वाग्वाचस्पतिनाप्यशक्यरचना त्वत्सद्गुणार्णोनिधौ ॥ ३ ॥  
ये वाचां मनसां च दुर्ग्रहतया ख्याता गुणास्तावकास्तानेव प्रति  
साम्बुजिह्वमुदिता यन्मामिका भारती । हास्यं तत्तु न मन्महे न हि  
चकोर्यैकाऽखिलां चन्द्रिकां नालं पातुमिति प्रगृह्य रसनामासीत्  
सत्यां नृषि ॥ ४ ॥ क्षोदीयानपि दुष्टबुद्धिरपि निःस्नेहोऽप्यनीहोऽ-  
पि ते कीर्तिं देवि लिहन्नहं न च बिभेम्यज्ञो न जिहेमि च । दुष्ये-  
त्सा तु न तावता न हि शुना लीढाऽपि भागीरथी दुष्येच्चापि न  
लज्जते न च बिभेत्यार्तिस्तु शाम्येच्छुनः ॥ ५ ॥ ऐश्वर्यं महदेव  
वाऽल्पमथवा दृश्येत पुंसां हि यत्तल्लक्ष्म्याः समुदीक्षणात्तव यतः  
सार्वत्रिकं वर्तते । तेनैतेन न विस्मयेमहि जगन्नाथोऽपि नारायणो  
धन्यं मन्यत ईक्षणात्तव यतः स्वात्मानमात्मेश्वरः ॥ ६ ॥ ऐश्वर्यं  
यदशेषपुंसि यदिदं सौन्दर्यलावण्ययो रूपं यच्च हि मङ्गलं किमपि  
यल्लोके सदित्युच्यते । तत्सर्वं त्वदधीनमेव यदतः श्रीरित्यभेदेन  
वा यद्वा श्रीमदितीदृशेन वचसा देवि प्रथामश्रुते ॥ ७ ॥ देवि  
त्वन्महिमावधिर्न हरिणा नापि त्वया ज्ञायते यद्यप्येवमथापि नैव  
युवयोः सर्वज्ञता हीयते । यन्नास्त्येव तदज्ञतामनुगुणां सर्वज्ञताया  
विदुर्व्योमाम्भोजमिदन्तया खलु विदन् आन्तोऽयमित्युच्यते ॥ ८ ॥  
लोके वनस्पतिबृहस्पतितारतम्यं यस्याः कटाक्षपरिणाममुदाहरन्ति ।  
सा भारती भगवती तु यदीयदासी तां देवदेवमहिषीं श्रियमाश्र-  
यामः ॥ ९ ॥ यस्याः कटाक्षमृदुवीक्षणदीक्षितेन सद्यः समुल्लसित-  
पल्लवमुल्ललास । विश्वं विपर्ययसमुत्थविपर्ययं त्वां तां देवदेवमहिषीं  
श्रियमाश्रयामः ॥ १० ॥ इति श्रीस्तवः संपूर्णः ॥

## २५१. श्रीलक्ष्म्यष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ देव्युवाच ॥ देवदेव महादेव त्रिकालज्ञ  
महेश्वर । करुणाकर देवेश भक्तानुग्रहकारक ॥ १ ॥ अष्टोत्तरशतं  
लक्ष्म्याः श्रोतुमिच्छामि तत्त्वतः । ईश्वर उवाच ॥ देवि साधु  
महाभागे महाभाग्यप्रदायकम् । सर्वैश्वर्यकरं पुण्यं सर्वपापप्रणाशनम्  
॥ २ ॥ सर्वदारिद्र्यशमनं श्रवणाद्भुक्तिमुक्तिदम् । राजवश्यकरं  
दिव्यं गुह्याद्गुह्यतमं परम् ॥ ३ ॥ दुर्लभं सर्वदेवानां चतुःषष्टिकला-  
स्पदम् । पद्मादीनां वरान्तानां निधीनां नित्यदायकम् ॥ ४ ॥  
समस्तदेवसंसेव्यमणिमाद्यष्टसिद्धिदम् । किमत्र बहुनोक्तेन देवी-  
प्रत्यक्षदायकम् ॥ ५ ॥ तव प्रीत्याद्य वक्ष्यामि समाहितमनाः शृणु ।  
अष्टोत्तरशतस्यास्य महालक्ष्मीस्तु देवता ॥ ६ ॥ क्लींबीजपदमित्युक्तं  
शक्तिस्तु भुवनेश्वरी । अंगन्यासः करन्यासः स इत्यादिः प्रकीर्तितः  
॥ ७ ॥ ध्यानम् ॥ वंदे पद्मकरां प्रसन्नवदनां सौभाग्यदां भांग्यदां  
हस्ताभ्यामभयप्रदां मणिगणैर्नानाविधैर्भूषिताम् । भक्ताभीष्ट-  
फलप्रदां हरिहरब्रह्मादिभिः सेवितां पार्श्वे पंकजशंखपद्मनिधिभि-  
र्युक्तां सदा शक्तिभिः ॥ ८ ॥ सरसिजनयने सरोजहस्ते धवलतरां-  
शुक्रांगधमाल्यशोभे । भगवति हरिवल्लभे मनोज्ञे त्रिभुवनभूतिकरि  
प्रसीद मह्यम् ॥ ९ ॥ प्रकृतिं विकृतिं विद्यां सर्वभूतहितप्रदाम् ।  
श्रद्धां विभूतिं सुरभिं नमामि परमात्मिकाम् ॥ १० ॥ वाचं  
पद्मालयां पद्मां शुचिं स्वाहां स्वधां सुधाम् । धन्यां हिरण्मयीं  
लक्ष्मीं नित्यपुष्टां विभावरीम् ॥ ११ ॥ अदितिं च दितिं दीप्तां  
वसुधां वसुधारिणीम् । नमामि कमलां कांतां कामाक्षीं क्रोध-  
संभवाम् ॥ १२ ॥ अनुग्रहपदां बुद्धिमनघां हरिवल्लभाम् । अशोका-  
ममृतां दीप्तां लोकशोकविनाशिनीम् ॥ १३ ॥ नमामि धर्मनिलयां

करुणां लोकमातरम् । पद्मप्रियां पद्महस्तां पद्माक्षीं पद्मसुन्दरीम्  
 ॥ १४ ॥ पद्मोद्भवां पद्ममुखीं पद्मनाभप्रियां रमाम् । पद्ममालाधरां  
 देवीं पद्मिनीं पद्मगंधिनीम् ॥ १५ ॥ पुण्यगंधां सुप्रसन्नां प्रसादा-  
 भिमुखीं प्रभाम् । नमामि चंद्रवदनां चंद्रां चंद्रसहोदरीम् ॥ १६ ॥  
 चतुर्भुजां चंद्ररूपामिंदिरामिंदुशीतलाम् । आह्लादजननीं पुष्टिं  
 शिवां शिवकरीं सतीम् ॥ १७ ॥ विमलां विश्वजननीं तुष्टिं  
 दारिद्र्यनाशिनीम् । प्रीतिपुष्करिणीं शांतां शुक्लमाल्यांबरां श्रियम्  
 ॥ १८ ॥ भास्करीं विल्वनिलयां वरारोहां यशस्विनीम् । वसुंधरा-  
 मुदारांगीं हरिणीं हेममालिनीम् ॥ १९ ॥ धनधान्यकरीं सिद्धिं  
 सदा सौम्यां शुभप्रदाम् । नृपवेश्मगतानंदां वरलक्ष्मीं वसुप्रदाम्  
 ॥ २० ॥ शुभां हिरण्यप्राकारां समुद्रतनयां जयाम् । नमामि  
 मंगलां देवीं विष्णुवक्षःस्थलस्थिताम् ॥ २१ ॥ विष्णुपत्नीं प्रसन्नाक्षीं  
 नारायणसमाश्रिताम् । दारिद्र्यध्वंसिनीं देवीं सर्वोपद्रवहारिणीम्  
 ॥ २२ ॥ नवदुर्गा महाकालीं ब्रह्मविष्णुशिवात्मिकाम् । त्रिकाल-  
 ज्ञानसंपन्नां नमामि भुवनेश्वरीम् ॥ २३ ॥ लक्ष्मीं क्षीरसमुद्र-  
 राजतनयां श्रीरंगधामेश्वरीं दासीभूतसमस्तदेवनितां लोकैक-  
 दीपांकुराम् । श्रीमन्मंदकटाक्षलब्धविभवब्रह्मोद्भवांगगाधरां त्वां  
 त्रैलोक्यकुटुंबिनीं सरसिजां वंदे मुकुंदप्रियाम् ॥ २४ ॥ मातर्नमामि  
 कमले कमलायताक्षि श्रीविष्णुहृत्कमलवासिनि विश्वमातः ।  
 क्षीरोदजे कमलकोमलगर्भगौरि लक्ष्मि प्रसीद सततं नमतां  
 शरण्ये ॥ २५ ॥ त्रिकालं यो जपेद्विद्वान् षण्मासं विजितेंद्रियः ।  
 दारिद्र्यध्वंसनं कृत्वा सर्वमाप्नोत्यत्नतः ॥ २६ ॥ देवीनाम-  
 सहस्रेषु पुण्यमष्टोत्तरं शतम् । येन श्रियमवाप्नोति कोटिजन्मदरि-  
 द्रितः ॥ २७ ॥ भृगुवारे शतं धीमान् पठेद्ब्रह्मसरमात्रकम् । अष्टैश्वर्य-

मवाप्नोति कुबेर इव भूतले ॥ २८ ॥ दारिद्र्यमोचनं नाम  
स्तोत्रमम्बापरं शतम् । येन श्रियमवाप्नोति कोटिजन्मदरिद्रितः  
॥ २९ ॥ भुक्त्वा तु विपुलान् भोगानस्याः सायुज्यमाप्नुयात् ।  
प्रातःकाले पठेन्नित्यं सर्वदुःखोपशांतये । पठंस्तु चिंतयेद्देवीं  
सर्वाभरणभूषिताम् ॥ ३० ॥ इति श्रीलक्ष्म्यष्टोत्तरशतनामस्तोत्रं  
संपूर्णम् ॥

### २५२. महालक्ष्मीकवचम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अस्य श्रीमहालक्ष्मीकवचमन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः,  
गायत्री छन्दः, महालक्ष्मीर्देवता, महालक्ष्मीप्रीत्यर्थं जपे विनि-  
योगः ॥ इन्द्र उवाच ॥ समस्तकवचानां तु तेजस्वी कवचोत्तम् ।  
आत्मरक्षणमारोग्यं सत्यं त्वं ब्रूहि गीष्पते ॥ १ ॥ श्रीगुरुवाच ॥  
महालक्ष्म्यास्तु कवचं प्रवक्ष्यामि समासतः । चतुर्दशसु लोकेषु  
रहस्यं ब्रह्मणोदितम् ॥ २ ॥ ब्रह्मोवाच ॥ शिरो मे विष्णुपत्नी च  
ललाटममृतोद्भवा । चक्षुषी सुविशालाक्षी श्रवणे सागराम्बुजा  
॥ ३ ॥ घ्राणं पातु वरारोहा जिह्वामात्रायरूपिणी । मुखं पातु महा-  
लक्ष्मीः कण्ठं वैकुण्ठवासिनी ॥ ४ ॥ स्कन्धौ मे जानकी पातु भुजौ  
भार्गवनन्दिनी । बाहू द्वौ द्रविणी पातु करौ हरिवराङ्गना ॥ ५ ॥  
वक्षः पातु च श्रीर्देवी हृदयं हरिसुन्दरी । कुक्षिं च वैष्णवी पातु  
नार्भिं भुवनमातृका ॥ ६ ॥ कटिं च पातु वाराही सक्थिनी देव-  
देवता । ऊरू नारायणी पातु जानुनी चन्द्रसोदरी ॥ ७ ॥ इन्दिरा  
पातु जंघे मे पादौ भक्तनमस्कृता । नखान् तेजस्विनी पातु सर्वाङ्गं  
करुणामयी ॥ ८ ॥ ब्रह्मणा लोकरक्षार्थं निर्मितं कवचं श्रियः ।  
ये पठन्ति महात्मानस्ते च धन्या जगन्नये ॥ ९ ॥ कवचेनावृता-  
ज्ञानां जनानां जयदा सदा । मातेव सर्वसुखदा भव त्वम-

मरेश्वरी ॥ १० ॥ भूयः सिद्धिमवाप्नोति पूर्वोक्तं ब्रह्मणा स्वयम् ।  
लक्ष्मीर्हरिप्रिया पद्मा एतन्नामत्रयं स्मरन् ॥ ११ ॥ नामत्रयमिदं  
जप्त्वा स याति परमां श्रियम् । यः पठेत्स च धर्मात्मा सर्वान्का-  
मानवाप्नुयात् ॥ १२ ॥ इति श्रीब्रह्मपुराणे इन्द्रोपदिष्टं महा-  
लक्ष्मीकवचं संपूर्णम् ॥

### २५३. श्रीस्तुतिः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ मानातीतप्रथितविभवां मङ्गलं मङ्गलानां वक्षः-  
पीठं मधुविजयिनो भूषयन्तीं स्वकान्त्या । प्रत्यक्षानुश्रविकमहिमप्रा-  
र्थिनीनां प्रजानां श्रेयोमूर्तिं श्रियमशरणस्त्वां शरण्यां प्रपद्ये ॥ १ ॥  
आविर्भावः कलशजलधावध्वरे वाऽपि यस्याः स्थानं यस्याः सरसि-  
जवनं विष्णुवक्षःस्थलं वा । भूमा यस्या भुवनमखिलं देवि दिव्यं  
पदं वा स्तोकप्रज्ञैरनवधिगुणा स्तूयसे सा कथं त्वम् ॥ २ ॥ स्तोत-  
व्यत्वं दिशति भवती देहिभिः स्तूयमाना तामेव त्वामनितरगतिः  
स्तोतुमाशंसमानः । सिद्धारम्भः सकलभुवनश्लाघनीयो भवेयं सेवा-  
पेक्षा तव चरणयोः श्रेयसे कस्य न स्यात् ॥ ३ ॥ यत्संकल्पाद्भवति  
कमले यत्र देहिन्यमीषां जन्मस्थेमप्रलयरचना जङ्गमाजङ्गमानाम् ।  
तत्कल्याणं किमपि यमिनामेकलक्ष्यं समाधौ पूर्णं तेजः स्फुरति  
भवतीपादलाक्षारसाङ्गम् ॥ ४ ॥ निष्प्रत्यूहप्रणयघटितं देवि नित्या-  
नपायं विष्णुस्त्वं चेत्यनवधिगुणं द्वन्द्वमन्योन्यलक्ष्यम् । शेषश्चित्तं  
विमलमनसां मौलयश्च श्रुतीनां संपद्यन्ते विहरणविधौ यस्य शय्या-  
विशेषाः ॥ ५ ॥ उद्देश्यत्वं जननि भजतोरुज्झितोपाधिगन्धं प्रत्य-  
ग्रूपे हविवि युवयोरेकशेषित्वयोगात् । पद्मे पत्युस्तव च निगमैर्नि-  
त्यमन्विष्यमाणो नावच्छेदं भजति महिमा नर्तयन् मानसं नः ॥ ६ ॥  
पश्यन्तीषु श्रुतिषु परितः सूरिवृन्देन सार्धं मध्येकृत्य त्रिगुणफलकं

निर्मितस्थानभेदम् । विश्वाधीशप्रणयिनि सदा विभ्रमद्यूतवृत्तौ ब्रह्मे-  
शाद्या दधति युवयोरक्षशारप्रचारम् ॥ ७ ॥ अस्येशाना त्वमसि  
जगतः संश्रयन्ती मुकुन्दं लक्ष्मीः पद्मा जलधितनया विष्णुपत्नी-  
न्दिरेति । यन्नामानि श्रुतिपरिपणान्येवमावर्तयन्तो नावर्तन्ते  
दुरितपवनप्रेरिते जन्मचक्रे ॥ ८ ॥ त्वामेवाहुः कतिचिदपरे त्वत्प्रियं  
लोकनाथं किं तैरन्तःकलहमलिनैः किंचिदुत्तीर्य मग्नैः । त्वत्संप्रीत्यै  
विहरति हरौ संमुखीनां श्रुतीनां भावारूढौ भगवति युवां दम्पती  
दैवतं नः ॥ ९ ॥ आपन्नार्तिप्रशमनविधौ बद्धदीक्षस्य विष्णोराच-  
ख्युस्त्वां प्रियसहचरीमैकमत्योपपन्नाम् । प्रादुर्भावैरपि समतनुः प्रा-  
ध्वमन्वीयसे त्वं दूरोत्क्षिप्तैरिव मधुरता दुग्धराशेस्तरङ्गे ॥ १० ॥  
धत्ते शोभां हरिमरकते तावकी मूर्तिराद्या तन्वी तुङ्गस्तनभरनता  
तप्तजाम्बूनदाभा । यस्यां गच्छन्त्युदयविलयैर्नित्यमानन्दसिन्धावि-  
च्छावेगोल्लसितलहरीविभ्रमं व्यक्तयस्ते ॥ ११ ॥ आसंसारं वित-  
तमखिलं वाङ्मयं यद्विभूर्तिर्यद्भ्रूभङ्गात्कुसुमधनुषः किंकरो मेरुधन्वा ।  
यस्यां नित्यं नयनशतकैरेकलक्ष्यो महेन्द्रः पद्मे तासां परिणतिरसौ  
भावलेशैस्त्वदीयैः ॥ १२ ॥ अग्रे भर्तुः सरसिजमये भद्रपीठे निषण्णा-  
मम्भोराशेरधिगतसुधासंश्लवादुत्थितां त्वाम् । पुष्पासारस्थगितभु-  
वनैः पुष्कलावर्तकाद्यैः कलसारम्भाः कनककलशैरभ्यषिञ्चन्गाजेन्द्राः  
॥ १३ ॥ आलोक्य त्वाममृतसहजे विष्णुवक्षःस्थलस्थां शापाक्रान्ताः  
शरणमगमन्सावरोधाः सुरेन्द्राः । लब्ध्वा भूयस्त्रिभुवनमिदं  
लक्षितं त्वत्कटाक्षैः सर्वाकारस्थिरसमुदयां संपदं निर्विशन्ति ॥ १४ ॥  
आर्तत्राणव्रतिभिरमृतासारनीलाम्बुवाहैरम्भोजानामुषसि मिषताम-  
न्तरङ्गैरपाङ्गैः । यस्यां यस्यां दिशि विहरते देवि दृष्टिस्त्वदीया तस्यां  
तस्यामहमहमिकां तन्वते संपदोधाः ॥ १५ ॥ योगारम्भत्वरित-



मनसो युष्मदैकांत्ययुक्तं धर्मं प्राप्तुं प्रथममिह ये धारयन्तेऽधना याम् ।  
 तेषां भूमेर्धनपतिगृहादम्बरादम्बुधेर्वा धारा निर्यान्त्यधिकमधिकं  
 वाञ्छितानां वसूनाम् ॥ १६ ॥ श्रेयस्कामाः कमलनिलये चित्रमा-  
 न्नायवाचां चूडापीडं तव पदयुगं चेतसा धारयन्तः । छत्रच्छाया-  
 सुभगशिरसश्चामरस्मेरपार्श्वाः श्लाघाशब्दश्रवणमुदिताः स्रग्विणः  
 संचरन्ति ॥ १७ ॥ ऊरीकर्तुं कुशलमखिलं जेतुमादीनरातीन्दूरीकर्तुं  
 दुरितनिवहं त्यक्तुमाद्यामविद्याम् । अम्ब स्तम्बावधिकजननग्राम-  
 सीमान्तरेखामालम्बन्ते विमलमनसो विष्णुकान्ते दया ते ॥ १८ ॥  
 जाताकांक्षा जननि युवयोरेकसेवाधिकारे मायालीढं विभवमखिलं  
 मन्यमानास्तृणाय । प्रीत्यै विष्णोस्तव च कृतिनः प्रीतिमन्तो  
 भजन्ते वेलाभङ्गप्रशमनफलं वैदिकं धर्मसेतुम् ॥ १९ ॥ सेवे देवि  
 त्रिदशमहिलामौलिमालार्चितं ते सिद्धिक्षेत्रं शमितविपदां संपदां  
 पादपद्मम् । यस्मिन्नीषन्नमितशिरसो यापयित्वा शरीरं वर्तिष्यन्ते  
 वित्तमसि पदे वासुदेवस्य धन्याः ॥ २० ॥ सानुप्रासप्रकटितदयैः  
 सान्द्रवात्सल्यदिग्धैरम्ब स्निग्धैरमृतलहरीलब्धसब्रह्मचर्यैः । धर्मं  
 तापत्रयविरचिते गाढतप्तं क्षणं मामार्किंचन्यग्लपितमनघैराद्रियेथाः  
 कटाक्षैः ॥ २१ ॥ संपद्यन्ते भवभयतमीभानवस्त्वत्प्रसादाद्भावाः  
 सर्वे भगवति हरौ भक्तिमुद्वेलयन्तः । याचे किं त्वामहमिह यतः  
 शीतलोदारशीला भूयो भूयो दिशसि महतां मङ्गलानां प्रबन्धान्  
 ॥ २२ ॥ माता देवि त्वमसि भगवान्वासुदेवः पिता मे जातः  
 सोऽहं जननि युवयोरेकलक्ष्यं दयायाः । दत्तो युष्मत्परिजनतया  
 देशिकैरप्यतस्त्वं किं ते भूयः प्रियमिति किल स्मेरवक्त्रा विभासि  
 ॥ २३ ॥ कल्याणानामविकलनिधिः काऽपि कारुण्यसीमा नित्या-  
 मोदा निगमवचसां मौलिमन्दारमाला । संपद्दिव्या मधुविजयिनः

संनिधत्तां सदा मे सैषा देवी सकलभुवनप्रार्थनाकामधेनुः ॥ २४ ॥  
 उपचितगुरुभक्तेरुत्थितं वेङ्कटेशात्कलिकलुषनिवृत्त्यै कल्प्यमानं प्रजा-  
 नाम् । सरसिजनिलयायाः स्तोत्रमेतत्पठन्तः सकलकुशलसीमा  
 सार्वभौमा भवन्ति ॥ २५ ॥ इति श्रीवेङ्कटेशार्यविरचिता श्रीस्तुतिः  
 संपूर्णा ॥

### २५४. लक्ष्मीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अगस्त्य उवाच ॥ पद्मे पद्मपलाशाक्षि जय  
 त्वं श्रीपतिप्रिये । जगन्मातर्महालक्ष्मीः संसारार्णवतारिणि ॥ १ ॥  
 महालक्ष्मि नमस्तुभ्यं नमस्तुभ्यं सुरेश्वरि । हरिप्रिये नमस्तुभ्यं  
 नमस्तुभ्यं दयानिधे ॥ २ ॥ पद्मालये नमस्तुभ्यं नमस्तुभ्यं शिव-  
 प्रिये । सर्वभूतहितार्थाय वसुवृष्टिं सदा कुरु ॥ ३ ॥ जगन्मातर्नम-  
 स्तुभ्यं नमस्तुभ्यं कृपावति । दयावति नमस्तुभ्यं विश्वेश्वरि नमो  
 नमः ॥ ४ ॥ नमः क्षीराब्धितनये नमस्त्रैलोक्यधारिणि । शशिवक्त्रे  
 नमस्तुभ्यं रक्ष मां शरणागतम् ॥ ५ ॥ रक्ष त्वं देवि देवेशि देव-  
 देवेशवल्लभे । दारिद्र्यान्नाहि मां लक्ष्मि कृपां कुरु ममोपरि ॥ ६ ॥  
 नमस्त्रैलोक्यजननि नमस्त्रैलोक्यपावनि । ब्रह्मादयो नमन्ति त्वां  
 जगदानन्ददायिनि ॥ ७ ॥ विष्णुप्रिये नमस्तुभ्यं नमस्तुभ्यं जग-  
 द्विते । आर्तिहन्त्रि नमस्तुभ्यं समृद्धिं कुरु मे रमे ॥ ८ ॥ पद्म-  
 वासे नमस्तुभ्यं चपलायै नमो नमः । चञ्चलायै नमस्तुभ्यं ललि-  
 तायै नमो नमः ॥ ९ ॥ नमः प्रद्युम्नमातस्ते पाहि मां त्वां नमाम्य-  
 हम् । परिपालय मां मातः सर्वथा शरणागतम् ॥ १० ॥ शरणं  
 त्वां प्रपन्नोऽस्मि कमले कमलानने । त्राहि त्राहि महालक्ष्मि परि-  
 त्राणपरायणे ॥ ११ ॥ पाण्डित्यं शोभते नैव न शोभन्ते गुणा  
 नरे । शीलं चापि न शोभेत महालक्ष्मि त्वया विना ॥ १२ ॥

तावद्विराजते रूपं तावच्छीलं विराजते । तावद्गुणा नराणां च  
 यावलक्ष्मीः प्रसीदति ॥ १३ ॥ लक्ष्मि त्वयालंकृतमानवा ये  
 पापैर्विमुक्ता नृपलोकमान्याः । गुणैर्विहीना गुणिनो भवन्ति विशी-  
 लिनः शीलवतां वरिष्ठाः ॥ १४ ॥ लक्ष्मीभूषयते रूपं लक्ष्मी-  
 भूषयते कुलम् । लक्ष्मीभूषयते विद्यां सर्वालक्ष्मीर्विशिष्यते ॥ १५ ॥  
 लक्ष्मि त्वद्गुणकीर्तने कमलभूर्यायादलं जिह्वतां रुद्राद्या रविचन्द्र-  
 देवपतयो वक्तुं च नैव क्षमाः । अस्माभिस्तव रूपलक्षणगुणा वक्तुं  
 कथं पार्यते मातर्मा परिपाहि विश्वजननि कृत्वा ममेष्टं ध्रुवम्  
 ॥ १६ ॥ दीनार्तिभीतं क्षुधया प्रपीडितं वासोविहीनं तव पार्श्वमा-  
 गतम् । कृपां विधत्से मम लक्ष्मि सत्वरं धनप्रदे मां धननायकं  
 कुरु ॥ १७ ॥ मां विलोक्य जननी हरिप्रिये निर्धनं तव समीप-  
 मागतम् । देहि मे झटिति लक्ष्मि कराग्रं वस्त्रकाञ्चनवरात्रमद्भु-  
 तम् ॥ १८ ॥ त्वमेव जननी लक्ष्मीः पिता लक्ष्मीस्त्वमेव च ।  
 भ्राता त्वं च सखा लक्ष्मीर्विद्या लक्ष्मीस्त्वमेव च ॥ १९ ॥ त्राहि  
 त्राहि महालक्ष्मि त्राहि त्राहि सुरेश्वरि । त्राहि त्राहि जगन्मा-  
 तर्दारिद्र्यात्राहि वेगतः ॥ २० ॥ नमस्तुभ्यं जगद्धात्रि विधात्र्यै ते  
 नमो नमः । धर्मध्वजे नमस्तुभ्यं नमः संपत्तिदायिनि ॥ २१ ॥  
 दारिद्र्यार्णवमग्नोऽहं निमग्नोऽहं रसातले । मज्जमानं करं धृत्वाऽप्यु-  
 द्धर त्वं रमे द्रुतम् ॥ २२ ॥ किं लक्ष्मि बहुनोक्तेन जल्पितं च  
 पुनः पुनः । अन्यन्मे शरणं नास्ति सत्यं सत्यं हरिप्रिये ॥ २३ ॥  
 एतच्छ्रुत्वाऽगस्त्यवाक्यं हर्षपूर्णा हरिप्रिया । उवाच मधुरां वाणीं  
 तुष्टाऽहं तव सुव्रत ॥ २४ ॥ श्रीरुवाच ॥ यत्त्वयोक्तमिदं स्तोत्रं  
 ये पठिष्यन्ति मानवाः । ये च शृण्वन्ति भक्त्याऽहं तेषां  
 वशवर्तिनी ॥ २५ ॥ नित्यं पठन्ति ये भक्त्या तेषां दैन्यं

विनश्यति । ऋणं नश्यति शीघ्रं च वियोगो नैव जायते ॥ २६ ॥  
यः पठेत्प्रातरुत्थाय श्रद्धाभक्तिसमन्वितः । गृहे तस्य सदा तिष्ठे-  
न्नित्यं श्रीः पतिना सह ॥ २७ ॥ सुखसौभाग्यसंपन्नो मनुष्यो  
बुद्धिमान्भवेत् । पुत्रवान् पशुमान्श्रेष्ठो भुक्त्वा भोगांश्च मानवः  
॥ २८ ॥ कीर्तिमांश्च महाभाग्यो नारायणपदं लभेत् । अपुत्राः  
पुत्रिणः सन्ति पुत्रिणः सन्ति पौत्रिणः ॥ २९ ॥ निर्धनाः सधनाः  
सन्ति जीवन्ति शरदां शतम् । इदं स्तोत्रं महापुण्यं महालक्ष्म्याः  
प्रकीर्तितम् । विष्णुप्रसादजननं चतुर्वर्गफलप्रदम् ॥ ३० ॥ राजद्वारे  
जयश्चैव शत्रोश्चैव पराजयः । भूतप्रेतपिशाचानां व्याघ्राणां न भयं  
तथा ॥ ३१ ॥ न शस्त्रानलतोयौघान्द्वयं तस्य प्रजायते । दुर्वृत्तानां  
च पापानां बहुहानिकरं परम् ॥ ३२ ॥ मन्दुराकरिशालासु गवां  
गोष्ठे समाहितः । पठेत्तद्दोषशान्त्यर्थं महापातकनाशनम् ॥ ३३ ॥  
सर्वसौख्यकरं नृणामायुरारोग्यदं तथा । अगस्त्यमुनिना प्रोक्तं  
प्रजानां हितकाम्यया ॥ ३४ ॥ इत्यगस्त्यमुनिविरचितं लक्ष्मीस्तोत्रं  
संपूर्णम् ॥

### २५५. लक्ष्मीहृदयम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ आचम्य प्राणानायम्य देशकालौ संकीर्त्य  
श्रीलक्ष्मीनारायणप्रसादसिद्ध्यै ममाभीष्टकामनासिद्ध्यर्थं अद्यप्रभृ-  
त्यमुकदिनपर्यन्तं संकलीकरणरीत्या, संपुटीकरणरीत्या, पुरश्चरणरीत्या,  
सकृदावर्तनपाठरीत्या वा लक्ष्मीनारायणहृदयजपाख्यं कर्म करिष्ये  
इति संकल्प्य न्यासादि कुर्यात् ॥ अस्य श्रीमहालक्ष्मीहृदयमाला-  
मंत्रस्य, भार्गव ऋषिः, आद्यादिश्रीमहालक्ष्मीदेवता, अनुष्टु-  
बादिनानाछंदांसि, श्रीबीजम्, हीं शक्तिः, ऐं कीलकम्,  
श्रीमहालक्ष्मीप्रसादसिद्ध्यर्थं जपे विनियोगः ॥ ॥ अथ न्यासः ॥  
ॐ भार्गवऋषये नमः शिरसि ॥ अनुष्टुबादिनानाछंदोभ्यो नमो

सुखे ॥ आद्यादिश्रीमहालक्ष्म्यै देवतायै नमो हृदये ॥ श्रीं बीजाय  
 नमो गुह्ये ॥ ह्रीं शक्तये नमः पादयोः ॥ ऐं कीलकाय नमः  
 सर्वांगे ॥ ॥ अथ करन्यासः ॥ ॐ श्रीं अंगुष्ठाभ्यां नमः ॥ ॐ ह्रीं  
 तर्जनीभ्यां नमः ॥ ॐ ऐं मध्यमाभ्यां नमः ॥ श्रीं अनामिकाभ्यां  
 नमः ॥ ॐ ह्रीं कनिष्ठिकाभ्यां नमः ॥ ॐ ऐं करतलकरपृष्ठाभ्यां  
 नमः ॥ ॐ श्रीं हृदयाय नमः ॥ ॐ ह्रीं शिरसे स्वाहा ॥ ॐ ऐं  
 शिखायै वषट् ॥ ॐ श्रीं कवचाय हुम् ॥ ॐ ह्रीं नेत्रत्रयाय  
 वौषट् ॥ ॐ ऐं अस्त्राय फट् ॥ ॐ श्रीं ह्रीं ऐं इति दिग्बन्धः ॥  
 अथ ध्यानम् ॥ हस्तद्वयेन कमले धारयन्तीं स्वलीलया ॥ हार-  
 नूपुरसंयुक्तां लक्ष्मीं देवीं विचिंतये ॥ इति ध्यात्वा मानसोपचारैः  
 संपूज्य ॥ शंखचक्रगदाहस्ते शुभ्रवर्णे सुवासिनि ॥ मम देहि वरं  
 लक्ष्मीः सर्वसिद्धिप्रदायिनि ॥ इति संप्रार्थ्य ॐ श्रीं ह्रीं ऐं महा-  
 लक्ष्म्यै कमलधारिण्यै सिंहवाहिन्यै स्वाहा ॥ इति मंत्रं जप्त्वा  
 पुनः पूर्ववद्धृदयादिषडंगन्यासं कृत्वा स्तोत्रं पठेत् ॥ वंदे लक्ष्मीं  
 परशिवमयीं शुद्धजांबूनदाभां तेजोरूपां कनकवसनां सर्वभूषोज्ज्व-  
 लांगीम् ॥ बीजापूरं कनककलशं हेमपद्मं दधानामाद्यां शक्तिं  
 सकलजननीं विष्णुवामांकसंस्थाम् ॥ १ ॥ श्रीमत्सौभाग्यजननीं  
 स्तौमि लक्ष्मीं सनातनीम् ॥ सर्वकामफलावाप्तिसाधनैकसुखावहाम्  
 ॥ २ ॥ स्मरामि नित्यं देवेशि त्वया प्रेरितमानसः ॥ त्वदाज्ञां  
 शिरसा धृत्वा भजामि परमेश्वरीम् ॥ ३ ॥ समस्तसंपत्सुखदां महा-  
 श्रियं समस्तसौभाग्यकरीं महाश्रियम् ॥ समस्तकल्याणकरीं महा-  
 श्रियं भजाम्यहं ज्ञानकरीं महाश्रियम् ॥ ४ ॥ विज्ञानसंपत्सुखदां  
 सनातनीं विचित्रवाग्भूतिकरीं मनोहराम् ॥ अनंतसंमोदसुखप्रदा-  
 यिनीं नमाम्यहं भूतिकरीं हरिप्रियाम् ॥ ५ ॥ समस्तभूतांतर-

संस्थिता त्वं समस्तभोक्त्रीश्वरि विश्वरूपे ॥ तच्चास्ति यत्त्वद्भक्तिरिक्त-  
वस्तु त्वत्पादपद्मं प्रणमाम्यहं श्रीः ॥ ६ ॥ दारिद्र्यदुःखौघतमो-  
पहंत्रि त्वत्पादपद्मं मयि संनिधत्स्व ॥ दीनार्तिविच्छेदनहेतुभूतैः  
कृपाकटाक्षैरभिषिञ्च मां श्रीः ॥ ७ ॥ अम्ब प्रसीद करुणासुधयार्द्र-  
दृष्ट्या मां त्वत्कृपाद्रविणगेहमिमं कुरुष्व ॥ आलोक्य प्रणतहृद्गत-  
शोकहंत्रि त्वत्पादपद्मयुगलं प्रणमाम्यहं श्रीः ॥ ८ ॥ शान्त्यै  
नमोऽस्तु शरणागतरक्षणायै कान्त्यै नमोऽस्तु कमनीयगुणाश्रयायै ॥  
क्षान्त्यै नमोऽस्तु दुरितक्षयकारणायै धान्त्यै नमोऽस्तु धनधान्य-  
समृद्धिदायै ॥ ९ ॥ शक्त्यै नमोऽस्तु शशिशेखरसंस्तुतायै रत्यै  
नमोऽस्तु रजनीकरसोदरायै ॥ भक्त्यै नमोऽस्तु भवसागरतारिकायै  
मत्यै नमोऽस्तु मधुसूदनवल्लभायै ॥ १० ॥ लक्ष्म्यै नमोऽस्तु  
शुभलक्षणलक्षितायै सिद्ध्यै नमोऽस्तु शिवसिद्धसुपूजितायै ॥ धृत्यै  
नमोऽस्त्वमितदुर्गतिभंजनायै गत्यै नमोऽस्तु वरसद्गतिदायकायै  
॥ ११ ॥ देव्यै नमोऽस्तु दिवि देवगणार्चितायै भूत्यै नमोऽस्तु  
भुवनातिविनाशनायै ॥ दान्त्यै नमोऽस्तु धरणीधरवल्लभायै पुष्ट्यै  
नमोऽस्तु पुरुषोत्तमवल्लभायै ॥ १२ ॥ सुतीव्रदारिद्र्यविदुःखहन्त्र्यै  
नमोऽस्तु ते सर्वभयापहन्त्र्यै ॥ श्रीविष्णुवक्षःस्थलसंस्थितायै नमो  
नमः सर्वविभूतिदायै ॥ १३ ॥ जयतु जयतु लक्ष्मीर्लक्षणालंकृतांगी  
जयतु जयतु पद्मा पद्मसद्भाभिवंद्या ॥ जयतु जयतु विद्या विष्णु-  
वामांकसंस्था जयतु जयतु सम्यक् सर्वसंपत्करी श्रीः ॥ १४ ॥  
जयतु जयतु देवी देवसंघाभिपूज्या जयतु जयतु भद्रा भार्गवी  
भाग्यरूपा ॥ जयतु जयतु नित्या निर्मलज्ञानवेद्या जयतु जयतु  
सत्या सर्वभूतान्तरस्था ॥ १५ ॥ जयतु जयतु रम्या रत्नगर्भान्तरस्था  
जयतु जयतु शुद्धा शुद्धजांबूनदाभा ॥ जयतु जयतु कांता कांति-

मङ्गासिताङ्गी जयतु जयतु शांता शीघ्रमागच्छ सौम्ये ॥ १६ ॥  
 यस्याः कलायाः कमलोद्भवाद्या रुद्राश्च शक्रप्रमुखाश्च देवाः ॥  
 जीवन्ति सर्वा अपि शक्तयस्ताः प्रभुत्वमाप्ताः परमायुषस्ते ॥ १७ ॥  
 लिलेख निटिले विधिर्मम लिपिं विसृज्यापरं त्वया विलिखितव्य-  
 मेतदिति तत्फलप्राप्तये ॥ तदंतरफले स्फुटं कमलवासिनि श्रीरिमां  
 समर्पय स्वमुद्रिकां सकलभाग्यसंसूचिकाम् ॥ १८ ॥ कलया ते  
 यथा देवि जीवन्ति सचराचराः ॥ तथा संपत्करे लक्ष्मीः सर्वदा  
 संप्रसीद मे ॥ १९ ॥ यथा विष्णुर्ध्रुवे नित्यं स्वकलां संन्यवेशयत् ॥  
 तथैव स्वकलां लक्ष्मि मयि सम्यक् समर्पय ॥ २० ॥ सर्वसौख्य-  
 प्रदे देवि भक्तानामभयप्रदे ॥ अचलां कुरु यत्नेन कलां मयि  
 निवेशिताम् ॥ २१ ॥ मुदास्तां मङ्गाले परमपदलक्ष्मीः स्फुटकला  
 सदा वैकुण्ठश्रीर्निवसतु कला मे नयनयोः ॥ वसेत्सत्ये लोके मम  
 वचसि लक्ष्मीर्वरकला श्रियः श्वेतद्वीपे निवसतु कला मेऽस्तु  
 करयोः ॥ २२ ॥ तावन्नित्यं ममाङ्गेषु क्षीराब्धौ श्रीकला वसेत् ॥  
 सूर्याचन्द्रमसौ यावद्यावल्लक्ष्मीपतिः श्रिया ॥ २३ ॥ सर्वमङ्गल-  
 संपूर्णा सर्वैश्वर्यसमन्विता ॥ आद्यादिश्रीर्महालक्ष्मीस्त्वत्कला मयि  
 तिष्ठतु ॥ २४ ॥ अज्ञानतिमिरं हंतुं शुद्धज्ञानप्रकाशिका ॥ सर्वैश्वर्य-  
 प्रदा मेऽस्तु त्वत्कला मयि संस्थिता ॥ २५ ॥ अलक्ष्मीं हरतु क्षिप्रं  
 तमः सूर्यप्रभा यथा ॥ वितनोतु मम श्रेयस्त्वत्कला मयि संस्थिता  
 ॥ २६ ॥ ऐश्वर्यमङ्गलोत्पत्तिस्त्वत्कलायां निधीयते ॥ मयि तस्मा-  
 त्कृतार्थोऽस्मि पात्रमस्मि स्थितेस्तव ॥ २७ ॥ भवदावेशभाग्यार्हो  
 भाग्यवानस्मि भार्गवि ॥ त्वत्प्रसादात्पवित्रोऽहं लोकमातर्नमोऽस्तु  
 ते ॥ २८ ॥ पुनासि मां त्वं कलयैव यस्मादतः समागच्छ ममा-  
 ग्रतस्त्वम् ॥ परं पदं श्रीर्भव सुप्रसन्ना मय्यच्युतेन प्रविशादि-

लक्ष्मीः ॥ २९ ॥ श्रीवैकुण्ठस्थिते लक्ष्मीः समागच्छ ममाग्रतः ॥  
 नारायणेन सह मां कृपादृष्ट्याऽवलोक्य ॥ ३० ॥ सत्यलोकस्थिते  
 लक्ष्मीस्त्वं ममागच्छ संनिधिम् ॥ वासुदेवेन सहिता प्रसीद वरदा  
 भव ॥ ३१ ॥ श्वेतद्वीपस्थिते लक्ष्मीः शीघ्रमागच्छ सुवते ॥  
 विष्णुना सहिते देवि जगन्मातः प्रसीद मे ॥ ३२ ॥ क्षीरांबुधि-  
 स्थिते लक्ष्मीः समागच्छ समाधवे ॥ त्वत्कृपादृष्टिसुधया सततं मां  
 विलोक्य ॥ ३३ ॥ रत्नगर्भस्थिते लक्ष्मीः परिपूर्णहिरण्मयि ॥  
 समागच्छ समागच्छ स्थित्वाशु पुरतो मम ॥ ३४ ॥ स्थिरा भव  
 महालक्ष्मीर्निश्चला भव निर्मले ॥ प्रसन्ने कमले देवि प्रसन्नहृदया  
 भव ॥ ३५ ॥ श्रीधरे श्रीमहाभूते त्वदंतःस्थं महानिधिम् ॥  
 शीघ्रमुद्धृत्य पुरतः प्रदर्शय समर्पय ॥ ३६ ॥ वसुंधरे श्रीवसुधे  
 वसुदोग्नि कृपां मयि ॥ त्वत्कुक्षिगतसर्वस्वं शीघ्रं मे संप्रदर्शय  
 ॥ ३७ ॥ विष्णुप्रिये रत्नगर्भे समस्तफलदे शिवे ॥ त्वद्गर्भगतहेमा-  
 दीन् संप्रदर्शय दर्शय ॥ ३८ ॥ रसातलगतते लक्ष्मीः शीघ्रमागच्छ  
 मे पुरः ॥ न जाने परमं रूपं मातर्भे संप्रदर्शय ॥ ३९ ॥ आवि-  
 र्भव मनोवेगाच्छीघ्रमागच्छ मे पुरः ॥ मा वत्स भैरिहेत्युक्त्वा  
 कामं गौरिव रक्ष माम् ॥ ४० ॥ देवि शीघ्रं समागच्छ धरणी-  
 गर्भसंस्थिते ॥ मातस्त्वद्भृत्यभृत्योऽहं मृगये त्वां कुतूहलात् ॥ ४१ ॥  
 उत्तिष्ठ जागृहि त्वं मे समुत्तिष्ठ सुजागृहि ॥ अक्षयान्हेमकलशा-  
 न्सुवर्णेन सुपूरितान् ॥ ४२ ॥ निक्षेपान्मे समाकृष्य समुद्धृत्य  
 ममाग्रतः ॥ समुन्नतानना भूत्वा समाधेहि धरांतरात् ॥ ४३ ॥  
 मत्संनिधिं समागच्छ मदाहितकृपारसात् ॥ प्रसीद श्रेयसां दोग्धि  
 लक्ष्मीर्मे नयनाग्रतः ॥ ४४ ॥ अत्रोपविश लक्ष्मीस्त्वं स्थिरा भव  
 हिरण्मयि ॥ सुस्थिरा भव संग्रीत्या प्रसीद वरदा भव ॥ ४५ ॥



आनीय त्वं तथा देवि निधीन्मे संप्रदर्शय ॥ अद्य क्षणेन सहसा  
 दत्त्वा संरक्ष मां सदा ॥ ४६ ॥ मयि तिष्ठ तथा नित्यं यथेन्द्रादिषु  
 तिष्ठसि ॥ अभयं कुरु मे देवि महालक्ष्मीर्नमोऽस्तु ते ॥ ४७ ॥  
 समागच्छ महालक्ष्मीः शुद्धजांबूनदप्रभे ॥ प्रसीद पुरतः स्थित्वा  
 प्रणतं मां विलोकय ॥ ४८ ॥ लक्ष्मीर्भुवं गता भासि यत्र यत्र  
 हिरण्मयि । तत्र तत्र स्थिता त्वं मे तव रूपं प्रदर्शय ॥ ४९ ॥  
 क्रीडसे बहुधा भूमौ परिपूर्णा कृपा मयि । मम मूर्ध्नि स्थिते  
 हस्तमविलम्बितमर्पय ॥ ५० ॥ फलद्भाग्योदये लक्ष्मीः समस्त-  
 पुरवासिनी । प्रसीद मे महालक्ष्मीः परिपूर्णमनोरथे ॥ ५१ ॥  
 अयोध्यादिषु सर्वेषु नगरेषु समाश्रिते । विभवैर्विधैर्युक्ते  
 समागच्छ बलान्विते ॥ ५२ ॥ समागच्छ समागच्छ ममाग्रे  
 भव सुस्थिरा । करुणारसनिष्यन्दनेत्रद्वयविशालिनि ॥ ५३ ॥  
 संविधत्स्व महालक्ष्मीस्त्वं पाणिं मम मस्तके । करुणासुधया मां  
 त्वमभिषिञ्च्य स्थिरं कुरु ॥ ५४ ॥ सर्वराजगृहे लक्ष्मीः समागच्छ  
 बलान्विते । स्थित्वाऽऽशु पुरतो मेऽद्य प्रसादेनाभयं कुरु ॥ ५५ ॥  
 सादरं मस्तके हस्तं मम त्वं कृपयाऽर्पय । सर्वराजगृहे लक्ष्मीस्त्वत्-  
 कला मयि तिष्ठतु ॥ ५६ ॥ आद्यादिश्रीर्महालक्ष्मीर्विष्णुवामाङ्क-  
 संस्थिते । प्रत्यक्षं कुरु मे रूपं रक्ष मां शरणागतम् ॥ ५७ ॥  
 प्रसीद मे महालक्ष्मीः सुप्रसीद महाशिवे । अचला भव  
 संप्रीत्या सुस्थिरा भव मद्गृहे ॥ ५८ ॥ यावत्तिष्ठन्ति वेदाश्च  
 यावत्त्वन्नाम तिष्ठति । यावद्विष्णुश्च यावत्त्वं तावत्कुरु कृपां मयि  
 ॥ ५९ ॥ चान्द्री कला यथा शुक्ले वर्धते सा दिने दिने । तथा  
 दया ते मय्येव वर्धतामभिवर्धताम् ॥ ६० ॥ यथा वैकुण्ठनगरे  
 यथा वै क्षीरसागरे । तथा मद्गवने तिष्ठ स्थिरं श्रीविष्णुना

सह ॥ ६१ ॥ योगिनां हृदये नित्यं यथा तिष्ठसि विष्णुना । तथा  
 मद्भवने तिष्ठ स्थिरं श्रीविष्णुना सह ॥ ६२ ॥ नारायणस्य  
 हृदये भवती यथाऽऽस्ते नारायणोऽपि तव हृत्कमले यथाऽऽस्ते ।  
 नारायणस्त्वमपि नित्यमुभौ तथैव तौ तिष्ठतां हृदि ममापि  
 दयावती श्रीः ॥ ६३ ॥ विज्ञानवृद्धिं हृदये कुरु श्रीः सौभाग्यवृद्धिं  
 कुरु मे गृहे श्रीः । दयासुवृद्धिं कुरुतां मयि श्रीः सुवर्णवृद्धिं  
 कुरु मे गृहे श्रीः ॥ ६४ ॥ न मां त्यजेथाः श्रितकल्पवलि  
 सद्भक्तिचिन्तामणिकामधेनो । विश्वस्य मातर्भव सुप्रसन्ना गृहे  
 कलत्रेषु च पुत्रवर्गे ॥ ६५ ॥ आद्यादिमाये त्वमजाडबीजं त्वमेव  
 साकारनिराकृतिस्त्वम् ॥ त्वया धृताश्राब्जभवांडसंघाश्चित्रं चरित्रं  
 तव देवि विष्णोः ॥ ६६ ॥ ब्रह्मरुद्रादयो देवा वेदाश्चापि न  
 शक्त्युः ॥ महिमानं तव स्तोतुं मंदोऽहं शक्त्यां कथम् ॥ ६७ ॥  
 अंब त्वद्दत्सवाक्यानि सूक्तासूक्तानि यानि च ॥ तानि स्वीकुरु  
 सर्वज्ञे दयालुत्वेन सादरम् ॥ ६८ ॥ भवतीं शरणं गत्वा कृतार्थाः  
 स्युः पुरातनाः ॥ इति संचित्य मनसा त्वामहं शरणं ब्रजे ॥ ६९ ॥  
 अनंता नित्यसुखिनस्त्वद्भक्तास्त्वत्परायणाः ॥ इति वेदप्रमाणाद्धि  
 देवि त्वां शरणं ब्रजे ॥ ७० ॥ तव प्रतिज्ञा मद्भक्ता न नश्यंतीत्यपि  
 क्वचित् ॥ इति संचित्य संचित्य प्राणान्संधारयाम्यहम् ॥ ७१ ॥  
 त्वदधीनस्त्वहं मातस्त्वत्कृपा मयि विद्यते ॥ यावत्संपूर्णकामः स्यां  
 तावद्देहि दयानिधे ॥ ७२ ॥ क्षणमात्रं न शक्नोमि जीवितुं त्वत्कृपां  
 विना ॥ न जीवंतीह जलजा जलं त्यक्त्वा जलग्रहाः ॥ ७३ ॥  
 यथा हि पुत्रवात्सल्याज्जननी प्रसूतस्तनी ॥ वत्सं त्वरितमागत्य  
 संप्रीणयति वत्सला ॥ ७४ ॥ यदि स्यां तव पुत्रोऽहं माता त्वं  
 यदि मामकी ॥ दयापयोधरस्तन्यसुधाभिरभिषिंच माम् ॥ ७५ ॥

मृग्यो न गुणलेशोऽपि मयि दोषैकमंदिरे ॥ पांसूनां वृष्टिर्बिदूनां  
 दोषाणां च न मे मितिः ॥ ७६ ॥ पापिनामहमेवाग्र्यो दयालूनां  
 त्वमग्रणीः ॥ दयनीयो मदन्योऽस्ति तव कोऽत्र जगन्नये ॥ ७७ ॥  
 विधिनाहं न सृष्टश्चेन्न स्यात्तव दयालुता ॥ आमयो वा न सृष्ट-  
 श्चेदौषधस्य वृथोदयः ॥ ७८ ॥ कृपा मदग्रजा किं ते अहं किं वा  
 तदग्रजः ॥ विचार्य देहि मे वित्तं तव देवि दयानिधे ॥ ७९ ॥  
 माता पिता त्वं गुरुः सद्गतिः श्रीस्त्वमेव संजीवनहेतुभूता ॥  
 अन्यन्न मन्ये जगदेकनाथे त्वमेव सर्वं मम देवि सत्ये ॥ ८० ॥  
 आद्यादिलक्ष्मीर्भव सुप्रसन्ना विशुद्धविज्ञानसुखैकदोग्ध्री ॥ अज्ञान-  
 हन्त्री त्रिगुणातिरिक्ता प्रज्ञाननेत्री भव सुप्रसन्ना ॥ ८१ ॥ अशेष-  
 वाग्जाड्यमलापहन्त्री नवं नवं स्पष्टसुवाक्प्रदायिनी ॥ ममेह  
 जिह्वाग्रसुरंगनर्तकी भव प्रसन्ना वदने च मे श्रीः ॥ ८२ ॥ समस्त-  
 संपत्सु विराजमाना समस्ततेजश्चयभासमाना ॥ विष्णुप्रिये त्वं  
 भव दीप्यमाना वाग्देवता मे नयने प्रसन्ना ॥ ८३ ॥ सर्वप्रदर्शे  
 सकलार्थदे त्वं प्रभासुलावण्यदयाप्रदोग्ध्री ॥ सुवर्णदे त्वं सुमुखी  
 भव श्रीर्हिरण्मयी मे नयने प्रसन्ना ॥ ८४ ॥ सर्वार्थदा  
 सर्वजगत्प्रसूतिः सर्वेश्वरी सर्वभयापहन्त्री ॥ गर्वोन्नता त्वं सुमुखी  
 भव श्रीर्हिरण्मयी मे नयने प्रसन्ना ॥ ८५ ॥ समस्तविघ्नौघविनाश-  
 कारिणी समस्तभक्तोद्धरणे विचक्षणा ॥ अनन्तसौभाग्यसुखप्रदा-  
 यिनी हिरण्मयी मे नयने प्रसन्ना ॥ ८६ ॥ देवि प्रसीद दयनीय-  
 त्ताय मह्यं देवाधिनाथभवदेवगणाभिवंद्ये ॥ मातस्तथैव भव  
 संनिहिता दृशोर्मे पत्या समं मम मुखे भव सुप्रसन्ना ॥ ८७ ॥ मा  
 वत्स भैरभयदानकरोऽर्पितस्ते मौलौ ममेति मयि दीनदयानुकंपे ॥  
 मातः समर्पय मुदा करुणाकटाक्षं मांगल्यबीजमिह नः सृज जन्म

मातः ॥ ८८ ॥ कटाक्ष इह कामधुक् तव मनस्तु चिंतामणिः करः  
 सुरतरुः सदा नवनिधिस्त्वमेवेदिरे ॥ भवेत्तव दयारसो मम रसा-  
 यनं चान्वहं मुखं तव कलानिधिर्विधिवान्छितार्थप्रदम् ॥ ८९ ॥  
 यथा रसस्पर्शनतोऽयसोऽपि सुवर्णता स्यात्कमले तथा ते ॥ कटाक्ष-  
 संस्पर्शनतो जनानाममंगलानामपि मंगलत्वम् ॥ ९० ॥ देहीति  
 नास्तीति वचःप्रवेशाद्गीतो रमे त्वां शरणं प्रपद्ये ॥ अतः सदा-  
 स्मिन्नभयप्रदा त्वं सहैव पत्या मयि संनिधेहि ॥ ९१ ॥ कल्प-  
 द्रुमेण मणिना सहिता सुरम्या श्रीस्ते कला मयि रसेन रसायनेन ॥  
 आस्तां यतो मम च दृक्शिरपाणिपादस्पृष्टाः सुवर्णवपुषः स्थिर-  
 जंगमाः स्युः ॥ ९२ ॥ आद्यादिविष्णोः स्थिरधर्मपत्नी त्वमेव पत्या  
 मयि संनिधेहि ॥ आद्यादिलक्ष्मि त्वदनुग्रहेण पदे पदे मे निधि-  
 दर्शनं स्यात् ॥ ९३ ॥ आद्यादिलक्ष्मीहृदयं पठेद्यः स राज्यलक्ष्मी-  
 मचलां तनोति ॥ महादरिद्रोऽपि भवेद्धनाढ्यस्तदन्वये श्रीः स्थिरतां  
 प्रयाति ॥ ९४ ॥ यस्य स्मरणमात्रेण तुष्टा स्याद्विष्णुवल्लभा ॥ तस्या-  
 भीष्टं ददत्याशु तं पालयति पुत्रवत् ॥ ९५ ॥ इदं रहस्यं हृदयं  
 सर्वकामफलप्रदम् ॥ जपः पंचसहस्रं तु पुरश्चरणमुच्यते ॥ ९६ ॥  
 त्रिकालमेककालं वा नरो भक्तिसमन्वितः ॥ यः पठेच्छृणुयाद्वापि स  
 याति परमां श्रियम् ॥ ९७ ॥ महालक्ष्मीं समुद्दिश्य निशि  
 भार्गववासरे ॥ इदं श्रीहृदयं जप्त्वा पञ्चवारं धनी भवेत्  
 ॥ ९८ ॥ अनेन हृदयेनात्रं गर्भिण्या अभिमंत्रितम् ॥ ददाति  
 तत्कुले पुत्रो जायते श्रीपतिः स्वयम् ॥ ९९ ॥ नरेण वाऽथवा  
 नार्या लक्ष्मीहृदयमंत्रिते ॥ जले पीते च तद्वंशे मंदभाग्यो न  
 जायते ॥ १०० ॥ य आश्विने मासि च शुक्लपक्षे रमोत्सवे  
 संनिहितैकभक्त्या ॥ पठेत्तथैकोत्तरवारवृद्ध्या लभेत्स सौवर्णमयीं

सुवृष्टिम् ॥ १०१ ॥ य एकभक्तोऽन्वहमेकवर्षं विशुद्धधीः  
 सप्ततिवारजापी ॥ स मंदभाग्योऽपि रमाकटाक्षाद्भवेत्सहस्राक्ष-  
 शताधिकश्रीः ॥ १०२ ॥ श्रीशांघ्रिभक्तिं हरिदासदास्यं प्रपन्न-  
 मंत्रार्थदृढैकनिष्ठाम् ॥ गुरोः स्मृतिं निर्मलबोधबुद्धिं प्रदेहि मातः  
 परमं पदं श्रीः ॥ १०३ ॥ पृथ्वीपतित्वं पुरुषोत्तमत्वं विभूतिवासं  
 विविधार्थसिद्धिम् ॥ संपूर्णकीर्तिं बहुवर्षभोगं प्रदेहि मे देवि  
 पुनःपुनस्त्वम् ॥ १०४ ॥ वादार्थसिद्धिं बहुलोकवश्यं वयः-  
 स्थिरत्वं ललनासु भोगम् ॥ पौत्रादिलब्धिं सकलार्थसिद्धिं प्रदेहि  
 मे भार्गवि जन्मजन्मनि ॥ १०५ ॥ सुवर्णवृद्धिं कुरु मे गृहे  
 श्रीर्विभूतिवृद्धिं कुरु मे गृहे श्रीः ॥ १०६ ॥ अथ शिरोबीजम् ॥  
 ॐ यंहंकंलंपंश्रीं ॥ ध्यायेलक्ष्मीं प्रहसितमुखीं कोटिबालार्कभासां  
 विद्युद्गर्णांबरवरधरां भूषणाढ्यां सुशोभाम् ॥ बीजापूरं सरसिज-  
 युगं विभ्रतीं स्वर्णपात्रं भर्त्रा युक्तां मुहुरभयदां मह्यमप्यच्युतश्रीः  
 ॥ १०७ ॥ गुह्यातिगुह्यगोप्त्री त्वं गृहाणासत्कृतं जपम् ॥  
 सिद्धिर्भवतु मे देवि त्वत्प्रसादानमयि स्थिता ॥ १०८ ॥ इति  
 श्रीअथर्वणरहस्ये लक्ष्मीहृदयस्तोत्रं संपूर्णम् ॥



## सरस्वतीस्तोत्राणि ।



या कुन्देन्दुतुषारहारधवला या शुभ्रवस्त्रान्विता  
या वीणावरदण्डमण्डितकरा या श्वेतपद्मासना ।  
या ब्रह्माच्युतशंकरप्रभृतिभिर्देवैः सदा वन्दिता  
सा मां पातु सरस्वती भगवती निःशेषजाड्यापहा ॥

## २५६. शारदाभुजङ्गस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ सुवक्षोजकुंभां सुधापूर्णकुंभां प्रसादावलम्बां  
 प्रपुण्यावलम्बाम् । सदास्येन्दुबिम्बां सदानोष्ठबिम्बां भजे शारदा-  
 म्बामजस्रं मदम्बाम् ॥ १ ॥ कटाक्षे दयार्द्रां करे ज्ञानमुद्रां कला-  
 भिर्विनिद्रां कलापैः सुभद्राम् । पुरर्घ्नीं विनिद्रां पुरस्तुङ्गभद्रां भजे  
 शारदाम्बामजस्रं मदम्बाम् ॥ २ ॥ ललामाङ्कफालां लसद्धानलोलां  
 स्वभक्तैकपालां यशःश्रीकपोलाम् । करे त्वक्षमालां कन्यत्नलोलां  
 भजे शारदाम्बामजस्रं मदम्बाम् ॥ ३ ॥ सुसीमन्तवेणीं दृशा निर्जि-  
 तैणीं रमत्कीरवाणीं नमद्ब्रजपाणिम् । सुधामन्थरास्यां मुदा चिन्त्य-  
 वेणीं भजे शारदाम्बामजस्रं मदम्बाम् ॥ ४ ॥ सुशान्तां सुदेहां  
 दृगन्ते कचान्तां लसत्सल्लताङ्गीमनन्तामचिन्त्याम् । स्मरेत्तापसैः  
 संगपूर्वस्थितां तां भजे शारदाम्बामजस्रं मदम्बाम् ॥ ५ ॥ कुरङ्गे  
 तुरङ्गे मृगेन्द्रे खगेन्द्रे मराले मदेभे महोक्षेऽधिरूढाम् । महत्यां  
 नवम्यां सदा सामरूपां भजे शारदाम्बामजस्रं मदम्बाम् ॥ ६ ॥  
 ज्वलत्कान्तिवह्निं जगन्मोहनाङ्गीं भजे मानसाम्भोजसुभ्रान्तभृङ्गीम् ।  
 निजस्तोत्रसंगीतनृत्यप्रभाङ्गीं भजे शारदाम्बामजस्रं मदम्बाम्  
 ॥ ७ ॥ भवाम्भोजनेत्राब्जसंपूज्यमानां लसन्मन्दहासप्रभावक्र-  
 चिह्वाम् । चलच्चञ्चलाचारुताङ्ककर्णां भजे शारदाम्बामजस्रं मदम्बाम्  
 ॥ ८ ॥ इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्यश्रीमच्छंकराचार्यप्रणीतं  
 शारदाभुजङ्गस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

## २५७. सरस्वतीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ बृहस्पतिरुवाच ॥ सरस्वति नमस्यामि चेतनां  
 हृदि संस्थिताम् । कण्ठस्थां पद्मयोनिं त्वां हीङ्कारां सुप्रियां सदा  
 ॥ १ ॥ मतिदां वरदां चैव सर्वकामफलप्रदाम् । केशवस्य प्रियां

देवीं वीणाहस्तां वरप्रदाम् ॥ २ ॥ मन्त्रप्रियां सदा हृद्यां कुमति-  
 ध्वंसकारिणीम् । स्वप्रकाशां निरालम्बामज्ञानतिमिरापहाम् ॥ ३ ॥  
 मोक्षप्रियां शुभां नित्यां सुभगां शोभनप्रियाम् । पद्मोपविष्टां कुण्ड-  
 लिनीं शुक्लवस्त्रां मनोहराम् ॥ ४ ॥ आदित्यमण्डले लीनां प्रणमामि  
 जनप्रियाम् । ज्ञानाकारां जगद्धीपां भक्तविघ्नविनाशिनीम् ॥ ५ ॥  
 इति सत्यं स्तुता देवी वागीशेन महात्मना । आत्मानं दर्शयामास  
 शरदिन्दुसमप्रभाम् ॥ ६ ॥ श्रीसरस्वत्युवाच ॥ वरं वृणीष्व भद्रं त्वं  
 यत्ते मनसि वर्तते । बृहस्पतिरुवाच ॥ प्रसन्ना यदि मे देवि परं  
 ज्ञानं प्रयच्छ मे ॥ ७ ॥ श्रीसरस्वत्युवाच ॥ दत्तं ते निर्मलं ज्ञानं  
 कुमतिध्वंसकारकम् । स्तोत्रेणानेन मां भक्त्या ये स्तुवन्ति सदा  
 नराः ॥ ८ ॥ लभन्ते परमं ज्ञानं मम तुल्यपराक्रमाः । कवित्वं  
 मत्प्रसादेन प्राप्नुवन्ति मनोगतम् ॥ ९ ॥ त्रिसन्ध्यं प्रयतो भूत्वा  
 यस्त्विमं पठते नरः । तस्य कण्ठे सदा वासं करिष्यामि न संशयः  
 ॥ १० ॥ इति श्रीरुद्रयामले श्रीबृहस्पतिविरचितं सरस्वतीस्तोत्रं  
 सम्पूर्णम् ॥

### २५८. शारदाषट्कस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ वेदाभ्यासजडोऽपि यत्करसरोजातग्रहात्पद्मभू-  
 श्चित्रं विश्वमिदं तनोति विविधं वीतक्रियं सक्रियम् । तां तुङ्गा-  
 तटवाससक्तहृदयां श्रीचक्रराजालयां श्रीमच्छंकरदेशिकेन्द्रविनुतां  
 श्रीशारदाम्बां भजे ॥ १ ॥ यः कश्चिद्बुद्धिहीनोऽप्यविदितमन-  
 ध्यानपूजा विधानः कुर्याद्यद्यम्ब सेवां तव पदसरसीजातसेवारतस्य ।  
 चित्रं तस्यास्यमध्यात्प्रसरति कविता वाहिनीवामराणां सालंकारा  
 सुवर्णा सरसपदयुता यत्नलेशं विनैव ॥ २ ॥ सेवापूजानमनविधयः  
 सन्तु दूरे नितान्तं कादाचित्का स्मृतिरपि पदाम्भोजयुग्मस्य



तेऽम्ब । मूकं रङ्गं कलयति सुराचार्यमिन्द्रं च वाचा लक्ष्म्या  
 लोको न चकलयते तां कलेः किं हि दौःस्थ्यम् ॥ ३ ॥ इष्ट्वा  
 त्वत्पादपङ्केरुहनमनविधावुद्यतान्भक्तलोकान्दूरं गच्छन्ति रोगा  
 हरिमिव हरिणा वीक्ष्य तद्वत्सुदूरम् । कालः कुत्रापि लीनो भवति  
 दिनकरे प्रोद्यमाने तमोवत् ससौख्यं चायुर्यथाब्जं विकसति वचसां  
 देवि शृङ्गाद्रिवासे ॥ ४ ॥ त्वत्पादांबुजपूजनासहृदयाम्भोजात-  
 शुद्धिर्जनः स्वर्गं रौरवमेव वेत्ति कमलानाथास्पदं दुःखदम् ।  
 कारागारमवैति चन्द्रनगरं वाग्देवि किं वर्णनैर्दृश्यं सर्वमुदीक्षते स  
 हि पुना रज्जूरगाद्यैः समम् ॥ ५ ॥ त्वत्पादाम्बुरुहं हृदाख्यसरसि  
 स्याद्रूढमूलं यदा वक्त्राब्जे त्वमिवाम्ब पद्मनिलया तिष्ठेद्गृहे  
 निश्चला । कीर्तिर्यास्यति दिक्तटानपि नृपैः संपूजिता स्यात्तदा वादे  
 सर्वनयेष्वपि प्रतिभटान्दूरे करोत्येव हि ॥ ६ ॥ इति श्रीजगद्गुरु-  
 नृसिंहभारतीस्वामिविरचितं शारदाषट्कस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### २५९. सरस्वतीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्वेतपद्मासना देवी श्वेतपुष्पोपशोभिता ।  
 श्वेताम्बरधरा नित्या श्वेतगन्धानुलेपना ॥ १ ॥ श्वेताक्षी शुक्लवस्त्रा  
 च श्वेतचन्दनचर्चिता । वरदा सिद्धगन्धर्वैर्ऋषिभिः स्तूयते सदा  
 ॥ २ ॥ स्तोत्रेणानेन तां देवीं जगद्धात्रीं सरस्वतीम् । ये स्तुवन्ति  
 त्रिकालेषु सर्वविद्या लभन्ति ते ॥ ३ ॥ या देवी स्तूयते नित्यं  
 ब्रह्मेन्द्रसुरकिंनरैः । सा ममैवास्तु जिह्वाग्रे पद्महस्ता सरस्वती ॥ ४ ॥  
 इति श्रीसरस्वतीस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### २६०. शारदास्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ शिशुमिव पदनतलोकं परिरक्षामीति बोधना-  
 यैव । अङ्गे निधाय बालं भातीयं पङ्कजातभवदयिता ॥ १ ॥  
 पुराणवस्त्राणि न धारयामि नवाम्बराण्येव तु धारयामि । इति

प्रबोधाय जनस्य नूनं नवाम्बराण्येव दधाति वाणी ॥ २ ॥  
 एकमेवाम्बरं वाणि विरूपं च वदन्ति हि । नवाम्बराणि धत्से  
 त्वं सुरुपाणि कथं वद ॥ ३ ॥ आकाशवत्सर्वगतश्च नित्य  
 इत्यादिवेदेऽम्ब किलाम्बरस्य । प्रत्नत्वमेकत्वमपि प्रसिद्धं कथं  
 नवत्वं समभूदमुष्मिन् ॥ ४ ॥ हंसैरव परैः सेव्या नाहमन्यैर्जनै-  
 रिति । प्रबोधनकृते मातर्हंसं वाहं करोषि किम् ॥ ५ ॥ हंसे  
 हि शब्दे किमु मुख्यवृत्त्या स्थिताहमेवेति विबोधनाय ।  
 विभासि हंसे जगदम्बिके त्वमित्यस्मदीये हृदये विभाति ॥ ६ ॥  
 हंसो बाह्यान्धकारप्रदलनचतुरो ह्यहि मोक्षप्रदायी पद्मानामेष-  
 मेऽन्तःस्थिततिमिरततेर्वारयिष्याश्च रात्रौ । अप्यामोदप्रदात्र्या  
 नतहृदयसरोजातपंक्तेरधस्ताद्भूतो हीत्येव बोधं रचयितुमिव किं  
 हंसमारोहसीशे ॥ ७ ॥ वृषं पुरस्तात्कुरुषे किमद्य वृषप्रदानाय  
 नमज्जनेभ्यः । द्रुतं पयोजन्मभवप्रमोदपयोधिराकाशशिविम्बपंक्ते  
 ॥ ८ ॥ शार्दूलचर्मं परिवीक्ष्य भवांगसंस्थं भीतः पलाय्य तव  
 सन्निधिमागतः किम् । उक्षाधिपः सरसिजासनधर्मपत्नि ब्रूह्यद्य  
 संशयानिमग्नमतेर्ममाशु ॥ ९ ॥ कर्तुमात्मनि सार्थां किं वृषेन्द्रः पुर  
 एतु नः । इत्यादिकां श्रुतिं वाणि पुरस्तात्कुरुषे वृषम् । ॥ १० ॥  
 वृषभो वृषभो नो चेत्कथं तव पदाम्बुजम् । वाणि सेवितुमर्हः  
 स्यात्तस्माद्वृषभ एव हि ॥ ११ ॥ शशिसूर्यचन्द्रमुख्यानहमेवास्थाय  
 पालयामीदम् । जगदिति विबोधनार्थं वागीश्वरि भासि शिखिनमा-  
 स्थाय ॥ १२ ॥ शंभौ सन्ति शशाङ्कसूर्यशिखिनो नेत्रापदेशात्सदा  
 सागर्भ्यं त इमे निरीक्ष्य गिरिजानाथस्य मातस्त्वयि । वक्त्रारक्तप-  
 टीसुवाहमिषतः सेवां सदा कुर्वते मोदादेव हि तेन चात्र विषयः  
 कश्चिद्गिरां देवते ॥ १३ ॥ शिखिवच्छुद्ध एवेति नाग्नैवाह यतः

शिखी । तस्मात्त्वद्वाहता चास्य युक्तैव विधिवल्लभे ॥ १४ ॥ शिखी  
मुण्डी जटीत्याद्याः सर्वे त्वत्सेवका इति । द्योतनाय शिखी किं वा  
मातस्त्वामेव सेवते ॥ १५ ॥ निशम्य संप्रेषितवान्मयूरमुद्धर्ष  
इत्येव पितृष्वसुः किम् । षडाननो ब्रूहि गिरां सवित्रि नम्रस्य संदेह-  
युजो ममाशु ॥ १६ ॥ के का न पूजयेयुस्त्वां भुवनेऽस्मिन्महो-  
त्सवे वाणि । इति नास्त्रैव हि वक्तुं भाति त्वत्सन्निधौ केकी ॥ १७ ॥  
विनतातनूद्भवत्वं प्रकटं प्रभवेद्विनत्यैव । इति बुद्ध्या खगराद् किं  
विनतस्त्वत्पादपद्मयोर्वाणि ॥ १८ ॥ मानसविहरणशीलां देवीं  
त्यक्त्वाऽन्यदेवतासेवा । नैवोचितेति खगराद् वहति त्वां तादृशीं  
नूनम् ॥ १९ ॥ सुवर्णनीकाशभवत्प्रतीककान्तेः परिष्वङ्गत एव  
सार्धा । सुपर्णतेत्यात्मन आकलय्य खगेट् करोत्यम्ब तवांग्रि-  
सेवाम् ॥ २० ॥ विष्णौ वीक्ष्य जडाधिवासमथ च स्वामित्रशायित्व-  
मप्यण्डोद्भूतपतिर्विहाय तमिमं विज्ञानरूपामयम् । त्वामेवाद्य  
निषेवते खलु मुदा वाग्देवि युक्तं च तत्को वा शत्रुसहासिकां हि सहते  
लोकेषु विद्वज्जनः ॥ २१ ॥ भूताकाशचरेट् त्वमेव भुवने सिद्धं हि  
का तेन मे बुद्धिश्चाभवदित्यवेत्य खगराट् नूनं गिरां देवते । हार्दा-  
काशचराधिपत्यमपि मे भूयादितिच्छावशात्तत्प्राप्त्यै तव पादपङ्कज-  
युगीसेवां करोत्यादरात् ॥ २२ ॥ लोके ह्येकः पक्षः शुक्लश्चान्यश्च  
कृष्ण एवेह । द्वावपि शुक्लौ पक्षौ धत्ते गरुडः किमम्ब तव वाहः  
॥ २३ ॥ हस्तान्तरस्थपरशुं शंभोर्भूषार्थमाहृतान्नागान् । दृष्ट्वा  
भीतो हरिणश्चरणं शरणं जगाम तव वाणि ॥ २४ ॥ समाश्रयेयं यदि  
पुष्करस्थमब्जं तदा स्यात्पतनं हि दर्शं । ममेति मत्वा मृगशावको-  
ऽयं पदाब्जमेवाश्रयते तवाम्ब ॥ २५ ॥ पिवेयुरपि मां सुरां यदि  
वसामि चन्द्रे तदेत्यपायरहितं पदं जिगमिषुश्चिरं संचरन् । अपाय-  
वचनोज्झितं तव पदाब्जयोरन्तरं विलोक्य मृगशावको वसति तत्र

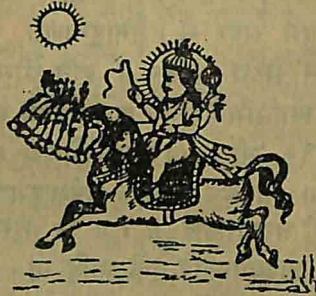
चाग्देवि किम् ॥ २६ ॥ लालयति वाणि किं त्वां पञ्चास्यः स्कन्ध-  
 मारोप्य । युक्तमिदं भ्रातृणां सोदर्याल्लालनं लोके ॥ २७ ॥ नाथ-  
 स्यापि ममानिवेद्य हरिणः सेवां कथं प्रातनोद्वाग्देव्याश्रणाब्जयो-  
 रिति रुषा सारङ्गबालं भृशम् । त्वां शीघ्रप्रपलायनोत्सवपरं सेवां  
 करोत्यादराद्दृश्येशः स्वयमित्यवैमि करुणावारांनिधे शारदे ॥ २८ ॥  
 विष्ण्वर्धत्वात्पालकत्वं ममास्ते संहर्तृत्वं नैजमेवास्ति किंतु । स्रष्टु-  
 र्भावो वाणि नास्तीति मत्वा तत्प्राप्त्यै त्वां सेवते पञ्चवक्त्रः ॥ २९ ॥  
 उन्नम्य पादद्वितयं तुरङ्गो वदन्नितीवास्ति गिरां सवित्रि । विलङ्घय-  
 तां किं सरिदीश्वरोऽयमुत्प्लुत्य गच्छेयमथाम्बरं वा ॥ ३० ॥ पदे  
 पदे दानववश्यता मे भवेच्छचीनाथसमीपवासे । उच्चैःश्रवा इत्य-  
 भिगम्य मातस्तवांग्रिसेवां प्रकरोति किं वा ॥ ३१ ॥ कुरङ्गवेग-  
 स्तव दृष्टपूर्वस्तुरङ्गवेगं परिपश्य वाणि । इतीव गर्वादधिगम्य मात-  
 स्तुरङ्गमस्त्वां परिसेवते किम् ॥ ३२ ॥ विहङ्गं कुरङ्गं तुरङ्गं च वाहं  
 विधायाशुगं श्रान्तिमासाद्य किं त्वम् । गजं मन्दगं वाहमद्यातनो-  
 पि प्रणम्य मे ब्रूहि वाचामधीशे ॥ ३३ ॥ जम्भारौ कौशिकत्वं  
 ह्यथ च तदनुजे वीक्ष्य सम्यग्घरित्वं त्यक्त्वा हीसाध्वसाभ्यामय-  
 मिभकुलराट् तौ शरच्चन्द्रशुभ्रः । इन्द्रोपेन्द्रादिसेव्यामपि सकल-  
 सुराराध्यपादारविन्दां त्वामेवातिप्रमोदात्कमलजदयिते सेवते नून-  
 मेतत् ॥ ३४ ॥ नतेष्टदानाय सदादयार्द्रकराम्बुजा त्वं यत एव  
 वाणि । तस्मादिभोऽप्येष तवाङ्घ्रिसङ्गाहानाम्बुसंसिक्तकरो विभाति  
 ॥ ३५ ॥ मत्पादाब्जप्रणम्रं नरमतितरसा सेवते चेभमुख्या लक्ष्मी-  
 हस्ताग्रराजद्वरकनकमयस्त्रग्धरेत्येव बोधम् । कर्तुं हस्ताग्रराजद्वर-  
 कनकसरं नागराजं प्रधत्से वाणि प्रब्रूहि किं त्वं कमलजहृदया-  
 म्भोजसूर्यप्रभे मे ॥ ३६ ॥ त्यक्ष्यामि नैव रागं कालत्रितयेऽपि  
 नम्रवर्गेषु । इति बोधनाय वाणी रक्तसुमानां त्रयं धत्ते ॥ ३७ ॥

एकः शुक्रः प्रसिद्धोऽस्ति पाराशर्यसुतः किल । शुक्रोऽपरस्तु को  
ब्रूहि शारदे प्रणताय मे ॥ ३८ ॥ पद्मासनस्थे सरसीरुहोत्थ-  
जाये वस त्वं हृदये सदा मे । तेनाहमाशाः सकला जयेयं न  
तत्र संदेहलवोऽस्ति मेऽद्य ॥ ३९ ॥ इति श्रीसच्चिदानन्दशिवा-  
भिनवनृसिंहभारतीस्वामिभिर्विरचितं शारदास्तोत्रं संपूर्णम् ॥

२६१. नीलसरस्वतीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ घोररूपे महारावे सर्वशत्रुभयङ्करि । भक्तेभ्यो  
वरदे देवि त्राहि मां शरणागतम् ॥ १ ॥ ॐ सुरासुरार्चिते देवि  
सिद्धगंधर्वसेविते । जाड्यपापहरे देवि त्राहि मां ॥ २ ॥ जटाजूट-  
समायुक्ते लोलजिह्वान्तकारिणि । द्रुतबुद्धिकरे देवि त्राहि मां ॥  
३ ॥ सौम्यक्रोधधरे रूपे चंडरूपे नमोऽस्तु ते । सृष्टिरूपे नमस्तुभ्यं  
त्राहि मां ॥ ४ ॥ जडानां जडतां हन्ति भक्तानां भक्तवत्सला ।  
मूढतां हर मे देवि त्राहि मां ॥ ५ ॥ हूं हूंकारमये देवि बलि-  
होमप्रिये नमः । उग्रतारे नमो नित्यं त्राहि मां ॥ ६ ॥ बुद्धिं देहि  
यशो देहि कवित्वं देहि देवि मे । मूढत्वं च हरेर्देवि त्राहि मां ॥  
७ ॥ इन्द्रादिविलसद्भ्रुवन्दिते करुणामयि । तारे ताराधि-  
नाथास्ये त्राहि मां ॥ ८ ॥ अष्टम्यां च चतुर्दश्यां नवम्यां यः  
पठेन्नरः । षण्मासैः सिद्धिमाप्नोति नात्र कार्या विचारणा ॥ ९ ॥  
मोक्षार्थी लभते मोक्षं धनार्थी लभते धनम् । विद्यार्थी लभते विद्यां  
तर्कव्याकरणादिकाम् ॥ १० ॥ इदं स्तोत्रं पठेद्यस्तु सततं श्रद्धया-  
न्वितः । तस्य शत्रुः क्षयं याति महाप्रज्ञा प्रजायते ॥ ११ ॥ पीडायां  
वापि संग्रामे जाड्ये दाने तथा भये । य इदं पठति स्तोत्रं शुभं  
तस्य न संशयः । इति प्रणम्य स्तुत्वा च योनिमुद्रां प्रदर्शयेत्  
॥ १२ ॥ इति नीलसरस्वतीस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

## नवग्रहस्तोत्राणि ।



### २६२. आदित्यस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अस्य श्रीआदित्यस्तोत्रस्य आङ्गिरस ऋषिः,  
त्रिष्टुप् छन्दः, सूर्यो देवता, सूर्यप्रोत्यर्थं जपे विनियोगः ।  
नवग्रहाणां सर्वेषां सूर्यादीनां पृथक् पृथक् । पीडा च दुःसहा  
राजन् जायते सततं नृणाम् ॥ १ ॥ पीडानाशाय राजेन्द्र नामानि  
शृणु भास्वतः । सूर्यादीनां च सर्वेषां पीडा नश्यति शृण्वतः  
॥ २ ॥ आदित्यः सविता सूर्यः पूषाऽर्कः शीघ्रगो रविः । भगस्त्व-  
ष्टाऽर्यमा हंसो हेलिस्तेजोनिधिर्हरिः ॥ ३ ॥ दिननाथो दिनकरः  
सप्तसप्तिः प्रभाकरः । विभावसुर्वेदकर्ता वेदाङ्गो वेदवाहनः ॥ ४ ॥  
हरिदश्वः कालवक्त्रः कर्मसाक्षी जगत्पतिः । पद्मिनीबोधको  
भानुर्भास्करः करुणाकरः ॥ ५ ॥ द्वादशात्मा विश्वकर्मा लोहिताङ्ग-  
स्तमोनुदः । जगन्नाथोऽरविन्दाक्षः कालात्मा कश्यपात्मजः  
॥ ६ ॥ भूताश्रयो ग्रहपतिः सर्वलोकनमस्कृतः । जपाकुसुमसंकाशो  
भास्वानदितिनन्दनः ॥ ७ ॥ ध्वान्तेभसिंहः सर्वात्मा लोकनेत्रो

विकर्तनः । मार्तण्डो मिहिरः सूरस्तपनो लोकतापनः ॥ ८ ॥  
जगत्कर्ता जगत्साक्षी शनैश्चरपिता जयः । सहस्ररश्मिस्तराणि-  
र्भगवान् भक्तवत्सलः ॥९॥ विवस्वानादिदेवश्च देवदेवो दिवाकरः ।  
धन्वन्तरिव्याधिहर्ता दद्रुकुष्ठविनाशनः ॥ १० ॥ चराचरात्मा  
मैत्रेयोऽमितो विष्णुर्विकर्तनः । लोकशोकापहर्ता च कमलाकर  
आत्मभूः ॥ ११ ॥ नारायणो महादेवो रुद्रः पुरुष ईश्वरः ।  
जीवात्मा परमात्मा च सूक्ष्मात्मा सर्वतोमुखः ॥ १२ ॥ इन्द्रोऽनलो  
यमश्चैव नैर्ऋतो वरुणोऽनिलः । श्रीद ईशान इन्दुश्च भौमः  
सौम्यो गुरुः कविः ॥ १३ ॥ शौरिर्विधुन्तुदः केतुः कालः काला-  
त्मको विभुः । सर्वदेवमयो देवः कृष्णः कामप्रदायकः ॥ १४ ॥  
य एतैर्नामभिर्मर्त्यो भक्त्या स्तौति दिवाकरम् । सर्वपापविनिर्मुक्तः  
सर्वरोगविवर्जितः ॥ १५ ॥ पुत्रवान् धनवान् श्रीमान् जायते स  
न संशयः । रविवारे पठेद्यस्तु नामान्येतानि भास्वतः ॥ १६ ॥  
पीडाशान्तिर्भवेत्तस्य ग्रहाणां च विशेषतः । सद्यः सुखमवाप्नोति  
चायुर्दीर्घं च नीरुजम् ॥ १७ ॥ इति श्रीभविष्यपुराणे आदित्य-  
स्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### २६३. सूर्यकवचम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीसूर्य उवाच ॥ सांब सांब महाबाहो शृणु  
मे कवचं शुभम् । त्रैलोक्यमंगलं नाम कवचं परमाद्भुतम् ॥ १ ॥  
यज्ज्ञात्वा मंत्रवित्सम्यक् फलं प्राप्नोति निश्चितम् । यद्धृत्वा च  
महादेवो गणानामधिपोऽभवत् ॥ २ ॥ पठनाद्धारणाद्विष्णुः सर्वेषां  
पालकः सदा । एवमिन्द्रादयः सर्वे सर्वैश्वर्यमवामुवन् ॥ ३ ॥  
कवचस्य ऋषिर्ब्रह्मा छंदोऽनुष्टुबुदाहृतः । श्रीसूर्यो देवता चात्र

सर्वदेवनमस्कृतः ॥ ४ ॥ यशारोग्यमोक्षेषु विनियोगः प्रकीर्तितः ।  
 प्रणवो मे शिरः पातु घृणिर्मे पातु भालकम् ॥ ५ ॥ सूर्योऽव्या-  
 न्नयनद्वंद्वमादित्यः कर्णयुग्मकम् । अष्टाक्षरो महामंत्रः सर्वाभीष्ट-  
 फलप्रदः ॥ ६ ॥ ह्रीं बीजं मे मुखं पातु हृदयं भुवनेश्वरी ।  
 चंद्रबिंबं विंशदाद्यं पातु मे गुह्यदेशकम् ॥ ७ ॥ अक्षरोऽसौ  
 महामंत्रः सर्वतंत्रेषु गोपितः । शिवो वह्निसमायुक्तो वामाक्षी-  
 बिंदुभूषितः ॥ ८ ॥ एकाक्षरो महामंत्रः श्रीसूर्यस्य प्रकीर्तितः ।  
 गुह्याद्गुह्यतरो मंत्रो वाञ्छार्चितामणिः स्मृतः ॥ ९ ॥ शीर्षादिपाद-  
 पर्यंतं सदा पातु मनूत्तमः । इति ते कथितं दिव्यं त्रिषु लोकेषु  
 दुर्लभम् ॥ १० ॥ श्रीप्रदं कांतिदं नित्यं धनारोग्यविवर्धनम् ।  
 कुष्ठादिरोगशमनं महाव्याधिविनाशनम् ॥ ११ ॥ त्रिसंध्यं यः  
 पठेन्नित्यमरोगी बलवान् भवेत् । तत्पुनः किमिहोक्तेन यद्यन्मनसि  
 वर्तते ॥ १२ ॥ तत्तत्सर्वं भवेत्तस्य कवचस्य च धारणात् । भूतप्रेत-  
 पिशाचाश्च यक्षगंधर्वराक्षसाः ॥ १३ ॥ ब्रह्मराक्षसवेताला न  
 द्रष्टुमपि ते क्षमाः । दूरादेव पलायंते तस्य संकीर्तनादपि ॥ १४ ॥  
 भूर्जपत्रे समालिख्य रोचनागरुकुंकुमैः । रविवारे च संक्रांत्यां  
 सप्तम्यां च विशेषतः । धारयेत्साधकश्रेष्ठः श्रीसूर्यस्य प्रियो भवेत्  
 ॥ १५ ॥ त्रिलोहमध्यगं कृत्वा धारयेद्दक्षिणे करे । शिखायामथवा  
 कंठे सोऽपि सूर्यो न संशयः ॥ १६ ॥ इति ते कथितं सांब  
 त्रैलोक्यं मंगलाभिधम् । कवचं दुर्लभं लोके तव स्नेहात्प्रकाशितम्  
 ॥ १७ ॥ अज्ञात्वा कवचं दिव्यं यो जपेत्सूर्यमंत्रकम् । सिद्धिर्न  
 जायते तस्य कल्पकोटिशतैरपि ॥ १८ ॥ इति श्रीब्रह्मयामले  
 त्रैलोक्यमंगलं नाम सूर्यकवचं संपूर्णम् ॥



## २६४. चन्द्राष्टाविंशतिनामस्तोत्रम् ।



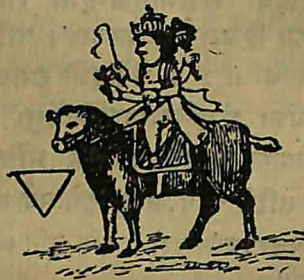
श्रीगणेशाय नमः ॥ अस्य श्रीचन्द्राष्टाविंशतिनामस्तोत्रस्य गौतम ऋषिः, सोमो देवता, विराट् छन्दः, चन्द्रप्रीत्यर्थे जपे विनियोगः ॥ चन्द्रस्य शृणु नामानि शुभदानि महीपते । यानि श्रुत्वा नरो दुःखान्मुच्यते नात्र संशयः ॥ १ ॥ सुधाकरश्च सोमश्च ग्लौरब्जः कुमुदप्रियः । लोकप्रियः शुभ्रभानुश्चन्द्रमा रोहिणीपतिः ॥ २ ॥ शशी हिमकरो राजा द्विजराजो निशाकरः । आत्रेय इन्दुः शीतांशुरोषधीशः कलानिधिः ॥ ३ ॥ जैवातृको रमाभ्राता क्षीरोदार्यवसंभवः । नक्षत्रनायकः शंभुशिरश्चूडामणिर्विभुः ॥ ४ ॥ तापहर्ता नभोदीपो नामान्येतानि यः पठेत् । प्रत्यहं भक्तिसंयुक्तस्तस्य पीडा विनश्यति ॥ ५ ॥ तद्दिने च पठेद्यस्तु लभेत्सर्वं समीहितम् । ग्रहादीनां च सर्वेषां भवेच्चन्द्रबलं सदा ॥ ६ ॥ इति श्रीचन्द्राष्टाविंशतिनामस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

## २६५. चंद्रकवचम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अस्य श्रीचंद्रकवचस्तोत्रमंत्रस्य गौतम ऋषिः । अनुष्टुप् छन्दः, श्रीचन्द्रो देवता, चंद्रप्रीत्यर्थं जपे विनियोगः ॥

समं चतुर्भुजं वन्दे केयूरमुकुटोज्ज्वलम् । वासुदेवस्य नयनं शंकरस्य  
 च भूषणम् ॥ १ ॥ एवं ध्यात्वा जपेन्नित्यं शशिनः कवचं शुभम् ।  
 शशी पातु शिरोदेशं भालं पातु कलानिधिः ॥ २ ॥ चक्षुषी  
 चंद्रमाः पातु श्रुती पातु निशापतिः । प्राणं क्षपाकरः पातु मुखं  
 कुमुदबांधवः ॥३॥ पातु कण्ठं च मे सोमः स्कंधौ जैवातृकस्तथा ।  
 करौ सुधाकरः पातु वक्षः पातु निशाकरः ॥ ४ ॥ हृदयं पातु मे  
 चंद्रो नाभिं शंकरभूषणः । मध्यं पातु सुरश्रेष्ठः कटिं पातु सुधाकरः  
 ॥ ५ ॥ ऊरू तारापतिः पातु मृगांको जानुनी सदा । अब्धिजः  
 पातु मे जंघे पातु पादौ विधुः सदा ॥ ६ ॥ सर्वाण्यन्यानि  
 चांगानि पातु चंद्रोऽखिलं वपुः । एतद्धि कवचं दिव्यं भुक्तिमुक्ति-  
 प्रदायकम् । यः पठेच्छृणुयाद्वापि सर्वत्र विजयी भवेत् ॥ ७ ॥  
 इति श्रीचंद्रकवचं संपूर्णम् ॥

२६६. अङ्गारकस्तोत्रम् ।



श्रीगणेशाय नमः ॥ अस्य श्रीअङ्गारकस्तोत्रस्य विरूपाङ्गिरस ऋषिः,  
 अग्निर्देवता, गायत्री छन्दः, भौमप्रीत्यर्थं जपे विनियोगः । अङ्गार-  
 कः शक्तिधरो लोहिताङ्गो धरासुतः । कुमारो मङ्गलो भौमो महा-  
 MPL Sastry Library Free Digitisation indoscripts.org (ISRT)

कायो धनप्रदः ॥ १ ॥ ऋणहर्ता दृष्टिकर्ता रोगकृद्भोगनाशनः ।  
 विद्युत्प्रभो व्रणकरः कामदो धनहृत् कुजः ॥ २ ॥ सामगानप्रियो  
 रक्तवस्त्रो रक्तायतेक्षणः । लोहितो रक्तवर्णश्च सर्वकर्मावबोधकः  
 ॥ ३ ॥ रक्तमाल्यधरो हेमकुण्डली ग्रहनायकः । नामान्येतानि  
 भौमस्य यः पठेत्सततं नरः ॥ ४ ॥ ऋणं तस्य च दौर्भाग्यं दारिद्र्यं  
 च विनश्यति । धनं प्राप्नोति विपुलं स्त्रियं चैव मनोरमाम् ॥ ५ ॥  
 वंशोद्ध्योतकरं पुत्रं लभते नात्र संशयः । योऽर्चयेदहि भौमस्य  
 मङ्गलं बहुपुष्पकैः ॥ ६ ॥ सर्वा नश्यति पीडा च तस्य ग्रहकृता  
 ध्रुवम् ॥ ७ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे अङ्गारकस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### २६७. ऋणमोचकमङ्गलस्तोत्रम् ।

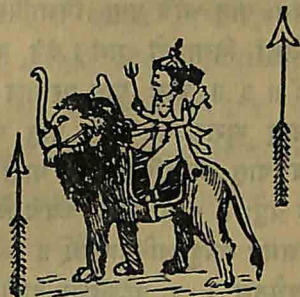
श्रीगणेशाय नमः ॥ मङ्गलो भूमिपुत्रश्च ऋणहर्ता धनप्रदः । स्थिरा-  
 सनो महाकायः सर्वकर्मावरोधकः ॥ १ ॥ लोहितो लोहिताक्षश्च  
 सामगानां कृपाकरः । धरात्मजः कुजो भौमो भूतिदो भूमिनन्दनः  
 ॥ २ ॥ अङ्गारको यमश्चैव सर्वरोगापहारकः । वृष्टेः कर्ताऽपहर्ता च  
 सर्वकामफलप्रदः ॥ ३ ॥ एतानि कुजनामानि नित्यं यः श्रद्धया  
 पठेत् । ऋणं न जायते तस्य धनं शीघ्रमवामुयात् ॥ ४ ॥ धरणी-  
 गर्भसंभूतं विद्युत्कान्तिसमप्रभम् । कुमारं शक्तिहस्तं तं मङ्गलं  
 प्रणमाम्यहम् ॥ ५ ॥ स्तोत्रमङ्गारकस्यैतत् पठनीयं सदा नृभिः ।  
 न तेषां भौमजा पीडा स्वल्पापि भवति क्वचित् ॥ ६ ॥ अङ्गारक  
 महाभाग भगवन् भक्तवत्सल । त्वां नमामि ममाशेषमृणमाशु  
 विनाशय ॥ ७ ॥ ऋणरोगादिदारिद्र्यं ये चान्ये ह्यपमृत्यवः ।  
 भयक्लेशमनस्तापा नश्यंतु मम सर्वदा ॥ ८ ॥ अतिवक्र दुराराध्य  
 भोगमुक्तजितात्मनः । तुष्टो ददासि साम्राज्यं रुष्टो हरसि

तत्क्षणात् ॥ ९ ॥ विरिञ्चिशक्रविष्णूनां मनुष्याणां तु का कथा ।  
 तेन त्वं सर्वसत्त्वेन ग्रहराजो महाबलः ॥ १० ॥ पुत्रान् देहि धनं  
 देहि त्वामस्मि शरणं गतः । ऋणदारिद्र्यदुःखेन शत्रूणां च  
 भयात्ततः ॥ ११ ॥ एभिर्द्वादशभिः श्लोकैर्यः स्तौति च धरा-  
 सुतम् । महतीं श्रियमाप्नोति ह्यपरो धनदो युवा ॥ १२ ॥ इति  
 श्रीस्कन्दपुराणे भार्गवप्रोक्तं ऋणमोचकमङ्गलस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### २६८. मंगलकवचम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अस्य श्रीअंगारककवचस्तोत्रमंत्रस्य कश्यप  
 ऋषिः, अनुष्टुप् छंदः, अंगारको देवता, भौमप्रीत्यर्थं जपे  
 विनियोगः ॥ रक्तांबरो रक्तवपुः किरीटी चतुर्भुजो मेषगमो  
 गदाभृत् । धरासुतः शक्तिधरश्च शूली सदा मम स्याद्हरदः-  
 प्रशांतः ॥ १ ॥ अंगारकः शिरो रक्षेन्मुखं वै धरणीसुतः । श्रवौ  
 रक्तांबरः पातु नेत्रे मे रक्तलोचनः ॥ २ ॥ नासां शक्तिधरः पातु  
 मुखं मे रक्तलोचनः । भुजौ मे रक्तमाली च हस्तौ शक्तिधरस्तथा  
 ॥ ३ ॥ वक्षः पातु वरांगश्च हृदयं पातु रोहितः । कटिं मे  
 ग्रहराजश्च मुखं चैव धरासुतः ॥ ४ ॥ जानुजंघे कुजः पातु पादौ  
 भक्तप्रियः सदा । सर्वाण्यन्यानि चांगानि रक्षेन्मे मेषवाहनः  
 ॥ ५ ॥ य इदं कवचं दिव्यं सर्वशत्रुनिवारणम् । भूतप्रेतपिशाचानां  
 नाशनं सर्वसिद्धिदम् ॥ ६ ॥ सर्वरोगहरं चैव सर्वसंपत्प्रदं शुभम् ।  
 भुक्तिमुक्तिप्रदं नृणां सर्वसौभाग्यवर्धनम् । रोगबंधविमोक्षं च  
 सत्यमेतन्न संशयः ॥ ७ ॥ इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे अंगारककवचं  
 संपूर्णम् ॥

## २६९. बुधपञ्चविंशतिनामस्तोत्रम् ।



श्रीगणेशाय नमः ॥ अस्य श्रीबुधपञ्चविंशतिनामस्तोत्रस्य प्रजा-  
पतिर्ऋषिः, त्रिष्टुप् छन्दः, बुधो देवता, बुधप्रीत्यर्थं जपे विनि-  
योगः ॥ बुधो बुद्धिमतां श्रेष्ठो बुद्धिदाता धनप्रदः । प्रियङ्गुकलिका-  
श्यामः कञ्जनेत्रो मनोहरः ॥ १ ॥ ग्रहोपमो रौहिणेयो नक्षत्रेशो  
दयाकरः । विरुद्धकार्यहन्ता च सौम्यो बुद्धिविवर्धनः ॥ २ ॥  
चन्द्रात्मजो विष्णुरूपी ज्ञानी ज्ञो ज्ञानिनायकः । ग्रहपीडाहरो  
दारपुत्रधान्यपशुप्रदः ॥ ३ ॥ लोकप्रियः सौम्यमूर्तिर्गुणदो गुणि-  
वत्सलः । पञ्चविंशतिनामानि बुधस्यैतानि यः पठेत् ॥ ४ ॥ स्मृत्वा  
बुधं सदा तस्य पीडा सर्वा विनश्यति । तद्दिने वा पठेद्यस्तु लभते  
स मनोगतम् ॥ ५ ॥ इति श्रीपद्मपुराणे बुधपञ्चविंशतिनामस्तोत्रं  
संपूर्णम् ॥

## २७०. बुधकवचम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अस्य श्रीबुधकवचस्तोत्रमंत्रस्य कश्यप ऋषिः,  
अनुष्टुप् छन्दः, बुधो देवता, बुधप्रीत्यर्थं जपे विनियोगः ॥  
बुधस्तु पुस्तकधरः कुंकुमस्य समद्युतिः । पीतांबरधरः पातु पीत-

माल्यानुलेपनः ॥ १ ॥ कटिं च पातु मे सौम्यः शिरोदेशं बुध-  
स्तथा । नेत्रे ज्ञानमयः पातु श्रोत्रे पातु निशाप्रियः ॥ २ ॥ घ्राणं  
गंधप्रियः पातु जिह्वां विद्याप्रदो मम । कंठं पातु विधोः पुत्रो  
भुजौ पुस्तकभूषणः ॥ ३ ॥ वक्षः पातु वरांगश्च हृदयं रोहिणी-  
सुतः । नाभिं पातु सुराराध्यो मध्यं पातु खगेश्वरः ॥ ४ ॥  
जानुनी रौहिणेयश्च पातु जंघेऽखिलप्रदः । पादौ मे बोधनः पातु  
पातु सौम्योऽखिलं वपुः ॥ ५ ॥ एतद्धि कवचं दिव्यं सर्वपापप्रणा-  
शनम् । सर्वरोगप्रशमनं सर्वदुःखनिवारणम् ॥ ६ ॥ आयुरारोग्य-  
शुभदं पुत्रपौत्रप्रवर्धनम् । यः पठेच्छृणुयाद्वापि सर्वत्र विजयी  
भवेत् ॥ ७ ॥ इति श्रीब्रह्मवैवर्तकपुराणे बुधकवचं संपूर्णम् ॥

### २७१. बृहस्पतिस्तोत्रम् ।



श्रीगणेशाय नमः ॥ अस्य श्रीबृहस्पतिस्तोत्रस्य गृत्समद ऋषिः.  
अनुष्टुप् छन्दः, बृहस्पतिर्देवता, बृहस्पतिप्रीत्यर्थं जपे विनियोगः ॥  
गुरुर्बृहस्पतिर्जीवः सुराचार्यो विदांवरः । वागीशो धिषणो दीर्घ-  
श्मश्रुः पीताम्बरो युवा ॥ १ ॥ सुधादृष्टिर्ग्रहाधीशो ग्रहपीडा-  
पहारकः । दयाकरः सौम्यमूर्तिः सुरार्च्यः कुङ्कालद्युतिः ॥ २ ॥

लोकपूज्यो लोकगुरुर्नीतिज्ञो नीतिकारकः । तारापतिश्चाङ्गिरसो  
वेदवैद्यपितामहः ॥ ३ ॥ भक्त्या बृहस्पतिं स्मृत्वा नामान्येतानि  
यः पठेत् । अरोगी बलवान् श्रीमान् पुत्रवान् स भवेन्नरः ॥ ४ ॥  
जीवेद्द्वर्षशतं मर्त्यो पापं नश्यति नश्यति । यः पूजयेद्गुरुदिने पीत-  
गन्धाक्षताम्बरैः ॥ ५ ॥ पुष्पदीपोपहारैश्च पूजयित्वा बृहस्पतिम् ।  
ब्राह्मणान्भोजयित्वा च पीडाशान्तिर्भवेद्गुरोः ॥ ६ ॥ इति श्रीस्कन्द-  
पुराणे बृहस्पतिस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### २७२. बृहस्पतिकवचम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अस्य श्रीबृहस्पतिकवचस्तोत्रमंत्रस्य ईश्वर  
ऋषिः, अनुष्टुप् छंदः, गुरुर्देवता, गं बीजं, श्रीशक्तिः, क्लीं  
कीलकं, गुरुप्रीत्यर्थं जपे विनियोगः ॥ अभीष्टफलदं देवं सर्वज्ञं  
सुरपूजितम् । अक्षमालाधरं शांतं प्रणमामि बृहस्पतिम् ॥ १ ॥  
बृहस्पतिः शिरः पातु ललाटं पातु मे गुरुः । कर्णौ सुरगुरुः पातु  
नेत्रे मेऽभीष्टदायकः ॥ २ ॥ जिह्वां पातु सुराचार्यो नासां मे  
वेदपारगः । मुखं मे पातु सर्वज्ञो कंठं मे देवतागुरुः ॥ ३ ॥  
भुजावांगिरसः पातु करौ पातु शुभप्रदः । स्तनौ मे पातु वागीशः  
कुक्षिं मे शुभलक्षणः ॥ ४ ॥ नाभिं देवगुरुः पातु मध्यं पातु  
सुखप्रदः । कटिं पातु जगद्गद्य ऊरू मे पातु वाक्पतिः ॥ ५ ॥  
जानुजंघे सुराचार्यो पादौ विश्वात्मकस्तथा । अन्यानि यानि  
चांगानि रक्षेन्मे सर्वतो गुरुः ॥ ६ ॥ इत्येतत्कवचं दिव्यं त्रिसंध्यं  
यः पठेन्नरः । सर्वान्कामानवाप्नोति सर्वत्र विजयी भवेत् ॥ ७ ॥  
इति श्रीब्रह्मयामलोक्तं बृहस्पतिकवचं संपूर्णम् ॥

## २७३. शुकस्तवराजः ।



श्रीगणेशाय नमः ॥ अस्य श्रीशुकस्तवराजस्य प्रजापतिर्ऋषिः,  
 अनुष्टुप् छन्दः, शुको देवता, शुकप्रीत्यर्थं जपे विनियोगः ॥  
 नमस्ते भार्गवश्रेष्ठ दैत्यदानवपूजित । वृष्टिरोधप्रकर्त्रे च वृष्टिकर्त्रे  
 नमो नमः ॥ १ ॥ देवयानिपितस्तुभ्यं वेदवेदांगपारग । परेण  
 तपसा शुद्धः शंकरो लोकसुन्दरः ॥ २ ॥ प्राप्तो विद्यां जीवनाख्यां  
 तस्मै शुक्रात्मने नमः । नमस्तस्मै भगवते भृगुपुत्राय वेधसे ॥ ३ ॥  
 तारामंडलमध्यस्थ स्वभासाभासितांबर । यस्योदये जगत्सर्वं  
 मंगलार्हं भवेदिह ॥ ४ ॥ अस्तं याते ह्यरिष्टं स्यात्तस्मै मंगल-  
 रूपिणे । त्रिपुरावासिनो दैत्यान् शिवबाणप्रपीडितान् ॥ ५ ॥  
 विद्ययाऽजीवयच्छुक्रो नमस्ते भृगुनन्दन । ययातिगुरवे तुभ्यं नमस्ते  
 कविनन्दन ॥ ६ ॥ बलिराज्यप्रदो जीवस्तस्मै जीवात्मने नमः ।  
 भार्गवाय नमस्तुभ्यं पूर्वगीर्वाणवंदित ॥ ७ ॥ जीवपुत्राय यो  
 विद्यां प्रादात्तस्मै नमो नमः । नमः शुक्राय काव्याय भृगुपुत्राय  
 धीमहि ॥ ८ ॥ नमः कारणरूपाय नमस्ते कारणात्मने । स्तवराज-



मिमं पुण्यं भार्गवस्य महात्मनः ॥ ९ ॥ यः पठेच्छृणुयाद्वापि  
 लभते वाञ्छितं फलम् । पुत्रकामो लभेत्पुत्रान् श्रीकामो लभते  
 श्रियम् ॥ १० ॥ राज्यकामो लभेद्राज्यं स्त्रीकामः स्त्रियमुत्तमाम् ।  
 भृगुवारे प्रयत्नेन पठितव्यं समाहितैः ॥ ११ ॥ अन्यवारे तु होरा-  
 यां पूजयेद्भृगुनन्दनम् । रोगार्तो मुच्यते रोगान्धयार्तो मुच्यते  
 भयात् ॥ १२ ॥ यद्यत्प्रार्थयते जन्तुस्तत्प्राप्नोति सर्वदा ।  
 प्रातःकाले प्रकर्तव्या भृगुपूजा प्रयत्नतः । सर्वपापविनिर्मुक्तः प्राप्नु-  
 याच्छिवसन्निधिम् ॥ १३ ॥ इति श्रीब्रह्मयामले शुक्रस्तवराजः  
 संपूर्णः ॥

### २७४. शुक्रकवचम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ मृणालकुन्देन्दुपयोजसुप्रभं पीतांबरं प्रसूत-  
 मक्षमालिनम् ॥ समस्तशास्त्रार्थनिधिं महान्तं ध्यायेत्कविं वाञ्छित-  
 मर्थसिद्धये ॥ १ ॥ ॐ शिरो मे भार्गवः पातु भालं पातु ग्रहाधिपः ।  
 नेत्रे दैत्यगुरुः पातु श्रोत्रे मे चन्दनद्युतिः ॥ २ ॥ पातु मे नासिकां  
 काव्यो वदनं दैत्यवन्दितः । वचनं चोशनाः पातु कंठं श्रीकंठ-  
 भक्तिमान् ॥ ३ ॥ भुजौ तेजोनिधिः पातु कुक्षिं पातु मनोव्रजः ।  
 नाभिं भृगुसुतः पातु मध्यं पातु महीप्रियः ॥ ४ ॥ कटिं मे पातु  
 विश्वात्मा ऊरु मे सुरपूजितः । जानुं जाड्यहरः पातु जंघे ज्ञान-  
 वतां वरः ॥ ५ ॥ गुल्फौ गुणनिधिः पातु पातु पादौ वरांबरः ।  
 सर्वाण्यंगानि मे पातु स्वर्णमालापरिष्कृतः ॥ ६ ॥ य इदं कवचं  
 दिव्यं पठति श्रद्धयान्वितः । न तस्य जायते पीडा भार्गवस्य प्रसा-  
 दतः ॥ ७ ॥ इति श्रीब्रह्मांडपुराणे शुक्रकवचं संपूर्णम् ॥

## २७५. शनैश्वरस्तवराजः ।



श्रीगणेशाय नमः ॥ नारद उवाच ॥ ध्यात्वा गणपतिं राजा धर्मराजो  
युधिष्ठिरः । धीरः शनैश्वरस्येमं चकार स्तवमुत्तमम् ॥ १ ॥ शिरो मे  
भास्करः पातु भालं छायासुतोऽवतु । कोटराक्षो दृशौ पातु शिखि-  
कण्ठनिभः श्रुती ॥ २ ॥ घ्राणं मे भीषणः पातु मुखं बलिमुखोऽवतु ।  
स्कन्धौ संवर्तकः पातु भुजौ मे भयदोऽवतु ॥ ३ ॥ सौरिर्मे हृदयं  
पातु नाभिं शनैश्वरोऽवतु । ग्रहराजः कटिं पातु सर्वतो रविनन्दनः  
॥ ४ ॥ पादौ मन्दगतिः पातु कृष्णः पात्वखिलं वपुः । रक्षामेतां  
पठेन्नित्यं सौरिर्नामबलैर्युताम् ॥ ५ ॥ सुखी पुत्री चिरायुश्च स  
भवेन्नात्र संशयः । सौरिः शनैश्वरः कृष्णो नीलोत्पलनिभः शनिः  
॥ ६ ॥ शुष्कोदरो विशालाक्षो दुर्निरीक्ष्यो विभीषणः । शिखि-  
कण्ठनिभो नीलश्छायाहृदयनन्दनः ॥ ७ ॥ कालदृष्टिः कोटराक्षः  
स्थूलरोमावलीमुखः । दीर्घो निर्मासगात्रस्तु शुष्को घोरो भयानकः  
॥ ८ ॥ नीलांशुः क्रोधनो रौद्रो दीर्घश्मश्रुर्जटाधरः । मन्दो मन्द-  
गतिः खंजो तृप्तः संवर्तको यमः ॥ ९ ॥ ग्रहराजः कराली च सूर्य-  
पुत्रो रविः शशी । कुजो बुधो गुरुः काव्यो भानुजः सिंहिकासुतः  
॥ १० ॥ केतुर्देवपतिर्बाहुः कृतान्तो नैर्ऋतस्तथा । शशी मरुत्

कुबेरश्च ईशानः सुर आत्मभूः ॥ ११ ॥ विष्णुर्हरो गणपतिः  
 कुमारः काम ईश्वरः । कर्ता हर्ता पालयिता राज्येशो राज्यदायकः  
 ॥ १२ ॥ छायासुतः श्यामलाङ्गो धनहर्ता धनप्रदः । क्रूरकर्म-  
 विधाता च सर्वकर्मावरोधकः ॥ १३ ॥ तुष्टो रुष्टः कामरूपः  
 कामदो रविनन्दनः । ग्रहपीडाहरः शान्तो नक्षत्रेशो ग्रहेश्वरः  
 ॥ १४ ॥ स्थिरासनः स्थिरगतिर्महाकायो महाबलः । महाप्रभो  
 महाकालः कालात्मा कालकालकः ॥ १५ ॥ आदित्यभयदाता च  
 मृत्युरादित्यनन्दनः । शतभिरुक्षदयिता त्रयोदशीतिथिप्रियः  
 ॥ १६ ॥ तिथ्यात्मकस्तिथिगणो नक्षत्रगणनायकः । योगराशिर्मुहूर्-  
 तात्मा कर्ता दिनपतिः प्रभुः ॥ १७ ॥ शमीपुष्पप्रियः श्यामस्रैलो-  
 क्याभयदायकः । नीलवासाः क्रियासिन्धुर्नीलाङ्गनचयच्छविः  
 ॥ १८ ॥ सर्वरोगहरो देवः सिद्धो देवगणस्तुतः । अष्टोत्तरशतं  
 नाम्नां सौरैश्छायासुतस्य यः ॥ १९ ॥ पठेन्नित्यं तस्य पीडा समस्ता  
 नश्यति ध्रुवम् । कृत्वा पूजां पठेन्मर्त्यो भक्तिमान् यः स्तवं सदा  
 ॥ २० ॥ विशेषतः शनिदिने पीडा तस्य विनश्यति । जन्मलभ्ने  
 स्थितिर्वापि गोचरे क्रूराशिगे ॥ २१ ॥ दशासु च गते सौरौ तदा  
 स्तवमिमं पठेत् । पूजयेद्यः शनिं भक्त्या शमीपुष्पाक्षताम्बरैः  
 ॥ २२ ॥ विधाय लोहप्रतिमां नरो दुःखाद्विमुच्यते । बाधा यांऽ-  
 न्यग्रहाणां च यः पठेत्तस्य नश्यति ॥ २३ ॥ भीतो भयाद्विमुच्येत  
 बद्धो मुच्येत बन्धनात् । रोगी रोगाद्विमुच्येत नरः स्तवमिमं  
 पठेत् । पुत्रवान् धनवान् श्रीमान् जायते नात्र संशयः ॥ २४ ॥  
 नारद उवाच ॥ स्तवं निशम्य पार्थस्य प्रत्यक्षोऽभूत् शनैश्वरः ।  
 दत्त्वा राज्ञे वरः कामं शनिश्चान्तर्दधे तदा ॥ २५ ॥ इति  
 श्रीभविष्यपुराणे शनैश्वरस्तवराजः संपूर्णम् ॥

## २७६. शनैश्चरस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ दशरथ उवाच ॥ कोणोऽन्तको रौद्रयमोऽथ  
 बभ्रुः कृष्णः शनिः पिंगल मन्दसौरिः । नित्यं स्मृतो यो  
 हरते च पीडां तस्मै नमः श्रीरविनन्दनाय ॥ १ ॥ सुरासुराः  
 किंपुरुषोरगेन्द्रा गन्धर्वविद्याधरपन्नगाश्च । पीड्यन्ति सर्वे  
 विषमस्थितेन तस्मै० ॥ २ ॥ नरा नरेन्द्राः पशवो मृगेन्द्रा  
 वन्याश्च ये कीटपतंगभृगाः । पीड्यन्ति सर्वे विषमस्थितेन  
 तस्मै० ॥ ३ ॥ देशाश्च दुर्गाणि वनानि यत्र सेनानिवेशाः  
 पुरपत्तनानि । पीड्यन्ति सर्वे विषमस्थितेन तस्मै० ॥ ४ ॥  
 तिलैर्यवैर्माषगुडाद्दानैर्लोहेन नीलाम्बरदानतो वा । प्रीणाति  
 मन्त्रैर्निजवासरे च तस्मै० ॥ ५ ॥ प्रयागकूले यमुनातटे च  
 सरस्वतीपुण्यजले गुहायाम् । यो योगिनां ध्यानगतोऽपि सूक्ष्म-  
 स्तस्मै० ॥ ६ ॥ अन्यप्रदेशास्त्वगृहं प्रविष्टस्तदीयवारे स नरः सुखी  
 स्यात् । गृहाद्गतो यो न पुनः प्रयाति तस्मै० ॥ ७ ॥ स्रष्टा स्वयंभू-  
 र्भुवनत्रयस्य त्राता हरीशो हरते पिनाकी । एकस्त्रिधा ऋग्यजुःसाम-  
 मूर्तिस्तस्मै० ॥ ८ ॥ शन्यष्टकं यः प्रयतः प्रभाते नित्यं सुपुत्रैः  
 पशुबान्धवैश्च । पठेत्तु सौख्यं भुवि भोगयुक्तः प्राप्नोति निर्वाणपदं  
 तदन्ते ॥ ९ ॥ कोणस्थः पिङ्गलो बभ्रुः कृष्णो रौद्रोऽन्तको यमः ।  
 सौरिः शनैश्चरो मन्दः पिप्पलादेन संस्तुतः ॥ १० ॥ एतानि दश  
 नामानि प्रातरुत्थाय यः पठेत् । शनैश्चरकृता पीडा न कदाचिद्भवि-  
 ष्यति ॥ ११ ॥ इति ब्रह्माण्डपुराणे श्रीशनैश्चरस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

## २७७. शनिकवचम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ नीलांबरो नीलवपुः किरीटी गृध्रस्थितस्त्रा-  
 सकरो धनुष्मान् । चतुर्भुजः सूर्यसुतः प्रसन्नः सदा मम स्याद्हरदः

प्रशान्तः ॥ १ ॥ ब्रह्मा उवाच ॥ शृणुध्वमृषयः सर्वे शनिपीडाहरं  
महत् । कवचं शनिराजस्य सौरैरिदमनुत्तमम् ॥ २ ॥ कवचं देव-  
तावासं वज्रपंजरसंज्ञकम् । शनैश्चरप्रीतिकरं सर्वसौभाग्यदायकम् ।  
॥ ३ ॥ ॐ श्रीशनैश्चरः पातु भालं मे सूर्यनंदनः । नेत्रे छायात्मजः  
पातु पातु कर्णौ यमानुजः ॥ ४ ॥ नासां वैवस्वतः पातु मुखं मे  
भास्करः सदा । स्निग्धकंठश्च मे कंठं भुजौ पातु महाभुजः ॥ ५ ॥  
स्कंधौ पातु शनिश्चैव करौ पातु शुभप्रदः । वक्षः पातु यमभ्राता  
कुक्षिं पात्वसितस्तथा ॥ ६ ॥ नाभिं ग्रहपतिः पातु मंदः पातु  
कटिं तथा । ऊरू ममांतकः पातु यमो जानुयुगं तथा ॥ ७ ॥  
पादौ मंदगतिः पातु सर्वांगं पातु पिप्पलः । अङ्गोपाङ्गानि सर्वाणि  
रक्षेन्मे सूर्यनंदनः ॥ ८ ॥ इत्येतत्कवचं दिव्यं पठेत्सूर्यसुतस्य यः ।  
न तस्य जायते पीडा प्रीतो भवति सूर्यजः ॥ ९ ॥ व्ययजन्म-  
द्वितीयस्थो मृत्युस्थानगतोऽपि वा । कलत्रस्थो गतो वापि सुप्रीतस्तु  
सदा शनिः ॥ १० ॥ अष्टमस्थे सूर्यसुते व्यये जन्मद्वितीयगे ।  
कवचं पठते नित्यं न पीडा जायते क्वचित् ॥ ११ ॥ इत्येतत्कवचं  
दिव्यं सौरैर्यन्निर्मितं पुरा । द्वादशाष्टमजन्मस्थदोषान्नाशयते  
सदा । जन्मलग्नस्थितान्दोषान्सर्वांन्नाशयते प्रभुः ॥ १२ ॥ इति  
श्रीब्रह्मांडपुराणे ब्रह्मनारदसंवादे शनैश्चरकवचं संपूर्णम् ॥

\*

## २७८. राहुस्तोत्रम् ।



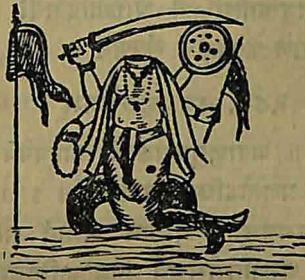
श्रीगणेशाय नमः ॥ राहुर्दानवमत्री च सिंहिकाचित्तनन्दनः ।  
 अर्धक्रायः सदाक्रोधी चन्द्रादित्यविमर्दनः ॥ १ ॥ रौद्रो रुद्रप्रियो  
 दैत्यः स्वर्भानुर्भानुभीतिदः । ग्रहराजः सुधापायी राकातिथ्यभिला-  
 पुकः ॥ २ ॥ कालदृष्टिः कालरूपः श्रीकण्ठहृदयाश्रयः । विधुंतुदः  
 सैहिकेयो घोररूपो महाबलः ॥ ३ ॥ ग्रहपीडाकरो दंष्ट्री रक्तनेत्रो  
 महोदरः । पञ्चविंशतिनामानि स्मृत्वा राहुं सदा नरः ॥ ४ ॥ यः  
 पठेन्महती पीडा तस्य नश्यति केवलम् । आरोग्यं पुत्रमतुलां श्रियं  
 धान्यं पशूंस्तथा ॥ ५ ॥ ददाति राहुस्तस्मै यः पठते स्तोत्रमुत्तमम् ।  
 सततं पठते यस्तु जीवेद्वर्षशतं नरः ॥ ६ ॥ इति श्रीस्कंदपुराणे  
 राहुस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

## २७९. राहुकवचम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ प्रणमामि सदा राहुं शूर्पाकारं किरीटिनम् ।  
 सैहिकेयं करालास्यं लोकानामभयप्रदम् ॥ १ ॥ नीलांबरः शिरः  
 पातु ललाटं लोकवंदितः । चक्षुषी पातु मे राहुः श्रोत्रे त्वर्धशरीर-  
 वान् ॥ २ ॥ नासिकां मे धूम्रवर्णः शूलपाणिर्मुखं मम । जिह्वां मे  
 सिंहिकासूनुः कंठं मे कठिनांग्रिकः ॥ ३ ॥ भुजंगेशो भुजौ पातु

नीलमाल्याम्बरः करौ । पातु वक्षःस्थलं मंत्री पातु कुक्षिं विधुंतुदः  
 ॥ ४ ॥ कटिं मे विकटः पातु ऊरू मे सुरपूजितः । स्वर्भा-  
 नुर्जानुनी पातु जंघे मे पातु जाड्यहा ॥ ५ ॥ गुल्फौ ग्रहपतिः पातु  
 पादौ मे भीषणाकृतिः । सर्वाण्यंगानि मे पातु नीलचन्दनभूषणः  
 ॥ ६ ॥ राहोरिदं कवचमृद्धिदवस्तुदं यो भक्त्या पठत्यनुदिनं  
 नियतः शुचिः सन् । प्राप्नोति कीर्तिमतुलां श्रियमृद्धिमायु-  
 रारोग्यमात्मविजयं च हि तत्प्रसादात् ॥ ७ ॥ इति श्रीमहाभारते  
 धृतराष्ट्रसंजयसंवादे द्रोणपर्वणि राहुकवचं संपूर्णम् ॥

२८०. केतुपञ्चविंशतिनामस्तोत्रम् ।



श्रीगणेशाय नमः ॥ केतुः कालः कलयिता धूम्रकेतुर्विवर्णकः ।  
 लोककेतुर्महाकेतुः सर्वकेतुर्भयप्रदः ॥ १ ॥ रौद्रो रुद्रप्रियो रुद्रः  
 क्रूरकर्मा सुगन्धधृक् । पलाशधूमसंकाशश्चित्रयज्ञोपवीतधृक् ॥ २ ॥  
 तारागणविमर्दी च जैमिनेयो ग्रहाधिपः । पञ्चविंशतिनामानि  
 केतोर्यः सततं पठेत् ॥ ३ ॥ तस्य नश्यति बाधा च सर्वकेतुप्रसादतः ।  
 धनधान्यपशूनां च भवेद्भृद्धिर्न संशयः ॥ ४ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे  
 केतोः पञ्चविंशतिनामस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

## २८१. केतुकवचम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ केतुं करालवदनं चित्रवर्णं किरीटिनम् ।  
 प्रणमामि सदा केतुं ध्वजाकारं ग्रहेश्वरम् ॥ १ ॥ चित्रवर्णः शिरः  
 पातु भालं धूम्रसमद्युतिः । पातु नेत्रे पिंगलाक्षः श्रुती मे रक्त-  
 लोचनः ॥ २ ॥ घ्राणं पातु सुवर्णाभश्चिबुकं सिंहिकासुतः । पातु  
 कंठं च मे केतुः स्कंधौ पातु ग्रहाधिपः ॥ ३ ॥ हस्तौ पातु सुरश्रेष्ठः  
 कुक्षिं पातु महाग्रहः । सिंहासनः कटिं पातु मध्यं पातु महासुरः  
 ॥ ४ ॥ ऊरू पातु महाशीर्षो जानुनी मेऽतिकोपनः । पातु पादौ च  
 मे क्रूरः सर्वांगं नरपिंगलः ॥ ५ ॥ य इदं कवचं दिव्यं सर्वरोग-  
 विनाशनम् । सर्वशत्रुविनाशं च धारणाद्विजयी भवेत् ॥ ६ ॥  
 इति श्रीब्रह्माण्डपुराणे केतुकवचं संपूर्णम् ॥

## २८२. नवग्रहस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ जपाकुसुमसंकाशं काश्यपेयं महाद्युतिम् ।  
 तमोरिं सर्वपापघ्नं प्रणतोऽस्मि दिवाकरम् ॥ १ ॥ दधिशङ्खतुषा-  
 राभं क्षीरोदारणवसम्भवम् । नमामि शशिनं सोमं शम्भोर्मुकुट-  
 भूषणम् ॥ २ ॥ धरणीगर्भसंभूतं विद्युत्कान्तिसमप्रभम् । कुमारं  
 शक्तिहस्तं तं मङ्गलं प्रणमाम्यहम् ॥ ३ ॥ प्रियङ्गुकलिकाश्यामं  
 रूपेणाप्रतिमं बुधम् । साम्यं सौम्यगुणोपेतं तं बुधं प्रणमाम्यहम्  
 ॥ ४ ॥ देवानां च ऋषीणां च गुरुं काञ्चनसंनिभम् । बुद्धिभूतं  
 त्रिलोकेशं तं नमामि बृहस्पतिम् ॥ ५ ॥ हिमकुन्दमृणालाभं  
 दैत्यानां परमं गुरुम् । सर्वशास्त्रप्रवक्तारं भार्गवं प्रणमाम्यहम् ॥ ६ ॥  
 नीलाञ्जनसमाभासं रविपुत्रं यमाग्रजम् । छायामार्तडसंभूतं तं  
 नमामि शनैश्वरम् ॥ ७ ॥ अर्धकायं महावीर्यं चन्द्रादित्यविमर्दनम् ।



सिंहिकागर्भसंभूतं तं राहुं प्रणमाम्यहम् ॥ ८ ॥ पलाशपुष्पसंकाशं  
 तारकाग्रहमस्तकम् । रौद्रं रौद्रात्मकं घोरं तं केतुं प्रणमाम्यहम्  
 ॥ ९ ॥ इति व्यासमुखोद्गीतं यः पठेत् सुसमाहितः । दिवा वा  
 यदि वा रात्रौ विघ्नशांतिर्भविष्यति ॥ १० ॥ नरनारीनृपाणां च  
 भवेद्दुःस्वप्ननाशनम् । ऐश्वर्यमतुलं तेषामारोग्यं पुष्टिवर्धनम् ॥ ११ ॥  
 ग्रहनक्षत्रजाः पीडास्तस्कराग्निसमुद्भवाः । ताः सर्वाः प्रशमं यान्ति  
 व्यासो ब्रूते न संशयः ॥ १२ ॥ इति व्यासविरचितं नवग्रहस्तोत्रं  
 संपूर्णम् ॥

### २८३. नवग्रहपीडाहरस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ग्रहाणामादिरादित्यो लोकरक्षणकारकः । विषम-  
 स्थानसंभूतां पीडां हरतु मे रविः ॥ १ ॥ रोहिणीशः सुधामूर्तिः  
 सुधागात्रः सुधाशनः । विषमस्थानसंभूतां पीडां हरतु मे विधुः  
 ॥ २ ॥ भूमिपुत्रो महातेजा जगतां भयकृत् सदा । वृष्टिकृद्वृष्टि-  
 हर्ता च पीडां हरतु मे कुजः ॥ ३ ॥ उत्पातरूपो जगतां चन्द्रपुत्रो  
 महाद्युतिः । सूर्यप्रियकरो विद्वान् पीडां हरतु मे बुधः ॥ ४ ॥  
 देवमन्त्री विशालाक्षः सदा लोकहिते रतः । अनेकशिष्यसंपूर्णः  
 पीडां हरतु मे गुरुः ॥ ५ ॥ दैत्यमन्त्री गुरुस्तेषां प्राणदश्च महामतिः ।  
 प्रभुस्ताराग्रहाणां च पीडां हरतु मे भृगुः ॥ ६ ॥ सूर्यपुत्रो दीर्घ-  
 देहो विशालाक्षः शिवप्रियः । मन्दचारः प्रसन्नात्मा पीडां हरतु मे  
 शनिः ॥ ७ ॥ महाशिरा महावक्रो दीर्घदंष्ट्रो महाबलः । अतनु-  
 श्चोर्ध्वकेशश्च पीडां हरतु मे शिखी ॥ ८ ॥ अनेकरूपवर्णैश्च शत-  
 शोऽथ सहस्रशः । उत्पातरूपो जगतां पीडां हरतु मे तमः ॥ ९ ॥  
 इति ब्रह्माण्डपुराणोक्तं नवग्रहपीडाहरस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

दत्तात्रेयस्तोत्राणि ।



पीतांबरालंकृतपृष्ठभागं  
भस्मावगुण्ठाखिलरुक्मदेहम् ।  
विद्युत्सदापिंगजटाभिरामं  
श्रीदत्तयोगीशमहं नतोऽस्मि ॥

## २८४. दत्तलहरी ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ दलादन ऋषिरुवाच ॥ विभुर्नित्यानंदः श्रुति-  
गणशिरोवेद्यमहिमा यतो जन्माद्यस्य प्रभवति स मायागुणवतः ।  
सदाधारः सत्यो जयति पुरुषार्थैकफलदः सदा दत्तात्रेयो विहरति  
मुदा ज्ञानलहरिः ॥ १ ॥ हरीशब्रह्माणः पदकमलपूजां विदधते  
जगद्रक्षाशिक्षाजननकरणे ते ह्यधिकृताः । अभूवन्नद्राद्या हरि-  
दधिपतां देवमुनयः परं तत्त्वं प्रापुः शशिदिनकरौ ज्योतिरमलम्  
॥ २ ॥ परं ज्योतिर्मूर्ते तव रुचिरतेजःकलरवाज्जगद्ध्याप्येदानीं  
तपनशशितारा हुतभुजः । महातेजःपुंजाः सकलजगदाराध्यचरि-  
ताश्चरंत्येवं लोकान्नतजनमनोभीष्टफलदाः ॥ ३ ॥ भवन्मायारूपं  
जगदखिलजीवात्मकमिदं भवद्रूपं प्राहुर्निखिलनिगमांतश्रुतिचयाः ।  
त्वया सृष्टं चादौ हृतमवितमेतत्तदधुना प्रभावं ते वेतुं प्रभवति  
जनः कोऽवनितले ॥ ४ ॥ कृपासिंधो तावज्जनुरजननस्याप्यकथिते  
जगद्रक्षादीक्षा भवति खलु नो चेत्कथमिदम् । अनीहस्याऽकर्तुस्तव  
जगति कर्मोपकृतये प्रमाणीकर्तुं वा स्वकृतनिगमार्थानिति मतिः  
॥ ५ ॥ महाविद्यारूपे भगवति निबद्धत्वमुचितं हृदा वाचाऽगम्ये  
परमपि विमुह्यंति कवयः । अविद्यातीतः किं यदि गुणविहीनोऽपि  
गुणवानविद्यायुक्तोऽयं त्विति वदति मायामुषितधीः ॥ ६ ॥  
भवानादौ यादोनरमृगखगाश्चादिकतनूर्विधत्ते लोकानामवनकृति-  
हेतोरनुयुगम् । विशुद्धस्त्वं लीलानरवपुरिदानीमटसि गां पवित्री-  
कर्तुं वा परिजननिवासांगणतलम् ॥ ७ ॥ जगद्रक्षार्थं वा विचरसि  
जगत्यात्मजनतापरित्राणायाद्यः परमपुरुषोऽगम्यचरितः । सृषा-  
लोको लोको वदति मनुजत्वं तदधुना यथा श्रीकृष्णं त्वां यदुषु  
ब्रुवते मूढमतयः ॥ ८ ॥ महायोगाधीशैरविदितमहायोगचतुरं कथं

जानन्ति त्वां कुटिलमतयो मादृशजनाः । तथापि त्वां जाने तव  
 पदयुगांभोजभजनान्न चेत्त्वत्पादाब्जस्मृतिविषयवाणी कथमभूत्  
 ॥ ९ ॥ अगरे संसारे सुतहितकलत्रादिभरणाद्युपाधौ मग्नास्तच्चरण-  
 करणोपायरहिताः । पतन्ति त्वत्पादांबुजयुगलसेवासु विमुखा नराः  
 पापात्मानः प्रवरनरके शोकनिलये ॥ १० ॥ सुधासिंधौ द्वीपे  
 कनककलिते कल्पकवने वितानैर्मुक्ताढ्यैर्नवमणिमये मंडपवरे ।  
 अशेषैर्माणिक्यैः खचितहरिपीठेऽब्जकुहरे हुताशारे ध्यायेत्तव परम-  
 मूर्तिं निखिलदाम् ॥ ११ ॥ धराधाराधारे हुतवहपुरेधीशगणपं विधिं  
 श्रीशेषौ वानलपवनव्योमानि हृदये । युतौ जीवात्मानावधिकमव-  
 मत्या प्रविशते विधत्ते ज्यायस्त्वं परकलितवामेन वपुषा ॥ १२ ॥  
 सहस्रारे नीरैरुहि सकलशीतांशुललिते सहंसे हंसं यः स्फुटमपि  
 भवंतं कलयते । सुषुम्णावर्तिन्या तव चरणपीठेन्दुसुधया छुतो भित्त्वा  
 ग्रंथित्रयममृतरूपो विचरति ॥ १३ ॥ तवाधारे शक्तिक्षितिकमठ-  
 कर्माद्यभिवृते महापीठे वैश्वानरपुरमरुद्देहनिलये । धराव्योमाकल्पे  
 सुरमुनिमहेंद्राद्यभिनुतं महातेजोराशिं निगमनिलयं नौमि हृदये  
 ॥ १४ ॥ भवत्पादांभोजं भवजलधिपोतं भजति यो महासंसाराब्धिं  
 तरति तरतीत्येव निगमः । इहामुत्र त्रातुं तव चरणमेवात्मशरणं  
 भजे भीतश्चाहंकृतिपरमनस्कोऽहमधुना ॥ १५ ॥ यथा दारुष्वग्नि-  
 निवसति तथा देहनिकरे प्रविश्य त्वं चैको बहुविध इवाभासि  
 भगवन् । चलन्तीरे चंद्रः शतविध इवाभाति गुणतो न चैतच्चंद्रे  
 स्यान्न शतविधता नापि चलनम् ॥ १६ ॥ दरिद्रो वा मूढः कठिन-  
 हृदयो वापि भवतां दयापात्रं स्याच्चेद्भजति महतामप्यधिकताम् । न  
 विद्या रूपं वा न कुलमपि वा कारणमभून्महत्त्वे सेवैका तव पद-  
 गांभोजकलना ॥ १७ ॥ न ते कारुण्यं स्यात्सकलगुणवानप्यगुणवान्

भवत्कारुण्यं स्यादगुणगुणपो वोरुगुणवान् । यथा पत्यौ रक्ते सदपि  
च विरक्ते तु युवतौ वृथा सौंदर्यं स्यात्सकलमपि तेऽनुग्रहवशात्  
॥ १८ ॥ अनाथे दीने मय्यधिगतभवत्पादशरणे शरण्य ब्रह्मण्य-  
प्रथितगुणासिंधो कुरु दयाम् । महातेजोवार्धे स्वसुकृतमहिम्नैव  
सततं पुरा पुण्यैर्हीनं पुरुषमुपकुर्वति कृतिनः ॥ १९ ॥ महाश्वेतद्वी-  
पेऽमरतरुगणालं तरुचिरे मणेः पीठांभोजेऽनलशशिखगांतर्निवसि-  
तम् । गदाचक्राब्जासिप्रसृतकरपद्मं मुररिपुं स धन्यस्त्वां ध्यायेत्पर-  
तरचिदानंदवपुषम् ॥ २० ॥ लसन्मेरोः शृंगे सुरमणिमये कल्पक-  
तरुप्रकीर्णे वाक्पीठे रविशशिकराकीर्णजलजे । स्थितं वाचाधीशै-  
र्नुतमनुदिनं त्वां भजति यो भवेद्वाणीशानामपि गुरुरजेयोऽवनितले  
॥ २१ ॥ समुद्यद्वालार्कायुतनिभशरीरं मुनिवरं स्थितं बीजे मारे  
त्रिदशपतिगोपातिरुचिरे । यदि त्वां यः पंचायुधकरमिति ध्यायति  
सदा स एवाहं नूनं स भवति जगन्मोहनकरः ॥ २२ ॥ निधिर्वि-  
श्वेषां त्वं निजचरणपद्मद्वयवतां शरण्यश्चार्तानां चकितहृदयानाम-  
भयदः । वरेण्यः साधूनां वरद इति वा कामितधियां भवत्सेवा  
जंतोः सुरतरुसमानानुफलति ॥ २३ ॥ यथा वै पांचाली नटति  
कुहकेच्छानुसरणं कुलालेन भ्रांतं भ्रमति च सकृच्चक्रमनिशम् ।  
तथा विश्वं सर्वं भवति मनवश्चानुगुणिताः स्वतंत्रः को वास्ते वद  
परसुरेश त्रिभुवने ॥ २४ ॥ त्वयाज्ञप्तो धाता सृजति जगदीशोऽ-  
पि हरते हरिः पुष्पातीदं तपति तपनो वाति पवनः । धरां साद्वि-  
द्वीपां वहति भुजगानामधिपतिः सुराः सर्वे युष्मद्भयपरवशाद्वि-  
भ्रति बलिम् ॥ २५ ॥ स्वयं मुक्तेः पूर्वं स्वकृतसुकृतं मां नयति  
चेद्भवान् सत्त्वं का वा तव चरणपंकेरुहरतिः । हरेत्पापौघं नः  
शुभमपि ददातीति च धिया भवंत्याशाबद्धाः सकलमपि धातुर्वश-

महो ॥ २६ ॥ प्रधानं वा कर्म स्थितिविलयसर्गेऽलमिति चेज्जडत्वा-  
 त्क्षीणत्वात्कथमुचितमेतन्निगदितुम् । तयोरीशेऽनीशे भवति  
 जगदुत्पत्तिविलयावनान्यासन् ब्रह्मन्निति वदति शास्त्रं श्रुतिरपि  
 ॥ २७ ॥ भवत्सेवा जन्तोर्भवदबहुताशांबुवनिभा महामोहध्वांत-  
 प्रतिहतमतेर्दीपकलिका । सुधावर्षिण्येषावहितमनसां निर्ममनृणा-  
 मुपाध्याये ब्रह्मप्रवचनविधानेऽतिचतुरा ॥ २८ ॥ अवज्ञायै लोके  
 बहुपरिचितिः प्राकृतमतिर्निरस्यापो गंगा प्रसरति यथा नाल्पतटि-  
 नीम् । विशुद्ध्यर्थं तद्वत् सकलपुरुषार्थैकफलदं भवंतं हित्वाऽन्यं  
 भजति गुरुमाशापरवशः ॥ २९ ॥ निमील्याक्षिद्वंद्वं निगमनिरतो  
 निश्चलमनाः प्रकाशंतं दृष्ट्या त्रिभुवनमुदं ज्ञानपरया । ललाटे-  
 ऽधोमुख्या रसजनितदिव्यांजनधरं स्मरेद्यस्त्वां योगी भवति  
 निधिसिद्धेरधिपतिः ॥ ३० ॥ महामायामंत्राक्षरकमलपद्मासनयुतं  
 महानीलच्छायं मधुमुदितयोगिन्यभिवृतम् । दधानं सद्गंधासित-  
 कनकगोक्षीरतिलकं मुने यस्त्वां पश्येद्भवति सकलादृश्यकतनुः  
 ॥ ३१ ॥ सुधाधारे हेतौ सकलजगतां स्वर्णकलिते सितांभोजे  
 तेजोधिकतपनबिंबे श्रुतितनौ । मणिप्रोते पीठे निखिलसुरधृदैः  
 परिवृते स्थितं त्वामारोग्यं स्मरति हृदि तस्यामृतमयम् ॥ ३२ ॥  
 परत्रादाता चेद्भवति न ददात्यैहिकसुखं ददात्येतत्सौख्यं वितरति न  
 चामुष्मिकसुखम् । भवत्सेवा जंतोरिह परसुखप्राभयकरी सुराणा-  
 मन्येषामनुसरणमात्मैक्यमकरोत् ॥ ३३ ॥ जट्टी वल्की कापि  
 क्वचिदपि सुभूषांबरभृती क्वचिद्भूत्यालिप्तः क्वचिदपि सुगंधांकित-  
 तनुः । क्वचिद्योगी भोगी क्वचिदपि विरागी विहरसे बहुज्ञाना ज्ञातुं  
 तव गतिमशक्ताश्च मुनयः ॥ ३४ ॥ विशुद्धं चैतन्यं क्वचन  
 जडवत्क्वापि सकलागमज्ञोऽप्यज्ञस्याद्विहरसि कदाचिद्बहुविधः ।

ऋषिभ्यस्त्वं तत्त्वं परममुपदेष्टासि विततं चरित्रं ते वेतुं चतुर-  
 धिकवक्त्रा न चतुराः ॥ ३५ ॥ मणिर्वा मंत्रो वा विविधविमलै-  
 श्वर्यमपि वा महायोगोऽष्टांगाभ्यसनविहितो वा त्रिभुवनम् । समर्थं  
 चैकैकं प्रभवति वशीकर्तुमधिकं स्थितं त्वय्येवेदं तव किमुत  
 लोकैकवशता ॥ ३६ ॥ सरस्वत्याधारस्थितमरुदतिप्रेरितपरां नृपो  
 धारां भित्त्वा रसकमलवासाधिपपुरी । परं तेजोरूपं सकलभुवना-  
 लोकनिरतो भवंतं सद्योगात्परमसमवेतं मुनिपतिः ॥ ३७ ॥ अपां  
 तत्त्वं हंसं सकलभवदेवे जलरुहे तडिद्भास्वहीसिप्रकटदलपङ्के  
 सुललिते । परं स्वाधिष्ठाने रुचिरतररूपं निरुपमं स्थितं ध्यायेत्त्वां  
 यो मदनसमरूपो विजयते ॥ ३८ ॥ परीतं त्वां विष्णो हुतहवन-  
 मायाविलसिते सरोजे नीलाभे मणिरचितपीठे मणिगृहे । महा-  
 सिद्धैः कल्पद्रुमवरतले स्वर्णनिचयात्प्रवर्षद्भिः सस्यात्परमतनुभूतिः  
 स्मरति यः ॥ ३९ ॥ मरुत्ताराप्राभे कनकरुचिपद्मे श्रुतिमयं प्रभुं  
 लोकातीतं निखिलनिगमावेद्यचरितम् । भजन्ते ये त्वां ते सुदृढतर-  
 तादात्म्यकदृशां चिदानन्दं मायागुणविरहितं यांति परमम् ॥ ४० ॥  
 सुधाशुद्धे व्योम्नि द्रुहिणरमणीबीजलसिते विशुद्धांभोजांते सुरनर-  
 खगाद्यंतरहितम् । भवंतं भावोत्थैः कुसुममुखपूजोपकरणैः समर्ह-  
 ल्लोके नाऽद्वितीयपरमं ब्रह्म भजते ॥ ४१ ॥ तडिल्लेखाशोचिर्द्विदल-  
 कमले भासि परमो महायुक्तानां गोनलशशभृतोऽक्षीणि भवतः ।  
 अशेषस्रोतःसु प्रसृतचितिरूपोंगकनकः श्रुतिप्राणोष्टांगप्रगुणितकला-  
 पीठनिलयः ॥ ४२ ॥ क्वचिद्बुद्धं जिह्वा क्व च गुदकमन्यत्र कविता  
 क्वचिद्वागन्यत्र श्रुतिरपरतो लोचनयुगम् । समाकर्षत्यात्मानमिव  
 बहुभार्याः प्रलुभितास्ततो ध्यातुं स्थातुं कथमपि न शक्तस्तव पदम्  
 ॥ ४३ ॥ अशक्तोऽहं स्नातुं क्षणमपि जपं कर्तुमपि वौदनाभावादे-

वाविधिजनसपर्या च न कृता । कुतो ज्ञानं ध्यानं त्वकृतगुरुसेवस्य  
 मम भो भवेदेवैकाशा वसति तव भक्तत्वजनिता ॥ ४४ ॥ अमंदे  
 मंदारद्रुमवरसमीपे मणिमये सुखासीनं पीठे सुरवरमुनींद्रादिविनु-  
 तम् । स्वहृत्पद्मे वापि स्थितमनुदिनं त्वां भजति यः स चेहामु-  
 ष्मिन्वा सकलजनपूज्यश्च भवति ॥ ४५ ॥ तृणं मेरुं कुर्यात्सुरवर-  
 गिरिं वापि च तृणं भवत्सामर्थ्यं वाऽघटितघटनाप्रौढिमतनो ।  
 इदं जाने तस्मै पुनरपि न जानंति कवयोऽप्यहो युष्मन्माया सकल-  
 जनमोहोन्मदकरी ॥ ४६ ॥ नटो भूयो वैषैर्बहुविध इवाभाति  
 सगुणो यथैको वाकाशो घटमठगुहास्वंतरगतः । यथैकं गांगेयं  
 कटकमुकुटाद्याकृतिवशात्तथा दत्तात्रेय त्वमपि बहुरूपस्त्रिभुवनम्  
 ॥ ४७ ॥ सहस्रांशुप्राभे सुरतरुसमाढ्येऽधिकतरे विमाने हंसाख्ये  
 स्थितममृतनीहारवपुषम् । परीतं त्वां ध्यायेद्यदरजसमारूढमनि-  
 लैरशेषैराज्ञायां भवति खचरो व्योमगमनैः ॥ ४८ ॥ स्थितं मूला-  
 धारे कनकरुचिरांगं हुतभुजः शिखाभिः प्रख्याभिर्वृतमखिलतेजो-  
 रसघटम् । धरंतं भ्रूमध्ये प्रसृतनयनः पश्यति च यः परं त्वां  
 सत्यं स्यादखिलरसविद्यातिनिपुणः ॥ ४९ ॥ शिरःप्रांतभ्रांतायतकु-  
 टिलबालार्कमतुलं प्रदीप्तः स्वर्णाढ्यारुणशतलसत्कुंडलधरम् ।  
 मरुत्पुत्रं लंकाधिपतनुजनाशोद्यतकरं स्मरेद्यस्त्वां यंता सकलभय-  
 भूतापहरणे ॥ ५० ॥ गरुत्मंतं चंचलकनकपक्षद्वययुतं सुधा-  
 कुंभोद्भास्वत्करमखिललोकाभिगमनम् । अचिंत्यं वेदैस्त्वां परममु-  
 निनाथं स्मरति यः स दक्षोऽसौ वादी कपटविषजंतुप्रहरणे ॥ ५१ ॥  
 स्मृतिं निंदंतं ये मनुजमुपतिष्ठंत्यतिबलात्कृताशा मिथ्या स्यात्प्रणत-  
 जनमंदार भवता । अदत्ते दत्तत्त्वादमलतरचिद्गम्यविभवः सदा  
 दत्तात्रेयो भवसि भजतामिष्टफलदः ॥ ५२ ॥ विधिं विष्णुं मायां



शृणिमदनयोनिं दिनकरं मिलित्वानंगेनानलयुवतियुक्तां जपति यः ।  
 त्वदाख्यामाख्येयां निखिलनिगमाढ्यामखिलदां स संपद्भिर्देवाधिप-  
 विभवयुक्तो विहरति ॥ ५३ ॥ परामायावाणीमदनकमलाबीजसहितं  
 मनुं प्रत्येकं ते जपति सततं निश्चलधिया । यतोऽभ्येत्यैश्वर्याश्रुतसक-  
 लविद्यानिपुणता वशित्वं ब्रह्मैक्यं सपदि यदि यायात्परमुने ॥ ५४ ॥  
 अविज्ञातं किञ्चित्तव जगति नास्ति प्रभवितुस्तदा विज्ञातोऽहं यदपि  
 सकलज्ञेन भवता । अदृष्टं मन्येऽहं प्रतिभटमविज्ञानकरणे मुने दत्ता-  
 त्रेय प्रकुरु मयि कारुण्यमतुलम् ॥ ५५ ॥ भवत्पादांभोजद्वयशुभ-  
 रसास्वादचतुरा भ्रमद्ग्रीसंधायितहृदयवृद्धिं कलय माम् ।  
 अनाधाराधारश्रितसुरतरो तावकजने मुने कारुण्याब्धे प्रकुरु मयि  
 संपत्प्रकटनम् ॥ ५६ ॥ वदत्येकेऽपार्था तव गतिमनेकार्थहरिणीम-  
 जानंतो ज्ञेयामनधिगततत्त्वार्थमतयः । महायोगिंल्लोके जडमतिकृते  
 त्वं धृतवपुस्तथा नो चेद्भक्तस्वजनपरिरक्षा कथमहो ॥ ५७ ॥  
 स्मृतस्त्वच्छिष्यो वा जगति कृतवीर्यस्य तनयोऽर्जुनो राजा चोरा-  
 न्दयमहिभयं वृश्चिकभयम् । हिनस्त्याजौ शत्रूदितमपि भयं चेति  
 मदितं भवेयुस्त्वच्छिष्याः किमुत हृतचोराधिकभयाः ॥ ५८ ॥  
 पदानां सेव्यो वा न भवसि यदा किञ्चन नृणां प्रियः साधूनां त्वं  
 तव च सुहृदस्तेऽपि सुजनाः । मयि त्वार्ते दीने जननमरणाद्यैः कुरु  
 दयां दयावान्को वा मे भ्रमनिगडनिर्मोचनविधौ ॥ ५९ ॥ यथा  
 माता पुत्रं सकलगुणहीनं च कुटिलं प्रपुष्णाल्यन्नाद्यैरनुदिनमतीवा-  
 दरयुता । तथा त्वं लोकानां मम च पितरावित्यभिमतं ततस्त्रातुं  
 दातुं फलमभिमतं चार्हसि विभो ॥ ६० ॥ जडं वाचाधीशं  
 सुधियमपि मूकं च कुरुषे रवेर्वा शीतत्वं यदि च कुरुषे दृष्टिवसतेः ।  
 अकर्तुं कर्तुं वाऽन्यदपि परिकर्तुं च मनुषे तदा सर्वं कुर्याः क्वचन

किमसाध्यं त्रिभुवने ॥ ६१ ॥ पुमान्यो वै युष्मच्चरणपरिचर्याकृति-  
 परो महालापास्थानाशनशयनपानानि कुरुते । स वै धन्यो लोके  
 सकलजगदाराध्यगरिमा अहो भाग्यं तस्यागणितयशसः कोऽपि न  
 भजेत् ॥ ६२ ॥ प्रसादात्ते यस्मिन्प्रबलतरदारिद्र्यविभवः स याया-  
 दिद्रव्यं सकलसुरनारीपरिवृतः । तवोपेक्षा यस्मिन्भवति स सुराणा-  
 मधिपतिः परत्र ह्यत्यंतं प्रविहतमहैश्वर्यविभवः ॥ ६३ ॥ सदा  
 मंत्रैर्जाप्यः पुनरपि मनुनेव जपसि स्वयं तंत्रध्येयो यदपि कुरुते  
 तंत्रनिचयम् । सदा ब्रह्मानंदामृतजलधिकेलीकलितधीः स भूतेर्भू-  
 यस्या भवतु भगवन्नः कुरु दयाम् ॥ ६४ ॥ तुरीयाग्निश्वेतद्यु-  
 तिदिनकृदकैर्मुनिपतेर्महाविद्याखंडैः परियुतमहानुष्टुभमनोः ।  
 चतुर्भिश्चक्राब्जांकुशगुणधरं सामि युवतिं नृसिंहं त्वद्रूपं  
 भजति सपुमर्थैकनिलयः ॥ ६५ ॥ मुने ते माणिक्य-  
 प्रवरखचिते हेममुकुटे पुरा कल्पध्वंसे परिकलितसूर्या-  
 पररुचः । वसंत्यस्मिन्नूनं नहि यदि तदा भूतमुनयो न  
 विद्यन्ते लोकाः प्रखरतिमिरांतैकचतुराः ॥ ६६ ॥ अहो योगिन्नाना-  
 मणिलखितभावत्कमुकुटः शिखाग्रालंबिन्यास्त्रिकतलमसौ रत्न-  
 शिखरात् । महामेरोर्लीलां कलयति सदा यामकलितां शरत्सौदा-  
 मिन्याः कटकवरतेजोमयतनोः ॥ ६७ ॥ सुविज्ञातं लोकैरनवधि-  
 सदादेशनपरैः सुधाभानोः खंडं तव निबिडभावांधकरणम् ।  
 द्वितीयं सोमैन्दुस्फुटमुकुटतः कांतमनघं महामूर्तिर्ज्योत्स्ना हरति  
 नतदारिद्र्यतिमिरम् ॥ ६८ ॥ धृतं पुंड्रं मात्रात्रितयरुचिरं साक्षर-  
 मिदं सहस्रारे हंसः स्थितपरमहंसाजिगमिषोः । वहंती पादाब्ज-  
 द्वयसरललाक्षारसपदं पराशक्तेश्चंद्रोपलरचितसोपानपदवी ॥ ६९ ॥  
 श्रयेते हैमंते तरुविमलपत्रे मधुकरौ शुभं गर्भाभोजे स्थितमिति

सुचित्रं शमनिधे । कठोरेंदुप्रांशुप्रवरनिकरीभूततिमिरं सुधांशु-  
 र्भावत्को मुकुलयति विद्युत्कुवलयम् ॥ ७० ॥ तमोभिर्मूकालिगृह-  
 मिदमनुजृम्भितमिति त्वदीये नेत्राब्जे कमलसदना जृम्भितवती ।  
 सदा सुज्ञानेनाविशति सदयाक्षि प्रसरति प्रभो यस्मिन्स्यात्ते ध्रुव-  
 मतिधनोऽयं मुनिपते ॥ ७१ ॥ यदा योगिनीषद्वलिरविलसत्कोरक-  
 दृशोरूपांते नीलाली उदरयुगली कंजदलयोः । वरं कारायेते  
 कनकमकरीकुंडलयुगे कटाक्षौ चांपेयस्तबकविचरंताविव वरौ  
 ॥ ७२ ॥ त्रयीविद्यारूपस्त्रितनुरहिमांशुः प्रतिदिनं श्रुती भाव-  
 त्केचिद्विधिमकरीकुंडलपदे । मिलित्वात्मायं ते घनतरमुपाधि-  
 द्वयमिति व्यनक्ति श्रीकारं निखिलजगदुद्दीपकमुने ॥ ७३ ॥  
 कपोलौ यौष्माकौ स्फुटमुकुरबिंबप्रतिभटौ भृशं संघर्षित्वात्प्रति-  
 दिनसमारोपितरुचौ । निजा कांतिर्नित्या कनकनिकषोऽत्यंतमहिमा  
 त्वदीया नीचैव प्रचुरतरकांतिस्तव मुने ॥ ७४ ॥ मुखेंदुं दृष्ट्वा ते  
 यदि विशति राहुं प्रति भयाच्छशी वक्रं प्राप्य द्विगुणितकलानां  
 निधिरभूत् । द्विजानां राज्यत्वं प्रकटितमतो दत्तशरणीबलेनाहो  
 स्वामिन् कथमपि च लभ्यो हि महिमा ॥ ७५ ॥ तवायं बिंबोष्ठ-  
 श्रुबुकसहितो विद्रुमलतासमाक्षिसा तिर्यग्यदि बहुपदं स्यात्फल-  
 युगम् । व्रजे तत्साम्यं तन्निहितमुत वा पल्लवपदं यदि स्यात्ते  
 नालं तुलयितुमहो संयमिपते ॥ ७६ ॥ भवद्वाणीश्रेणीं श्रवण-  
 पुटसौख्यप्रकरणीं विजेतुं वाक् श्रुत्वा स्वयमुत विदित्वाऽहमिति  
 भाक् । अशक्ता तेऽत्यंतं फणिललितजिह्वाग्रमिषतः प्रविष्टा वक्रांतं  
 सितमणिलसद्विद्रुमगृहम् ॥ ७७ ॥ तवावृत्ता रेखात्रयविलसिता  
 कंबुरभवच्छिराणामाधारः कथमभवदेतन्न यदि चेत् । अथेमा-  
 मूहेऽहं त्विति कविहराद्याकृतिधरां तथा नो चेद्देदन्नित्रयकलितं

वापि गणये ॥ ७८ ॥ महानंतश्चासीद्विषधरवरो वासुकिरसौ  
 निबर्हंतौ मर्त्याधिकभयकरत्वं गणयताम् । भुजाकारौ स्वीयौ तव  
 तु भुजसत्त्वं विदधतां मुने भूतौ स्निग्धौ सपदि वरदौ चाभय-  
 करौ ॥ ७९ ॥ मुने गंगास्रोतोमररवगिरिप्रस्थफलके प्रसादे  
 स्वर्णाढ्यं प्रभवदभवद्भागलुलितम् । त्रिसूत्रं सुस्निग्धं धवलमुपवीतं  
 कलयते महायोगिन्मूर्तित्रयमपि विलीनं तदथवा ॥ ८० ॥ प्रसिद्धः  
 स्वर्णाद्रिर्दिवि विबुधवाचावितरणात्प्रशस्तौ ते हस्तावखिलपुरुषार्थप्रक-  
 रणात् । जनानां पादाब्जद्वितयमधिकं प्रेम भजतां मुनीन्द्र त्रैलोक्या-  
 द्भुतगणमणिक्षीरजलधे ॥ ८१ ॥ इयं रोम्णां राजिर्विलसति महा-  
 नाभिसरसः प्रवृत्ता कुल्येव प्रतिपतितभंग्यस्त्रिवलयः । नवालेखालो-  
 कत्रयविभजनार्थं विरचिता मुने दत्तात्रेय त्वदुदरविलग्ना विलसिताः  
 ॥ ८२ ॥ ध्रुवं शंपा मौंजीत्रितयवलरेखावरतनो रुहक्षोः प्रासादं  
 खशय हृदयाढ्यं तव हरे । महालक्ष्म्याश्चत्कनकमयसोपानपदवी  
 न चेन्नाभीकुंडोपरि चिदुपलब्धा सुपरिखा ॥ ८३ ॥ प्रवृत्तावूरु  
 ते लसदुदरलोकव्रजघृतेर्घृतौ तावद्गीन्द्रस्फुटपटुकटौ संप्रकटितौ ।  
 कटौ विस्तारौ यत्कटकफलकौ ताविव मुने महायोगिन्विश्वंभर इति च  
 नूनं त्वमधिसूः ॥ ८४ ॥ कृपालो विश्वेश त्रिभुवनतले ते प्रमितितो  
 दिवारात्रौ स्थानं मिलति वपुषो जानुयुगलम् । अभक्तानित्येत्क-  
 थितमभियुक्तैः समतनोः प्रपुष्टं त्वं संप्रत्यपि तदिदमर्थं हि सुदृढम्  
 ॥ ८५ ॥ जगन्मूलं स्रष्टा सकलजगतां सर्गकुशलो भवजंघे लक्ष्मी-  
 कृदसमशरस्य प्रकुरुते । प्रकृष्टे ते वीक्ष्य भ्रमवदविलक्ष्योऽल्पगुण-  
 चान् मुने तेनानंगस्तव तु विमुखो लक्षणवतः ॥ ८६ ॥ नराणां  
 नानार्थप्रदरसगुटित्वं च दधतौ मुने गुल्फौ गूढौ तव चरणपुश्या  
 प्रकटितौ । घटावृत्ती नार्या इव सकलकौ वृत्तरुचिरौ विराजेते

तेजोनिकरकलितायाः सुवपुषः ॥ ८७ ॥ मदाधारं युष्मत्प्रपदमति-  
 पूज्यं सुरुचिरं ध्रुवात्मानं मत्वा जितमिति सदा कच्छपपतिः ।  
 विवेशाधो भूमेर्यदि तदिदमेकं स्मयकरं त्विदानीं तज्जातिर्मुकुलित-  
 शिराश्चाभवदहो ॥ ८८ ॥ मया दत्तं किञ्चिन्न यदि कलितं वासव-  
 महं तदा रोचिर्जातं जननमपि पंकप्रकटितम् । प्रविश्येत्यायोज्यं न  
 चलति ह यत्तत्पदधिया पदं ते तु श्रीदं सकलसमये श्रीनिलयनम्  
 ॥ ८९ ॥ मुने ते पादाब्जं नवममृतपादोद्भवमहो श्रितस्तत् सोदर्यं  
 पशुपतिशिरोब्जं हिमकरः । निवृत्तं स्वस्याकं भवति भवदेकात्म-  
 वपुषः कथं ब्रह्मागारे परमपुरुषा नांग्रिभजनाः ॥ ९० ॥ न चित्रं  
 ते पादौ वितरत इति प्रार्थितफलं विधिं श्रीशं रक्षाकलुषविपदं  
 दृश्यमतुलम् । स्मरांतश्रीगंगाधरचरणशंखांबुजसुरद्रुमांश्च त्वद्भावा-  
 नतजनसदानंदकलनात् ॥ ९१ ॥ त्रिखंडेः श्रीविद्यामनुवरभवै-  
 र्भावकरिपो विवृद्धस्ते मंत्रो विषवदति यो ज्योतिरमलम् । षडर्णं  
 चंद्रार्कप्रकररुचि तन्मे प्रभवतां सदा ज्ञानानंदं युवतिनृमयं लोचन-  
 पदम् ॥ ९२ ॥ समुन्मीलद्भानुप्रकररुचि वाग्नीजममलं मरुत्व-  
 द्रोपाभां मदनलिपिमाधारकमले । हृदब्जे शक्त्याख्यं सितकरकराभं  
 शिरसिजे सरोजे त्वां ध्यायेत्सकलपुरुषार्थान् स लभते ॥ ९३ ॥  
 चिदंशस्त्वद्रूपं किमपि सवितुर्मंडलगतं वरेण्यं भर्गो वै त्रिविध-  
 तनुदेवस्य वपुषि । मुने धीमह्यासीर्हरिरपि धियो यो न इतरत्प्रचो-  
 दायास्तत्त्वं स्थितिलयसृजस्त्वं मुनिपते ॥ ९४ ॥ हरिचंतुप्रोतः सदसि  
 शिखरे शुभ्रकपटो जगन्मूलस्थाणुस्त्वमिति शुभमस्पंदमुनिभिः ।  
 झरीभिः स्वर्णाढ्यैः पवनहतवार्बिन्दुनिकरैर्जटासक्ताब्जाहीरुचिरमभि-  
 षिक्तः स्थित इव ॥ ९५ ॥ दुराचारो जारश्चपलमतिराजः परवशः  
 परद्रव्याकांक्षी बहुजनविरोधी च सततम् । तथा चाहं पूतस्तव

पदयुगस्पर्शवशतो ह्ययःखंडः स्वर्णं भवति हि यदा सिद्धसुरतिः  
 ॥ ९६ ॥ परिक्रान्ता देशा बहुतरधनस्यार्जनधिया कुलाचारं हित्वा  
 कुमतिनृपसेवापि च कृता । विधायाहं श्रांतः किमपि नच लब्धं  
 तु वपुषाश्रितं त्वत्पादाब्जं श्रितमनुजमंदारमधुना ॥ ९७ ॥  
 त्वदीयो मे देहस्त्वमपि पितरौ भ्रातृसुहृदस्त्वमेव ब्रह्मन्मे सुतहित-  
 गृहक्षेत्रनिवहाः । त्वमेव प्राणो मे धनमपि मम त्वं तव पदं न  
 जाने मय्येव स्थितमपि महन्मेयमधुना ॥ ९८ ॥ नमस्ते ताराया-  
 मृतजलधिधाज्ञेऽधिमहसे नमस्ते ब्रह्माद्यैर्मुनिसुरवरैः क्लृप्तमहसे ।  
 नमस्तुभ्यं नारायणमुनिविलासाय भवते मनूनां कोटीनामचल-  
 गणितानां च पतये ॥ ९९ ॥ नमस्ते देवैरप्यविदितमहिम्नेऽतियशसे  
 नमस्ते दिक्पालप्रकटमुकुटालंकृतपदे । नमस्ते तेजस्विन्नतमनुज-  
 मंदारवपुषे नमो दत्तात्रेयाकृतिहरिहराजाय महते ॥ १०० ॥ नमस्ते  
 पापौघाचलविततिसंहारपवये नमस्ते दारिद्र्यव्यथितजनदैवांतविधये ।  
 नमस्ते रोगार्तानतमनुजदिव्यौषधिदृशे नमस्ते दैवं मे नहि नहि  
 जगत्यां तव पदम् ॥ १०१ ॥ असौ दत्तात्रेयस्तुतियुतकृतिर्ज्ञान-  
 लहरी सुधाधारापूरा निखिलगमसारानु पठताम् । श्रुतश्रीविद्या-  
 युर्विभवधनधान्यामृतचयं ददात्येवात्यंतं जयति सकलाह्लादजनिका  
 ॥ १०२ ॥ इति दलादनमुनिविरचिता श्रीदत्तपदप्रापिका  
 श्रीदत्तात्रेयज्ञानलहरी संपूर्णा ॥

### २८५. दत्तात्मपूजास्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अजितामृत योगनिद्रिताच्युत शक्तेः स्वकृता-  
 तिमोहित ॥ द्युमुखे श्रुतिबन्दिगीततो भगवज्जागृहि जागृहि  
 त्र्यधीद् ॥ १ ॥ अथ ध्यानम् ॥ यतोऽस्य जननाद्यज स्ववशमाय  
 आद्यो विभुः स्वराट् सकलविद्गुरुः स सुखसच्चिदात्मा प्रभुः ॥

असंसृतिरूप उज्झितमलोऽमुमैक्याप्तये निर्वर्त्य नयनं निषेधविधि-  
 वाक्यतश्चितये ॥ २ ॥ कार्याक्षमान्वीक्ष्य पृथग्युतान्वा योऽनु-  
 प्रविश्यापि विभुर्निजांशात् ॥ निन्ये प्रभुत्वं हि महन्मखांस्त-  
 मुपाह्वये त्रीशमनन्यचित्तः ॥ ३ ॥ अनेजज्वीयो हृदोऽप्यामुवन्नो  
 सुराः पूर्वमर्शत्पराञ्चोऽपि तिष्ठत् ॥ परांधावतोऽत्येति यद्व्यसनं ते  
 त्र्यधीशाऽर्पितं चित्तमस्तान्यवृत्ति ॥ ४ ॥ राहोः शीर्षादौपचारिक-  
 भिदा विष्णो पदं त्रीश ते प्रत्यक्त्वाच्च निसर्गशुद्धमपि सग-  
 मायांशतोऽशुद्धवत् ॥ भातं मूढधिया तदर्थममलं ज्ञानामृतं  
 यत्नतो ध्यामन्नेऽत्र हिरण्मये विनिहितं पाद्यं गृहाणात्मभ ॥ ५ ॥  
 देवाचार्यप्रसादप्रजनितसुरसंपत्तिसद्रत्नजातश्रेण्याढ्ये मञ्जुलेऽस्मिन्न-  
 तितरविमले भाजने वै विशाले ॥ धृतभजनजलाद्वेष्टृताद्यर्थजाले  
 स्वर्घ्यं संपादितं ते त्र्यधिप परम भोः स्वीकुरुष्वासकाम ॥ ६ ॥  
 विधिवच्छ्रवणादि यत्कृतं ते त्र्यधिपा भव मे प्रसीद शंभो ॥  
 द्विदविधावरणाम्बु तेऽर्पितं सत्कृपयाऽऽचमनं कुरुष्व तेन ॥ ७ ॥  
 प्रवचनादिमुदुर्लभता श्रुतेऽत्र्यधिपते त इह श्रुतिविश्रुते ॥ परम-  
 भक्तिसुशीतलसज्जलं वपुषि सिक्तमथाप्लुतयेऽस्त्वलम् ॥ ८ ॥  
 यत्किंचिज्जगति त्रीश तत्त्वयाऽऽवास्यमीश ते ॥ वस्त्रत्वेनार्पितं तेन  
 परानन्दार्हतास्तु मे ॥ ९ ॥ यद्ब्रह्मसूत्रं त्रिवृतं कृत्वा समग्रं त्रिप-  
 सस्वतन्त्रम् ॥ दत्तं सुमित्रं भजते न चात्र सन्नसुपात्रं कुरुमाऽन्य-  
 तन्त्रम् ॥ १० ॥ आह्लादनं चन्दनमुच्यते तत्सत्यर्तरूपं न ततः परं  
 ते ॥ प्रेष्टं त्र्यधीशागुण तेन नूनमालेपनं ते प्रकरोमि भक्त्या  
 ॥ ११ ॥ भगवंस्त्र्यधिप प्रददामि मुदे सुमनः सुमनः सकलार्थ-  
 विदे ॥ खलु तुभ्यममूल्यमघौघभिदे सुमनः सुमनस्कमनन्यहृदे  
 ॥ १२ ॥ योगानलेऽत्र बलदर्पपरिग्रहाहंकाराभिलाषममताप्रतिघांश्च

दग्ध्वा ॥ धूपोऽयमुत्तमतमोर्षित आर्यशान्तिद्वारा त्र्यधीश  
 पदपर्यवसाय्यसौ ते ॥ १३ ॥ सोऽहंभावप्रोज्ज्वलज्ज्ञानदीपो मूला-  
 ज्ञानध्वान्तसंपातहृत्यै ॥ स्थेयान्भास्वाँश्छाश्वतस्त्रीश तुभ्यं स्वात्म-  
 ज्योतिर्दत्त एतं गृहाण ॥ १४ ॥ यस्य ब्रह्मक्षत्रे मित्रे ग्रासो  
 मृत्युर्लक्षं पेयम् ॥ कान्वेष्टव्यं तस्मै कस्मै नैवेद्यार्थं दत्तं द्वैतम्  
 ॥ १५ ॥ त्रीश तेऽद्य परभक्तिवीटिका पञ्चमैकपुरुषार्थसाधिका ॥  
 निर्विकल्पकसमाधितः पुरा रञ्जिकाऽस्तु भवभञ्जिका वरा ॥ १६ ॥  
 त्वं त्रीशाहमहं त्वमित्यवगते स्थेन्ने निदिध्यासनात्मानस्ते परिदक्षिणा  
 हि विहिता यद्यच्च मे क्रीडितम् ॥ तद्ब्रह्मास्तु च्चिदन्वयेक्षितुरथो  
 त्वानुस्मरन् व्याहरेत्तारं तारकमेकमात्मनि यथा शार्दूलविक्रीडितम्  
 ॥ १७ ॥ असकृदभिहिता तेऽनेकजन्माप्तपुण्यैः प्रणतिविततिरेषा  
 द्वैतशेषा विशेषा ॥ त्वयि विनिहितमेतन्मेज्ज सर्वं स्वकीयं त्र्यधिप  
 जयतु पूजा त्वद्यशोमालिनीयम् ॥ १८ ॥ यन्मे न्यूनं संमतं  
 स्थूलदृष्ट्या भूमन् तेऽनुक्रोशपीयूषवृष्ट्या । नित्यं प्रेयः स्वप्रभं  
 शालिनीयं तस्याभूत्संपूर्णता शालिनीयम् ॥ १९ ॥ रोधनं  
 ब्यात्मनः शोधनं ब्यात्मनः पूजनं त्र्यात्मनो भोजनं स्वात्मनः ।  
 यत्र सैषाऽत्मपूजाऽस्तु कण्ठे सतां स्रग्विणी मा परा स्त्रीव कण्ठे  
 सताम् ॥ २० ॥ इति श्रीमद्वासुदेवानन्दसरस्वतीविरचिताऽऽत्म-  
 पूजास्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### २८६. शंकराचार्यकृतगुर्वष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ शरीरं सुरूपं तथा वा कलत्रं यशश्चारु चित्रं  
 धनं मेरुतुल्यम् । मनश्चेन्न लग्नं गुरोरंघ्रिपद्मे ततः किं ततः किं ततः  
 किं ततः किम् ॥ १ ॥ कलत्रं धनं पुत्रपौत्रादि सर्वं गृहं बांधवाः  
 सर्वमेतद्धि जातम् । गुरोरंघ्रिपद्मे मनश्चेन्न लग्नं ततः किं ॥ २ ॥



षडंगादिवेदो मुखे शास्त्रविद्या कवित्वादि गद्यं सुपद्यं करोति ।  
 गुरोरंघ्रिपद्मे० ॥ ३ ॥ विदेशेषु मान्यः स्वदेशेषु धन्यः सदाचारवृत्तेषु  
 मत्तो न चान्यः । गुरोरंघ्रिपद्मे० ॥ ४ ॥ क्षमामंडले भूपभूपाल-  
 वृंदैः सदा सेवितं यस्य पादारविंदम् । गुरोरंघ्रिपद्मे० ॥ ५ ॥  
 यशो मे गतं दिक्षु दानप्रतापाज्जगद्वस्तु सर्वं करे यत्प्रसादात् ।  
 गुरोरंघ्रिपद्मे० ॥ ६ ॥ न भोगे न योगे न वा वाजिराजौ न  
 कांतामुखे नैव वित्तेषु चित्तम् । गुरोरंघ्रिपद्मे० ॥ ७ ॥ अरण्ये न  
 वा स्वस्य गेहे न कार्ये न देहे मनो वर्तते मे त्वनर्घ्ये । गुरोरंघ्रि-  
 पद्मे० ॥ ८ ॥ अनर्घ्याणि रत्नानि मुक्तानि सम्यक्समालिङ्गिता  
 कामिनी यामिनीषु । गुरोरंघ्रिपद्मे० ॥ ९ ॥ गुरोरष्टकं यः पठेत्  
 पुण्यदेही यतिर्भूपतिर्ब्रह्मचारी च गेही । लभेद्वाञ्छितार्थं पदं ब्रह्म-  
 संज्ञं गुरोरुक्तवाक्ये मनो यस्य लग्नम् ॥ १० ॥ इति श्रीमत्परम-  
 हंसपरिव्राजकाचार्यश्रीमच्छंकराचार्यविरचितं गुरोरष्टकं समाप्तम् ॥

### २८७. दत्तात्रेयस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ जटाधरं पांडुरंगं शूलहस्तं कृपानिधिम् ।  
 सर्वरोगहरं देवं दत्तात्रेयमहं भजे ॥ १ ॥ अस्य श्रीदत्तात्रेयस्तोत्र-  
 मंत्रस्य भगवान्नारद ऋषिः, अनुष्टुप् छंदः, श्रीदत्तः परमात्मा  
 देवता, श्रीदत्तप्रीत्यर्थं जपे विनियोगः ॥ जगदुत्पत्तिकर्त्रे च  
 स्थितिसंहारहेतवे । भवपाशविमुक्ताय दत्तात्रेय नमोऽस्तु ते  
 ॥ १ ॥ जराजन्मविनाशाय देहशुद्धिकराय च । दिगंबर दयामूर्ते  
 दत्तात्रेय० ॥ २ ॥ कर्पूरकांतिदेहाय ब्रह्ममूर्तिधराय च । वेद-  
 शास्त्रपरिज्ञाय दत्तात्रेय० ॥ ३ ॥ ह्रस्वदीर्घकृशस्थूलनामगोत्रविव-  
 र्जित । पंचभूतैकदीप्ताय दत्तात्रेय० ॥ ४ ॥ यज्ञभोक्त्रे च यज्ञाय  
 यज्ञरूपधराय च । यज्ञप्रियाय सिद्धाय दत्तात्रेय नमोऽस्तु ते ॥ ५ ॥

आदौ ब्रह्मा मध्ये विष्णुरन्ते देवः सदाशिवः । मूर्तित्रय-  
स्वरूपाय दत्तात्रेय० ॥ ६ ॥ भोगालयाय भोगाय योगयोग्याय  
धारिणे । जितेंद्रियजितज्ञाय दत्तात्रेय० ॥ ७ ॥ दिगंबराय दिव्याय  
दिव्यरूपधराय च । सदोदितपरब्रह्म दत्तात्रेय० ॥ ८ ॥ जंबुद्वीपे  
महाक्षेत्रे मातापुरनिवासिने । जयमान सतां देव दत्तात्रेय० ॥ ९ ॥  
भिक्षाटनं गृहे ग्रामे पात्रं हेममयं करे । नानास्वादमयी भिक्षा  
दत्तात्रेय० ॥ १० ॥ ब्रह्मज्ञानमयी मुद्रा वस्त्रे चाकाशभूतले ।  
प्रज्ञानघनबोधाय दत्तात्रेय० ॥ ११ ॥ अवधूत सदानंद परब्रह्म-  
स्वरूपिणे । विदेहेदेहरूपाय दत्तात्रेय० ॥ १२ ॥ सत्यरूप सदाचार  
सत्यधर्मपरायण । सत्याश्रय परोक्षाय दत्तात्रेय० ॥ १३ ॥ शूल-  
हस्त गदापाणे वनमालासुकंधर । यज्ञसूत्रधर ब्रह्मन्दत्तात्रेय०  
॥ १४ ॥ क्षराक्षरस्वरूपाय परात्परतराय च । दत्तमुक्तिपरस्तोत्र  
दत्तात्रेय० ॥ १५ ॥ दत्त विद्याढ्य लक्ष्मीश दत्तस्वात्मस्वरूपिणे ।  
गुणनिर्गुणरूपाय दत्तात्रेय० ॥ १६ ॥ शत्रुनाशकरं स्तोत्रं ज्ञान-  
विज्ञानदायकम् । सर्वपापं शमं याति दत्तात्रेय० ॥ १७ ॥ इदं  
स्तोत्रं महद्दिव्यं दत्तप्रत्यक्षकारकम् । दत्तात्रेयप्रसादाच्च नारदेन  
प्रकीर्तितम् ॥ १८ ॥ इति श्रीनारदपुराणे नारदविरचितं दत्ता-  
त्रेयस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### २८८. दत्तापराधक्षमापनस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ दत्तात्रेयं त्वां नमामि प्रसीद त्वं सर्वात्मा  
सर्वकर्ता न वेद ॥ कोऽप्यन्तं ते सर्वदेवाधिदेव ज्ञाताज्ञातान्मेऽप-  
राधान्क्षमस्व ॥ १ ॥ त्वदुद्भवत्वात्त्वदधीनधीत्वात्त्वमेव मे वन्द्य  
उपास्य आत्मन् ॥ अथापि मौढ्यात्स्मरणं न ते मे कृतं क्षमस्व  
प्रियकृन्महात्मन् ॥ २ ॥ भोगापवर्गप्रदमार्तबन्धुं कारुण्यसिन्धुं

परिहाय बन्धुम् ॥ हिताय चान्यं परिमार्गयन्ति हा मादृशो  
 नष्टदृशो विमूढाः ॥ ३ ॥ न मत्समो यद्यपि पापकर्ता न त्वत्स-  
 मोऽथापि हि पापहर्ता ॥ न मत्समोऽन्यो दयनीय आर्यं न  
 त्वत्समः कापि दयालुवर्यः ॥ ४ ॥ अनाथनाथोऽसि सुदीनबन्धो  
 श्रीशाऽनुकम्पामृतपूर्णसिन्धो ॥ त्वत्पादभक्तिं तव दासदास्यं  
 त्वदीयमत्रार्थदृढैकनिष्ठाम् ॥ ५ ॥ गुरुस्मृतिं निर्मलबुद्धि-  
 माधिन्याधिक्षयं मे विजयं च देहि ॥ इष्टार्थसिद्धिं वरलोक-  
 वश्यं धनान्नवृद्धिं वरगोसमृद्धिम् ॥ ६ ॥ पुत्रादिलब्धिं म  
 उदारतां च देहीश मे चास्त्वभयं हि सर्वतः ॥ ब्रह्माग्निभूम्यो नम  
 ओषधीभ्यो वाचे नमो वाक्पतये च विष्णवे ॥ ७ ॥ शान्ताऽस्तु  
 भूर्नः शिवमन्तरिक्षं द्यौश्चाभयं नोऽस्तु दिशः शिवाश्च ॥ आपश्च  
 विद्युत्परिपान्तु देवाः शं सर्वतो मेऽभयमस्तु शान्तिः ॥ ८ ॥  
 इति श्रीमद्वासुदेवानन्दसरस्वतीविरचितं श्रीदत्तापराधक्षमापन-  
 स्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### २८९. श्रीदत्तप्रार्थनाचतुष्कम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ समस्तदोषशोषणं स्वभक्तचित्ततोषणं निजा-  
 श्रितप्रपोषणं यतीश्वरायभूषणम् ॥ त्रयीशिरोविभूषणं प्रदर्शितार्थ-  
 दूषणं भजेऽत्रिजं गतैषणं विभुं विभूतिभूषणम् ॥ १ ॥ समस्तलोक-  
 कारणं समस्तजीवधारणं समस्तदुष्टमारणं कुबुद्धिशक्तिजारणम् ॥  
 भजद्भयाद्रिदारणं भजत्कुर्मवारणं हरिं स्वभक्ततारणं नमामि  
 साधुचारणम् ॥ २ ॥ नमाम्यहं मुदास्पदं निवारिताखिलापदं  
 समस्तदुःखतापदं सुनीन्द्रवंद्य ते पदम् ॥ यदञ्चितान्तरा मदं  
 विहाय नित्यसंमदं प्रयान्ति नैव ते भिदं मुहुर्भजन्ति चाविदम्  
 ॥ ३ ॥ प्रसीद सर्वचेतने प्रसीद बुद्धिचेतने स्वभक्तहृन्निःकेतने

सदाम्ब दुःखशातने ॥ त्वमेव मे प्रसूर्मता त्वमेव मे प्रभो पिता  
 त्वमेव मेऽखिलेहितार्थदोऽखिलाकतोऽविता ॥ ४ ॥ इति श्रीम-  
 द्वासुदेवानन्दसरस्वतीविरचितं श्रीदत्तात्रेयप्रार्थनाचतुष्कं संपूर्णम् ॥

### २९०. दत्तप्रबोधः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ निलो हि यस्य महिमा न हि मानमेति स त्वं  
 महेश भगवन्मघवन्मुखेड्य ॥ उत्तिष्ठ तिष्ठदमृतैरमृतैरिवोक्तैर्गीता-  
 गमैश्च पुरुधा पुरुधामशालिन् ॥ १ ॥ भक्तेषु जागृहि मुदा  
 हिमुदारभावं तल्पं विधाय सविशेषविशेषहेतो ॥ यः शेष एष  
 सकलः सकलः स्वगीतैस्त्वं जागृहि श्रितपते तपते नमस्ते ॥ २ ॥  
 इद्धा जनान् विविधकष्टवशान्दयालुखयात्मा बभूव सकलार्तिहरोऽत्र  
 दत्तः ॥ अत्रेर्मुनेः सुतपसोऽपि फलं च दातुं बुद्ध्यस्व स त्वमिह  
 यन्महिमानियत्तः ॥ ३ ॥ आयात्यशेषविनुतोऽप्यवगाहनाय  
 दत्तोऽधुनेति सुरसिन्धुरपेक्षते त्वाम् ॥ क्षेत्रे तथैव कुरुसंज्ञक एत्य  
 सिद्धास्तस्थुस्तवाचमनदेश इनोदयात्प्राक् ॥ ४ ॥ संध्यामुपासितु-  
 मजोऽप्यधुना गमिष्यत्याकाङ्क्षते कृतिजनः प्रतिवीक्षते त्वाम् ॥  
 कृष्णातटेऽपि नरसिंहसुवाटिकायां सारार्तिकः कृतिजनः प्रतिवीक्षते  
 त्वां ॥ ५ ॥ गान्धर्वसंज्ञकपुरेऽपि सुभाविकास्ते ध्यानार्थमत्र  
 भगवान्समुपैष्यतीति ॥ मत्वास्थुराचरितसंनियताप्लवाद्या उत्तिष्ठ  
 देव भगवन्नत एव शीघ्रम् ॥ ६ ॥ पुत्री दिवः खगगणान् सुचिरं  
 प्रसुप्तानुत्पातयत्यरुणगा अधिरुह्य तूषाः ॥ काषायवस्त्रमपिधान-  
 मपावृणूद्यन्ताक्ष्यार्ग्रजोऽयमवलोकय तं पुरस्तात् ॥ ७ ॥ शाटी-  
 निभाभ्रपटलानि तवेन्द्रकाष्ठाभागं यतीन्द्रं रुधुर्गरुडाग्रजोऽतः ॥  
 अस्माभिरीश विदितो ह्युदितोऽयमेवं चन्द्रोऽपि ते मुखरुचिं चिरगां  
 जहाति ॥ ८ ॥ द्वारेऽर्जुनस्तव च तिष्ठति कार्तवीर्यः प्रहाद एष

यद्दुरेष मदालसाजः ॥ त्वां द्रष्टुकाम इतरे मुनयोऽपि चाहमुत्तिष्ठ  
दर्शय निजं सुमुखं प्रसीद ॥ ९ ॥ एवं प्रबुद्ध इव संस्तवनादभूत्स  
मालां कमण्डलुमधो डमरुं त्रिशूलम् ॥ चक्रं च शंखमुपरि  
स्वकरैर्दधानो नित्यं स मामवतु भावितवासुदेवः ॥ १० ॥ इति  
वासुदेवानंदसरस्वतीविरचितो दत्तप्रबोधः संपूर्णः ॥

२९१. दत्तात्रेयाष्टोत्तरशतनामावलिस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐकारतत्त्वरूपाय दिव्यज्ञानात्मने नमः ।  
नमोऽतीतमहाधाम्न ऐन्द्रार्चा ओजसे नमः ॥ १ ॥ नष्टमत्सर-  
गम्यायाऽगम्याचारात्मवर्त्मने । मोचितामेध्यकृतये हींवीजश्राणित-  
श्रिये ॥ २ ॥ मोहादिविभ्रमान्ताय बहुकायधराय च । भक्तदु-  
र्वैभवच्छेद्रे क्लींवीजवरजापिने ॥ ३ ॥ भवहेतुविनाशाय राजच्छो-  
णाधराय च । गतिप्रकम्पिताण्डाय चारुव्यायतबाहवे ॥ ४ ॥  
गतगर्वप्रियायाऽस्तु यमादियतचेतसे । वशिताजातवश्याय मुण्डिने  
अनसूयवे ॥ ५ ॥ वदद्वरेण्यवाग्जालाविस्पष्टविविधात्मने ।  
तपोधनप्रसन्नायेडापतिस्तुतकीर्तये ॥ ६ ॥ तेजोमण्यन्तरङ्गायाऽ-  
न्नरसन्नविहापिने । आन्तरस्थानसंस्थायाऽयैश्वर्यश्रौतगीतये ॥ ७ ॥  
वातादिभययुग्भावहेतवे हेतुहेतवे । जगदात्मात्मभूताय विद्विष-  
त्पङ्कघातिने ॥ ८ ॥ सुरवर्गोद्धृते भूत्या असुरावासभेदिने । नेत्रे  
च नयनाक्षणेऽचिञ्चेतनाय महात्मने ॥ ९ ॥ देवाधिदेवदेवाय  
वसुधासुरपालिने । याजिनामग्रगण्याय द्वांवीजजपतुष्टये ॥ १० ॥  
वासनावनदावाय धूलियुग्देहमालिने । यतिसंन्यासिगतये दत्तात्रे-  
येति संविदे ॥ ११ ॥ यजनास्यभुजेऽजाय तारकावासगामिने ।  
महाजवास्पृश्यायाऽऽत्ताकाराय विरूपिणे ॥ १२ ॥ नराय धी-  
प्रदीपाय यशस्त्रियशसे नमः । हारिणे चोज्ज्वलाङ्गायाऽन्नेस्तनूजाय

शंभवे ॥ १३ ॥ मोचितामरसंघाय धीमतां धीकराय च । बलिष्ठ-  
 विप्रलभ्याय यागहोमप्रियाय च ॥ १४ ॥ भजन्महिमविख्यात्रे-  
 ऽमरारिमहिमच्छिदे । लाभाय मुण्डिपूज्याय यमिने हेममालिने  
 ॥ १५ ॥ गतोपाधिव्याधये च हिरण्याहितकान्तये । यतीन्द्रचर्या  
 दधते नरभावौषधाय च ॥ १६ ॥ वरिष्ठयोगिपूज्याय तन्तुसंतन्वते  
 नमः । स्वात्मगाथासुतीर्थाय सुश्रिये षट्कराय च ॥ १७ ॥  
 तेजोमयोत्तमाङ्गाय नोदनानोद्यकर्मणे । हान्यासिमृतिविज्ञात्र  
 ओंकारितसुभक्तये ॥ १८ ॥ रूक्शुङ्गमनःखेदहृते दर्शनाविषयात्मने ।  
 राङ्गवाततवस्त्राय नरतत्त्वप्रकाशिने ॥ १९ ॥ द्वावितप्रणताघायाऽऽ-  
 त्तस्वजिष्णुस्वराशये । राजत्रयास्यैकरूपाय मस्थाय मसुबन्धवे  
 ॥ २० ॥ यतये चोदनातीतप्रचारप्रभवे नमः । मानरोषविहीनाय  
 शिष्यसंसिद्धिकारिणे ॥ २१ ॥ गत्रे पादविहीनाय चोदनाचोदिता-  
 त्मने । यवीयसेऽलर्कदुःखवारिणेऽखण्डितात्मने ॥ २२ ॥ हींबीजा-  
 याऽर्जुनेष्टाय दर्शनादर्शितात्मने । नतिसंतुष्टचित्ताय यतये  
 ब्रह्मचारिणे ॥ २३ ॥ इत्येष सत्त्वो वृत्तोऽयात्कं देयात्प्रजापिने ।  
 मस्करीशोमनुस्यूतः परब्रह्मपदप्रदः ॥ २४ ॥ इत्यनेकमंत्रगर्भितं  
 श्रीदत्तात्रेयाष्टोत्तरशतनामावलिस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### २९२. दत्तवेदपादस्तुतिः ।

श्रीदत्तात्रेयाय नमः ॥ अग्निमीळे परं देवं यज्ञस्य त्वां त्र्यधी-  
 श्वरम् ॥ स्तोमोऽयमग्रियोऽथर्षस्ते हृदिस्पृगस्तु शंतमः ॥ १ ॥ अयं  
 देवाय दूराय गिरां स्वाध्याय सात्वताम् ॥ स्तोमोऽस्वनेन विन्देयं  
 तद्विष्णोः परमं पदम् ॥ २ ॥ एता या लौकिकाः सन्तु हीना  
 वाचोऽपि नः प्रियाः ॥ बालस्येव पितुष्टे त्वं स नो मृळ महँअसि  
 ॥ ३ ॥ अयं वां नात्मनोस्तत्त्वमधिगम्यास्ति दुर्मनाः ॥ हृद्रोगं

मम सूर्य त्वं हरिमाणं च नाशय ॥ ४ ॥ प्रमन्महेऽस्मान्विद्धीति  
 स्तोतारस्ते वयं नमः ॥ भगवो देव ते स्तोममारे अस्मे च शृण्वते  
 ॥ ५ ॥ इन्द्रो मदाय यातीह सत्वरं सोमिनो यथा ॥ स्तोतृनेहि  
 तथाऽस्माँस्ते माध्वीर्गावो भवन्तु नः ॥ ६ ॥ द्वे विरूपेऽत्र माया-  
 याऽस्तेऽत्र मग्नोऽस्मि पीडितः ॥ माभितः संतपन्तीह सपत्नीरिव  
 पर्शवः ॥ ७ ॥ इदं श्रेष्ठमपि प्राप्य जन्म गन्ताथ एव तत् ॥  
 कुरु प्रसादं ज्ञात्वैतत्तेनाहं भूरि चाकन ॥ ८ ॥ प्रवस्तुज्ञानाज्जहाति  
 निष्कामश्चेन्मृतिं त्वहम् ॥ न तादृशोऽतः कामादि सर्वं रक्षो  
 निबर्हय ॥ ९ ॥ सुषुमामूर्धियः स्तोमैरागच्छैते वयं विभो ॥  
 त्वदंशास्त्वं पतिर्नोऽसि देवो देवेषु मेधिरः ॥ १० ॥ वसू रूपं  
 रूपमिह प्रतिरूपोऽसि नो पृथक् ॥ एतानि भूतानि विदुर्ब्राह्मणा ये  
 मनीषिणः ॥ ११ ॥ तं नु त्वां किं ब्रुवेऽल्पज्ञो भगवन्तं क्षमस्व भोः ॥  
 ओषमागहि मां त्वं चेत्सखा सन्नतिमन्यसे ॥ १२ ॥ ता वासना  
 घ्नन्ति यथा वृश्चिकस्थारसं विषम् ॥ अतो मां पाहि भूयिष्ठां नम-  
 उक्तिं विधेम ते ॥ १३ ॥ नि होता सीदसि विभो यत्वं यष्टुर्गृहे  
 प्रिय ॥ तं त्वा ह्वये ज्येष्ठराजं ब्रह्मणां ब्रह्मणस्पते ॥ १४ ॥ सेमा-  
 मविद्धि प्रभृतिमीशिषे योऽव मानिशम् ॥ त्वं विश्वेषां यदीशानो  
 ब्रह्मणा वेषि मे हवम् ॥ १५ ॥ मन्दः स्वकोऽयं दीनोऽज्ञ इति  
 विद्वान्भवान्प्रभुः ॥ इन्द्र आशाभ्यः परि मां सर्वाभ्यो अभयं करत्  
 ॥ १६ ॥ प्र य आरू पितां आर्निं त्वत्प्रसादाज्जहाति सः ॥ विमु-  
 च्यते तद्विप्रास्त्वां जागृवांसः समिन्धते ॥ १७ ॥ इच्छन्ति देवा  
 अपि ते प्रसादाय नृजन्म तत् ॥ विद्वान्नामानि ते दत्त विश्वाभि-  
 र्गीर्भिरीमहे ॥ १८ ॥ इन्द्र त्वा भजतः सुरैर्दुर्लभं किं तरामि  
 तत् ॥ भक्त्या क्लेशादि ते नावा गम्भीराँ उदधीँरिव ॥ १९ ॥

न ता रोद्धुं धियः शक्ता योगेनाऽपि ततः सदा ॥ त्रातारं धीमहीश  
 त्वां धियो यो नः प्रचोदयात् ॥ २० ॥ वैश्वानराय दत्त्वाऽन्नं  
 विधिलब्धं सदैव ते ॥ भवामो भजने सक्ता अस्माकं शृणुधी हवम्  
 ॥ २१ ॥ एवा त्वामिन्द्र विप्रासौ जागृवांसो विपन्यवः ॥ स्तुव-  
 न्येभ्यो हि ते कोऽपि न ज्यायाँ अस्ति वृत्रहन् ॥ २२ ॥  
 प्रक्रभुभ्यो गृणच्चस्ते मर्त्येभ्योऽप्यमृतत्वमित् ॥ दत्तं स्मृत्वा तत्र  
 मनोरथ आयातु पाजसा ॥ २३ ॥ इदमुत्पदिषं श्रेयो यज्जग्ध्वा  
 परितृप्यति ॥ साधुस्तद्भजनं तेऽस्मे इषं स्तोतृभ्य आभर ॥ २४ ॥  
 त्वामग्ने मायिनं मायां जेतारमपराजितम् ॥ हित्वा कं शरणं यामः  
 स नो बोधि श्रुधी हवम् ॥ २५ ॥ मही महेशोऽज्ञानेन भवानवतु  
 मावृतम् ॥ यथा वै सूर्यं स्वर्भानुस्तमसाविध्यदासुरः ॥ २६ ॥  
 प्रयुञ्जती यदात्मानं मनीषा मनसा सह ॥ तदैव भवतैकान्तं  
 जानता संगमेमहि ॥ २७ ॥ ऋतस्य गोपास्त्वं देहि मह्यं शं  
 युञ्जते धियः ॥ भीताय नाधमानाय ऋषये सप्तवध्रये ॥ २८ ॥  
 त्वं हि पातासि नो दत्त परिबाधस्व दुष्कृतम् ॥ कामादीन्यस्य  
 बीजानि जहि रक्षांसि सुकृतो ॥ २९ ॥ पिवा सोममिति श्रुत्वा  
 यष्टूर्हति शुभं द्रवत् ॥ आयासि पुरुरूप त्वमासु गोषूपपृच्यताम्  
 ॥ ३० ॥ इन्द्रं वोतान्यं न पृथङ् मन्ये मायाभिरिन्द्रवान् ॥  
 पुरुरूप इतीक्षे त्वममित्राँ सुषहान्कृधि ॥ ३१ ॥ यज्ञा यज्ञाधीश  
 सर्वे त्वन्मया अपि तेषु नः ॥ जपयज्ञो मतस्तेन समु पृष्णा गमे-  
 महि ॥ ३२ ॥ स्तुषे नराप्यं तुष्टः सन्नथो यस्या अयोमुखम् ॥  
 मायां जित्वा भवान्तां मे विश्वाहा शर्म यच्छतु ॥ ३३ ॥ जुषस्व  
 स्तोममीशैते प्रियासः सन्तु सूरयः ॥ वयं स्तोमप्रियानेन यच्छा नः  
 शर्म दीर्घश्रुत् ॥ ३४ ॥ उग्रो जज्ञे सृत्युरयमदुग्धा इव धेनवः ॥



धियो मेऽनेनेद्दगीश न जातो न जनिष्यते ॥ ३५ ॥ प्रब्रह्मैहीदमा-  
 ण्योर्वास्कमिव बन्धनात् ॥ मृत्युंजय प्रमादाख्यान्मृत्योर्मुक्षीय  
 माऽमृतात् ॥ ३६ ॥ यदद्य वर्ष्म तेनैव पश्येम शरदः शतम् ॥  
 स्तोत्राय ते हते मृत्यौ जीवेम शरदः शतम् ॥ ३७ ॥ प्रत्युत्तमं  
 महेशं त्वां मनामह इहागहि ॥ मृळा सुक्षत्र मृळ्य मा नो दुःशंस  
 ईशत ॥ ३८ ॥ तिस्रो वाचस्तेऽत्र वरां क ईशानं न याचिषत् ॥  
 भक्त्या गृणीमस्त्वां स्तोत्रैस्तेभिर्नस्तूयमागहि ॥ ३९ ॥ दूराद्विहाय  
 सर्वं त्वामृशयो ये च तुष्टुवः ॥ मर्ता अमर्त्यस्य ते तद्भूरि नाम  
 मनामहे ॥ ४० ॥ य इन्द्र त्वं यो नमसा स्वध्वरो हीति  
 संस्तुतः ॥ इन्द्रो ब्रह्मेन्द्र ऋषिरित्युप ब्रह्माणि नः शृणु ॥ ४१ ॥  
 वयमु त्वा वरं देवमस्मभ्यं शर्म सप्रथः ॥ मनामहे पृणन्तं  
 तदभित्वामिन्द्र नोनुमः ॥ ४२ ॥ प्रकृतान्यपि सूक्तानि  
 शृण्वन्तं जातवेदसम् ॥ त्वां गृणन्ति न के त्वं हि येषामिन्द्रो  
 युवा सखा ॥ ४३ ॥ त्वावतः पाहि नो मर्त्यान्यत इन्द्र  
 धयामहे ॥ आदिश्य पदभक्तिं ते ततो नो अभयं कृधि ॥ ४४ ॥  
 आ त्वा रथं न तुरगैः स्तोत्रैस्त्वा वर्तयामसि ॥ स त्वं न इन्द्र  
 मृळ्य यस्य ते स्वादु सख्यमित् ॥ ४५ ॥ आ प्रबोधं भवोऽबोधः  
 स्वभवहुःखदोऽशुचिः ॥ पतितान्दुःखिताञ्चूचः पाहि त्वं शृणुधी गिरः  
 ॥ ४६ ॥ इन्द्राय साम ते गातुं न क्षमो नाम ते गृणे ॥ बण्महो-  
 ऽसि सूर्यं त्वं सत्रादेव महोऽसि ॥ ४७ ॥ सोमः पुनानोतारामो  
 मया त्वं नाधिलक्षितः ॥ ईक्षे तुच्छान्बहिर्भोगान्योषा जारमिव  
 प्रियम् ॥ ४८ ॥ प्रण इन्द्रोरपि स्मरं रूपं ते दर्शयामलम् ॥  
 नृन्स्तोतृन्पाद्यंहसो नो जहि रक्षांसि सुक्रतो ॥ ४९ ॥ हि न्वन्ति  
 द्वैतमस्यस्माद्भयं विन्दति मामिह ॥ यदन्ति दूरके यच्च पवमान

वि तज्जहि ॥ ५० ॥ धर्ता कारकशक्तीनां सर्वेषां त्वमिहैक इत् ॥  
 यशोऽत्रेदं पवित्रं ते विततं ब्रह्मणस्पते ॥ ५१ ॥ असर्जि भवता  
 विश्वमनित्यमवशं बृहत् ॥ त्वं संस्मर ज्ञ शरण वत्सं जातं न धेनवः  
 ॥ ५२ ॥ पुरोजितीश भो भूमन् तत्र माममृतं कृधि ॥ यत्रानन्दा-  
 श्च मोदाश्च मुदः प्रमुद आसते ॥ ५३ ॥ अयं स इति विद्वान्स-  
 न्यमाय घृतवद्धविः ॥ कुतो जुहोम्यतोऽदेवा यमाय जुहुता हविः  
 ॥ ५४ ॥ निवर्तध्वमितो देवा भद्रं नो अपि वातय ॥ मनो हरे मां  
 पाह्यार्तं पिता पुत्रमिव प्रियम् ॥ ५५ ॥ प्रमा प्रमाता प्रमेयं त्रि-  
 पुटीह न विद्यते ॥ रूपं तेऽविकृतं सत्त्वं मधुमन्मे परायणम् ॥ ५६ ॥  
 प्रहोतारोऽत्रैव मनोन्वाहुवामह इत्यतः ॥ गमादि मनसो नास्य यो  
 यज्ञस्य प्रसाधनः ॥ ५७ ॥ ये यज्ञेनार्चन्त्यनेन सर्वे नन्दन्ति ते  
 त्वया ॥ नान्येऽतस्त्वत्प्रिया एव विरूपासो दिवस्परि ॥ ५८ ॥  
 देवानां नु वशे योऽस्य सुमङ्गलीरियं वधूः ॥ स्नेहेषु त्वच्युतो भोगी  
 पतिर्बन्धेषु बध्यते ॥ ५९ ॥ विहितं सर्वमित्ते त्वमतो ज्यायांश्च  
 पूरुषः ॥ पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि ॥ ६० ॥  
 हये जाये इति वदन्या सालावृकहत्समा ॥ तन्मयो न स वेदामु-  
 मात्मानं तव पूरुष ॥ ६१ ॥ उभा उपाधितोऽत्रैकः पाकेन मनसा-  
 न्तितः ॥ त्वां यदीक्षेत तं माता रेह्ळि स उ रेह्ळि मातरम्  
 ॥ ६२ ॥ तदिदात्मन्हृदि वपुः पश्यन्तस्ते मनीषया ॥ मुनयो  
 वातरशनाः पिशङ्गा वसतेऽमलाः ॥ ६३ ॥ त्वं चिन्मयं बुधा रूपं  
 संजानाना उपासते ॥ यो अस्य पारे रजसः स नः पर्षदति द्विषः  
 ॥ ६४ ॥ इषे त्वोर्जे चौदनेन नित्यहोमेऽपि गव्यतः ॥ यजन्त्यहं  
 त्वकामस्त्वां श्रेष्ठतमाय कर्मणे ॥ ६५ ॥ अग्न आयाहीति गातुं  
 त्वाऽक्षमः स्तौमि केवलम् ॥ निषीद मे हृदि यथा निहोता सत्सि

बर्हिषि ॥ ६६ ॥ शं नो देवीः प्रसादात्ते सन्तु धीवृत्तयोऽनिशम् ॥  
 आत्मप्रवाहाः स्वारस्याच्छंयोरभिस्त्रवन्तु नः ॥ ६७ ॥ ज्ञातेऽस्मि-  
 न्पाशमुक्तिः सकलविदिति तत्स्यादनिर्देश्यमेकं सूक्ष्मं चातीन्द्रियं  
 सत्तदयमिति गिराशाब्दनिर्देश्यमेव ॥ वाक्यैस्तत्त्वं विरोधेऽपि सति  
 सुमतिभिः सोऽयमित्यादिवत्तद्भागत्यागेन लक्ष्यं वरगुरुकृपया  
 लभ्यमैक्यं हि तज्ज्ञैः ॥ ६८ ॥ इति श्रीदत्तवेदपादस्तुतिः  
 समाप्ता ॥

२९३. श्रीमहावाक्यार्थबोधः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ त्वामग्ने रविचन्द्रादेर्भासकं लोकचालकम् ।  
 पृच्छामीदं कथं ज्ञानमाप्नुयां दयया वद ॥ १ ॥ इति पृष्टोऽर्जुने-  
 नाह श्रीदत्तः शृणु भूपते । यदेकं परमं ब्रह्म नित्यमुक्तमविक्रियम्  
 ॥ २ ॥ तत्स्वशक्तिसमाविष्टमीशमाहुर्मनीषिणः । स विष्णुः स  
 शिवो ब्रह्मा सोऽग्निरिन्द्रः स्वराङ्गहरिः ॥ ३ ॥ धाता कालः क्रिया  
 कर्ता जीवनं मृत्युरामयः । नारायणो हृषीकेशो भूतं भव्यं भवच्च  
 सः ॥ ४ ॥ वस्तुमात्रमिदं सर्वमहमेवास्मि सर्वदृक् । अहमेव परं  
 ध्येयं मिथ्याभ्रमनिवृत्तये ॥ ५ ॥ भ्रमस्यापि च नामानि कल्पितानि  
 शृणुष्व तत् । मायाविद्या परा देवी मनोऽनादिर्भ्रमस्त्रिवृत् ॥ ६ ॥  
 प्रधानं प्रकृतिर्ब्रह्म योनिः शक्तिश्च कारणम् । मोहोऽध्यासस्तमो-  
 ऽज्ञानं प्रस्वापः कारणं त्विदम् ॥ ७ ॥ अतोऽविद्या पञ्चपर्वा  
 महामोहो द्विरूपकः । विक्षेपावृतिशक्त्याख्य आद्यात्सर्गोऽत्र  
 भौतिकः ॥ ८ ॥ स्वरूपमावृणोत्यन्यो मुक्तं चेशं विना भृशम् ।  
 योऽविद्यातर्तोऽवशो दुःखी भ्रान्तोऽज्ञो जीव एव सः ॥ ९ ॥  
 समष्टिरीशः सर्वज्ञो वशमायः स्वराद् सुखः । असत्त्वाभानाख्य-  
 भक्तावृतिहृद्गुरुरप्यसौ ॥ १० ॥ मतं मूढैर्जगन्नित्यं तथा जीवेश-

योर्भिदा । एवं भेदत्रयेणेदं भातं वस्त्वेव मायया ॥ ११ ॥ तन्न-  
 चृत्यै कृता वेदैः सृष्टिप्रलयकल्पना । मूढस्य सा मता सत्या  
 भ्रमोऽयं लीयते विदा ॥ १२ ॥ ज्ञानं विद्येति तां प्राहुर्द्वेषा विद्या  
 विचारजा । परोक्षा चापरोक्षेति तत्राद्या गुरुवक्त्रतः ॥ १३ ॥  
 अमानित्वादियुक्तैः सा विज्ञेया साधनान्वितैः । गुरुभक्तिं विना  
 सापि दुर्लभा मोक्षदायिनी ॥ १४ ॥ यस्य देवे परा भक्तिर्यथा  
 देवे तथा गुरौ । तस्यैते कथिता ह्यर्थाः प्रकाशन्ते महात्मनः  
 ॥ १५ ॥ गुर्वनुग्रहमात्रेण विचारः सुलभो नृणाम् । विचारेण परं  
 तत्त्वं स्वयमेव प्रकाशते ॥ १६ ॥ राजंस्त्वयाखिलं कर्म योगयागा-  
 दिकं मयि । समर्पितं ततोऽयं ते विचारोऽद्य समुत्थितः ॥ १७ ॥  
 वैराग्यं परमं जातं भ्रममोहमलापहम् । अतो विद्याप्रसादस्ते  
 भविष्यत्यचिरेण हि ॥ १८ ॥ विद्या ज्ञेया परोक्षेयं वेदान्तश्रवणा-  
 त्मिका । उपक्रमादिभिर्लिङ्गैर्यत्तात्पर्याविधारणम् ॥ १९ ॥ तदेव  
 श्रवणं तनु हरेत्संशयभावनाम् । असत्त्वावरणं चापि वस्त्वस्तीति  
 तदेक्षते ॥ २० ॥ मननं कार्यमस्येदमाश्वसंभावनाहरम् । वशी-  
 काराख्यवैराग्ययुक्तस्येदं सुखावहम् ॥ २१ ॥ आत्मैव नेह नानास्ति  
 मोहितस्य जगत्त्वदम् । भाति नान्यस्य मिथ्येदं स्वप्नो निद्रागमे  
 यथा ॥ २२ ॥ विषयान्ध्यायतो यद्वन्मनोरथपरम्परा । असत्येव  
 सदा भाति नानाविषयगोचरा ॥ २३ ॥ परमात्मैक एवाहं वस्तु-  
 मात्रश्चिदात्मकः । मयि मिथ्याविभागोऽयं दृश्यतेऽनाद्यविद्यया  
 ॥ २४ ॥ भ्रमो मोहो महामाया प्रधानं प्रकृतिर्मनः । अज्ञानं  
 शक्तिरव्यक्तं गुणसाम्यमितीरिता ॥ २५ ॥ सैव मिथ्यामतिर्यस्या  
 इदं भातं चराचरम् । एवं विचारश्रवणानुसारि मननं तु तत्  
 ॥ २६ ॥ सच्चिदानन्दलक्ष्मापि परात्मा माययाऽऽवृतः । निजं

स्वरूपं विस्मृत्य ययेदं दृश्यते जगत् ॥ २७ ॥ महान्ततोऽहम-  
स्तस्मात्तन्मात्राणि ततः क्रमात् । भूतेन्द्रियसुराणां च सर्गकृत्यामा-  
ऽहमः क्रमात् ॥ २८ ॥ न ह्यत्र नियमो राजन्नसत्ये मानसभ्रमे ।  
कदाचिद्युगपत्सृष्टिः क्रमसृष्टिः कदाचन ॥ २९ ॥ देहाः सुरासुर-  
नरतिरश्वां भौतिका इमे । स्थूलैः स्थूलानि सूक्ष्मैश्च सूक्ष्माण्येवं  
भवोद्भवः ॥ ३० ॥ उपक्रमोऽयमाख्यात उपसंहार उच्यते ।  
भूतेषु भौतिकानीह क्रमाद्योगी विलापयेत् ॥ ३१ ॥ पृथ्वी जले  
जलं वह्नौ वह्निर्वायौ स खे च खम् । अहमि प्राणगो देवा मन-  
श्चापि स्वकारणे ॥ ३२ ॥ अहंकारोऽपि महति सोऽव्यक्ते तच्च  
निष्कले । स एवाहं परात्मैकः शुद्धो मुक्त उपाधितः ॥ ३३ ॥  
एवं निदिध्यासनत एकः स्वात्मैव शिष्यते । तस्मान्नास्त्यपरं  
किञ्चिदात्मैवायं यथा तथा ॥ ३४ ॥ राजन्मम प्रसादात्त्वं खलु  
धन्योऽस्यसंशयम् । अन्तःकरणशुद्धिस्ते जाता वैराग्यमुत्तमम्  
॥ ३५ ॥ मयि भक्तिर्दृढा प्रेम्णा श्रवणं चापि विस्तरात् । प्रपन्न-  
स्थापि चित्तस्था सर्वथा विलयं गता ॥ ३६ ॥ तत्त्वमेकं परं ब्रह्म  
न द्वितीयं कदापि हि । एवं शमादिरूपां तामारूढो भव भूमिकाम्  
॥ ३७ ॥ त्वं साक्षात्कारसूपायक्रमं विद्मथ भूपते । दत्तचित्तो  
भवाद्यात्र तत्त्वनिश्चयकारक ॥ ३८ ॥ सर्वसाधनसंपन्नः पुरुषो  
जातनिश्चयः । श्रोत्रियं ब्रह्मनिष्ठं तं सद्गुरुं शरणं व्रजेत् ॥ ३९ ॥  
तत्त्वमस्यादिवाक्यार्थमुपदिष्टं तु षड्विधैः । लिङ्गैर्धिया समालोच्य  
बुधः समवधारयेत् ॥ ४० ॥ श्रवणं त्विदमेवोक्तं तत्समासेन ते  
ब्रुवे । यतस्त्वं शिष्यतां प्राप्सो मत्सेवाहतकिल्बिषः ॥ ४१ ॥  
तत्पदेन परं ब्रह्म त्वंपदेन च पूरुषम् । अनूद्यैक्यं तयोर्भूप बोध्यते-  
ऽसिपदेन सत् ॥ ४२ ॥ विरुद्धस्य त्वमर्थस्य तदर्थत्वं कथं भवेत् ।

इति चेच्छृणु राजेन्द्र तयोरैक्ये निदर्शनम् ॥ ४३ ॥ देवदत्तः  
 क्वचिद्दृष्टो युवा देशान्तरे स च । पुनर्दृष्टो जरां प्राप्तः सोऽय-  
 मित्यवधार्यते ॥ ४४ ॥ पूर्वदेशमवस्थां च त्यक्त्वेदं तस्य वार्द्धकम् ।  
 देशं चापि यथैकेन पिण्डेनैक्यं प्रतीयते ॥ ४५ ॥ त्यक्त्वा द्व्यंशौ  
 तथाऽत्रापि वाक्य ऐक्यं हि लक्ष्यते ॥ त्वंपदस्य च वाच्यार्थः संसा-  
 रीति सुनिश्चितः ॥ ४६ ॥ कर्ता भोक्ता सुखी दुःखी माययैव न  
 तत्त्वतः ॥ देहेन्द्रियमनःप्राणाहंकारेभ्यो विलक्षणः ॥ ४७ ॥ वस्तुतः  
 सच्चिदानन्दस्वरूपो गुणगोचरः ॥ एकांशस्तत्र चिद्रूपमन्यः संसारि-  
 ताऽस्य च ॥ ४८ ॥ एवं त्वमर्थं निश्चित्य तदर्थमपि निश्चिनु ॥  
 अतद्व्यावृत्त्या विधिना साक्षाच्च श्रुतियुक्तितः ॥ ४९ ॥ तत्पदस्य च  
 वाच्यार्थः सर्वज्ञः परमेश्वरः ॥ तस्यैकोऽंशोऽपि चिद्रूपं सर्वज्ञत्वादि  
 चापरः ॥ ५० ॥ त्यक्त्वा विरुद्धवाच्यांशद्वयं जीवेशयोरिह ॥  
 लक्ष्यौ चिदंशौ निर्बाधं पदयोरुभयोरपि ॥ ५१ ॥ अविरुद्धं तयोरैक्यं  
 लक्षणालक्षितं द्वयोः ॥ वाक्यार्थोऽयं सुनिष्पन्नस्त्वं ब्रह्म परमं हि  
 तत् ॥ ५२ ॥ तदेव त्वं परं ब्रह्म नास्ति भेदः कथंचन ॥ अखण्डैक-  
 रसत्वेन वाक्यार्थोऽत्र सतां मतः ॥ ५३ ॥ विशेष्यं त्वंपदं तस्य तत्पदं  
 च विशेषणम् ॥ निरस्यतेऽस्य दुःखित्वं सुखित्वं च विधीयते ॥ ५४ ॥  
 वैपरीत्येन विज्ञेयं विशेष्यं तत्पदं तथा ॥ विशेषणं त्वंपदं च पारो-  
 क्ष्यस्य निरासकृत् ॥ ५५ ॥ तद्ब्रह्म परमं शुद्धं त्वमात्मैव निरामयः ॥  
 इत्यैक्यं भूप विज्ञेयं वेदोक्तं गुर्वनुग्रहात् ॥ ५६ ॥ स्वात्मैक्यार्थमियं  
 प्रोक्ता सुधीभिर्भागलक्षणा ॥ त्रिकाण्डेनापि वेदेन सोऽयमर्थो विनि-  
 श्रितः ॥ ५७ ॥ स्थूलधीभिः सुदुर्ज्ञेयो विज्ञेयो हि मनीषिभिः ॥  
 पर्यवस्यन्ति वेदाद्या अत्रैव विविधा अपि ॥ ५८ ॥ शास्त्रतत्त्वमवि-  
 ज्ञाय मूढाः शास्त्राणि सर्वशः ॥ ते प्रवृत्तिपराण्येव कथयन्ति

कुतर्कतः ॥ ५९ ॥ उपक्रमोपसंहारावभ्यासोऽपूर्वता फलम् ॥ अर्थ-  
वादोपपत्ती च लिङ्गं तात्पर्यनिर्णये ॥ ६० ॥ प्राक् सदैवेत्युपक्रम्यैतदा-  
त्म्यमिदमेव सत् ॥ उपसंहृतमित्येकमभ्यासो नवधा परम् ॥ ६१ ॥  
शाब्देनैव ह्यखण्डार्थविनयत्वं तृतीयकम् ॥ तुर्यं विदेहकैवल्यं प्रार-  
ब्धान्ते विवेकिनः ॥ ६२ ॥ षष्ठं मृदादिदृष्टान्तैर्निर्णयस्तूपपत्तिकम् ॥  
सृष्टिस्थित्यन्तप्रवेशानियमः शोधनं फलम् ॥ ६३ ॥ सप्तार्थवादास्त-  
द्रूपं पञ्चमं लिङ्गमुच्यते ॥ सर्वस्यात्मन उत्पत्तेरवस्थानाच्च तत्र हि  
॥ ६४ ॥ पुनर्लयाज्जगौ वेदः कारणब्रह्ममात्रताम् ॥ सूर्यस्येव जले  
चात्र प्रवेशमपि चात्र तु ॥ ६५ ॥ अन्तर्यामितया भेदात्सदा निय-  
मनं स्मृतम् ॥ तथा रोहितरूपाद्यैः पदार्थपरिशोधनम् ॥ ६६ ॥  
अभेदज्ञानस्य परं स्वात्मैक्यममृतं फलम् ॥ एवं सप्तार्थवादात्मलक्षणं  
पञ्चमं मतम् ॥ ६७ ॥ षड्लिङ्गैरिति तात्पर्यावधृतिः श्रवणं  
स्मृतम् ॥ आस्थायाथो योगभूमिं मननादि चरेद्बुधः ॥ ६८ ॥  
इति श्रीमहावाक्यार्थबोधः संपूर्णः ॥

### २९४. दत्तात्रेयभक्तिनिरूपणस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ प्रयतेः सुलभो भक्त्याऽयमात्मा पुरुषः परः ।  
इति वेदादिनोक्तं तद्भक्तिर्मुख्याऽधुनोच्यते ॥ १ ॥ निर्विकल्पं परं  
ब्रह्म साक्षात्कर्तुमनीश्वराः । ये मंदास्तेऽनुकम्प्यन्ते सविशेषनिरूपणैः  
॥ २ ॥ वशीकृते मनस्येषां सगुणब्रह्मशीलनात् । तदेवाविर्भवेत्सा-  
क्षादपेतोपाधिकल्पनम् ॥ ३ ॥ इत्युक्तेर्नवधा भक्तिर्वाच्यात्र स्मरणा-  
त्मिका । श्रेष्ठार्थान्यत्र च व्याप्ता हृच्छुद्ध्यास्य पदप्रदा ॥ ४ ॥  
सहस्राङ्गात्मकर्माख्यभगवत्स्मरणात्सदा । कृतं कर्माप्यकर्मैव येनैष  
द्राग्विमुच्यते ॥ ५ ॥ कृत्वेश्वरे परां भक्तिं भगवत्कीर्तनादपि ।  
सद्भक्तो मायिकं पाशं छित्त्वा याति स सद्भक्तिम् ॥ ६ ॥ तद्गुणश्रव-

णाञ्चापि श्रद्धावानबहिर्मुखः । समाहितोऽनसूयुर्ना क्षिप्रं नैष्कर्म्य-  
 सिद्धिभाक् ॥ ७ ॥ वज्राङ्कुशध्वजाब्जाङ्कभगवत्पादसेवनात् । भित्त्वा  
 मायावृत्तिं सत्त्वशुद्धो याति परं पदम् ॥ ८ ॥ जलेष्टास्रं कनिष्ठिक्या  
 लिखित्वा तारमन्तरे । पत्रेष्वष्टाक्षरं चैकं हृत्स्थमावाह्य तत्र षट्  
 ॥ ९ ॥ प्रदर्श्य मुद्रा ऋष्यादीन्सृत्वा विन्यस्य चोक्तैः । मात्राः  
 शाखाङ्गेषु भूखवाताभ्यन्वीजतो हृदा ॥ १० ॥ दत्त्वोपचाराङ्गन्धा-  
 दीन् जपित्वाऽष्टसहस्रकम् । तर्पयित्वा चाष्टशतमृष्यादीनेकवारतः  
 ॥ ११ ॥ पुनः संपूज्य विन्यस्य तं स्वात्मन्युद्धसेत्परम् । त्रिसंध्य-  
 मर्चनं त्वेवं यतेरन्यस्य चोच्यते ॥ १२ ॥ लब्ध्वा पूर्वं स्वगृहोक्तं  
 द्विजत्वं भक्तिमान्शुचिः । ज्ञात्वा धनर्णसिद्धारिचक्रसिद्धं मनुं गुरोः  
 ॥ १३ ॥ लब्ध्वाऽर्णसंख्यालक्षां प्राक् पुरश्चर्या यथाविधि । कृत्वा-  
 ऽनेनार्चयेदर्चा नियतो नित्यकर्मकृत् ॥ १४ ॥ लौहीं वा संस्कृतां  
 शैलीं विभोः सास्त्रां सलक्षणाम् । सोऽपि लब्ध्वाखिलान्कामान्  
 देहान्ते तन्मयो भवेत् ॥ १५ ॥ पुरा नारायणं ब्रह्मा सत्यक्षेत्रे दया-  
 निधिम् । प्रणतोऽपृच्छदेकं किमुपास्यं दैवतं परम् ॥ १६ ॥  
 स प्राह मामकं धाम यहत्तात्रेयसंज्ञितम् । सदानन्दात्मकं शुद्धं  
 सारिवकं तारकं परम् ॥ १७ ॥ विश्वरूपं जगद्योनिं तदेवोपास्त्व  
 दैवतम् । लकारं वह्निसंयुक्तं सतुण्डाक्षरविन्दुकम् ॥ १८ ॥  
 तदर्चने मनुं विद्धि छन्दो गायत्रिकास्य च । सदाशिवऋषिर्देवो  
 दत्तात्रेयश्चतुर्भुजः ॥ १९ ॥ मनुरेकाक्षरोऽस्यायं जाप्यो गर्भादिता-  
 रणः । तारः श्रीदुर्गा क्रौं भूमिदत्तैकाक्षरयुञ्जानुः ॥ २० ॥ षडक्षरो  
 योगदोऽयं सर्वसंपत्समृद्धिकृत् । ऋष्यादिः पूर्ववक्ष्यासो बीजैः  
 शाखाहृदादिषु ॥ २१ ॥ दत्तात्रेयं शिवं शान्तमिन्द्रनीलनिभं  
 विभुम् । आत्ममायारतं देवमवधूतं दिगम्बरम् ॥ २२ ॥



भस्मोद्धूलितसवाङ्गं जटाजूटधरं विभुम् । चतुर्बाहुमुदाराङ्गं  
 प्रफुल्लकमलेक्षणम् ॥ २३ ॥ ज्ञानयोगनिधिं विश्वगुरुं योगि-  
 जनप्रियम् । भक्तानुकम्पिनं सर्वसाक्षिणं सिद्धसेवितम् ॥ २४ ॥  
 इत्यौपनिषदं दत्तं ध्यात्वैकाग्र्यं मनुं जपेत् । स वाञ्छितफलं  
 भुक्त्वा परत्र श्रेय आप्नुयात् ॥ २५ ॥ सैकाक्षरं चतुर्थ्यन्तं  
 दत्तात्रेयं नमोन्वितम् । अष्टार्णमंत्रं गायत्रं विद्धि द्वां बीजमस्य  
 तु ॥ २६ ॥ चतुर्थीं कीलकं शक्तिर्नम आर्षः सदाशिवः ।  
 दत्तात्रेयपदस्यार्थः सत्यानन्दचिदात्मकः ॥ २७ ॥ प्रह्वीभावो  
 नमोर्थस्तु पूर्णानन्दैकविग्रहः । तारं सबिन्दुं तुण्डाणं दुर्गां क्रौं  
 तुर्यमेहि च ॥ २८ ॥ दत्तात्रेयेति संबुद्ध्या स्वाहान्तं द्वादशाक्षरम् ।  
 सर्वकामदुघं विद्धि गायत्रं भो शिवार्षकम् ॥ २९ ॥ वराभयदहस्तं  
 यो भजेदाभ्यां महाव्रतः । सर्वान्कामानिहैवाश्वा सोऽमृतो भवति  
 ध्रुवम् ॥ ३० ॥ ॐ बीजं स्वाहात्र शक्तिः संबुद्धिः कीलकं  
 क्रमात् । द्वाभ्यां हृदि च के द्वाभ्यां शिखायां क्रियया न्यसेत्  
 ॥ ३१ ॥ संबुद्धिभ्यां स्कन्धचक्षुर्द्वयेस्त्रेऽन्त्येन तन्मयः । चतुर्बीजैः  
 सक्रियाख्यान्त्याभ्यां न्यासं करादिषु ॥ ३२ ॥ कृत्वा यजेद्देवदेवं  
 यन्नन्यस्तमभीष्टदम् । दत्तात्रेय हरे कृष्ण उन्मत्तानन्ददायक  
 ॥ ३३ ॥ दिगम्बर मुने बाल पिशाचज्ञानसागर । आनुष्टुभः  
 शिवार्षोऽयं षड्भुजात्रेयदैवतः ॥ ३४ ॥ द्वाभ्यां द्वाभ्यां हृच्छि-  
 रसोः शिखायामेकतो गले । द्वाभ्यामेकैकेन दोर्द्वये द्वाभ्यां  
 तथास्त्रके ॥ ३५ ॥ विन्यस्य जपिता दोषमुक्तः सर्वोपकारकृत् ।  
 तारं वायुं क्हां कामं क्ळं हां दुर्गां हूं च विद्धि सौः ॥ ३६ ॥  
 दत्तात्रेयं चतुर्थ्यन्तं स्वाहान्तं षोडशाक्षरम् । वायुस्थाने तु  
 वाग्बीजं नमोऽन्ते योजयाथव ॥ ३७ ॥ स्वाहैकत्र नमोऽन्यत्र

शक्तिर्बीजं च कीलकम् । तारश्चतुर्थी गायत्री मंत्रराजः शिवोदितः  
 ॥ ३८ ॥ हृदि द्वे के त्रीणि शिखायां चैकं कवचे दशोः । चतुर्थी-  
 मन्त्यमध्ये च विन्यस्य जपकामदम् ॥ ३९ ॥ सच्चिदानन्दस्वरूपी  
 सुखी मुक्तो भवत्यतः । सिद्धगन्धर्वादिसङ्गी लक्षजाप्यष्टसिद्धिभाक्  
 ॥ ४० ॥ त्रिदेवलोकसंचारी कोटिजापि च दत्तवत् । दशकोटि-  
 जपी साक्षाज्जरामरणवर्जितः ॥ ४१ ॥ द्वाष्टकोटिजपी सिद्धः  
 परकायगतादिकृत् । मन्त्रशक्तिरियं श्लोका अभिगीता इहाप्यमी  
 ॥ ४२ ॥ खड्गस्तम्भो जलस्तम्भः सेनास्तम्भस्तथैव च । इच्छा-  
 सिद्धिर्विशिष्यं च दिक्पालैः सह भाषणम् ॥ ४३ ॥ वायुवद्गति-  
 रित्याहुराह्लादित्वं च चन्द्रवत् । अग्निवत्सर्वभक्षत्वं नित्यतृप्तत्वमेव  
 च ॥ ४४ ॥ सर्वभाषापरिज्ञानं सर्वचित्तावबोधनम् । वापीकूप-  
 समुद्राणां पर्वतानां च चालनम् ॥ ४५ ॥ दत्तात्रेयमयः स्वच्छो  
 भवेत्स व्यासवल्कविः । इतीदं षोडशार्णस्य माहात्म्यं तत्प्रयत्नतः  
 ॥ ४६ ॥ प्राणो देयो मनश्चक्षुश्छित्त्वा देयं शिरो वपुः । न देयः  
 षोडशार्णोऽसौ सच्छिष्याय महात्मने ॥ ४७ ॥ महागुणवते देयः  
 कुप्येत प्रभुरन्यथा । मालाकमण्डलूवाद्यत्रिशूले शङ्खचक्रके  
 ॥ ४८ ॥ दधानमन्त्रिवरदं दत्तात्रेयं त्र्यधीश्वरम् । ध्यात्वेत्यं विधि-  
 वन्मन्त्रजाप्युक्तफलभागभवेत् ॥ ४९ ॥ ॐ नमो भगवान्दत्तात्रेय-  
 स्सरणमात्रसंतुष्टो महाभयनिवारणो महाज्ञानप्रदः ॥ ५० ॥ विदा-  
 नन्दात्मा बालोन्मत्तपिशाचवेषो महायोग्यवधूतोऽनसूयानन्द-  
 वर्धनोऽत्रिपुत्रः ॥ ५१ ॥ ॐ भवबन्धविमोचनो ह्रीं सर्वविभूतिदः  
 क्रौं असाध्याकर्षणं ऐं वाक्प्रदः ॥ ५२ ॥ क्लींजगन्नयवशीकरणः सौः  
 सर्वमनःक्षोभणः श्रींमहासंपत्प्रदो ग्लौं भूमण्डलाधिपत्यप्रदः ॥ ५३ ॥

द्रां चिरजीवी वषड्वशीकुरु वौषडाकर्षय हुं विद्वेषय फडु-  
 च्चाटय ठः ठः ॥ ५४ ॥ स्तम्भय खें खें मारय नमः संपन्नय  
 स्वाहा पोषय परमन्नपरयन्नपरतन्नाणि ॥ ५५ ॥ छिन्धि ग्रहान्नि-  
 वारय व्याधीन्विनाशय दुःखं हर दारिद्र्यं विद्रावय देहं पोषय  
 ॥ ५६ ॥ चित्तं तोषय सर्वमन्नस्वरूपः सर्वतन्नस्वरूपः सर्वपल्लव-  
 स्वरूपः ॥ ५७ ॥ ॐ नमो महासिद्धः स्वाहान्तो मालामन्नः ।  
 प्रथमान्तां चतुर्थ्यां द्विः क्रियाश्च व्याहरेत् ॥ ५८ ॥ विष्णुनोक्ता  
 इमे मन्त्रा ब्रह्मणे कामधेनवः । प्रयोगग्रहभूतारिकुट्टशुक्तापभीतिहाः  
 ॥ ५९ ॥ कामिनोऽभीष्टफलदा देवसांनिध्यकारकाः । तद्रच्च-  
 वज्रकवचं दत्तनामसहस्रकम् ॥ ६० ॥ एषामन्यतमेनेशं यो  
 वैदिकविधानतः । उपास्ते चित्तशुद्ध्या स मुच्यतेऽत्र परत्र वा  
 ॥ ६१ ॥ दत्तात्रेयनिवासं तदाचण्डालश्वगोखरम् । ब्रह्मादिस्तम्ब-  
 पर्यन्तं समदृक् प्रणमेत्सुधीः ॥ ६२ ॥ चालको भासकोऽस्त्येषां  
 सच्चिदात्मा स्वयंप्रभः । अस्ति भाति प्रियत्वेन भगवानेव नापरः  
 ॥ ६३ ॥ यथाधिपे वशा भृत्या निर्माणा ईश्वरे तथा । विदध्या-  
 त्स्वात्मनो दास्यं निरीहं द्वैतदर्शने ॥ ६४ ॥ सख्योः सख्यं यथा  
 लोके निरपेक्षं तथात्मनः । परात्मनापि सततं समाधेः प्राक् प्रकल्प-  
 येत् ॥ ६५ ॥ कर्तृत्वादि न मय्येके शुद्धे देहादिसाक्षिणि ।  
 इतीक्षणमसंदिग्धं सर्वस्वात्मनिवेदनम् ॥ ६६ ॥ अतीत्य वरदेशा-  
 दीन् काश्यां संतोष्य दीपकः । वेदधर्मगुरुं रुग्णं कष्टेन हि महा-  
 मतिः ॥ ६७ ॥ श्रीदत्तलीलाश्रवणं यथाचे तुष्ट एव सः । गुरुः  
 शिष्याय यत्प्राह मुक्त्यै तत्सार उच्यते ॥ ६८ ॥ इति श्रीदत्ता-  
 त्रेयभक्तिनिरूपणस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

## २९५. गुरुवरप्रार्थनापंचरत्नस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ यं विज्ञातुं भृगुर्यः स्वपितरमुपगतः पंचवारं  
 यथावज्ज्ञानादेवामृताप्तेः सततमनुपमं चिद्विवेकादि लब्ध्वा ।  
 तस्मै तुभ्यं नमः श्रीहरिहरगुरवे सच्चिदानंदमुक्तानंताद्वैतप्रतीते न  
 कुरु कितवतां पाहि मां दीनबंधो ॥ १ ॥ यस्माद्दृश्यस्य जन्मस्थि-  
 तिविलयमिमे तैत्तिरीयाः पठन्ति स्वाविद्यामात्रयोगात्सुखशयनतले  
 मुख्यतः स्वप्नवच्च । तस्मै० ॥ २ ॥ यो वेदांतैकलभ्यः श्रुतिषु निय-  
 मितसैत्तिरीयैश्च काण्वैरन्यैरप्यानिषेकादुदयपरिमितं चारुसंस्कार-  
 भाजाम् । तस्मै० ॥ ३ ॥ यस्मिन्नेवावसन्नाः सकलनिगमवाङ्मौलयः  
 सुसंपुंसि प्रोक्तं तन्नाम यद्ब्रह्मिजमहिमगतध्वांततत्कार्यरूपे । तस्मै०  
 ॥ ४ ॥ चित्त्वात्संकल्पपूर्वं सृजति जगदिदं योगिवन्मायया यः  
 स्वात्मन्येवाद्वितीये परमसुखदृशि स्वप्नवद्भूम्नि नित्ये । तस्मै० ॥ ५ ॥  
 इत्यच्युतविरचितं गुरुवरप्रार्थनापंचरत्नस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

## २९६. दक्षिणामूर्तिस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ विश्वं दर्पणदृश्यमाननगरीतुल्यं निजांतर्गतं  
 पश्यन्नात्मनि मायया बहिरिवोद्भूतं यथा निद्रया । यः साक्षी  
 कुरुते प्रबोधसमये स्वात्मानमेवाद्वयं तस्मै श्रीगुरुमूर्तये नम इदं  
 श्रीदक्षिणामूर्तये ॥ १ ॥ बीजस्यांतरिवांकुरो जगदिदं प्राङ्निर्विकल्पं  
 पुनर्मायाकल्पितदेशकालकलनावैचित्र्यचित्रीकृतम् । मायावीव  
 विजृम्भयत्यपि महायोगीव यः स्वेच्छया तस्मै श्रीगुरु० ॥ २ ॥  
 यस्यैव स्फुरणं सदात्मकमसत्कल्पार्थकं भासते साक्षात्तत्त्वमसीति  
 वेदवचसा यो बोधयत्याश्रितान् । यत्साक्षात्करणाद्भवेन्न पुनरावृत्ति-  
 र्भवांभोनिधौ तस्मै श्रीगुरु० ॥ ३ ॥ नानाछिद्रघटोदरस्थितमहादीप-  
 प्रभाभास्वरं ज्ञानं यस्य तु चक्षुरादिकरणद्वारा बहिः स्पंदते ।

जानामीति तमेव भांतमनुभात्येतत्समस्तं जगत्तस्मै श्रीगुरु० ॥ ४ ॥  
 देहप्राणमपीन्द्रियाण्यपि चलां बुद्धिं च शून्यं विदुः स्त्रीबालांध-  
 जडोपमास्त्वहमिति भ्रांता भृशं वादिनः । मायाशक्तिविलासकल्पित-  
 महाव्यामोहसंहारिणे तस्मै श्रीगुरु० ॥ ५ ॥ राहुग्रस्तदिवाकरेंदु-  
 सदृशो मायासमाच्छादनात्सन्मात्रः करणोपसंहरणतो योऽभूत्सुषुप्तः  
 पुमान् । प्रागस्वाप्समिति प्रबोधसमये यः प्रत्यभिज्ञायते तस्मै  
 श्रीगुरु० ॥ ६ ॥ बाल्यादिष्वपि जाग्रदादिषु तथा सर्वास्वस्थास्व-  
 पि व्यावृत्तास्वनुवर्तमानमहमित्यंतः स्फुरंतं सदा । स्वात्मानं प्रकटी-  
 करोति भजतां यो मुद्रया भद्रया तस्मै श्रीगुरु० ॥ ७ ॥ विश्वं  
 पश्यति कार्यकारणतया स्वस्वामिसंबंधतः शिष्याचार्यतया तथैव  
 पितृपुत्राद्यात्मना भेदतः । स्वप्ने जाग्रति वा य एष पुरुषो माया-  
 परिभ्रामितस्तस्मै श्रीगुरु० ॥ ८ ॥ भूरम्भांस्यनलोऽनिलोऽबरमहर्नाथो  
 हिमांशुः पुमानित्याभाति चराचरात्मकमिदं यस्यैव मूर्त्यष्टकम् ।  
 नान्यत्किंचन विद्यते विमृशतां यस्मात्परस्माद्विभोस्तस्मै श्रीगुरु०  
 ॥ ९ ॥ सर्वात्मत्वमिति स्फुटीकृतमिदं यस्मादमुष्मिन्स्तवे तेनास्य  
 श्रवणात्तथार्थमननाद्भ्यानाच्च संकीर्तनात् । सर्वात्मत्वमहाविभूतिस-  
 हितं स्यादीश्वरत्वं स्वतः सिद्ध्येत्तत्पुनरष्टधा परिणतं चैश्वर्यमव्याहृतम्  
 ॥ १० ॥ वटविटपिसमीपे भूमिभागे निषण्णं सकलमुनिजनानां  
 ज्ञानदातारमारात् । त्रिभुवनगुरुमीशं दक्षिणामूर्तिदेवं जननमरण-  
 दुःखच्छेददक्षं नमामि ॥ ११ ॥ चित्रं वटतरोर्मूले वृद्धाः शिष्या  
 गुरुर्युवा । गुरोस्तु मौनं व्याख्यानं शिष्यास्तु छिन्नसंशयाः  
 ॥ १२ ॥ ॐ नमः प्रणवार्थाय शुद्धज्ञानैकमूर्तये । निर्मलाय  
 प्रशांताय दक्षिणामूर्तये नमः ॥ १३ ॥ निधये सर्वविद्यानां भिषजे  
 भवरोगिणाम् । गुरवे सर्वलोकानां दक्षिणामूर्तये नमः ॥ १४ ॥

मौनव्याख्याप्रकटितपरब्रह्मतत्त्वं युवानं वर्षिष्ठांतेवसदृषिगणैरावृतं  
ब्रह्मनिष्ठैः । आचार्यैर्द्रं करकलितचिन्मुद्रमानंदरूपं स्वात्मारामं  
मुदितवदनं दक्षिणामूर्तिमीडे ॥ १५ ॥ इति श्रीमत्परमहंसपरि-  
त्राजकाचार्यश्रीमच्छंकराचार्यविरचितं दक्षिणामूर्तिस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### २९७. श्रीदत्तात्रेयवज्रकवचम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीदत्तात्रेयाय नमः ॥ ऋषय ऊचुः ॥ कथं  
संकल्पसिद्धिः स्याद्वेदव्यास कलौ युगे । धर्मार्थकाममोक्षाणां  
साधनं किमुदाहृतम् ॥ १ ॥ व्यास उवाच ॥ शृण्वन्तु ऋषयः  
सर्वे शीघ्रं संकल्पसाधनम् । सकृदुच्चारमात्रेण भोगमोक्षप्रदायकम्  
॥ २ ॥ गौरीशृंगे हिमवतः कल्पवृक्षोपशोभितम् । दीप्ते दिव्यमहा-  
रत्नहेममंडपमध्यगम् ॥ ३ ॥ रत्नसिंहासनासीनं प्रसन्नं परमेश्वरम् ।  
मंदस्मितमुखांभोजं शंकरं प्राह पार्वती ॥ ४ ॥ श्रीदेव्युवाच ॥  
देवदेव महादेव लोकशंकर शंकर । मंत्रजालानि सर्वाणि यंत्रजालानि  
कृत्स्नशः ॥ ५ ॥ तंत्रजालान्यनेकानि मया त्वत्तः श्रुतानि वै ।  
इदानीं द्रष्टुमिच्छामि विशेषेण महीतलम् ॥ ६ ॥ इत्युदीरितमा-  
कर्ण्य पार्वत्या परमेश्वरः । करेणामृज्य संतोषात्पार्वतीं प्रत्यभाषत  
॥ ७ ॥ मयेदानीं त्वया सार्धं वृषमारुह्य गम्यते । इत्युक्त्वा  
वृषमारुह्य पार्वत्या सह शंकरः ॥ ८ ॥ ययौ भूमंडलं द्रष्टुं गौर्या-  
श्वित्राणि दर्शयन् । क्वचित् विंध्याचलप्रान्ते महारण्ये सुदुर्गमे  
॥ ९ ॥ तत्र व्याहर्तुमायान्तं भिल्लं परशुधारिणम् । वर्धयमानं  
महान्याघ्रं नखदंष्ट्राभिरावृतम् ॥ १० ॥ अतीव चित्रचारित्र्यं  
वज्रकायसमायुतम् । अप्रयत्नमनायासमखिलं सुखमास्थितम्  
॥ ११ ॥ पलायन्तं मृगं पश्चाद्ब्याघ्रो भीत्या पलायितः । एतदा-  
श्चर्यमालोक्य पार्वती प्राह शंकरम् ॥ १२ ॥ श्रीपार्वत्युवाच ॥

किमाश्चर्यं किमाश्चर्यमग्रे शंभो निरीक्ष्यताम् । इत्युक्तः स ततः  
 शंभुर्दृष्ट्वा प्राह पुराणवित् ॥ १३ ॥ श्रीशंकर उवाच ॥ गौरि  
 वक्ष्यामि ते चित्रमवाद्भानसगोचरम् । अदृष्टपूर्वमस्माभिर्नास्ति  
 किञ्चिन्न कुत्रचित् ॥ १४ ॥ मया सम्यक् समासेन वक्ष्यते शृणु  
 पार्वति । अयं दूरश्रवा नाम भिल्लः परमधार्मिकः ॥ १५ ॥ समि-  
 त्कुशप्रसूनानि कंदमूलफलादिकम् । प्रत्यहं विपिनं गत्वा समादाय  
 प्रयासतः ॥ १६ ॥ प्रिये पूर्वं मुनींद्रेभ्यः प्रयच्छति न वाञ्छति ।  
 तेऽपि तस्मिन्नपि दयां कुर्वते सर्वमौनिनः ॥ १७ ॥ दलादनो  
 महायोगी वसन्नेव निजाश्रमे । कदाचिदस्मरत् सिद्धं दत्तात्रेयं  
 दिगम्बरम् ॥ १८ ॥ दत्तात्रेयः स्मर्तृगामी चेतिहासं परीक्षितुम् ।  
 तत्क्षणात्सोऽपि योगीन्द्रो दत्तात्रेयः समुत्थितः ॥ १९ ॥ तं दृष्ट्वाऽऽ-  
 श्चर्यतोषाभ्यां दलादनमहामुनिः । संपूज्याग्रे निषीदन्तं दत्तात्रेयमु-  
 वाच तम् ॥ २० ॥ मयोपहृतः संप्राप्तो दत्तात्रेय महामुने ।  
 स्मर्तृगामी त्वमित्येतत् किंवदन्ती परीक्षितुम् ॥ २१ ॥ मयाद्य  
 संस्मृतोऽसि त्वमपराधं क्षमस्व मे । दत्तात्रेयो मुनिं प्राह मम  
 प्रकृतिरीदृशी ॥ २२ ॥ अभक्त्या वा सुभक्त्या वा यः स्मरेन्माम-  
 नन्यधीः । तदानीं तमुपागत्य ददामि तदभीप्सितम् ॥ २३ ॥  
 दत्तात्रेयो मुनिं प्राह दलादनमुनीश्वरम् । यदिष्टं तद्गृणीष्व त्वं यत्  
 प्राप्तोऽहं त्वया स्मृतः ॥ २४ ॥ दत्तात्रेयं मुनिः प्राह मया किमपि  
 नोच्यते । त्वच्चित्ते यत्स्थितं तन्मे प्रयच्छ मुनिपुंगव ॥ २५ ॥  
 श्रीदत्तात्रेय उवाच ॥ ममास्ति वज्रकवचं गृहाणेत्यवदन्मुनिम् ।  
 तथेत्यंगीकृतवते दलादमुनये मुनिः ॥ २६ ॥ स्ववज्रकवचं प्राह  
 ऋषिच्छन्दःपुरःसरम् । न्यासं ध्यानं फलं तत्र प्रयोजनमशेषतः  
 ॥ २७ ॥ अस्य श्रीदत्तात्रेयवज्रकवचस्तोत्रमंत्रस्य, किरातरूपी महारुद्र

ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, श्रीदत्तात्रेयो देवता, द्रां बीजम्, आं शक्तिः,  
 कौं कीलकम्, ॐ आत्मने नमः ॥ ॐ द्रीं मनसे नमः ॥ ॐ आं  
 द्रीं श्रीं सौः ॐ क्वां क्कीं क्कूं क्कूं क्कूं क्कूं ॥ श्रीदत्तात्रेयप्रसाद-  
 सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः ॥ ॐ द्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः ॥ ॐ द्रीं तर्ज-  
 नीभ्यां नमः ॥ ॐ द्रूं मध्यमाभ्यां नमः ॥ ॐ द्रैं अनामिकाभ्यां  
 नमः ॥ ॐ द्रौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः ॥ ॐ द्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां  
 नमः ॥ एवं हृदयादिन्यासः ॥ ॐ भूर्भुवःस्वरोमिति दिग्बंधः ॥  
 अथ ध्यानम् ॥ जगदंकुरकंदाय सच्चिदानंदमूर्तये । दत्तात्रेयाय  
 योगीन्द्रचन्द्राय परमात्मने ॥ १ ॥ कदा योगी कदा भोगी कदा  
 नम्रः पिशाचवत् । दत्तात्रेयो हरिः साक्षाद्भुक्तिमुक्तिप्रदायकः  
 ॥ २ ॥ वाराणसीपुरस्त्रायी कोल्हापुरजपादरः । माहुरीपुरभिक्षाशी  
 सह्यशायी दिगंबरः ॥ ३ ॥ इन्द्रनीलसमाकारश्चन्द्रकांतिसमद्युतिः ।  
 वैदूर्यसदृशस्फूर्तिश्चलकिंचिज्जटाधरः ॥ ४ ॥ स्निग्धधावलययुक्ता-  
 क्षोऽत्यंतनीलकनीनिकः । भ्रूवक्षःश्मश्रुनीलांकः शशांकसदृशाननः  
 ॥ ५ ॥ हासनिर्जितनीहारः कंठनिर्जितकंबुकः । मांसलांसो दीर्घ-  
 बाहुः पाणिनिर्जितपल्लवः ॥ ६ ॥ विशालपीनवक्षाश्च ताम्रपाणि-  
 र्दलोदरः । पृथुलश्रोणिललितो विशालजघनस्थलः ॥ ७ ॥ रंभास्तं-  
 भोपमानोरुर्जानुपूर्वैकजंघकः । गूढगुल्फः कूर्मपृष्ठो लसत्पादोपरि-  
 स्थलः ॥ ८ ॥ रक्तारविंदसदृशरमणीयपदाधरः । चर्माम्बरधरो  
 योगी स्मर्तृगामी क्षणे क्षणे ॥ ९ ॥ ज्ञानोपदेशनिरतो विपद्हरणदी-  
 क्षितः । सिद्धासनसमासीन ऋजुकायो हसन्मुखः ॥ १० ॥ वाम-  
 हस्तेन वरदो दक्षिणेनाभयंकरः । बालोन्मत्तपिशाचीभिः क्वचिद्युक्तः  
 परीक्षितः ॥ ११ ॥ त्यागी भोगी महायोगी नित्यानन्दो निरंजनः ।  
 सर्वरूपी सर्वदाता सर्वगः सर्वकामदः ॥ १२ ॥ भस्मोद्धूलित-



सर्वाङ्गो महापातकनाशनः । भुक्तिप्रदो मुक्तिदाता जीवन्मुक्तो न संशयः ॥ १३ ॥ एवं ध्यात्वाऽनन्यचित्तो मद्ब्रजकवचं पठेत् । मामेव पश्यन्सर्वत्र स मया सह संचरेत् ॥ १४ ॥ दिगंबरं भस्मसुगंधलेपनं चक्रं त्रिशूलं डमरुं गदायुधम् । पद्मासनं योगिसुनीन्द्रवंदितं दत्तेति नामस्मरणेन नित्यम् ॥ १५ ॥ ( अथ पंचोपचारैः संपूज्य, ॐ द्राम् इति १०८ वारं जपेत् ) ॐ दत्तात्रेयः शिरः पातु सहस्राब्जेषु संस्थितः । भालं पात्वानसूयेय-श्रृङ्गमंडलमध्यगः ॥ १ ॥ कूर्चं मनोमयः पातु हं क्षं द्विदलपद्मभूः । ज्योतीरूपोऽक्षिणी पातु पातु शब्दात्मकः श्रुती ॥ २ ॥ नासिकां पातु गंधात्मा मुखं पातु रसात्मकः । जिह्वां वेदात्मकः पातु दंतोष्ठौ पातु धार्मिकः ॥ ३ ॥ कपोलावत्रिभूः पातु पात्वशेषं ममात्मवित् । स्वरात्मा षोडशाराब्जस्थितः स्वात्माऽवताद्गलम् ॥ ४ ॥ स्कन्धौ चन्द्रानुजः पातु भुजौ पातु कृतादिभूः । जत्रुणी शत्रुजित् पातु पातु वक्षःस्थलं हरिः ॥ ५ ॥ कादिठांतद्वादशारपद्मगो मरुदात्मकः । योगीश्वरेश्वरः पातु हृदयं हृदयस्थितः ॥ ६ ॥ पार्श्वे हरिः पार्श्ववर्ती पातु पार्श्वस्थितः स्मृतः । हठयोगादियोगज्ञः कुक्षी पातु कृपानिधिः ॥ ७ ॥ ङकारादिफकारान्तदशारसरसीरुहे । नाभिस्थले वर्तमानो नाभिं वह्नयात्मकोऽवतु ॥ ८ ॥ वह्नितत्त्वमयो योगी रक्षतान्मणिपूरकम् । कर्टिं कटिस्थब्रह्मांडवासुदेवात्मकोऽवतु ॥ ९ ॥ वकारादिलकारान्तषट्पत्रांबुजबोधकः । जलतत्त्वमयो योगी स्वाधिष्ठानं ममावतु ॥ १० ॥ सिद्धासनसमासीन ऊरू सिद्धेश्वरोऽवतु । वादिसांतचतुष्पत्रसरोरुहनिबोधकः ॥ ११ ॥ मूलाधारं महीरूपो रक्षताद्वीर्यनिग्रही । पृष्ठं च सर्वतः पातु जानु-न्यस्तकरांबुजः ॥ १२ ॥ जंघे पात्ववधूतेंद्रः पात्वंग्री तीर्थपावनः ।

सर्वांगं पातु सर्वात्मा रोमाण्यवतु केशवः ॥ १३ ॥ चर्म चर्मांबरः  
 पातु रक्तं भक्तिप्रियोऽवतु । मांसं मांसकरः पातु मज्जां मज्जा-  
 त्मकोऽवतु ॥ १४ ॥ अस्थीनि स्थिरधीः पायान्मेधां वेधाः प्रपाल-  
 येत् । शुक्रं सुखकरः पातु चित्तं पातु दृढाकृतिः ॥ १५ ॥ मनोबुद्धि-  
 महंकारं हृषीकेशात्मकोऽवतु । कर्मेन्द्रियाणि पात्वीशः पातु ज्ञानेन्द्रि-  
 याण्यजः ॥ १६ ॥ बंधून् बंधूत्तमः पायाच्छत्रुभ्यः पातु शत्रुजित् ।  
 गृहारामधनक्षेत्रपुत्रादीच्छंकरोऽवतु ॥ १७ ॥ भार्या प्रकृतिवित्  
 पातु पश्वादीन्पातु शार्ङ्गभृत् । प्राणान्पातु प्रधानज्ञो भक्ष्यादीन्पातु  
 भास्करः ॥ १८ ॥ सुखं चंद्रात्मकः पातु दुःखात् पातु पुरांतकः ।  
 पशून्पशुपतिः पातु भूतिं भूतेश्वरो मम ॥ १९ ॥ प्राच्यां विषहरः  
 पातु पात्वाग्नेय्यां मखात्मकः । याम्यां धर्मात्मकः पातु नैर्ऋत्यां  
 सर्ववैरिहृत् ॥ २० ॥ वराहः पातु वारुण्यां वायव्यां प्राणदोऽवतु ।  
 कौबेर्यां धनदः पातु पात्वैशान्यां महागुरुः ॥ २१ ॥ ऊर्ध्वं पातु  
 महासिद्धः पात्वधस्ताज्जटाधरः । रक्षाहीनं तु यत्स्थानं रक्षत्वादिमुनी-  
 श्वरः ॥ २२ ॥ मालामंत्रजपः । हृदयादिन्यासः ॥ एतन्मे वज्रकवचं  
 यः च्छेपच्छृणुयादपि । वज्रकायश्चिरंजीवी दत्तात्रेयोऽहमब्रुवम् ॥ २३ ॥  
 त्यागी भोगी महायोगी सुखदुःखविवर्जितः । सर्वत्रसिद्धसंकल्पो  
 जीवन्मुक्तोऽद्य वर्तते ॥ २४ ॥ इत्युक्त्वान्तर्दधे योगी दत्तात्रेयो  
 दिगंबरः । दलादनोऽपि तज्जप्त्वा जीवन्मुक्तः स वर्तते ॥ २५ ॥ भिल्लो  
 दूरश्रवा नाम तदानीं श्रुतवानिदम् । सकृच्छ्रवणमात्रेण वज्राङ्गोऽभ-  
 वदप्यसौ ॥ २६ ॥ इत्येतद्वज्रकवचं दत्तात्रेयस्य योगिनः । श्रुत्वा-  
 शेषं शम्भुमुखात् पुनरप्याह पार्वती ॥ २७ ॥ पार्वत्युवाच ॥  
 एतत्कवचमाहात्म्यं वद विस्तरतो मम । कुत्र केन कदा जाप्यं किं  
 यज्जाप्यं कथं कथम् ॥ २८ ॥ उवाच शंभुस्तत्सर्वं पार्वत्या विनयो-

दितम् ॥ श्रीशिव उवाच ॥ शृणु पार्वति वक्ष्यामि समाहितमना-  
विलम् ॥ २९ ॥ धर्मार्थकाममोक्षाणामिदमेव परायणम् । हस्त्यश्व-  
रथपादातिसर्वैश्वर्यप्रदायकम् ॥ ३० ॥ पुत्रमित्रकलत्रादिसर्वसंतोष-  
साधनम् । वेदशास्त्रादिविद्यानां निधानं परमं हि तत् ॥ ३१ ॥  
सङ्गीतशास्त्रसाहित्यसत्कवित्वविधायकम् । बुद्धिविद्यास्मृतिप्रज्ञा-  
मतिप्रौढिप्रदायकम् ॥ ३२ ॥ सर्वसंतोषकरणं सर्वदुःखनिवारणम् ॥  
शत्रुसंहारकं शीघ्रं यशःकीर्तिविवर्धनम् ॥ ३३ ॥ अष्टसंख्या महा-  
रोगाः सन्निपातास्त्रयोदश । षण्णवत्यक्षिरोगाश्च विंशतिर्मेहरोगकाः  
॥ ३४ ॥ अष्टादश तु कुष्ठानि गुल्मान्यष्टविधान्यपि । अशीति-  
वर्तिरोगाश्च चत्वारिंशत्तु पैत्तिकाः ॥ ३५ ॥ विंशति श्लेष्मरोगाश्च  
क्षयचातुर्थिकादयः । मंत्रयंत्रकुयोगाद्याः कल्पतंत्रादिनिर्मिताः  
॥ ३६ ॥ ब्रह्मराक्षसवेतालकूष्मांडादिग्रहोद्भवाः । संग्रजादेशकाल-  
स्थास्तापत्रयसमुत्थिताः ॥ ३७ ॥ नवग्रहसमुद्भूता महापातकसं-  
भवाः । सर्वे रोगाः प्रणश्यन्ति सहस्रावर्तनाद्भुवम् ॥ ३८ ॥  
अयुतावृत्तिमात्रेण वंध्या पुत्रवती भवेत् । अयुतद्वितयावृत्त्या  
ह्यपमृत्युजयो भवेत् ॥ ३९ ॥ अयुतत्रितयाच्चैव खेचरत्वं प्रजायते ।  
सहस्रादयुतादर्वाक् सर्वकार्याणि साधयेत् ॥ ४० ॥ लक्षावृत्त्या  
कार्यसिद्धिर्भवत्येव न संशयः ॥ ४१ ॥ विषवृक्षस्य मूलेषु तिष्ठन्  
वै दक्षिणामुखः । कुरुते मासमात्रेण वैरिणं विकलेन्द्रियम् ॥ ४२ ॥  
औदुम्बरतरोर्मूले वृद्धिकामेन जाप्यते । श्रीवृक्षमूले श्रीकामी  
तितिणी शान्तिकर्मणि ॥ ४३ ॥ ओजस्कामोऽश्वत्थमूले स्त्रीकामैः  
सहकारके । ज्ञानार्थी तुलसीमूले गर्भगेहे सुतार्थिभिः ॥ ४४ ॥  
धनार्थिभिस्तु सुक्षेत्रे पशुकामैस्तु गोष्ठके । देवालये सर्वकामैस्त-  
त्काले सर्वदर्शितम् ॥ ४५ ॥ नाभिमात्रजले स्थित्वा भानुमालोक्य

यो जपेत् । युद्धे वा शास्त्रवादे वा सहस्रेण जयो भवेत् ॥ ४६ ॥  
 कण्ठमात्रे जले स्थित्वा यो रात्रौ कवचं पठेत् । ज्वरापस्मारकुष्ठा-  
 दितापज्वरनिवारणम् ॥ ४७ ॥ यत्र यत्स्यात्स्थिरं यद्यत्प्रसन्नं  
 तच्चिर्वर्तते । तेन तत्र हि जप्तव्यं ततः सिद्धिर्भवेद्भुवम् ॥ ४८ ॥  
 इत्युक्तवान् च शिवो गौर्यै रहस्यं परमं शुभम् । यः पठेत् वज्रकवचं  
 दत्तात्रेयसमो भवेत् ॥ ४९ ॥ एवं शिवेन कथितं हिमवत्सुतायै  
 प्रोक्तं दत्तात्रेयसुतेन पूर्वम् । यः कोऽपि वज्रकवचं पठतीह  
 लोके दत्तोपमश्चरति योगिवरश्चिरायुः ॥ ५० ॥ इति श्रीरुद्रयामले  
 हिमवत्खण्डे मंत्रशास्त्रे उमामहेश्वरसंवादे श्रीदत्तात्रेयवज्रकवचस्तोत्रं  
 संपूर्णम् ॥

## अवतारस्तोत्राणि ।

### २९८. मत्स्यस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ नूनं त्वं भगवान्साक्षाद्भरिर्नारायणोऽव्ययः ।  
 अनुग्रहाय भूतानां धत्से रूपं जलौकसाम् ॥ १ ॥ नमस्ते पुरुष-  
 श्रेष्ठ स्थित्युत्पत्त्यप्ययेश्वर । भक्तानां नः प्रपन्नानां मुख्यो ह्यात्म-  
 गतिर्विभो ॥ २ ॥ सर्वे लीलावतारांस्ते भूतानां भूतिहेतवः । ज्ञातु-  
 मिच्छाम्यदो रूपं यदर्थं भवता धृतम् ॥ ३ ॥ न तेऽरविन्दाक्ष  
 पदोपसर्पणं मृषा भवेत्सर्वसुहृत्प्रियात्मनः । यथेतरेषां पृथगात्मनां  
 सतामदीदृशो यद्बपुरद्भुतं हि नः ॥ ४ ॥ इति श्रीमद्भागवतांतर्गतं  
 मत्स्यस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### २९९. कूर्मस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ देवा ऊचुः ॥ नमाम ते देव पदारविंदं प्रपन्न-  
 तापोपशमातपत्रम् । यन्मूलकेता यतयोऽजसोरुसंसारदुःखं बहि-

रक्षिपंति ॥ १ ॥ धातर्यदस्मिन्भव ईश जीवास्तापत्रयेणोपहता न  
 शर्म । आत्मंल्लभंते भगवंस्तवांग्रिच्छायां सविद्यामत आश्रयेम ॥२॥  
 मार्गति यत्ते मुखपद्मनीडैश्छंदःसुपर्णैर्ऋषयो विविक्ते । यस्याघमर्षो-  
 दसरिद्धरायाः पदं पदं तीर्थपदः प्रपन्नाः ॥ ३ ॥ यच्छ्रद्धया श्रुत-  
 वत्या च भक्त्या संमृज्यमाने हृदयेऽवधाय । ज्ञानेन वैराग्यबलेन  
 धीरा ब्रजेम तत्तेऽघ्निसरोजपीठम् ॥ ४ ॥ विश्वस्य जन्मस्थिति-  
 संयमार्थं कृतावतारस्य पदांबुजं ते । ब्रजेम सर्वे शरणं यदीश स्मृतं  
 प्रयच्छत्यभयं स्वपुंसाम् ॥ ५ ॥ यत्सानुबंधेऽसति देहगेहे ममाह-  
 मित्यूढदुराग्रहाणाम् । पुंसां सुदूरं वसतोऽपि पुर्यां भजेम तत्ते  
 भगवन् पदाब्जम् ॥ ६ ॥ तान्वा असद्वृत्तिभिरक्षिभिर्ये पराहतां-  
 तर्मनसः परेश । अथो न पश्यंत्युरुगाय नूनं ये ते पदन्यासविला-  
 सलक्ष्म्याः ॥ ७ ॥ पानेन ते देव कथासुधायाः प्रवृद्धभक्त्या  
 विशदाशया ये । वैराग्यसारं प्रतिलभ्य बोधं यथांजसाऽन्वीयुर-  
 कुण्ठधिष्ण्यम् ॥ ८ ॥ तथापरे चात्मसमाधियोगबलेन जित्वा  
 प्रकृतिं बलिष्ठाम् । त्वामेव धीराः पुरुषं विशंति तेषां श्रमः स्यान्न  
 तु सेवया ते ॥ ९ ॥ तत्ते वयं लोकसिसृक्षयाद्य त्वयानुसृष्टास्त्रि-  
 भिरात्मभिः स्म । सर्वे वियुक्ताः स्वविहारतंत्रं न शक्नुमस्तत्प्रति-  
 हर्तवे ते ॥ १० ॥ यावद्बलिं तेऽज हराम काले यथा वयं चान्न-  
 मदाम यत्र । यथोभयेषां त इमे हि लोका बलिं हरंतोऽन्नमदंत्य-  
 नूहाः ॥ ११ ॥ त्वं नः सुराणामसि सान्त्वयानां कूटस्थ आद्यः  
 पुरुषः पुराणः । त्वं देवशक्त्यां गुणकर्मयोनी रेतस्त्वजायां कवि-  
 मादधेऽजः ॥ १२ ॥ ततो वयं सत्प्रमुखा यदर्थे बभूविमात्मन्कर-  
 वाम किं ते । त्वं नः स्वचक्षुः परिदेहि शक्त्या देवक्रियार्थं यदनु-  
 ग्रहाणाम् ॥ १३ ॥ इति श्रीमद्भागवतांतर्गतं कूर्मस्तोत्रं समाप्तम् ॥

## ३००. वराहस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ऋषय ऊचुः ॥ जितं जितं तेऽजित यज्ञभावना  
 त्रयीं तनुं स्वां परिधुन्वते नमः । यद्रोमगर्तेषु निलिल्युरध्वरास्तस्मै  
 नमः कारणसूकराय ते ॥ १ ॥ रूपं तवैतन्ननु दुष्कृतात्मनां  
 दुर्दर्शनं देव यदध्वरात्मकम् । छंदांसि यस्य त्वचि बर्हि रोमस्वाज्यं  
 दृशि त्वंघ्रिषु चातुर्होत्रम् ॥ २ ॥ सुक् तुण्ड आसीत्सुव ईश  
 नासयोरिडोदरे चमसाः कर्णरंध्रे । प्राशित्रमास्ये ग्रसने ग्रहास्तु ते  
 यच्चर्वणं ते भगवन्नग्निहोत्रम् ॥ ३ ॥ दीक्षानुजन्मोपसदः शिरोधरं  
 त्वं प्रायणीयोदयनीयदंष्ट्रः । जिह्वा प्रवर्ग्यस्तव शीर्षकं क्रतोः सभ्या-  
 वसथ्यं चित्तयोऽसवो हि ते ॥ ४ ॥ सोमस्तु रेतः सवनान्यवस्थिति  
 संस्थाविभेदास्तव देव धातवः । सत्राणि सर्वाणि शरीरसंधिस्त्वं  
 सर्वयज्ञक्रतुरिष्टिबंधनः ॥ ५ ॥ नमो नमस्तेऽखिलयत्रदेवताद्रव्याय  
 सर्वक्रतवे क्रियात्मने । वैराग्यभक्त्यात्मजयानुभावितज्ञानाय विद्या-  
 गुरवे नमो नमः ॥ ६ ॥ दंष्ट्राप्रकोट्या भगवंस्त्वया धृता विराजते भूधर  
 भूः सभूधरा । यथा वनान्निःसरतो दता धृता मतंगजेन्द्रस्य सप-  
 त्रपद्मिनी ॥ ७ ॥ त्रयीमयं रूपमिदं च सौकरं भूमंडले नाथ दतः  
 धृतेन ते । चकास्ति शृंगोढघनेन भूयसा कुलाचलेंद्रस्य यथैव  
 विभ्रमः ॥ ८ ॥ संस्थापयैनां जगतां सतस्थुषां लोकाय पत्नीमसि  
 मातरं पिता । विधेम चास्यै नमसा सह त्वया यस्यां स्वतेजोऽग्नि-  
 मिवारणावधाः ॥ ९ ॥ कः श्रद्धधीतान्यतमस्तव प्रभो रसां गताया  
 भुव उद्विबर्हणम् । न विस्मयोऽसौ त्वयि विश्वविस्मये यो माययेदं  
 ससृजेऽतिविस्मयम् ॥ १० ॥ विधुन्वता वेदमयं निजं वपुर्जनस्तपः-  
 सत्यनिवासिनो जयम् । सटाशिखोद्भूतशिवांबुर्बिंदुभिर्विमृज्यमाना  
 भृगमीश पाविताः ॥ ११ ॥ स वै अष्टमतिस्तवैष ते यः

कर्मणां पारमपारकर्मणः । यद्योगमायागुणयोगमोहितं विश्वं समस्तं  
भगवन्निधेहि शम् ॥ १२ ॥ इति श्रीमद्भागवतांतर्गतं वराह-  
स्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ३०१. नृसिंहस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ब्रह्मोवाच ॥ नतोऽस्म्यनंताय दुरंतशक्तये  
विचित्रवीर्याय पवित्रकर्मणे । विश्वस्य सर्गस्थितिसंयमान्गुणैः स्वली-  
लया संदधतेऽव्ययात्मने ॥ १ ॥ श्रीरुद्र उवाच ॥ कोपकालो  
युगांतस्ते हतोऽयमसुरोऽल्पकः । तत्सुतं पाद्भुपसृतं भक्तं ते भक्त-  
वत्सल ॥ २ ॥ इंद्र उवाच ॥ प्रत्यानीताः परम भवता त्रायतां नः  
स्वभागा दैत्याक्रांतं हृदयकमलं त्वद्गृहं प्रत्यबोधि । कालग्रस्तं किय-  
दिदमहो नाथ शुश्रूषतां ते मुक्तिस्तेषां नहि बहुमता नारसिंहापरैः  
किम् ॥ ३ ॥ ऋषय ऊचुः ॥ त्वं नस्तपः परममात्थ यदात्मतेजो  
येनेदमादिपुरुषात्मगतं ससर्ज । तद्विप्रलुप्तममुनाद्य शरण्यपाल  
रक्षागृहीतवपुषा पुनरन्वमंस्थाः ॥ ४ ॥ पितर ऊचुः । श्राद्धानि  
नोऽधिबुभुजे प्रसभं तनूजैर्दत्तानि तीर्थसमयेऽप्यपिबत्तिलाम्बु ।  
तस्योदराब्रह्मविदीर्णवपाद्य आर्च्छत्तस्मै नमो नृहरयेऽखिलधर्मगोप्त्रे  
॥ ५ ॥ सिद्धा ऊचुः ॥ यो नो गतिं योगसिद्धामसाधुरहारपीद्योग-  
तपोबलेन । नानादर्पं तं नखैर्निर्ददार तस्मै तुभ्यं प्रणताः स्मो नृसिंह  
॥ ६ ॥ विद्याधरा ऊचुः । विद्यां पृथग्धारणयाऽनुराद्धां न्यषेधदज्ञो  
बलवीर्यदृप्तः । स येन संख्ये पशुवद्धतस्तं मायानृसिंहं प्रणताः स्म  
नित्यम् ॥ ७ ॥ नागा ऊचुः ॥ येन पापेन रत्नानि स्त्रीरत्नानि हृतानि  
नः । तद्ब्रह्मपाटनेनासां दत्तानन्द नमोऽस्तु ते ॥ ८ ॥ मनव  
ऊचुः ॥ मनवो वयं तव निदेशकारिणो दितिजेन देव परिभूतसेतवः ।  
भवता खलः स उपसंहृतः प्रभो करवाम ते किमनुशाधि किं-

रान् ॥ ९ ॥ प्रजापतय ऊचुः ॥ प्रजेशा वयं ते परेशाभिसृष्टा न  
येन प्रजा वै सृजामो निषिद्धाः । स एष त्वयाभिन्नवक्षानुशेते जग-  
न्मङ्गलं सत्त्वमूर्तेऽवहारः ॥ १० ॥ गन्धर्वा ऊचुः ॥ वयं विभो ते  
नटनाढ्यगायका येनात्मसाद्वीर्यबलौजसा कृताः । स एष नीतो  
भवता दशामिमां किमुत्पथस्थः कुशलाय कल्पते ॥ ११ ॥ चारणा  
ऊचुः ॥ हरे तवांग्रिपंकजं भवापवर्गमाश्रिताः । यदेव साधुहृच्छ-  
यस्त्वयाऽसुरः समापितः ॥ १२ ॥ यक्षा ऊचुः ॥ वयमनुचरमुख्याः  
कर्मभिस्ते मनोज्ञैस्त इह दितिसुतेन प्रापिता वाहकत्वम् । स तु  
जनपरितापं तत्कृतं जानता ते नरहर उपनीतः पंचतां पंचविंशः  
॥ १३ ॥ किंपुरुषा ऊचुः ॥ वयं किंपुरुषास्त्वं तु महापुरुष ईश्वरः ।  
अयं कुपुरुषो नष्टो धिक्कृतः साधुभिर्यदा ॥ १४ ॥ वैतालिका  
ऊचुः ॥ सभासु सत्रेषु तवामलं यशो गीत्वा सपर्यां महतीं लभा-  
महे । यस्तां व्यनैषीद्भृशमेष दुर्जनो दिष्ट्या हतस्ते भगवन्वथा-  
मयः ॥ १५ ॥ किन्नरा ऊचुः ॥ वयमीश किन्नरगणास्तवानुगा दिति-  
जेन विष्टिममुनाऽनुकारिताः । भवता हरे सवृजिनोऽवसादितो  
नरसिंह नाथ विभवाय नो भव ॥ १६ ॥ विष्णुपार्षदा ऊचुः ॥  
अद्यैतद्धरिनररूपमद्भुतं ते दृष्टं नः शरणद सर्वलोकशर्म । सोऽयं  
ते विधिकर ईश विप्रशप्तस्येदं निधनमनुग्रहाय विद्मः ॥ १७ ॥  
इति श्रीमद्भागवतांतर्गतं नृसिंहस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ३०२. लक्ष्मीनृसिंहस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीमत्पयोनिधिनिकेतन चक्रपाणे भोगीन्द्र-  
भोगमणिरंजितपुण्यमूर्ते । योगीश शाश्वत शरण्यभवाब्धिपोत  
लक्ष्मीनृसिंह मम देहि करावलंबम् ॥ १ ॥ ब्रह्मोद्गरुद्रमरुदर्ककि-  
रीटकोटिसंघट्टिताङ्घ्रिकमलामलकांतिकांत । लक्ष्मीलसत्कुचसरो-



रुहराजहंस लक्ष्मीनृसिंह मम देहि करावलंबम् ॥ २ ॥  
 संसारघोरगहने चरतो मुरारे मारोग्रभीकरमृगप्रवरार्दितस्य ।  
 आर्तस्य मत्सरनिदाघनिपीडितस्य लक्ष्मीनृसिंह० ॥ ३ ॥  
 संसारकूपमतिघोरमगाधमूलं संप्राप्य दुःखशतसर्पसमाकुलस्य ।  
 दीनस्य देव कृपणापदमागतस्य लक्ष्मीनृसिंह० ॥ ४ ॥ संसार-  
 सागरविशालकरालकालनक्रग्रहग्रसननिग्रहविग्रहस्य । व्यग्रस्य राग-  
 रसनोर्मिनिपीडितस्य लक्ष्मीनृसिंह० ॥ ५ ॥ संसारवृक्षमघबीज-  
 मनंतकर्मशाखाशतं करणपत्रमनंगपुष्पम् । आरुह्य दुःखफलितं  
 पततो दयालो लक्ष्मीनृसिंह० ॥ ६ ॥ संसारसर्पघनवक्रभयोग्रती-  
 व्रदंष्ट्राकरालविषदग्धविनष्टमूर्ते । नागारिवाहन सुधाब्धिनिवास  
 शौरे लक्ष्मीनृसिंह० ॥ ७ ॥ संहारदावदहनातुरभीकरोरुज्वाला-  
 वलीभिरतिदग्धतनूरुहस्य । त्वत्पादपद्मसरसीशरणागतस्य लक्ष्मी-  
 नृसिंह० ॥ ८ ॥ संसारजालपतितस्य जगन्निवास सर्वैन्द्रियार्थबडि-  
 शार्थज्ञषोपमस्य । प्रोत्खंडितप्रचुरतातलुकमस्तकस्य लक्ष्मीनृसिंह०  
 ॥ ९ ॥ संसारभीकरकरींद्रकलाभिघातनिष्पिष्टमर्मवपुषः सकला-  
 र्तिनाश । प्राणप्रयाणभवभीतिसमाकुलस्य लक्ष्मीनृसिंह० ॥ १० ॥  
 अंधस्य मे हृतविवेकमहाधनस्य चोरैः प्रभो बलिभिर्निद्रियनामधेवैः ।  
 मोहांधकूपकुहरे विनिपातितस्य लक्ष्मीनृसिंह० ॥ ११ ॥ लक्ष्मीपते  
 कमलनाभ सुरेश विष्णो वैकुण्ठ कृष्ण मधुसूदन पुष्कराक्ष । ब्रह्मण्य  
 केशव जनार्दन वासुदेव देवेश देहि कृपणस्य करा० ॥ १२ ॥  
 यन्माययोजितवपुःप्रचुरप्रवाहमन्नार्थमत्र निवहोरुकरावलंबम् ।  
 लक्ष्मीनृसिंहचरणाब्जमधुव्रतेन स्तोत्रं कृतं सुखकरं भुवि शंकरेण  
 ॥ १३ ॥ इति श्रीमत्परमहंसरिव्राजकाचार्यश्रीमच्छंकराचार्यविरचितं  
 संकष्टनाशनं लक्ष्मीनृसिंहस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

## ३०३. वामनस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अदितिर्वाच ॥ यज्ञेश यज्ञपुरुषाच्युत तीर्थ-  
पाद तीर्थश्रवः श्रवणमंगलनामधेय । आपन्नलोकवृजिनोपशमोदया-  
ऽद्य शं नः कृषीश भगवन्नसि दीननाथ ॥ १ ॥ विश्वाय विश्वभवन-  
स्थितिसंयमाय स्वैरं गृहीतपुरुशक्तिगुणाय भूम्ने । स्वस्थाय शश्व-  
दुपबृंहितपूर्णबोधव्यापादितात्मतमसे हरये नमस्ते ॥ २ ॥ आयुः  
परं वपुरभीष्टमतुल्यलक्ष्मीद्यौर्भू रसाः सकलयोगगुणास्त्रिवर्गः ।  
ज्ञानं च केवलमनंत भवंति तुष्टात्त्वत्तो नृणां किमु सपत्नजयादिराशीः  
॥ ३ ॥ इति श्रीमद्भागवतांतर्गतं वामनस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

## ३०४. वामनस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अदितिर्वाच ॥ नमस्ते देवदेवेश सर्वव्यापिन्  
जनार्दन । सत्त्वादिगुणभेदेन लोकव्यापारकारण ॥ १ ॥ नमस्ते  
बहुरूपाय अरूपाय नमो नमः । सर्वैकाद्भुतरूपाय निर्गुणाय गुणा-  
त्मने ॥ २ ॥ नमस्ते लोकनाथाय परमज्ञानरूपिणे । सद्भक्तजनवा-  
त्सल्यशीलिने मंगलात्मने ॥ ३ ॥ यस्यावताररूपाणि ह्यर्जयन्ति  
मुनीश्वराः । तमादिपुरुषं देवं नमामीष्टार्थसिद्धये ॥ ४ ॥ यं न  
जानन्ति श्रुतयो यं न जानन्ति सूरयः । तं नमामि जगद्धेतुं मायिनं  
तममायिनम् ॥ ५ ॥ यस्यावलोकनं चित्रं मायोपद्रववारणम् ।  
जगद्रूपं जगत्पालं तं वंदे पद्मजाधवम् ॥ ६ ॥ यो देवस्त्यक्तसंगानां  
शांतानां करुणार्णवः । करोति ह्यात्मना संगं तं वंदे संगवर्जितम्  
॥ ७ ॥ यत्पादाब्जजलक्लिन्नसेवारंजितमस्तकाः । अवापुः परमां  
सिद्धिं तं वंदे सर्ववन्दितम् ॥ ८ ॥ यज्ञेश्वरं यज्ञभुजं यज्ञकर्मसु  
निष्ठितम् । नमामि यज्ञफलदं यज्ञकर्मप्रबोधकम् ॥ ९ ॥ अजामि-  
लोऽपि पापात्मा यन्नामोच्चारणादनु । प्राप्तवान्परमं धाम तं वंदे

लोकसाक्षिणम् ॥ १० ॥ ब्रह्माद्या अपि ये देवा यन्मायापाशयं-  
त्रिताः । न जानन्ति परं भावं तं वंदे सर्वनायकम् ॥ ११ ॥ हृत्प-  
द्मनिलयोऽज्ञानां दूरस्थ इव भाति यः । प्रमाणातीतसद्भावं तं वंदे  
ज्ञानसाक्षिणम् ॥ १२ ॥ यन्मुखाद्ब्राह्मणो जातो बाहुभ्यां क्षत्रियो-  
ऽजनि । तथैव ऊरुतो वैश्यः पद्भ्यां शूद्रो अजायत ॥ १३ ॥ मन-  
सश्चंद्रमा जातो जातः सूर्यश्च चक्षुषः । मुखादिंद्रस्तथाग्निश्च प्राणा-  
द्वायुरजायत ॥ १४ ॥ त्वमिंद्रः पवनः सोमस्त्वमीशानस्त्वमंतकः ।  
त्वमग्निर्निरुतिश्चैव वरुणस्त्वं दिवाकरः ॥ १५ ॥ देवाश्च स्थावराश्चैव  
पिशाचाश्चैव राक्षसाः । गिरयः सिद्धगंधर्वा नद्यो भूमिश्च सागराः  
॥ १६ ॥ त्वमेव जगतामीशो यन्नामास्ति परात्परः । त्वद्रूपमखिलं  
तस्मात्पुत्रान्मे पाहि श्रीहरे ॥ १७ ॥ इति स्तुत्वा देवधात्री देवं  
नत्वा पुनः पुनः । उवाच प्राञ्जलिभूत्वा हर्षाश्रुक्षालितस्तनी ॥ १८ ॥  
अनुग्राह्यास्मि देवेश हरे सर्वादिकारण । अकंटकश्रियं देहि मत्सु-  
तानां दिवोकसाम् ॥ १९ ॥ अंतर्यामिन् जगद्रूप सर्वभूतपरेश्वर ।  
तवाज्ञातं किमस्तीह किं मां मोहयसि प्रभो ॥ २० ॥ तथापि तव  
वक्ष्यामि यन्मे मनसि वर्तते । वृथापुत्रास्मि देवेश रक्षोभिः परिपी-  
डिता ॥ २१ ॥ एतान्न हंतुमिच्छामि मत्सुता दितिजा यतः । तान-  
हत्वा श्रियं देहि मत्सुतानामुवाच सा ॥ २२ ॥ इत्युक्तो देवदेवस्तु  
पुनः प्रीतिमुपागतः । उवाच हर्षयन्साध्वीं कृपयाभिपरिप्लुतः  
॥ २३ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ प्रीतोऽस्मि देवि भद्रं ते भविष्यामि  
सुतस्तव । यतः सपत्नीतनयेष्वपि वात्सल्यशालिनी ॥ २४ ॥ त्वया  
च मे कृतं स्तोत्रं पठन्ति भुवि मानवाः । तेषां पुत्रा धनं संपन्न  
हीयन्ते कदाचन ॥ २५ ॥ अंते मत्पदमामोति यद्विष्णोः परमं  
शुभम् ॥ २६ ॥ इति श्रीपद्मपुराणे वामनस्तोत्रं समाप्तम् ॥

## रामस्तोत्राणि ।



कल्याणानां निधानं कलिमलमथनं पावनं पावनानां  
पाथेयं यन्मुमुक्षोः सपदि परपदप्राप्तये प्रस्थितस्य ।  
विश्रामस्थानमेकं कविवरवचसां जीवनं सज्जनानां  
बीजं धर्मद्रुमस्य प्रभवतु भवतां भूतये रामनाम ॥

## रामस्तोत्राणि ।

३०५. रामहृदयम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीमहादेव उवाच ॥ ततो रामः स्वयं प्राह  
हनूमंतमुपस्थितम् । शृणु तत्त्वं प्रवक्ष्यामि ह्यात्मानात्मपरात्मनाम्  
॥ १ ॥ आकाशस्य यथा भेदस्त्रिविधो दृश्यते महान् । जलाशये  
महाकाशस्तदवच्छिन्न एव हि । प्रतिबिंबाख्यमपरं दृश्यते त्रिविधं  
नभः ॥ २ ॥ बुद्ध्यवच्छिन्नचैतन्यमेकं पूर्णमथापरम् । आभास-  
स्त्वपरं बिंबभूतमेवं त्रिधा चितिः ॥ ३ ॥ साभासबुद्धेः कर्तृत्वम-  
विच्छिन्नेऽविकारिणि । साक्षिण्यारोप्यते भ्रांत्या जीवत्वं च तथाऽ-  
बुधैः ॥ ४ ॥ आभासस्तु मृषाबुद्धिरविद्याकार्यमुच्यते । अविच्छिन्नं  
तु तद्ब्रह्म विच्छेदस्तु विकल्पितः ॥ ५ ॥ अविच्छिन्नस्य पूर्णेन एकत्वं  
प्रतिपद्यते । तत्त्वमस्यादिवाक्यैश्च साभासस्याहमस्तथा ॥ ६ ॥  
ऐक्यज्ञानं यदोत्पन्नं महावाक्येन चात्मनोः । तदाऽविद्या स्वकार्यैश्च  
नश्यत्येव न संशयः ॥ ७ ॥ एतद्विज्ञाय मद्भक्तो मद्भावायोपप-  
द्यते ॥ ८ ॥ मद्भक्तिविमुखानां हि शास्त्रगतेषु मुह्यताम् । न ज्ञानं  
न च मोक्षः स्यात्तेषां जन्मशतैरपि ॥ ९ ॥ इदं रहस्यं हृदयं  
ममात्मनो मयैव साक्षात्कथितं तवानघ । मद्भक्तिहीनाय शठाय न  
त्वया दातव्यमैन्द्रादपि राज्यतोऽधिकम् ॥ १० ॥ इति श्रीमदध्यात्म-  
रामायणे बालकांडे श्रीरामहृदयं संपूर्णम् ॥

३०६. रामस्तवराजः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अस्य श्रीरामचंद्रस्तवराजस्तोत्रमंत्रस्य सनत्कुमार  
ऋषिः । श्रीरामो देवता । अनुष्टुप् छंदः । सीता बीजम् । हनूमान्  
शक्तिः । श्रीरामप्रीत्यर्थं जपे विनियोगः ॥ सूत उवाच ॥ सर्वशास्त्रार्थ-

तत्त्वज्ञं व्यासं सत्यवतीसुतम् । धर्मपुत्रः प्रहृष्टात्मा प्रत्युवाच  
 मुनीश्वरम् ॥ १ ॥ युधिष्ठिर उवाच ॥ भगवन्योगिनां श्रेष्ठ सर्व-  
 शास्त्रविशारद । किं तत्त्वं किं परं जाप्यं किं ध्यानं मुक्तिसाधनम्  
 ॥ २ ॥ श्रोतुमिच्छामि तत्सर्वं ब्रूहि मे मुनिसत्तम । वेदव्यास  
 उवाच ॥ धर्मराज महाभाग शृणु वक्ष्यामि तत्त्वतः ॥ ३ ॥ यत्परं  
 यद्गुणातीतं यज्ज्योतिरमलं शिवम् । तदेव परमं तत्त्वं कैवल्यपद-  
 कारणम् ॥ ४ ॥ श्रीरामेति परं जाप्यं तारकं ब्रह्मसंज्ञकम् । ब्रह्म-  
 हत्यादिपापघ्नमिति वेदविदो विदुः ॥ ५ ॥ श्रीराम रामेति जना ये  
 जपन्ति च सर्वदा । तेषां भुक्तिश्च मुक्तिश्च भविष्यति न संशयः  
 ॥ ६ ॥ स्तवराजं पुरा प्रोक्तं नारदेन च धीमता । तत्सर्वं संप्रवक्ष्यामि  
 हरिध्यानपुरःसरम् ॥ ७ ॥ तापत्रयाग्निशमनं सर्वाघौघनिकृंतनम् ।  
 दारिद्र्यदुःखशमनं सर्वसंपत्करं शिवम् ॥ ८ ॥ विज्ञानफलदं दिव्यं  
 मोक्षैकफलसाधनम् । नमस्कृत्य प्रवक्ष्यामि रामं कृष्णं जगन्मयम्  
 ॥ ९ ॥ अयोध्यानगरे रम्ये रत्नमंडपमध्यगे । स्मरेत्कल्पतरोर्मूले रत्न-  
 सिंहासनं शुभम् ॥ १० ॥ तन्मध्येऽष्टदलं पद्मं नानारत्नैश्च वेष्टितम् ।  
 स्मरेन्मध्ये दाशरथिं सहस्रादित्यतेजसम् ॥ ११ ॥ पितुरंकगतं  
 राममिंद्रनीलमणिप्रभम् । कोमलांगं विशालाक्षं विद्युद्गर्णांबरावृतम्  
 ॥ १२ ॥ भानुकोटिप्रतीकाशं किरीटेन विराजितम् । रत्नप्रैवेयकेयूर-  
 रत्नकुंडलमंडितम् ॥ १३ ॥ रत्नकंकणमंजीरकटिसूत्रैरलंकृतम् ।  
 श्रीवत्सकौस्तुभौरस्कं मुक्ताहारोपशोभितम् ॥ १४ ॥ दिव्यरत्नसमा-  
 युक्तमुद्रिकाभिरलंकृतम् । राघवं द्विभुजं बालं राममीषत्सिताननम्  
 ॥ १५ ॥ तुलसीकुंदमंदारपुष्पमाल्यैरलंकृतम् । कर्पूरागरुकस्तूरीदिव्य-  
 गंधानुलेपनम् ॥ १६ ॥ योगशास्त्रेष्वभिरतं योगेशं योगदायकम् ।  
 सदा भरतसौमित्रिशात्रुघ्नैरुपशोभितम् ॥ १७ ॥ विद्याधरसुराधीश-

सिद्धगंधर्वकिन्नरैः । योगीन्द्रैर्नारदाद्यैश्च स्तूयमानमहर्निशम् ॥१८॥  
 विश्वामित्रवासिष्ठादिमुनिभिः परिसेवितम् । सनकादिमुनिश्रेष्ठैर्योगि-  
 वृन्दैश्च सेवितम् ॥ १९ ॥ रामं रघुवरं वीरं धनुर्वेदविशारदम् ।  
 मंगलायतनं देवं रामं राजीवलोचनम् ॥ २० ॥ सर्वशास्त्रार्थतत्त्वज्ञ-  
 मानंदकरसुंदरम् । कौसल्यानंदनं रामं धनुर्बाणधरं हरिम्  
 ॥ २१ ॥ एवं संचितयन्त्रिषु यज्ज्योतिरमलं विभुम् । प्रहृष्टमानसो  
 भूत्वा मुनिवर्यः स नारदः ॥ २२ ॥ सर्वलोकहितार्थाय तुष्टाव  
 रघुनंदनम् । कृतांजलिपुटो भूत्वा चिंतयन्नद्भुतं हरिम् ॥ २३ ॥  
 यदेकं यत्परं नित्यं यदनंतं चिदात्मकम् । यदेकं व्यापकं लोके  
 तद्रूपं चिंतयाम्यहम् ॥ २४ ॥ विज्ञानहेतुं विमलायताक्षं प्रज्ञानरूपं  
 स्वमुखैकहेतुम् । श्रीरामचंद्रं हरिमादिदेवं परात्परं राममहं भजामि  
 ॥ २५ ॥ कविं पुराणं पुरुषं पुरस्तात्सनातनं योगिनमीशितारम् ।  
 अणोरणीयांसमनंतवीर्यं प्राणेश्वरं राममसौ ददर्श ॥ २६ ॥ नारद  
 उवाच ॥ नारायणं जगन्नाथमभिरामं जगत्पतिम् । कविं पुराणं  
 वागीशं रामं दशरथात्मजम् ॥ २७ ॥ राजराजं रघुवरं कौसल्या-  
 नंदवर्धनम् । भर्गं वरेण्यं विश्वेशं रघुनाथं जगद्गुरुम् ॥ २८ ॥ सत्यं  
 सत्यप्रियं श्रेष्ठं जानकीवल्लभं विभुम् । सौमित्रिपूर्वजं शांतं कामदं  
 कमलेक्षणम् ॥ २९ ॥ आदित्यं रविमीशानं घृणिं सूर्यमनामयम् ।  
 आनंदरूपिणं सौम्यं राघवं करुणामयम् ॥ ३० ॥ जामदग्न्यं तपो-  
 मूर्तिं रामं परशुधारिणम् । वाक्पतिं वरदं वाच्यं श्रीपतिं पक्षिवाह-  
 नम् ॥ ३१ ॥ श्रीशार्ङ्गधारिणं रामं चिन्मयानंदविग्रहम् । हलधृ-  
 ग्विष्णुमीशानं बलरामं कृपानिधिम् ॥ ३२ ॥ श्रीवल्लभं कृपानाथं  
 जगन्मोहनमच्युतम् । मत्स्यकूर्मवराहादिरूपधारिणमव्ययम् ॥ ३३ ॥  
 वासुदेवं जगद्योनिमनादिनिधनं हरिम् । गोविंदं गोपतिं विष्णुं

गोपीजनमनोहरम् ॥ ३४ ॥ गोगोपालपरीवारं गोपकन्यासमा-  
 वृतम् । विद्युत्पुंजप्रतीकाशं रामं कृष्णं जगन्मयम् ॥ ३५ ॥ गो-  
 गोपिकासमाकीर्णं वेणुवादनतत्परम् । कामरूपं कलावंतं कामिनी-  
 कामदं विभुम् ॥ ३६ ॥ मन्मथं मथुरानाथं माधवं मकरध्वजम् ।  
 श्रीधरं श्रीकरं श्रीशं श्रीनिवासं परात्परम् ॥ ३७ ॥ भूतेशं भूपतिं  
 भद्रं विभूतिं भूतिभूषणम् । सर्वदुःखहरं वीरं दुष्टदानववैरिणम्  
 ॥ ३८ ॥ श्रीनृसिंहं महाबाहुं महांतं दीप्ततेजसम् । चिदानंदमयं  
 नित्यं प्रणवं ज्योतिरूपिणम् ॥ ३९ ॥ आदित्यमंडलगतं निश्चितार्थ-  
 स्वरूपिणम् । भक्तप्रियं पद्मनेत्रं भक्तानामीप्सितप्रदम् ॥ ४० ॥  
 कौसल्येयं कलामूर्तिं काकुत्स्थं कमलाप्रियम् । सिंहासने समासीनं  
 नित्यव्रतमकल्मषम् ॥ ४१ ॥ विश्वामित्रप्रियं दांतं स्वदारनियत-  
 व्रतम् । यज्ञेशं यज्ञपुरुषं यज्ञपालनतत्परम् ॥ ४२ ॥ सत्यसंधं जित-  
 क्रोधं शरणागतवत्सलम् । सर्वक्लेशापहरणं विभीषणवरप्रदम्  
 ॥ ४३ ॥ दशग्रीवहरं रौद्रं केशवं केशिमर्दनम् । वालिप्रमथनं वीरं  
 सुग्रीवेषितराज्यदम् ॥ ४४ ॥ नरवानरदेवैश्च सेवितं हनुम-  
 त्प्रियम् । शुद्धं सूक्ष्मं परं शांतं तारकब्रह्मरूपिणम् ॥ ४५ ॥ सर्वभूता-  
 त्मभूतस्थं सर्वाधारं सनातनम् । सर्वकारणकर्तारं निदानं प्रकृतेः  
 परम् ॥ ४६ ॥ निरामयं निराभासं निरवद्यं निरंजनम् । नित्यानंदं  
 निराकारमद्वैतं तमसः परम् ॥ ४७ ॥ परात्परतरं तत्त्वं सत्यानंदं  
 चिदात्मकम् । मनसा शिरसा नित्यं प्रणमामि रघूत्तमम् ॥ ४८ ॥  
 सूर्यमंडलमध्यस्थं रामं सीतासमन्वितम् । नमामि पुंडरीकाक्षममेयं  
 गुरुतत्परम् ॥ ४९ ॥ नमोऽस्तु वासुदेवाय ज्योतिषां पतये नमः ।  
 नमोऽस्तु रामदेवाय जगदानंदरूपिणे ॥ ५० ॥ नमो वेदांतनिष्ठाय  
 योगिने ब्रह्मवादिने । मायामयनिरासाय प्रपन्नजनसेविने ॥ ५१ ॥



वंदामहे महेशानचडकोदंडखंडनम् । जानकीहृदयानंदवर्धनं रघु-  
 नंदनम् ॥ ५२ ॥ उत्फुल्लामलकोमलोत्पलदलश्यामाय रामाय ते  
 कामाय प्रमदामनोहरगुणग्रामाय रामात्मने । योगारूढमुनींद्रमान-  
 ससरोहंसाय संसारविध्वंसाय स्फुरदोजसे रघुकुलोत्तंसाय पुंसे नमः  
 ॥ ५३ ॥ भवोद्भवं वेदविदां वरिष्ठमादित्यचंद्रानलसुप्रभावम् ।  
 सर्वात्मकं सर्वगतस्वरूपं नमामि रामं तमसः परस्तात् ॥ ५४ ॥  
 निरंजनं निष्प्रतिमं निरीहं निराश्रयं निष्कलमप्रपंचम् । नित्यं ध्रुवं  
 निर्विषयस्वरूपं निरंतरं राममहं भजामि ॥ ५५ ॥ भवाब्धिपोतं  
 भरताग्रजं तं भक्तप्रियं भानुकुलप्रदीपम् । भूतत्रिनाथं भुवना-  
 धिपं तं भजामि रामं भवरोगवैद्यम् ॥ ५६ ॥ सर्वाधिपत्यं  
 समरांगधीरं सत्यं चिदानंदमयस्वरूपम् । सत्यं शिवं शांतिमयं  
 शरण्यं सनातनं राममहं भजामि ॥ ५७ ॥ कार्यक्रियाकारणमप्रमेयं  
 कविं पुराणं कमलायताक्षम् । कुमारवेद्यं करुणामयं तं कल्पद्रुमं  
 राममहं भजामि ॥ ५८ ॥ त्रैलोक्यनाथं सरसीरूहाक्षं दयानिधिं  
 द्वंद्वविनाशहेतुम् । महाबलं वेदविधिं सुरेशं सनातनं राममहं  
 भजामि ॥ ५९ ॥ वेदांतवेद्यं कविमीशितारमनादिमध्यांतमचिंत्य-  
 माद्यम् । अगोचरं निर्मलमेकरूपं नमामि रामं तमसः परस्तात्  
 ॥ ६० ॥ अशेषवेदात्मकमादिसंज्ञमजं हरिं विष्णुमनंतमाद्यम् ।  
 अपारसंवित्सुखमेकरूपं परात्परं राममहं भजामि ॥ ६१ ॥  
 तत्त्वस्वरूपं पुरुषं पुराणं स्वतेजसा पूरितविश्वमेकम् । राजाधिराजं  
 रविमंडलस्थं विश्वेश्वरं राममहं भजामि ॥ ६२ ॥ लोकाभिरामं  
 रघुवंशनार्थं हरिं चिदानंदमयं मुकुंदम् । अशेषविद्याधिपतिं कवींद्रं  
 नमामि रामं तमसः परस्तात् ॥ ६३ ॥ योगोंद्रसंवैश्वर्यं सुसेव्यमानं  
 नारायणं निर्मलमादिदेवम् । ततोऽस्मि नित्यं जगदेकनाथमादित्य-

वर्णं तमसः परस्तात् ॥ ६४ ॥ विभूतिदं विश्वसृजं विरामं  
 राजेंद्रमीशं रघुवंशनाथम् । अचिन्त्यमव्यक्तमनंतमूर्तिं ज्योतिर्मयं  
 राममहं भजामि ॥ ६५ ॥ अशेषसंसारविहारहीनमादित्यगं पूर्ण-  
 सुखाभिरामम् । समस्तसाक्षिं तमसः परस्तान्नारायणं विष्णुमहं  
 भजामि ॥ ६६ ॥ मुनींद्रगुह्यं परिपूर्णकामं कलानिधिं कल्मष-  
 नाशहेतुम् । परात्परं यत्परमं पवित्रं नमामि रामं महतो महांतम्  
 ॥ ६७ ॥ ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च देवेन्द्रो देवतास्तथा । आदित्यादि-  
 ग्रहाश्चैव त्वमेव रघुनंदन ॥ ६८ ॥ तापसा ऋषयः सिद्धाः  
 साध्याश्च मरुतस्तथा । विप्रा वेदास्तथा यज्ञाः पुराणधर्मसंहिताः  
 ॥ ६९ ॥ वर्णाश्रमास्तथा धर्मा वर्णधर्मास्तथैव च । यक्षराक्षस-  
 गंधर्वा दिक्पाला दिग्गजादयः ॥ ७० ॥ सनकादिमुनिश्रेष्ठास्त्वमेव  
 रघुपुंगव । वसवोऽष्टौ त्रयः काला रुद्रा एकादश स्मृताः  
 ॥ ७१ ॥ तारका दश दिक् चैव त्वमेव रघुनंदन । सप्तद्वीपाः  
 समुद्राश्च नगा नद्यस्तथा द्रुमाः ॥ ७२ ॥ स्थावरा जंगमाश्चैव  
 त्वमेव रघुनायक । देवतिर्यङ्मनुष्याणां दानवानां तथैव च  
 ॥ ७३ ॥ माता पिता तथा भ्राता त्वमेव रघुवल्लभ । सर्वेषां त्वं  
 परं ब्रह्म त्वन्मयं सर्वमेव हि ॥ ७४ ॥ त्वमक्षरं परं ज्योतिस्त्वमेव  
 पुरुषोत्तम । त्वमेव तारकं ब्रह्म त्वत्तोऽन्यत्रैव किंचन ॥ ७५ ॥  
 शांतं सर्वगतं सूक्ष्मं परं ब्रह्म सनातनम् । राजीवलोचनं रामं  
 प्रणमामि जगत्पतिम् ॥ ७६ ॥ व्यास उवाच ॥ ततः प्रसन्नः  
 श्रीरामः प्रोवाच मुनिपुंगवम् । तुष्टोऽस्मि मुनिशार्दूल वृणीष्व  
 वरमुत्तमम् ॥ ७७ ॥ नारद उवाच ॥ यदि तुष्टोऽसि सर्वज्ञ  
 श्रीराम करुणानिधे । त्वन्मूर्तिदर्शनेनैव कृतार्थोऽहं च सर्वदा  
 ॥ ७८ ॥ धन्योऽहं कृतकृत्योऽहं पुण्योऽहं पुरुषोत्तम ।

अद्य मे सफलं जन्म जीवितं सफलं च मे ॥ ७९ ॥ अद्य मे  
सफलं ज्ञानमद्य मे सफलं तपः । अद्य मे सफलं कर्म  
त्वत्पादांभोजदर्शनात् । अद्य मे सफलं सर्वं त्वन्नामस्मरणं तथा  
॥ ८० ॥ त्वत्पादांभोरुहद्वंद्वसद्भक्तिं देहि राघव । ततः परमसंप्रीतः  
स रामः प्राह नारदम् ॥ ८१ ॥ श्रीराम उवाच ॥ मुनिवर्य महाभाग  
मुने त्विष्टं ददामि ते । यच्चया चेप्सितं सर्वं मनसा तद्भविष्यति  
॥ ८२ ॥ नारद उवाच ॥ वरं न याचे रघुनाथ युष्मत्पदाब्जभक्तिः  
सततं ममास्तु । इदं प्रियं नाथ वरं प्रयाचे पुनः पुनस्त्वामिदमेव  
याचे ॥ ८३ ॥ व्यास उवाच ॥ इत्येवमीडितो रामः प्रादात्तस्मै वरां-  
तरम् । वीरो रामो महातेजाः सच्चिदानंदविग्रहः ॥ ८४ ॥ अद्वैतम-  
मलं ज्ञानं स्वनामस्मरणं तथा । अंतर्दधौ जगन्नाथः पुरतस्तस्य  
राघवः ॥ ८५ ॥ इति श्रीरघुनाथस्य स्तवराजमनुत्तमम् । सर्वसौभाग्य-  
संपत्तिदायकं मुक्तिदं शुभम् ॥ ८६ ॥ कथितं ब्रह्मपुत्रेण वेदानां  
सारमुत्तमम् । गुह्याद्गुह्यतमं दिव्यं तव स्नेहात्प्रकीर्तितम् ॥ ८७ ॥  
यः पठेच्छृणुयाद्वापि त्रिसंध्यं श्रद्धयान्वितः । ब्रह्महत्यादिपापानि  
तत्समानि बहूनि च ॥ ८८ ॥ स्वर्णस्तेयं सुरापानं गुरुतल्पगति-  
स्तथा । गोवधाद्युपपापानि अनृतात्संभवानि च ॥ ८९ ॥ सर्वैः प्रमु-  
च्यते पापैः कल्पायुतशतोद्भवैः । मानसं वाचिकं पापं कर्मणा समु-  
पार्जितम् ॥ ९० ॥ श्रीरामस्मरणेनैव तत्क्षणाद्भयति ध्रुवम् । इदं  
सत्यमिदं सत्यं सत्यमेतदिहोच्यते ॥ ९१ ॥ रामं सत्यं परं ब्रह्म  
रामात्किंचिन्न विद्यते । तस्माद्भ्रामस्वरूपं हि सत्यं सत्यमिदं जगत्  
॥ ९२ ॥ श्रीरामचंद्र रघुपुंगव राजवर्यं राजेंद्र राम रघुनायक राघ-  
वेश । राजाधिराज रघुनंदन रामचंद्र दासोऽहमद्य भवतः शरणा-  
गतोऽस्मि ॥ ९३ ॥ वैदेहीसहितं सुरद्रुमतले हैमे महामंडपे मध्ये

पुष्पकृतासने मणिमये वीरासने संस्थितम् । अग्रे वाचयति प्रभंजन-  
सुते तत्त्वं मुनीन्द्रैः परं व्याख्यातं भरतादिभिः परिवृतं रामं भजे  
श्यामलम् ॥ ९४ ॥ रामं रत्नकिरीटकुण्डलयुतं केयूरहारान्वितं  
सीतालंकृतवामभागममलं सिंहासनस्थं विभुम् । सुग्रीवादिहरीश्वरैः  
सुरगणैः संसेव्यमानं सदा विश्वामित्रपराशरादिमुनिभिः संस्तूयमानं  
प्रभुम् ॥ ९५ ॥ सकलगुणनिधानं योगिभिः स्तूयमानं भुजविजित-  
समानं राक्षसेन्द्रादिमानम् । महितनृपभयानं सीतया शोभमानं  
स्मर हृदय विमानं ब्रह्म रामाभिधानम् ॥ ९६ ॥ रघुवर तव मूर्ति-  
र्मामके मानसाब्जे नरकगतिहरं ते नामधेयं मुखे मे । अनिशमतुल-  
भक्त्या मस्तकं त्वत्पदाब्जे भवजलनिधिमग्नं रक्ष मामार्तबंधो ॥ ९७ ॥  
रामरत्नमहं वंदे चित्रकूटपतिं हरिम् । कौसल्याभक्तिसंभूतं जानकी-  
कंठभूषणम् ॥ ९८ ॥ इति श्रीसनत्कुमारसंहितायां नारदोक्तं  
श्रीरामस्तवराजस्तोत्रं संपूर्णम् ।

### ३०७. रामगीता ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीमहादेव उवाच ॥ ततो जगन्मंगलमंगला-  
त्मना विधाय रामायणकीर्तिमुत्तमाम् । चचार पूर्वाचरितं रघूत्तमो  
राजर्षिवर्यैरभिसेवितं यथा ॥ १ ॥ सौमित्रिणा पृष्ट उदारबुद्धिना  
रामः कथाः प्राह पुरातनीः शुभाः । राज्ञः प्रमत्तस्य नृगस्य शापतो  
द्विजस्य तिर्यक्तवमथाह राघवः ॥ २ ॥ कदाचिदेकांत उपस्थितं  
प्रभुं रामं रमालालितपादपंकजम् । सौमित्रिरासादितशुद्धभावनः  
प्रणम्य भक्त्या विनयान्वितोऽब्रवीत् ॥ ३ ॥ सौमित्रिरुवाच ॥ त्वं  
शुद्धबोधोऽसि हि सर्वदेहिनामात्मास्यधीशोऽसि निराकृतिः स्वयम् ।  
प्रतीयसे ज्ञानदृशां महामते पादाब्जभृंगाहितसंगसंगिनाम् ॥ ४ ॥  
अहं प्रपन्नोऽस्मि पदांबुजं प्रभो भवापवर्गं तव योगिभावितम् ।

यथांजसाज्ञानमपारवारिधिं सुखं तरिष्यामि तथानुशाधि माम्  
 ॥ ५ ॥ श्रुत्वाथ सौमित्रिवचोऽखिलं तदा प्राह प्रपन्नार्तिहरः प्रस-  
 न्नाधीः । विज्ञानमज्ञानतमोपशांतये श्रुतिप्रपन्नं क्षितिपालभूषणः  
 ॥ ६ ॥ श्रीराम उवाच ॥ आदौ स्ववर्णाश्रमवर्णिताः क्रियाः कृत्वा  
 समासादितश्चुद्धमानसः । समाप्य तत्पूर्वमुपात्तसाधनः समाश्रये-  
 त्सद्गुरुमात्मलब्धये ॥ ७ ॥ क्रिया शरीरोद्भवहेतुरादृता प्रियाप्रियौ  
 तौ भवतः सुराणिः । धर्मेतरौ तत्र पुनः शरीरकं पुनः क्रिया  
 चक्रवदीर्यते भवः ॥ ८ ॥ अज्ञानमेवास्य हि मूलकारणं तद्द्वयान-  
 मेवात्र विधौ विधीयते । विद्यैव तन्नाशविधौ पटीयसी न कर्म  
 तज्जं सविरोधमीरितम् ॥ ९ ॥ नाज्ञानहानिर्न च रागसंक्षयो भवे-  
 त्ततः कर्म सदोषमुद्भवेत् । ततः पुनः संसृतिरप्यवारिता तस्माद्बुधो  
 ज्ञानविचारवान्भवेत् ॥ १० ॥ ननु क्रिया वेदमुखेन चोदिता  
 यथैव विद्या पुरुषार्थसाधनम् । कर्तव्यता प्राणभृतः प्रचोदिता  
 विद्यासहायत्वमुपैति सा पुनः ॥ ११ ॥ कर्माकृतौ दोषमपि श्रुति-  
 र्जगौ तस्मात्सदा कार्यमिदं मुमुक्षुणा । ननु स्वतंत्रा ध्रुवकार्य-  
 कारिणी विद्या न किञ्चिन्मनसाप्यपेक्षते ॥ १२ ॥ न सत्यकार्योऽपि  
 हि यद्बद्धधरः प्रकांक्षतेऽन्यानपि कारकादिकान् । तथैव विद्या  
 विधितः प्रकाशितैर्विशिष्यते कर्मभिरेव मुक्तये ॥ १३ ॥ केचि-  
 द्बदंतीति वितर्कवादिनस्तदप्यसद्दृष्टविरोधकारणात् । देहाभिमाना-  
 दभिवर्धते क्रिया विद्यागताहंकृतितः प्रसिध्यति ॥ १४ ॥ विशुद्ध-  
 विज्ञानविरोचनांचिता विद्यात्मवृत्तिश्चरमेति भण्यते । उदेति कर्मा-  
 खिलकारकादिभिर्निहंति विद्याऽखिलकारकादिकम् ॥ १५ ॥ तस्मा-  
 र्यजेत्कार्यमशेषतः सुधीर्विद्याविरोधान्न समुच्चयो भवेत् । आत्मा-  
 नुसंधानपरायणः सदा निवृत्तसर्वेन्द्रियवृत्तिगोचरः ॥ १६ ॥ याव-

च्छरीरादिषु माययात्मधीस्तावद्विधेयो विधिवादकर्मणाम् । नेतीति  
 वाक्यैरखिलं निषिध्य तज्ज्ञात्वा परात्मानमथ त्यजेत्क्रियाः ॥ १७ ॥  
 यदा परात्मात्मविभेदभेदकं विज्ञानमात्मन्यवभाति भास्वरम् ।  
 तदैव माया प्रविलीयतेऽजसा सकारका कारणमात्मसंसृतेः ॥ १८ ॥  
 श्रुतिप्रमाणाभिविनाशिता च सा कथं भविष्यत्यपि कार्यकारिणी ।  
 विज्ञानमात्रादमलाद्वितीयतस्तस्मादविद्या न पुनर्भविष्यति ॥ १९ ॥  
 यदि स्म नष्टा न पुनः प्रसूयते कर्ताऽहमस्येति मतिः कथं भवेत् ।  
 तस्मात्स्वतंत्रा न किमप्यपेक्षते विद्या विमोक्षाय विभाति केवला  
 ॥ २० ॥ सा तैत्तिरीयश्रुतिराह सादरं न्यासं प्रशस्ताखिलकर्मणां  
 स्फुटम् । एतावदित्याह च वाजिनां श्रुतिज्ञानं विमोक्षाय न कर्म  
 साधनम् ॥ २१ ॥ विद्यासमत्वेन तु दर्शितस्त्वया क्रतुर्न दृष्टांत  
 उदाहृतः समः । फलैः पृथक्त्वाद्बहुकारकैः क्रतुः संसाध्यते ज्ञान-  
 मतो विपर्ययम् ॥ २२ ॥ सप्रत्यवायो ह्यहमित्यनात्मधीरज्ञप्रसिद्धा  
 न तु तत्त्वदर्शिनः । तस्माद्ब्रह्मस्याज्यमपि क्रियात्मभिर्विधानतः  
 कर्म विधिप्रकाशितम् ॥ २३ ॥ श्रद्धान्वितस्तत्त्वमसीति वाक्यतो  
 गुरोः प्रसादादपि शुद्धमानसः । विज्ञाय चैकात्म्यमथात्मजीवयोः  
 सुखी भवेन्मेरुरिवाप्रकंपनः ॥ २४ ॥ आदौ पदार्थावगतिर्हि कारणं  
 वाक्यार्थविज्ञानविधौ विधानतः । तत्त्वंपदार्थौ परमात्मजीवकाव-  
 सीति चैकात्म्यमथानयोर्भवेत् ॥ २५ ॥ प्रत्यक्परोक्षादिविरोध-  
 मात्मनोर्विहाय संगृह्य तयोश्चिदात्मताम् । संशोधितां लक्षणया च  
 लक्षितां ज्ञात्वा स्वमात्मानमथाद्भयो भवेत् ॥ २६ ॥ एकात्मकत्वा-  
 ज्जहती न संभवेत्तथाऽजहल्लक्षणता विरोधतः । सोऽयंपदार्थाविव  
 भागलक्षणा युज्येत तत्त्वंपदयोरदोषतः ॥ २७ ॥ रसादिपंचीकृत-  
 भूतसंभवं भोगालयं दुःखसुखादिकर्मणाम् । शरीरमाद्यंतवदादिः

कर्मजं मायामयं स्थूलमुपाधिमात्मनः ॥ २८ ॥ सूक्ष्मं मनोबुद्धि-  
 दशेंद्रियैर्युतं प्राणैरपंचीकृतभूतसंभवम् । भोक्तुः सुखादेरनुसाधनं  
 भवेच्छरीरमन्यद्विदुरात्मनो बुधः ॥ २९ ॥ अनाद्यनिर्वाच्यमपीह  
 कारणं मायाप्रधानं तु परं शरीरकम् । उपाधिभेदान्तु यतः पृथक्-  
 स्थितं स्वात्मानमात्मन्यवधारयेत्कृमात् ॥ ३० ॥ कोशेषु पंचस्वपि  
 तत्तदाकृतिर्विभाति संगत्स्फटिकोपलो यथा । असंगरूपोऽयमजो  
 यतोऽद्वयो विज्ञायतेऽस्मिन्परितो विचारिते ॥ ३१ ॥ बुद्धेस्त्रिधा  
 वृत्तिरपीह दृश्यते स्वप्नादिभेदेन गुणत्रयात्मनः । अन्योन्य-  
 तोऽस्मिन्व्यभिचारतो मृषा नित्ये परे ब्रह्मणि केवले शिवे  
 ॥ ३२ ॥ देहेंद्रियप्राणमनश्चिदात्मनां संघादजस्रं परिवर्तते  
 धियः । वृत्तिस्तमोमूलतयाऽज्ञलक्षणा यावद्भवेत्तावदसौ  
 भवोद्भवः ॥ ३३ ॥ नेति प्रमाणेन निराकृताखिलो हृदा समा-  
 स्वादितचिद्धनामृतः । त्यजेदशेषं जगदात्तसद्रसं पीत्वा यथां-  
 ऽभः प्रजहाति तत्फलम् ॥ ३४ ॥ कदाचिदात्मा न मृतो न जायते  
 न क्षीयते नापि विवर्धते नवः । निरस्तसर्वातिशयः सुखात्मकः  
 स्वयंप्रभः सर्वगतोऽयमद्वयः ॥ ३५ ॥ एवंविधे ज्ञानमये सुखात्मके  
 कथं भवो दुःखमयः प्रतीयते । अज्ञानतोऽध्यासवशात्प्रकाशते  
 ज्ञाने विलीयेत विरोधतः क्षणात् ॥ ३६ ॥ यदन्यदन्यत्र विभाव्यते  
 भ्रमादध्यासमित्याहुरमुं विपश्चितः । असर्पभूतेऽहि विभावनं यथा  
 रज्ज्वादिके तद्दृदपीश्वरे जगत् ॥ ३७ ॥ विकल्पमायारहिते चिदा-  
 त्मकेऽहंकार एष प्रथमः प्रकल्पितः । अध्यास एवात्मनि सर्वकारणे  
 निरामये ब्रह्मणि केवले परे ॥ ३८ ॥ इच्छादिरागादिसुखादि-  
 धर्मिकाः सदा धियः संसृतिहेतवः परे । यस्मात्प्रसुप्तौ तदभावतः  
 परः सुखस्वरूपेण विभाव्यते हि नः ॥ ३९ ॥ अनाद्यविद्योद्भवबुद्धि-

बिंबितो जीवःप्रकाशोऽयमितीर्यते चितः । आत्मा धियः साक्षितया  
 पृथक् स्थितो बुद्ध्या परिच्छिन्नपरः स एव हि ॥ ४० ॥ चिद्विंब-  
 साक्षात्मधियां प्रसंगतस्त्वेकत्र वातादनलाक्तलोहवत् । अन्योन्यम-  
 ध्यासवशात्प्रतीयते जडाजडत्वं च चिदात्मचेतसोः ॥ ४१ ॥ गुरोः  
 सकाशादपि वेदवाक्यतः संजातविद्यानुभवो निरीक्ष्य तम् । स्वा-  
 त्मानमात्मस्थमुपाधिवर्जितं त्यजेदशेषं जडमात्मगोचरम् ॥ ४२ ॥  
 प्रकाशरूपोऽहमजोऽहमद्वयोऽसकृद्विभातोऽहमतीव निर्मलः । विशु-  
 द्धविज्ञानघनो निरामयः संपूर्ण आनंदमयोऽहमक्रियः ॥ ४३ ॥ सदैव  
 मुक्तोऽहमर्चित्यशक्तिमानतींद्रियज्ञानमविक्रियात्मकः । अनंतपारो-  
 ऽहमहर्निशं बुधैर्विभावितोऽहं हृदि वेदवादिभिः ॥ ४४ ॥ एवं सदा-  
 त्मानमखंडितात्मना विचार्यमाणस्य विशुद्धभावना । हन्यादविद्या-  
 मचिरेण कारकै रसायनं यद्वदुपासितं रुजः ॥ ४५ ॥ विविक्त  
 आसीन उपारतेंद्रियो विनिर्जितात्मा विमलांतराशयः । विभावये-  
 देकमनन्यसाधनो विज्ञानदृक्केवल आत्मसंस्थितः ॥ ४६ ॥ विश्वं  
 यदेतत्परमात्मदर्शनं विलापयेदात्मनि सर्वकारणे । पूर्णश्रिदानंदम-  
 योऽवतिष्ठते न वेद बाह्यं न च किंचिदांतरम् ॥ ४७ ॥ पूर्वं समा-  
 धेरखिलं विचिंतयेदोकारमात्रं सचराचरं जगत् । तदेव वाच्यं  
 प्रणवो हि वाचको विभाव्यते ज्ञानवशात्त बोधतः ॥ ४८ ॥ अकार-  
 संज्ञः पुरुषो हि विश्वको ह्युकारकस्तैजस ईर्यते क्रमात् । प्राज्ञो  
 मकारः परिपठ्यतेऽखिलैः समाधिपूर्वं न तु तत्त्वतो भवेत् ॥ ४९ ॥  
 विश्वं त्वकारं पुरुषं विलापयेदुकारमध्ये बहुधा व्यवस्थितम् । ततो  
 मकारे प्रविलाप्य तैजसं द्वितीयवर्णं प्रणवस्य चांतिमम् ॥ ५० ॥  
 मकारमप्यात्मनि चिद्धने परे विलापयेत्प्राज्ञमपीह कारणम् । सोऽहं  
 परं ब्रह्म सदा विमुक्तिमद्विज्ञानदृक्च्युक्त उपाधितोऽमलः ॥ ५१ ॥



एवं सदा जातपरात्मभावनः स्वानंदतुष्टः परिविस्मृताखिलः । आस्ते  
 स नित्यात्मसुखप्रकाशकः साक्षाद्विमुक्तोऽचलवारिसिंधुवत् ॥ ५२ ॥  
 एवं सदाऽभ्यस्तसमाधियोगिनो निवृत्तसर्वैन्द्रियगोचरस्य हि ।  
 विनिर्जिताशेषरिपोरहं सदा दृश्यो भवेयं जितषड्गुणात्मनः ॥ ५३ ॥  
 ध्यात्वैवमात्मानमहर्निशं मुनिस्तिष्ठेत्सदा मुक्तसमस्तबंधनः ।  
 प्रारब्धमभ्रभ्रभिमानवर्जितो मय्येव साक्षात्प्रविलीयते ततः ॥ ५४ ॥  
 आदौ च मध्ये च तथैव चांततो भयं विदित्वा भयशोककारणम् ।  
 हित्वा समस्तं विधिवादचोदितं भजेत्स्वमात्मानमथाखिलात्मनाम् ॥ ५५ ॥  
 आत्मन्यभेदेन विभावयद्भिदं भवत्यभेदेन मयात्मना  
 तदा । यथा जलं वारिनिधौ यथा पयः क्षीरे वियद्भ्योऽनिले  
 यथानिलः ॥ ५६ ॥ इत्थं यदीक्षेत हि लोकसंस्थितो जगन्मृषैवेति  
 विभावयन्मुनिः । निराकृतत्वाच्छ्रुतियुक्तिमानतो यथेदुभेदो दिशि  
 दिग्भ्रमादयः ॥ ५७ ॥ यावन्न पश्येदखिलं मदात्मकं तावन्मदा-  
 राधनतत्परो भवेत् । श्रद्दालुरत्यूर्जितभक्तिलक्षणो यस्तस्य दृश्योऽह-  
 मर्हर्निशं हृदि ॥ ५८ ॥ रहस्यमेतच्छ्रुतिसारसंग्रहं मया विनिश्चित्य  
 त्वोदितं प्रिय । यस्त्वेतदालोचयतीह बुद्धिमान्स मुच्यते पातक-  
 राशिभिः क्षणात् ॥ ५९ ॥ आतर्यदीदं परिदृश्यते जगन्मायैव सर्वं  
 परिहृत्य चेतसा । मद्भावनाभावितशुद्धमानसः सुखी भवानंदमयो  
 निरामयः ॥ ६० ॥ यः सेवते मामगुणं गुणात्परं हृदा कदा वा  
 यदि वा गुणात्मकम् । सोऽहं स्वपादांचितरेणुभिः स्पृशन्पुनाति  
 लोकत्रितयं यथा रविः ॥ ६१ ॥ विज्ञानमेतदखिलं श्रुतिसारमेकं  
 वेदांतवेद्यचरणेन मयैव गीतम् । यः श्रद्धया परिपठेद्गुरुभक्तियुक्तो  
 मद्रूपमेति यदि मद्बचनेषु भक्तिः ॥ ६२ ॥ इति श्रीमद्भ्यात्म-  
 रामायणे उमामहेश्वरसंवादे उत्तरकांडे रामगीता समाप्ता ॥

## ३०८. रामरक्षास्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अस्य श्रीरामरक्षास्तोत्रमंत्रस्य बुधकौशिक ऋषिः । श्रीसीतारामचंद्रो देवता । अनुष्टुप् छंदः । सीता शक्तिः । श्रीमद्भुवान् कीलकम् । श्रीरामचंद्रप्रीत्यर्थं रामरक्षास्तोत्रजपे विनियोगः ॥ अथ ध्यानम् ॥ ध्यायेदाजानुबाहुं धृतशरधनुषं बद्धपद्मासनस्थं पीतं वासो वसानं नवकमलदलस्पर्धिनेत्रं प्रसन्नम् । वामांकारुढसीतामुखकमलमिलल्लोचनं नीरदामं नानालंकारदीप्तं दधतमुरुजटामंडलं रामचंद्रम् ॥ इति ध्यानम् ॥ चरितं रघुनाथस्य शतकोटिप्रविस्तरम् । एकैकमक्षरं पुंसां महापातकनाशनम् ॥ १ ॥ ध्यात्वा नीलोत्पलश्यामं रामं राजीवलोचनम् । जानकीलक्ष्मणोपेतं जटामुकुटमंडितम् ॥ २ ॥ सासितूणधनुर्बाणपाणिं नक्तंचरांतकम् । स्वलीलया जगद्घातुमाविर्भूतमजं विभुम् ॥ ३ ॥ रामरक्षां पठेत्प्राज्ञः पापघ्नीं सर्वकामदाम् । शिरो मे राघवः पातु भालं दशरथात्मजः ॥ ४ ॥ कौसल्येयो हृशौ पातु विश्वामित्रप्रियः श्रुती । घ्राणं पातु मखत्राता मुखं सौमित्रिवत्सलः ॥ ५ ॥ जिह्वां विद्यानिधिः पातु कंठं भरतवंदितः । स्कंधौ दिव्यायुधः पातु भुजौ भग्नेशकार्मुकः ॥ ६ ॥ करौ सीतापतिः पातु हृदयं जामदग्नयजित् । मध्यं पातु खरध्वंसी नाभिं जांबवदाश्रयः ॥ ७ ॥ सुग्रीवेशः कटी पातु सक्थिनी हनुमत्प्रभुः । ऊरू रघूत्तमः पातु रक्षःकुलविनाशकृत् ॥ ८ ॥ जानुनी सेतुकृत्पातु जंघे दशमुखांतकः । पादौ विभीषणश्रीदः पातु रामोऽखिलं वपुः ॥ ९ ॥ एतां रामबलोपेतां रक्षां यः सुकृती पठेत् । स चिरायुः सुखी पुत्री विजयी विनयी भवेत् ॥ १० ॥ पातालभूतलव्योमचारिणश्छद्मचारिणः । न द्रष्टुमपि शक्तास्ते रक्षितं रामनामभिः ॥ ११ ॥

रामेति रामभद्रेति रामचन्द्रेति वा स्मरन् । नरो न  
 लिप्यते पापैर्भुक्तिं मुक्तिं च विंदति ॥ १२ ॥ जगज्जैत्रैकमंत्रेण  
 रामनाम्नाऽभिरक्षितम् । यः कंठे धारयेत्तस्य करस्थाः सर्वसिद्धयः  
 ॥ १३ ॥ वज्रपंजरनामेदं यो रामकवचं स्मरेत् । अव्याहताज्ञः  
 सर्वत्र लभते जयमंगलम् ॥ १४ ॥ आदिष्टवान्यथा स्वप्ने राम-  
 रक्षामिमां हरः । तथा लिखितवान्प्रातः प्रबुद्धो बुधकौशिकः ॥ १५ ॥  
 आरामः कल्पवृक्षाणां विरामः सकलापदाम् । अभिरामस्त्रिलोकानां  
 रामः श्रीमान्स नः प्रभुः ॥ १६ ॥ तरुणौ रूपसंपन्नौ सुकुमारौ  
 महाबलौ । पुंडरीकविशालाक्षौ चीरकृष्णाजिनांबरौ ॥ १७ ॥ फल-  
 मूलाशिनौ दांतौ तापसौ ब्रह्मचारिणौ । पुत्रौ दशरथस्यैतौ भ्रातरौ  
 रामलक्ष्मणौ ॥ १८ ॥ शरण्यौ सर्वसत्त्वानां श्रेष्ठौ सर्वधनुष्मताम् ।  
 रक्षःकुलनिहंतारौ त्रायेतां नो रघूत्तमौ ॥ १९ ॥ आत्तसज्जधनुषा-  
 विषुस्पृशावक्षयाशुगनिषंगसंगिनौ । रक्षणाय मम रामलक्षणावग्रतः  
 पथि सदैव गच्छताम् ॥ २० ॥ सन्नद्धः कवची खड्गी चापबाणधरो  
 युवा । गच्छन्मनोऽरथोऽस्माकं रामः पातु सलक्षणः ॥ २१ ॥  
 रामो दाशरथिः शूरो लक्ष्मणानुचरो बली । काकुत्स्थः पुरुषः पूर्णः  
 कौसल्येयो रघूत्तमः ॥ २२ ॥ वेदांतवेद्यो यज्ञेशः पुराणपुरुषोत्तमः ।  
 जानकीवल्लभः श्रीमानप्रमेयपराक्रमः ॥ २३ ॥ इत्येतानि जपन्नित्यं  
 मद्भक्तः श्रद्धयान्वितः । अश्वमेधाधिकं पुण्यं संप्राप्नोति न संशयः  
 ॥ २४ ॥ रामं दूर्वादलश्यामं पद्माक्षं पीतवाससम् । स्तुवंति  
 नामभिर्दिव्यैर्न ते संसारिणो नरः ॥ २५ ॥ रामं लक्ष्मणपूर्वजं  
 रघुवरं सीतापतिं सुंदरं काकुत्स्थं करुणार्णवं गुणनिधिं विप्रप्रियं  
 धार्मिकम् । राजेंद्रं सत्यसंधं दशरथतनयं श्यामलं शांतमूर्तिं वंदे  
 लोकाभिरामं रघुकुलतिलकं राघवं रावणारिम् ॥ २६ ॥ रामाय

रामभद्राय रामचंद्राय वेधसे । रघुनाथाय नाथाय सीतायाः पतये  
 नमः ॥ २७ ॥ श्रीराम राम रघुनंदन राम राम श्रीराम राम  
 भरताग्रज राम राम । श्रीराम राम रणकर्कश राम राम श्रीराम  
 राम शरणं भव राम राम ॥ २८ ॥ श्रीरामचंद्रचरणौ मनसा  
 स्मरामि श्रीरामचंद्रचरणौ वचसा गृणामि । श्रीरामचंद्रचरणौ  
 शिरसा नमामि श्रीरामचंद्रचरणौ शरणं प्रपद्ये ॥ २९ ॥ माता  
 रामो मत्पिता रामचंद्रः स्वामी रामो मत्सखा रामचंद्रः । सर्वस्वं  
 मे रामचंद्रो दयालुर्नान्यं जाने नैव जाने न जाने ॥ ३० ॥ दक्षिणे  
 लक्ष्मणो यस्य वामे च जनकात्मजा । पुरतो मारुतिर्यस्य तं वंदे  
 रघुनंदनम् ॥ ३१ ॥ लोकाभिरामं रणरंगधीरं राजीवनेत्रं रघुवंश-  
 नाथम् । कारुण्यरूपं करुणाकरं तं श्रीरामचंद्रं शरणं प्रपद्ये  
 ॥ ३२ ॥ मनोजवं मारुततुल्यवेगं जितेंद्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम् ।  
 वातात्मजं वानरयूथमुख्यं श्रीरामदूतं शरणं प्रपद्ये ॥ ३३ ॥  
 कृजंतं रामरामेति मधुरं मधुराक्षरम् । आरूढ्य कविताशाखां वंदे  
 वाल्मीकिकोकिलम् ॥ ३४ ॥ आपदामपहर्तारं दातारं सर्वसंप-  
 दाम् । लोकाभिरामं श्रीरामं भूयो भूयो नमाम्यहम् ॥ ३५ ॥  
 भर्जनं भवबीजानामर्जनं सुखसंपदाम् । तर्जनं यमदूतानां राम-  
 रामेति गर्जनम् ॥ ३६ ॥ रामो राजमणिः सदा विजयते रामं रमेशं  
 भजे रामेणाभिहता निशाचरचमू रामाय तस्मै नमः । रामान्नास्ति  
 परायणं परतरं रामस्य दासोऽस्म्यहं रामे चित्तलयः सदा भवतु मे  
 भो राम मामुद्धर ॥ ३७ ॥ राम रामेति रामेति रमे रामे  
 मनोरमे । सहस्रनाम तत्तुल्यं रामनाम वरानने ॥ ३८ ॥ इति  
 श्रीबुधकौशिकविरचितं रामरक्षास्तोत्रं संपूर्णम् ॥

३०९. ब्रह्मदेवकृतरामस्तुतिः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ब्रह्मोवाच ॥ वंदे देवं विष्णुमशेषस्थितिहेतुं  
 त्वामध्यात्मज्ञानिभिरंतर्हृदि भाव्यम् । हेयाहेयद्वंद्वविहीनं परमेकं  
 सत्तामानं सर्वहृदिस्थं दृशिरूपम् ॥ १ ॥ प्राणापानौ निश्चयबुद्ध्या  
 हृदि रुद्ध्वा छित्त्वा सर्वं संशयबंधं विषयौघान् । पश्यंतीशं यं गत-  
 मोहा यतयस्तं वंदे रामं रत्नकिरीटं रविभासम् ॥ २ ॥ मायातीतं  
 माधवमाद्यं जगदादिं मानातीतं मोहविनाशं मुनिवन्द्यम् । योगि-  
 ध्येयं योगविधानं परिपूर्णं वंदे रामं रंजितलोकं रमणीयम् ॥ ३ ॥  
 भावाभावप्रत्ययहीनं भवमुख्यैर्भोगासक्तैरर्चितपादांबुजयुग्मम् ।  
 नित्यं शुद्धं बुद्धमनंतं प्रणवाख्यं वंदे रामं वीरमशेषासुरदावम्  
 ॥ ४ ॥ त्वं मे नाथो नाथितकार्याखिलकारी मानातीतो माधव-  
 रूपोऽखिलधारी । भक्त्या गम्यो भावितरूपो भवहारी योगाभ्या-  
 सैर्भावितचेतःसहचारी ॥ ५ ॥ त्वामाद्यंतं लोकततीनां परमीशं  
 लोकानां नो लौकिकमानैरधिगम्यम् । भक्तिश्रद्धाभावसमेतैर्भज-  
 नीयं वंदे रामं सुंदरमिंदीवरनीलम् ॥ ६ ॥ को वा ज्ञातुं त्वामति-  
 मानं गतमानं मानासक्तो माधवशक्तो मुनिमान्यम् । वृंदारण्ये  
 वंदितवृंदारकवृंदं वंदे रामं भवमुखवद्यं सुखकंदम् ॥ ७ ॥ नाना-  
 शास्त्रैर्वेदकदंबैः प्रतिपाद्यं नित्यानंदं निर्विषयज्ञानमनादिम् । मत्से-  
 वार्थं मानुषभावं प्रतिपन्नं वंदे रामं मरकतवर्णं मथुरेशम् ॥ ८ ॥  
 श्रद्धायुक्तो यः पठतीमं स्तवमाद्यं ब्राह्मं ब्रह्मज्ञानविधानं भुवि  
 मर्त्यः । रामं श्यामं कामितकामप्रदमीशं ध्यात्वा ध्याता पातक-  
 जालैर्विगतः स्यात् ॥ ९ ॥ इति श्रीमदध्यात्मरामायणे युद्धकांडे  
 ब्रह्मदेवकृतं रामस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

## ३१०. जटायुकृतरामस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ जटायुरूवाच ॥ अगणितगुणमप्रमेयमाद्यं सक-  
लजगत्स्थितिसंयमादिहेतुम् । उपरमपरमं परात्मभूतं सततमहं  
प्रणतोऽस्मि रामचंद्रम् ॥ १ ॥ निरवधिसुखामिंदिराकटाक्षं क्षपित-  
सुरेंद्रचतुर्मुखादिदुःखम् । नरवरमनिशं नतोऽस्मि रामं वरदमहं  
वरचापबाणहस्तम् ॥ २ ॥ त्रिभुवनकमनीयरूपमीड्यं रविशतभा-  
सुरमीहितप्रदानम् । शरणदमनिशं सुरागमूले कृतनिलयं रघुनंदनं  
प्रपद्ये ॥ ३ ॥ भवविपिनदवाग्निनामधेयं भवमुखदैवतदैवतं दया-  
लुम् । दनुजपतिसहस्रकोटिनाशं रवितनयासदृशं हरिं प्रपद्ये ॥ ४ ॥  
अविरतभवभावनातिदूरं भवविमुखैर्मुनिभिः सदैव दृश्यम् । भव-  
जलधिसुतारणांघ्रिपोतं शरणमहं रघुनंदनं प्रपद्ये ॥ ५ ॥ गिरिश-  
गिरिसुतामनोनिवासं गिरिवरधारिणमीहिताभिरामम् । सुरवरदनु-  
जेंद्रसेवितांघ्रिं सुरवरदं रघुनायकं प्रपद्ये ॥ ६ ॥ परधनपरदार-  
वर्जितानां परगुणभूतिषु तुष्टमानसानाम् । परहितनिरतात्मनां  
सुसेव्यं रघुवरमंबुजलोचनं प्रपद्ये ॥ ७ ॥ स्मितरुचिरविकासितान-  
नाब्जमतिसुलभं सुरराजनीलनीलम् । सितजलरुहचारुनेत्रशोभं  
रघुपतिमीशगुरोर्गुरुं प्रपद्ये ॥ ८ ॥ हरिकमलजशंभुरूपभेदात्त्वमिह  
विभासि गुणत्रयानुवृत्तः । रविरिव जलपूरितोदपात्रेष्वमरपति-  
स्तुतिपात्रमीशमीडे ॥ ९ ॥ रतिपतिशतकोटिसुंदरांगं शतपथगोचर-  
भावनाविदूरम् । यतिपतिहृदये संदा विभातं रघुपतिमार्तिहरं  
प्रभुं प्रपद्ये ॥ १० ॥ इत्येवं स्तुवतस्तस्य प्रसन्नोऽभूद्भूतमः ।  
उवाच गच्छ भद्रं ते मम विष्णोः परं पदम् ॥ ११ ॥ शृणोति य  
इदं स्तोत्रं लिखेद्वा नियतः पठेत् । स याति मम सारूप्यं मरणे  
मत्स्मृतिं लभेत् ॥ १२ ॥ इति राघवभाषितं तदा श्रुतवान् हर्ष-

समाकुलो द्विजः । रघुनन्दनसाम्यमास्थितः प्रययौ ब्रह्मसुपूजितं  
पदम् ॥ १३ ॥ इति श्रीमदध्यात्मरामायणे अरण्यकांडे जटायु-  
कृतरामस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ३११. रामाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ भजे विशेषसुंदरं समस्तपापखंडनम् । स्वभक्त-  
चित्तरंजनं सदैव राममद्वयम् ॥ १ ॥ जटाकलापशोभितं समस्त-  
पापनाशकम् । स्वभक्तभीतिभंजनं भजे ह राममद्वयम् ॥ २ ॥  
निजस्वरूपबोधकं कृपाकरं भवापहम् । समं शिवं निरंजनं भजे ह  
राममद्वयम् ॥ ३ ॥ सहप्रपंचकल्पितं ह्यनामरूपवास्तवम् । निरा-  
कृतिं निरामयं भजे ह राममद्वयम् ॥ ४ ॥ निष्प्रपंचनिर्विकल्प-  
निर्मलं निरामयम् । चिदेकरूपसंततं भजे ह राममद्वयम् ॥ ५ ॥  
भवाब्धिपोतरूपकं ह्यशेषदेहकल्पितम् । गुणाकरं कृपाकरं भजे ह  
राममद्वयम् ॥ ६ ॥ महावाक्यबोधकैर्विराजमानवाक्पदैः । परब्रह्म  
व्यापकं भजे ह राममद्वयम् ॥ ७ ॥ शिवप्रदं सुखप्रदं भवच्छिदं  
भ्रमापहम् । विराजमानदैशिकं भजे ह राममद्वयम् ॥ ८ ॥  
रामाष्टकं पठति यः सुकरं सुपुण्यं व्यासेन भाषितमिदं शृणुते  
मनुष्यः । विद्यां श्रियं विपुलसौख्यमनंतकीर्तिं संप्राप्य देहविलये  
लभते च मोक्षम् ॥ ९ ॥ इति श्रीव्यासविरचितं रामाष्टकं  
संपूर्णम् ॥

### ३१२. रामाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ कृतार्तदेवदंनं दिनेशवंशनंदनम् । सुशोभि-  
भालचंदनं नमामि राममीश्वरम् ॥ १ ॥ मुनीन्द्रयज्ञकारकं शिला-  
विपत्तिहारकम् । महाधनुर्विदारकं नमामि राममीश्वरम् ॥ २ ॥  
स्वतातवाक्यकारिणं तपोवने विहारिणम् । करेषु चापधारिणं

नमामि राममीश्वरम् ॥ ३ ॥ कुरंगमुक्तसायकं जटायुमोक्षदायकम् ।  
 प्रविद्धकीशनायकं नमामि राममीश्वरम् ॥ ४ ॥ प्लवंगसंगसंमर्ति  
 निबद्धनिम्नगापतिम् । दशास्यवंशसंक्षर्तिं नमामि राममीश्वरम्  
 ॥ ५ ॥ विदीनदेवहर्षणं कपीप्सितार्थवर्षणम् । स्वबंधुशोककर्षणं  
 नमामि राममीश्वरम् ॥ ६ ॥ गतारिराज्यरक्षणं प्रजाजनार्ति-  
 भक्षणम् । कृतास्तमोहलक्षणं नमामि राममीश्वरम् ॥ ७ ॥ हृता-  
 खिलाचलाभरं स्वधामनीतनागरम् । जगत्तमोदिवाकरं नमामि  
 राममीश्वरम् ॥ ८ ॥ इदं समाहितात्मना नरो रघूत्तमाष्टकम् ।  
 पठन्निरंतरं भयं भवोद्भवं न विंदते ॥ ९ ॥ इति श्रीपरमहंसस्वामि-  
 ब्रह्मानंदविरचितं श्रीरामाष्टकं संपूर्णम् ॥

### ३१३. श्रीमहादेवकृतरामस्तुतिः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीमहादेव उवाच ॥ नमोऽस्तु रामाय  
 सशक्तिकाय नीलोत्पलश्यामलकोमलाय । किरीटहारांगदभूषणाय  
 सिंहासनस्थाय महाप्रभाय ॥ १ ॥ त्वमादिमध्यांतविहीन एकः  
 सृजस्यवस्यत्सि च लोकजातम् । स्वमायया तेन न लिप्यसे त्वं  
 यत्स्वे मुखेऽजस्तरतोऽनवद्यः ॥ २ ॥ लीलां विधत्से गुणसंवृतस्त्वं  
 प्रसन्नभक्तानुविधानहेतोः । नानावतारैः सुरमानुषाद्यैः प्रतीयसे  
 ज्ञानिभिरेव नित्यम् ॥ ३ ॥ स्वांशेन लोकं सकलं विधाय  
 तं बिभर्षि च त्वं तदधः फणीश्वरः । उपर्यधो भान्वनि-  
 लोडुपौषधीप्रवर्षरूपोऽवसि नैकधा जगत् ॥ ४ ॥ त्वमिह देहभृतां  
 शिखिरूपः पचसि भक्तमशेषमजस्रम् । पवनपंचकरूपसहायो  
 जगदखंडमनेन बिभर्षि ॥ ५ ॥ चंद्रसूर्यशिखिमध्यगतं यत्तेज  
 ईश चिदशेषतनूनाम् । प्राभवत्तनुभृतामिह धैर्यं शौर्यमात्रमखिलं  
 तव सत्त्वम् ॥ ६ ॥ त्वं विरिंचिशिवविष्णुविभेदात्कालकर्मशशि-



सूर्यविभागात् । वादिनां पृथगिवेश विभासि ब्रह्म निश्चितमनन्य-  
दिहैकम् ॥ ७ ॥ मत्स्यादिरूपेण यथा त्वमेकः श्रुतौ पुराणेषु च  
लोकसिद्धः । तथैव सर्वं सदसद्विभागस्त्वमेव नान्यद्भवतो विभाति  
॥ ८ ॥ यद्यत्समुत्पन्नमनंतसृष्टावुत्पत्स्यते यच्च भवच्च यच्च । न  
दृश्यते स्थावरजंगमादौ त्वया विनाऽतः परतः परस्त्वम् ॥ ९ ॥  
तत्त्वं न जानन्ति परात्मनस्ते जनाः समस्तास्तव माययातः । त्वद्भक्त-  
सेवामलमानसानां विभाति तत्त्वं परमेकमैशम् ॥ १० ॥ ब्रह्मा-  
दयस्ते न विदुः स्वरूपं त्विदात्मतत्त्वं बहिरर्थभावाः । ततो बुधस्त्वा-  
मिदमेव रूपं भक्त्या भजन्मुक्तिमुपैत्यदुःखः ॥ ११ ॥ अहं भव-  
न्नामगुणैः कृतार्थो वसामि काश्यामनिशं भवान्या । मुमूर्षमाणस्य  
विमुक्तयेऽहं दिशामि मंत्रं तव रामनाम ॥ १२ ॥ इमं स्तवं नित्य-  
मनन्यभक्त्या शृण्वन्ति गायन्ति लिखन्ति ये वै । ते सर्वसौख्यं परमं  
च लब्ध्वा भवत्पदं यांतु भवत्प्रसादात् ॥ १३ ॥ इति श्रीमहादेव-  
कृतरामस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ३१४. अहल्याकृतरामस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अहल्योवाच ॥ अहो कृतार्थाऽस्मि जगन्निवास  
ते पादाब्जसंलग्नरजःकणादहम् । स्पृशामि यत्पद्मजशंकरादिभिर्वि-  
मृग्यते रंधितमानसैः सदा ॥ १ ॥ अहो विचित्रं तव राम चेष्टितं  
मनुष्यभावेन विमोहितं जगत् । चलस्यजत्त्वं चरणादिवर्जितः  
संपूर्ण आनंदमयोऽतिमायिकः ॥ २ ॥ यत्पादपंकजपरागपवित्रगात्रा  
भागीरथी भवविरिंचिमुखान्पुनाति । साक्षात्स एव मम दृग्विषयो  
यदास्ते किं वर्ण्यते मम पुराकृतभागधेयम् ॥ ३ ॥ मर्यावतारे  
मनुजाकृतिं हरिं रामाभिधेयं रमणीयदेहिनम् । धनुर्धरं पद्मविशाल-  
लोचनं भजामि नित्यं न परान्भजिष्ये ॥ ४ ॥ यत्पादपंकजरजः

श्रुतिभिर्विमृग्यं यन्नाभिपंकजभवः कमलासनश्च । यन्नामसार-  
रसिको भगवान्पुरारिस्तं रामचंद्रमनिशं हृदि भावयामि ॥ ५ ॥  
यस्यावतारचरितानि विरिंचिलोके गायंति नारदमुखा भवपद्म-  
जाद्याः । आनंदजाश्रुपरिषिक्तकुचाग्रसीमा वागीश्वरी च  
तमहं शरणं प्रपद्ये ॥ ६ ॥ सोऽयं परात्मा पुरुषः पुराण  
एषः स्वयंज्योतिरनंत आद्यः । मायातनुं लोकविमोहनीयां धत्ते  
परानुग्रह एष रामः ॥ ७ ॥ अयं हि विश्वोद्भवसंयमाना-  
मेकः स्वमायागुणबिंबितो यः । विरिंचिविष्ण्वीश्वरनाम-  
भेदान् धत्ते स्वतंत्रः परिपूर्ण आत्मा ॥ ८ ॥ नमोऽस्तु ते राम  
तवांग्रिपंकजं श्रिया धृतं वक्षसि लालितं प्रियात् । आक्रांतमेकेन  
जगद्वयं पुरा ध्येयं मुनींद्रैरभिमानवर्जितैः ॥ ९ ॥ जगतामादि-  
भूतस्त्वं जगत्वं जगदाश्रयः । सर्वभूतेष्वसंबद्ध एको भाति भवा-  
न्यरः ॥ १० ॥ ॐकारवाच्यस्त्वं राम वाचामविषयः पुमान् ।  
वाच्यवाचकभेदेन भवानेव जगन्मयः ॥ ११ ॥ कार्यकारणकर्तृत्व-  
फलसाधनभेदतः । एको विभासि राम त्वं मायया बहुरूपया  
॥ १२ ॥ त्वन्मायासोहितधियस्त्वां न जानंति तत्त्वतः । मानुषं  
त्वाऽभिमन्यंते मायिनं परमेश्वरम् ॥ १३ ॥ आकाशवत्त्वं सर्वत्र  
बहिरंतर्गतोऽमलः । असंगो ह्यचलो नित्यः शुद्धो बुद्धः सदव्ययः  
॥ १४ ॥ योषिन्मूढाहमज्ञा ते तत्त्वं जाने कथं विभो । तस्मात्ते  
शतशो राम नमस्क्रुर्यामनन्यधीः ॥ १५ ॥ देव मे यत्रकुत्रापि  
स्थिताया अपि सर्वदा । त्वत्पादकमले सक्ता भक्तिरेव सदाऽस्तु  
मे ॥ १६ ॥ नमस्ते पुरुषाध्यक्ष नमस्ते भक्तवत्सल । नमस्तेऽस्तु  
हृषीकेश नारायण नमोऽस्तु ते ॥ १७ ॥ भवभयहरमेकं भानु-  
कोटिप्रकाशं करधृतशरचापं कालमेघावभासम् । कनकरुचिरवस्त्रं

रत्नवल्कुंडलाढ्यं कमलविशदनेत्रं सानुजं राममीडे ॥ १८ ॥ स्तुत्वैवं  
 पुरुषं साक्षाद्राघवं पुरतः स्थितम् । परिक्रम्य प्रणम्याञ्चु सानुज्ञाता  
 ययौ पतिम् ॥ १९ ॥ अहल्यया कृतं स्तोत्रं यः पठेद्भक्तिसंयुतः ।  
 स मुच्यतेऽखिलैः पापैः परं ब्रह्माधिगच्छति ॥ २० ॥ पुत्राद्यर्थे  
 पठेद्भक्त्या रामं हृदि निधाय च । संवत्सरेण लभते वंध्या अपि  
 सुपुत्रकम् ॥ २१ ॥ सर्वान्कामानवाप्नोति रामचंद्रप्रसादतः ॥ २२ ॥  
 ब्रह्मघ्नो गुरुतल्पगोऽपि पुरुषः स्तेयी सुरापोऽपि वा मातृभ्रातृविहिं-  
 सकोऽपि सततं भोगैकबद्धादरः । नित्यं स्तोत्रमिदं जपन्घुपतिं  
 भक्त्या हृदिस्थं स्मरन् ध्यायन्मुक्तिमुपैति किं पुनरसौ स्वाचारयुक्तो  
 नरः ॥ २३ ॥ इति श्रीमदध्यात्मरामायणे उमामहेश्वरसंवादे  
 बालकांडांतर्गतमहल्याविरचितं रामचंद्रस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ३१५. इन्द्रकृतरामस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ इन्द्र उवाच ॥ भजेऽहं सदा राममिंदीवराभं  
 भवारण्यदावानलाभाभिधानम् । भवानीहृदा भावितानंदरूपं  
 भवाभावहेतुं भवादिप्रपन्नम् ॥ १ ॥ सुरानीकदुःखौघनाशैकहेतुं  
 नराकारदेहं निराकारमीड्यम् । परेशं परानंदरूपं वरेण्यं  
 हरिं राममीशं भजे भारनाशम् ॥ २ ॥ प्रपन्नाखिलानंददोहं  
 प्रपन्नं प्रपन्नार्तिनिःशेषनाशाभिधानम् । तपोयोगयोगीशभावा-  
 भिभाव्यं कपीशादिमित्रं भजे राममित्रम् ॥ ३ ॥ सदा भोग-  
 भाजां सुदूरे विभातं सदा योगभाजामदूरे विभातम् ।  
 चिदानंदकंदं सदा राघवेशं विदेहात्मजानंदरूपं प्रपद्ये ॥ ४ ॥  
 महायोगमायाविशेषानुयुक्तो विभासीश लीलानराकारवृत्तिः ।  
 त्वदानंदलीलाकथापूर्णकर्णाः सदानंदरूपा भवंतीह लोके ॥ ५ ॥  
 अहं मानपानाभिमत्तप्रमत्तो न वेदाखिलेशाभिमानाभिमानः ।

इदानीं भवत्पादपद्मप्रसादात्रिलोकाधिपत्याभिमानो विनष्टः ॥ ६ ॥  
स्फुरद्रत्नकेयूरहाराभिरामं धराभारभूतासुरानीकदावम् । शरचंद्र-  
चक्रं लसत्पद्मनेत्रं दुरावारपारं भजे राघवेशम् ॥ ७ ॥  
सुराधीशनीलाभ्रनीलांगकांतिं विराधादिरक्षोवधालोकशांतिम् ।  
किरीटादिशोभं पुरारातिलाभं भजे रामचंद्रं रघूणामधीशम्  
॥ ८ ॥ लसचंद्रकोटिप्रकाशादिपीठे समासीनमेकं समाधाय  
सीताम् । स्फुरद्वेमवर्णां तडित्पुंजभासां भजे रामचंद्रं निवृत्तार्ति-  
तंद्रम् ॥ ९ ॥ इति श्रीमदध्यात्मरामायणे युद्धकांडे इंद्रकृतं  
रामस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ३१६. रामचन्द्राष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ चिदाकारो धाता परमसुखदा पावनतनु-  
र्मुनींद्रैर्योगींद्रैर्यतिपतिसुरैंद्रैर्हनुमता । सदा सेव्यः पूर्णो जनक-  
तनयांगः सुरगुरु रमानाथो रामो रमतु मम चित्ते तु सततम्  
॥ १ ॥ मुकुंदो गोविंदो जनकतनयालालितपदः पदं प्राप्ता यस्या-  
धमकुलभवा चापि शबरी । गिरातीतोऽगम्यो विमलधिषणैर्वेदवचसा  
रमानाथो रामो रमतु मम चित्ते तु सततम् ॥ २ ॥ धराधीशोऽ-  
धीशः सुरनरवराणां रघुपतिः किरीटी केयूरी कनककपिशः शोभित-  
वपुः । समासीनः पीठे रविशतनिभे शांतमनसो रमानाथो रामो  
रमतु मम चित्ते तु सततम् ॥ ३ ॥ वरेण्यः शारण्यः कपिपति-  
सखा शांतविधुरो ललाटे काश्मीरो रुचिरगतिभंगः शशिमुखः ।  
नराकारो रामो यतिपतिनुतः संस्मृतिहरो रमानाथो रामो रमतु  
मम चित्ते तु सततम् ॥ ४ ॥ विरूपाक्षः काश्यामुपदिशति यन्नाम  
शिवदं सहस्रं यन्नाम्नां पठति गिरिजा प्रत्युषसि वै । कलौ के गायं-  
तीश्वरविधिमुखा यस्य चरितं रमानाथो रामो रमतु मम चित्ते तु

सततम् ॥ ५ ॥ परो धीरोऽधीरोऽसुरकुलभवश्चासुरहरः परात्मा  
 सर्वज्ञो नरसुरगणैर्गीतसुयशाः । अहल्याशापघ्नः शरकर अजः  
 कौशिकसखा रमानाथो रामो रमतु मम चित्ते तु सततम् ॥ ६ ॥  
 हृषीकेशः शौरिर्धरणिधरशायी मधुरिपुरूपेन्द्रो वैकुण्ठो गजरिपुहर-  
 स्तुष्टमनसः । बलिध्वंसी वीरो दशरथसुतो नीतिनिपुणो रमानाथो  
 रामो रमतु मम चित्ते तु सततम् ॥ ७ ॥ कविः सौमित्रीड्यः  
 कपटमृगघाती वनचरो रणश्लाघी दांतो धरणिभरहर्ता सुरनुतः ।  
 अमानी मानज्ञो निखिलजनपूज्यो हृदिशयो रमानाथो रामो रमतु  
 मम चित्ते तु सततम् ॥ ८ ॥ इदं रामस्तोत्रं वरममरदासेन  
 रचितमुषःकाले भक्त्या यदि पठति यो भावसहितम् । मनुष्यः  
 स क्षिप्रं जनिमृतिभयं तापजनकं परित्यज्य श्रेष्ठं रघुपतिपदं  
 याति शिवदम् ॥ ९ ॥ इति श्रीमद्रामदासपूज्यपादशिष्य-  
 श्रीमद्वंसदासशिष्येणामरदासाख्यकविना विरचितं श्रीमद्राम-  
 चंद्राष्टकं संपूर्णम् ॥

### ३१७. श्रीसीतारामाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ब्रह्ममहेंद्रसुरेंद्रमरुद्गणरुद्रमुनींद्रगणैरतिरम्यं  
 श्रीरसरित्पतितीरमुपेत्य नुतं हि सतामवितारमुदारम् । भूमिभर-  
 प्रशमार्थमथ प्रथितप्रकटीकृतचिद्धनमूर्तिं त्वां भजतो रघुनंदन देहि  
 दयाघन मे स्वपदांबुजदास्यम् ॥ १ ॥ पद्मदलायतलोचन हे  
 रघुवंशविभूषण देव दयालो निर्मलनीरदनीलतनोऽखिललोकहृदं-  
 बुजभासक भानो । कोमलगात्र पवित्रपदाब्जरजःकणपावितगौतम-  
 कांत त्वां भजतो ॥ २ ॥ पूर्ण परात्पर पालय मामतिदीनमनाथ-  
 मनंत सुखाब्धे प्रावृडदभ्रतडित्सुमनोहरपीतवरांबर राम नमस्ते ।

कामविभंजन कांततरानन कांचनभूषण रत्नकिरीटं त्वां भजतो०  
 ॥ ३ ॥ दिव्यशरच्छशिकांतिहरोज्ज्वलमौक्तिकमाल विशालसुमौले  
 कोटिरविप्रभ चारुचरित्र पवित्रविचित्रधनुःशरपाणे । चंडमहाभुज-  
 दंडविखंडितराक्षसराजमहागजदंडं त्वां भजतो० ॥ ४ ॥ दोष-  
 विहिंस्रभुजंगसहस्रसुरोपममहानलकीलकलापे जन्मजरामरणोर्मि-  
 मनोमदमन्मथनक्रविचक्रभवाब्धौ । दुःखनिधौ च चिरं पतितं  
 कृपयाऽद्य समुद्धर राम ततो मां त्वां भजतो० ॥ ५ ॥  
 संभृतिघोरमदोत्कटकुंजरतृक्षुदनीरदपिंडिततुंडं दंडकरोन्मथितं च  
 रजस्तम उन्मदमोहपदोऽञ्जितमार्तम् । दीनमनन्यगतिं कृपणं  
 शरणागतमाशु विमोचय मूढं त्वां भजतो० ॥ ६ ॥  
 जन्मशतार्जितपापसमन्वितहृत्कमले पतिते पशुकल्पे हे रघुवीर  
 महारणधीर दयां कुरु मय्यतिमंदमनीषे । त्वं जननी भगिनी  
 च पिता मम तावदसि त्वविताऽपि कृपालो त्वां भजतो०  
 ॥ ७ ॥ त्वां तु दयालुमर्किंचनवत्सलमुत्पलहारमपारमुदारं  
 राम विहाय कमन्यमनामयमीश जनं शरणं ननु यायाम् ।  
 त्वत्पदपद्ममतः श्रितमेव मुदा खलु देव सदाऽव ससीतं त्वां  
 भजतो० ॥ ८ ॥ यः करुणासृतासिंधुरनाथजनोत्तमबंधुरजोत्तम-  
 कारी भक्तभयोर्भिभवाब्धितरी सरयूतटिनीतटचारुविहारी । तस्य  
 रघुप्रवरस्य निरंतरमष्टकमेतदनिष्टहरं वै । यस्तु पठेदमरः स नरो  
 लभतेऽच्युतरामपदांबुजदास्यम् ॥ ९ ॥ इति श्रीमन्मधुसूदनाश्रम-  
 शिव्याऽच्युतयतिविरचितं श्रीमत्सीतारामाष्टकं संपूर्णम् ॥

## हनुमत्स्तोत्राणि ।



मनोजवं मारुततुल्यवेगं  
जितेंद्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम् ।  
वातात्मजं वानरयूथमुख्यं  
श्रीरामदूतं शरणं प्रपद्ये ॥

## हनुमत्स्तोत्राणि ।

### ३१८. मारुतिस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ नमो भगवते विचित्रवीरहनुमते प्रलय-  
कालानलप्रभाप्रज्वलनाय । प्रतापवज्रदेहाय । अंजनीगर्भसंभूताय ।  
प्रकटविक्रमवीरदैत्यदानवयक्षरक्षोगणग्रहबंधनाय । भूतग्रहबंधनाय ।  
प्रेतग्रहबंधनाय । पिशाचग्रहबंधनाय । शाकिनीडाकिनीग्रहबंध-  
नाय । काकिनीकामिनीग्रहबंधनाय । ब्रह्मग्रहबंधनाय । ब्रह्मराक्षस-  
ग्रहबंधनाय । चोरग्रहबंधनाय । मारीग्रहबंधनाय । एहि एहि ।  
आगच्छ आगच्छ । आवेशय आवेशय । मम हृदये प्रवेशय प्रवे-  
शय । स्फुर स्फुर । प्रस्फुर प्रस्फुर । सत्यं कथय । व्याघ्रमुख-  
बंधन सर्पमुखबं० राजमु० नारीमु० सभामु० शत्रुमु० सर्वमु०  
लंकाप्रासादभंजन । अमुकं मे वशमानय । क्लीं क्लीं क्लीं ह्रीं श्रीं  
श्रीं राजानं वशमानय । श्रीं ह्रीं क्लीं स्त्रिय आकर्षय आकर्षय  
शत्रून्मर्दय मर्दय मारय मारय चूर्णय चूर्णय खे खे श्रीरामचंद्रा-  
ज्ञया मम कार्यसिद्धिं कुरु कुरु ॐहां ह्रीं हूं हूं हौं हः फट् स्वाहा  
विचित्रवीर हनूमन् मम सर्वशत्रून् भस्म कुरु कुरु । हन हन हुं  
फट् स्वाहा ॥ एकादशशतवारं जपित्वा सर्वशत्रून् वशमानयति  
नान्यथा इति ॥ इति श्रीमारुतिस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ३१९. हनुमद्वाडवानलस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ अस्य श्रीहनुमद्वाडवानलस्तोत्रमंत्रस्य ।  
श्रीरामचंद्र ऋषिः । श्रीवडवानलहनुमान् देवता । मम समस्त-  
रोगप्रशमनार्थं आयुरारोग्यैश्वर्याभिवृद्ध्यर्थं समस्तपापक्षयार्थं सीता-  
रामचंद्रप्रीत्यर्थं च हनुमद्वाडवानलस्तोत्रजपमहं करिष्ये । ॐहां



हीं ॐ नमो भगवते श्रीमहाहनुमते प्रकटपराक्रम सकलदिङ्गाण्डल-  
यशोवितानधवलीकृतजगत्रितय वज्रदेह रुद्रावतार लंकापुरीदहन  
उमाभमलमंत्र उदधिबंधन दशशिरःकृतांतक सीताश्वसन वायुपुत्र  
अंजनीगर्भसंभूत श्रीरामलक्ष्मणानंदकर कपिसैन्यप्राकार सुग्रीव-  
साह्य रणपर्वतोत्पाटन कुमारब्रह्मचारिन् गभीरनाद सर्वपापग्रहवारण  
सर्वज्वरोच्चाटन डाकिनीविध्वंसन ॐहां हीं ॐ नमो भगवते महा-  
वीरवीराय सर्वदुःखनिवारणाय ग्रहमंडलसर्वभूतमंडलसर्वपिशाच-  
मंडलोच्चाटन भूतज्वरएकाहिकज्वरद्व्याहिकज्वरत्र्याहिकज्वरचातुर्थिक-  
ज्वरसंतापज्वरविषमज्वरतापज्वरमाहेश्वरवैष्णवज्वरान् छिंधि छिंधि  
यक्षब्रह्मराक्षसभूतप्रेतपिशाचान् उच्चाटय उच्चाटय ॐहां श्रीं  
ॐ नमो भगवते श्रीमहाहनुमते ॐहां हीं हूं हैं हौं हः आं हां हां  
हां हां औं सौं एहि एहि एहि ॐहं ॐहं ॐहं ॐहं ॐ नमो भगवते  
श्रीमहाहनुमते श्रवणचक्षुर्भूतानां शाकिनीडाकिनीनां विषमदुष्टानां  
सर्वविषं हर हर आकाशभुवनं भेदय भेदय छेदय छेदय मारय  
मारय शोषय शोषय मोहय मोहय ज्वालय ज्वालय प्रहारय  
प्रहारय सकलमायां भेदय भेदय ॐहां हीं ॐ नमो भगवते महा-  
हनुमते सर्वग्रहोच्चाटन परबलं क्षोभय क्षोभय सकलबंधनमोक्षणं  
कुरु कुरु शिरःशूलगुल्मशूलसर्वशूलान्निर्मूलय निर्मूलय नागपाशा-  
नंतवासुकितक्षककर्कोटककालियान् यक्षकुलजलगतबिलगतरात्रिं-  
चरदिवाचरसर्वाग्निर्विषं कुरु कुरु स्वाहा । राजभयचोरभयपरमंत्र-  
परयंत्रपरतंत्रपरविद्याश्छेदय छेदय स्वमंत्रस्वयंत्रस्वतंत्रस्वविद्याः  
प्रकटय प्रकटय सर्वारिष्टान्नाशय नाशय सर्वशत्रून्नाशय नाशय  
असाध्यं साधय साधय हुं फट् स्वाहा ॥ इति विभीषणकृतं हनु-  
मद्वाङ्मालस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

## ३२०. पञ्चमुखहनुमत्कवचम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ अस्य श्रीपञ्चमुखहनुमत्कवचमन्त्रस्य ।  
 ब्रह्मा ऋषिः । गायत्री छन्दः । पञ्चमुखविराट् हनुमान् देवता ।  
 हीं बीजम् । श्रीं शक्तिः । क्रौं कीलकम् । कूं कवचम् । क्रैं  
 अस्त्राय फट् । इति दिग्बन्धः ॥ श्रीगरुड उवाच ॥ अथ ध्यानं  
 प्रवक्ष्यामि शृणु सर्वाङ्गसुन्दरि । यत्कृतं देवदेवेन ध्यानं हनुमतः  
 प्रियम् ॥ १ ॥ पञ्चवक्त्रं महाभीमं त्रिपञ्चनयनैर्युतम् । बाहुभि-  
 र्दशभिर्युक्तं सर्वकामार्थसिद्धिदम् ॥ २ ॥ पूर्वं तु वानरं वक्त्रं  
 कोटिसूर्यसमप्रभम् । दंष्ट्राकरालवदनं भ्रुकुटीकुटिलेक्षणम् ॥ ३ ॥  
 अस्यैव दक्षिणं वक्त्रं नारासिंहं महाद्भुतम् । अत्युग्रतेजोवपुषं भीषणं  
 भयनाशनम् ॥ ४ ॥ पश्चिमं गारुडं वक्त्रं वक्रतुण्डं महाबलम् ।  
 सर्वनागप्रशमनं विषभूतादिकृन्तनम् ॥ ५ ॥ उत्तरं सौकरं वक्त्रं  
 कृष्णं दीप्तं नभोपमम् । पातालसिंहवेतालज्वररोगादिकृन्तनम्  
 ॥ ६ ॥ ऊर्ध्वं हयाननं घोरं दानवान्तकरं परम् । येन वक्रेण  
 विप्रेन्द्र तारकाख्यं महासुरम् ॥ ७ ॥ जघान शरणं तत्स्यात्सर्व-  
 शत्रुहरं परम् । ध्यात्वा पञ्चमुखं रुद्रं हनूमन्तं दयानिधिम् ॥ ८ ॥  
 खड्गं त्रिशूलं खट्वाङ्गं पाशमङ्कुशपर्वतम् । मुष्टिं कौमोदकीं वृक्षं  
 धारयन्तं कमण्डलुम् ॥ ९ ॥ भिन्दिपालं ज्ञानमुद्रां दशभिर्मुनि-  
 पुङ्गवम् । एतान्यायुधजालानि धारयन्तं भजाम्यहम् ॥ १० ॥  
 प्रेतासनोपविष्टं तं सर्वाभरणभूषितम् । दिव्यमाल्याम्बरधरं  
 दिव्यगन्धानुलेपनम् । सर्वाश्चर्यमयं देवं हनुमद्विश्वतोमुखम्  
 ॥ ११ ॥ पञ्चास्यमच्युतमनेकविचित्रवर्णवक्रं शशाङ्कशिखरं कपि-  
 राजवर्यम् । पीताम्बरादिमुकुटैरुपशोभिताङ्गं पिङ्गाक्षमाद्यमनिशं  
 मनसा स्मरामि ॥ १२ ॥ मर्कटेशं महोत्साहं सर्वशत्रुहरं परम् ।

शत्रुं संहर मां रक्ष श्रीमन्नापदमुद्धर ॥ १३ ॥ ॐ हरिमर्कट  
मर्कट मन्त्रमिदं परिलिख्यति लिख्यति वामतले । यदि नश्यति  
नश्यति शत्रुकुलं यदि मुञ्चति मुञ्चति वामलता ॥ १४ ॥ ॐ  
हरिमर्कटाय स्वाहा । ॐ नमो भगवते पञ्चवदनाय पूर्वकपिमुखाय  
सकलशत्रुसंहारकाय स्वाहा । ॐ नमो भगवते पञ्चवदनाय  
दक्षिणमुखाय करालवदनाय नरसिंहाय सकलभूतप्रमथनाय  
स्वाहा । ॐ नमो भगवते पञ्चवदनाय पश्चिममुखाय गरुडाननाय  
सकलविषहराय स्वाहा । ॐ नमो भगवते पञ्चवदनायोत्तरमुखा-  
यादिवराहाय सकलसंपत्कराय स्वाहा । ॐ नमो भगवते पञ्चवद-  
नायोर्ध्वमुखाय हयग्रीवाय सकलजनवशंकराय स्वाहा । ॐ अस्य  
श्रीपञ्चमुखहनुमन्मन्त्रस्य । श्रीरामचन्द्र ऋषिः । अनुष्टुप् छन्दः ।  
पञ्चमुखवीरहनुमान् देवता । हनुमानिति बीजम् । वायुपुत्र इति  
शक्तिः । अञ्जनीसुत इति कीलकम् । श्रीरामदूतहनुमत्प्रसाद-  
सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः ॥ इति ऋग्यादिकं विन्यसेत् । ॐ अञ्जनी-  
सुताय अङ्गुष्ठाभ्यां नमः । ॐ रुद्रमूर्तये तर्जनीभ्यां नमः ।  
ॐ वायुपुत्राय मध्यमाभ्यां नमः । ॐ अग्निगर्भाय अनामिकाभ्यां  
नमः । ॐ रामदूताय कनिष्ठिकाभ्यां नमः । ॐ पञ्चमुखहनुमते  
करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः । इति करन्यासः ॥ ॐ अञ्जनीसुताय  
हृदयाय नमः । ॐ रुद्रमूर्तये शिरसे स्वाहा । ॐ वायुपुत्राय  
शिखायै वषट् । ॐ अग्निगर्भाय कवचाय हुम् । ॐ रामदूताय  
नेत्रत्रयाय वौषट् । ॐ पञ्चमुखहनुमते अस्त्राय फट् । पञ्चमुखहनुमते  
स्वाहा ॥ इति दिग्बन्धः ॥ अथ ध्यानम् ॥ वन्दे वानरनारसिंह-  
खगराट्क्रोडाश्वक्त्रान्वितं दिव्यालङ्करणं त्रिपञ्चनयनं देदीप्यमानं  
रुचा । हस्ताब्जैरसिखेटपुस्तकसुधाकुम्भाङ्कुशाद्रिं हलं खट्वाङ्गं

फणिभूरुहं दशभुजं सर्वारिवीरापहम् ॥ इति ॥ अथ मन्त्रः ॥  
 ॐ श्रीरामदूतायाञ्जनेयाय वायुपुत्राय महाबलपराक्रमाय सीता-  
 दुःखनिवारणाय लङ्कादहनकारणाय महाबलप्रचण्डाय फाल्गुन-  
 सखाय कोलाहलसकलब्रह्माण्डविश्वरूपाय सप्तसमुद्रनिर्लङ्घनाय  
 पिङ्गलनयनायामितविक्रमाय सूर्यबिम्बफलसेवनाय दुष्टनिवारणाय  
 दृष्टिनिरालङ्कृताय सञ्जीविनीसञ्जीविताङ्गदलक्ष्मणमहाकपिसैन्य-  
 प्राणदाय दशकण्ठविध्वंसनाय रामेष्टाय महाफाल्गुनसखाय सीता-  
 सहितरामवरप्रदाय षट्प्रयोगागमपञ्चमुखवीरहनुमन्मन्त्रजपे विनि-  
 योगः ॥ ॐ हरिमर्कटमर्कटाय बंबंबंबंबं वौषट् स्वाहा । ॐ हरि-  
 मर्कटमर्कटाय फंफंफंफं फट्स्वाहा । ॐ हरिमर्कटमर्कटाय खेंखेंखें-  
 खेंखें मारणाय स्वाहा । ॐ हरिमर्कटमर्कटाय लुंलुंलुंलुं भाक-  
 षितसकलसम्पत्कराय स्वाहा । ॐ हरिमर्कटमर्कटाय धंधंधंधंधं  
 शत्रुस्तम्भनाय स्वाहा । ॐ टंटंटंटंटं कूर्ममूर्तये पञ्चमुखवीरहनुमते  
 परयत्रपरतत्रोच्चाटनाय स्वाहा । ॐ कंखंगंधं चंछंजंजंजं टंठंडंणं  
 तंधंधंधं पंफंबंभंमं यंरंलंवं शंषंसंहं लंक्षं स्वाहा । इति दिग्बन्धः ॥  
 ॐ पूर्वकपिमुखाय पञ्चमुखहनुमते टंटंटंटंटं सकलशत्रुसंहरणाय  
 स्वाहा । ॐ दक्षिणमुखाय पञ्चमुखहनुमते करालवदनाय नर-  
 सिंहाय ॐ हांहींहूँहूँहौँहः सकलभूतप्रेतदमनाय स्वाहा । ॐ पश्चिम-  
 मुखाय गरुडाननाय पञ्चमुखहनुमते मंमंमंमंमं सकलविषहराय  
 स्वाहा । ॐ उत्तरमुखायादिवराहाय लंलंलंलंलं नृसिंहाय नील-  
 कण्ठमूर्तये पञ्चमुखहनुमते स्वाहा । ॐ ऊर्ध्वमुखाय हयग्रीवाय  
 रूंरूंरूंरूं रुद्रमूर्तये सकलप्रयोजननिर्वाहकाय स्वाहा । ॐ अञ्जनी-  
 सुताय वायुपुत्राय महाबलाय सीताशोकनिवारणाय श्रीरामचन्द्र-  
 कृपापादुकाय महावीर्यप्रमथनाय ब्रह्माण्डनाथाय कामदाय पञ्च-

मुखवीरहनुमते स्वाहा । भूतप्रेतपिशाचब्रह्मराक्षसशाकिनीडा-  
किन्यन्तरिक्षग्रहपरयन्नपरतत्रोच्चाटनाय स्वाहा । सकलग्रयोजन-  
निर्वाहकाय पञ्चमुखवीरहनुमते श्रीरामचन्द्रवरप्रसादाय जंजंजंजं  
स्वाहा । इदं कवचं पठित्वा तु महाकवचं पठेन्नरः । एकवारं जपे-  
स्तोत्रं सर्वशत्रुनिवारणम् ॥ १५ ॥ द्विवारं तु पठेन्नित्यं पुत्रपौत्र-  
प्रवर्धनम् । त्रिवारं च पठेन्नित्यं सर्वसंपत्करं शुभम् ॥ १६ ॥  
चतुर्वारं पठेन्नित्यं सर्वरोगनिरणम् । पञ्चवारं पठेन्नित्यं सर्वलोक-  
वशङ्करम् ॥ १७ ॥ षड्वारं च पठेन्नित्यं सर्वदेववशङ्करम् । सप्तवारं  
पठेन्नित्यं सर्वसौभाग्यदायकम् ॥ १८ ॥ अष्टवारं पठेन्नित्यमिष्ट-  
कामार्थसिद्धिदम् । नववारं पठेन्नित्यं राजभोगमवामुयात् ॥ १९ ॥  
दशवारं पठेन्नित्यं त्रैलोक्यज्ञानदर्शनम् । रुद्रावृत्तिं पठेन्नित्यं सर्व-  
सिद्धिर्भवेद्भ्रुवम् ॥ २० ॥ निर्बलो रोगयुक्तश्च महान्याध्यादि-  
पीडितः । कवचस्मरणेनैव महाबलमवामुयात् ॥ २१ ॥ इति  
श्रीसुदर्शनसंहितायां श्रीरामचन्द्रसीताप्रोक्तं श्रीपञ्चमुखहनु-  
मत्कवचं संपूर्णम् ॥

### ३२१. हनुमलांगूलाखस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ हनुमन्नञ्जनीसूनो महाबलपराक्रम । लोललां-  
गूलपातेन ममारातीन्निपातय ॥ १ ॥ मर्कटाधिप मार्तण्डमण्डल-  
ग्रासकारक । लोल० ॥ २ ॥ अक्षक्षपण पिङ्गाक्ष दितिजासुक्षयंकर ।  
लोल० ॥ ३ ॥ रुद्रावतारसंसारदुःखभारापहारक । लोल० ॥ ४ ॥  
श्रीरामचरणाम्भोजमधुपायितमानस । लोल० ॥ ५ ॥ वालिप्रमथन-  
क्लान्तसुग्रीवोन्मोचनप्रभो । लोल० ॥ ६ ॥ सीताविरहवारीशभ्र-  
सीतेशतारक । लोल० ॥ ७ ॥ रक्षोराजप्रतापान्निदह्यमानजगद्गन ।  
लोल० ॥ ८ ॥ अस्ताशेषजगत्स्वास्थ्य राक्षसाम्भोधिमन्दर ।

लोल० ॥९॥ पुच्छगुच्छस्फुरद्वीर जगद्गधारिपत्तन । लोल० ॥१०॥  
 जगन्मनोदुरलङ्घ्यापारावारविलङ्घन । लोल० ॥ ११ ॥ स्मृतमात्र-  
 समस्तेष्टपूरक प्रणतप्रिय । लोल० ॥ १२ ॥ रात्रिंचरतमोरात्रिकृन्त-  
 नैकविकर्तन । लोल० ॥ १३ ॥ जानक्या जानकीजानेः प्रेमपात्र  
 परंतप । लोल० ॥ १४ ॥ भीमादिकमहाभीमवीरावेशावतारक ।  
 लोल० ॥ १५ ॥ वैदेहीविरहक्लान्तरामरोषैकविग्रह । लोल० ॥१६॥  
 वज्राङ्गनखदंष्ट्रेश वज्रिवज्रावगुण्ठन । लोल० ॥ १७ ॥ अखर्वगर्व-  
 गन्धर्वपर्वतोद्भेदनस्वर । लोल० ॥ १८ ॥ लक्ष्मणप्राणसंत्राण त्रात-  
 तीक्षणकरान्वय । लोल० ॥ १९ ॥ रामादिविप्रयोगार्त भरताद्यार्ति-  
 नाशन । लोल० ॥ २० ॥ द्रोणाचलसमुत्क्षेपसमुत्क्षिप्तारिवैभव ।  
 लोल० ॥ २१ ॥ सीताशीर्वादिसंपन्न समस्तावयवाक्षत । लोल-  
 लांगूलपातेन ममारातीन्निपातय ॥ २२ ॥ इत्येवमश्वत्थतलोपविष्टः  
 शत्रुजयं नाम पठेत्स्वयं यः । स शीघ्रमेवास्तसमस्तशत्रुः प्रमोदते  
 मारुतजप्रसादात् ॥ २३ ॥ इति श्रीहनुमलांगूलास्त्रस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

३२२. एकादशमुखहनुमत्कवचम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ लोपामुद्रा उवाच ॥ कुम्भोद्भव दयासिन्धो  
 श्रुतं हनुमतः परम् । यत्रमन्त्रादिकं सर्वं त्वन्मुखोदीरितं मया  
 ॥ १ ॥ दयां कुरु मयि प्राणनाथ वेदितुमुत्सहे । कवचं वायुपुत्रस्य  
 एकादशमुखात्मनः ॥ २ ॥ इत्येवं वचनं श्रुत्वा प्रियायाः प्रश्रया-  
 न्वितम् । वक्तुं प्रचक्रमे तत्र लोपामुद्रां प्रति प्रभुः ॥ ३ ॥ अगस्त्य  
 उवाच ॥ नमस्कृत्वा रामदूतं हनूमन्तं महामतिम् । ब्रह्मप्रोक्तं तु  
 कवचं शृणु सुन्दरि सादरम् ॥ ४ ॥ सनन्दनाय सुमहच्चतुरानन-  
 भाषितम् । कवचं कामदं दिव्यं रक्षःकुलनिबर्हणम् ॥ ५ ॥  
 सर्वसंपत्प्रदं पुण्यं मर्त्यानां मधुरस्वरे । अस्य श्रीकवचस्यैकादश-

चक्रस्य धीमतः ॥ ६ ॥ हनूमत्स्तुतिमन्त्रस्य सनन्दन ऋषिः  
 स्मृतः । प्रसन्नात्मा हनूमांश्च देवता परिकीर्तिता ॥ ७ ॥  
 छन्दोऽनुष्टुप् समाख्यातं बीजं वायुसुतस्तथा । मुख्यः प्राणः शक्ति-  
 रिति विनियोगः प्रकीर्तितः ॥ ८ ॥ सर्वकामार्थसिद्ध्यर्थं जप  
 एवमुदीरयेत् । ॐ स्फंबीजं शक्तिधृक् पातु शिरो मे पवनात्मजः  
 ॥ ९ ॥ क्रौंबीजात्मा नयनयोः पातु मां वानरेश्वरः । क्षंबीजरूपः  
 कण्ठौ मे सीताशोकविनाशनः ॥ १० ॥ ग्लौंबीजवाच्यो नासां मे  
 लक्ष्मणप्राणदायकः । वंबीजार्थश्च कण्ठं मे पातु चाक्षयकारकः  
 ॥ ११ ॥ रांबीजवाच्यो हृदयं पातु मे कपिनायकः । वंबीज-  
 कीर्तितः पातु बाहू मे चाञ्जनीसुतः ॥ १२ ॥ हींबीजो राक्षसेन्द्रस्य  
 दर्पहा पातु चोदरम् । हसौंबीजमयो मध्यं पातु लङ्काविदाहकः  
 ॥ १३ ॥ ॐ हीं बीजधरः पातु गुह्यं देवेन्द्रवन्दितः । रंबीजात्मा  
 सदा पातु चोरु मे वार्धिलङ्घनः ॥ १४ ॥ सुग्रीवसचिवः पातु  
 जानुनी मे मनोजवः । पादौ पादतले पातु द्रोणाचलधरो हरिः ।  
 आपादमस्तकं पातु रामदूतो महाबलः ॥ १५ ॥ पूर्वे वानरवक्रो  
 मामाग्नेय्यां क्षत्रियान्तकृत् । दक्षिणे नारसिंहस्तु नैर्ऋत्यां गणना-  
 यकः ॥ १६ ॥ वारुण्यां दिशि मामव्यात्खगवक्रो हरीश्वरः ।  
 वायव्यां भैरवमुखः कौबेर्यां पातु मां सदा ॥ १७ ॥ कोब्ध्यास्यः  
 पातु मां नित्यमैशान्यां रुद्ररूपधृक् । ऊर्ध्वं हयाननः पातु गुह्याधः  
 सुमुखस्तथा ॥ १८ ॥ रामास्यः पातु सर्वत्र सौम्यरूपो महाभुजः ।  
 इत्येवं रामदूतस्य कवचं यः पठेत्सदा ॥ १९ ॥ एकादशमुख-  
 स्यैतद्गोप्यं ते कीर्तितं मया । रक्षोघ्नं कामदं सौम्यं सर्वसंपद्विधायकम्  
 ॥ २० ॥ पुत्रदं धनदं चोग्रशत्रुसंघविमर्दनम् । स्वर्गापवर्गदं दिव्यं  
 चिन्तितार्थप्रदं शुभम् ॥ २१ ॥ एतत्कवचमज्ञात्वा मन्त्रसिद्धिर्न

जायते । चत्वारिंशत्सहस्राणि पठेच्छुद्धात्मको नरः ॥ २२ ॥  
 एकवारं पठेन्नित्यं कवचं सिद्धिदं पुमान् । द्विवारं वा त्रिवारं वा  
 पठन्नायुष्यमाप्नुयात् ॥ २३ ॥ क्रमादेकादशादेवमावर्तनजपा-  
 त्सुधीः । वर्षान्ते दर्शनं साक्षालभते नात्र संशयः ॥ २४ ॥ यं यं  
 चिन्तयते चार्थं तं तं प्राप्नोति पूरुषः । ब्रह्मोदीरितमेतद्धि तवाग्रे  
 कथितं महत् ॥ २५ ॥ इत्येवमुक्त्वा वचनं महर्षिस्तूष्णीं बभूवे-  
 न्दुमुखीं निरीक्ष्य । संहृष्टचित्तापि तदा तदीयपादौ नमामातिमुदा  
 स्वभर्तुः ॥ २६ ॥ अथ मन्त्रः ॥ ओं स्फ्रं क्रौं क्षौं ग्लौं वं रां वां  
 हौं ह्रीं रं । स्फ्रं क्रौं क्षौं ग्लौं क्षीं क्षौं दुं हां हलौं ह्रीं रं । इत्यग-  
 स्त्यसारसंहितायामेकादशमुखहनुमत्कवचं संपूर्णम् ॥

### ३२३. हनुमदष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीरघुराजपदाब्जानिकेतन पंकजलोचन मंगल-  
 राशे चंडमहाभुजदंडसुरारिविखंडनपंडित पाहि दयालो । पातकिनं  
 च समुद्धर मां महतां हि सतामपि मानमुदारं त्वां भजतो मम  
 देहि दयाधन हे हनुमत्स्वपदाम्बुजदास्यम् ॥ १ ॥ संसृतिताप-  
 महानलदग्धतनूरुहमर्मतनोरतिवेलं पुत्रधनस्वजनात्मगृहादिषु सक्त-  
 मतेरतिकिल्बिषमूर्तेः । केनचिदप्यमलेन पुराकृतपुण्यसुपुञ्जलवेन  
 विभो वै त्वां भजतो० ॥ २ ॥ संसृतिकूपमनल्पमघोनिदाघनि-  
 दानमजस्रमशेषं प्राप्य सुदुःखसहस्रभुंजंगविषैकसमाकुलसर्व-  
 तनोर्मे । घोरमहाकृपणापदमेव गतस्य हरे पतितस्य भवाब्धौ त्वां  
 भजतो० ॥ ३ ॥ संसृतिसिन्धुविशालकरालमहाबलकालझषग्रस-  
 नार्तं व्यग्रसमग्रधियं कृपणं च महामदनक्रसुचक्रहतासुम् । काल-  
 महारसनोर्मिनिपीडितमुद्धर दीनमनन्यगतिं मां त्वां भजतो०  
 ॥ ४ ॥ संसृतिघोरमहागहने चरतो मणिरञ्जितपुण्यसुमूर्तेर्मन्मथ-



भीकरघोरमहोग्रमृगप्रवरार्दितगात्रसुसन्धेः । मत्सरतापविशेषनि-  
पीडितबाह्यमतेश्च कथंचिदमेयं त्वां भजतो० ॥ ५ ॥ संसृतिवृक्ष-  
मनेकशताघनिदानमनन्तविकर्मसुशाखं दुःखफलं करणादिपलाशम-  
नङ्गसुपुष्पमचिन्त्यसुमूलम् । तं ह्यधिरुह्य हरे पतितं शरणागतमेव  
विमोचय मूढं त्वां भजतो० ॥ ६ ॥ संसृतिपन्नगवक्रभयंकरदंष्ट्र-  
महाविषदग्धशरीरं प्राणविनिर्गमभीतिसमाकुलमन्धमनाथमतीव  
विषण्णम् । मोहमहाकुहरे पतितं दययोद्धर मामजितेंद्रियकामं  
त्वां भजतो० ॥ ७ ॥ इन्द्रियनामकचौरगणैर्हृततत्त्वविवेकमहा-  
धनरार्शिं संसृतिजालनिपातितमेव महाबलिभिश्च विखंडितकायम् ।  
त्वत्पदपद्ममनुत्तममाश्रितमाशु कपीश्वर पाहि कृपालो त्वां भजतो०  
॥ ८ ॥ ब्रह्ममरुद्गणरुद्रमहेन्द्रकिरीटसुकोटिलसत्पदपीठं दाशरथिं  
जपति क्षितिमंडल एष निधाय सदैव हृदये । तस्य हनूमत एव  
शिवंकरमष्टकमेतदनिष्टहरं वै यः सततं हि पठेत्स नरो लभतेऽच्युत-  
रामपदाब्जनिवासम् ॥ ९ ॥ इति श्रीमधुसूदनाश्रमशिष्याच्युत-  
विरचितं श्रीमद्धनुमदष्टकं संपूर्णम् ॥

### ३२४. हनुमत्पंचरत्नस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ वीताखिलविषयेच्छं जातानंदाश्रुपुलकमत्य-  
च्छम् । सीतापतिदूताद्यं वातात्मजमद्य भावये हृद्यम् ॥ १ ॥  
तरुणारुणमुखकमलं करुणारसपूरपूरितापांगम् । संजीवनमाशासे  
मंजुलमहिमानमंजनाभाग्यम् ॥ २ ॥ शंबरवैरिशरातिगमंबुजदल-  
विपुललोचनोदारम् । कंबुगलमनिलदिष्टं बिंबोज्ज्वलितोष्ठमेकमवलं  
॥ ३ ॥ दूरीकृतसीतार्तिः प्रकटीकृतरामवैभवस्फूर्तिः । दारितदश-  
मुखकीर्तिः पुरतो मम भातु हनुमतो मूर्तिः ॥ ४ ॥ वानर

निकराध्यक्षं दानवकुलकुमुदरविकरसदृक्षम् । दीनजनावनदीक्षं  
 पवनतपःपाकपुंजमद्राक्षम् ॥ ५ ॥ एतत्पवनसुतस्य स्तोत्रं यः पठति  
 पंचरत्नाख्यम् । चिरमिह निखिलान्भोगान् भुंक्त्वा श्रीरामभक्ति-  
 भागभवति ॥ ६ ॥ इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्यस्य श्रीगो-  
 विन्दभगवत्पूज्यपादशिष्यस्य श्रीमच्छंकरभगवतः कृतौ हनुमत्पंच-  
 रत्नस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

\*

## कृष्णस्तोत्राणि ।



श्रियाश्लिष्टो विष्णुः स्थिरचरगुरुर्वेदविषयो  
धियां साक्षी शुद्धो हरिरसुरहंताजनयनः ।  
गदी शंखी चक्री विमलवनमाली स्थिररुचिः  
शरण्यो लोकेशो मम भवतु कृष्णोऽक्षिविषयः ॥

## कृष्णस्तोत्राणि ।

३२५. त्रैलोक्यमंगलकवचम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ नारद उवाच । भगवन्सर्वधर्मज्ञ कवचं यत्प्रका-  
शितम् । त्रैलोक्यमंगलं नाम कृपया कथय प्रभो ॥ १ ॥ सन-  
त्कुमार उवाच ॥ शृणु वक्ष्यामि विप्रेन्द्र कवचं परमाद्भुतम् ।  
नारायणेन कथितं कृपया ब्रह्मणे पुरा ॥ २ ॥ ब्रह्मणा कथितं मह्यं  
परं स्नेहाद्ब्रह्मिणे ते । अतिगुह्यतरं तत्त्वं ब्रह्ममंत्रौघविग्रहम् ॥ ३ ॥  
यद्भृत्वा पठनाद्ब्रह्मा सृष्टिं वितनुते ध्रुवम् । यद्भृत्वा पठनात्पाति  
महालक्ष्मीर्जगन्नयम् ॥ ४ ॥ पठनाद्धारणाच्छंभुः संहर्ता सर्वमंत्र-  
वित् । त्रैलोक्यजननी दुर्गा महिषादिमहासुरान् ॥ ५ ॥ वरदसान्  
जघानैव पठनाद्धारणाद्यतः । एवमिन्द्रादयः सर्वे सर्वैश्वर्यमवाप्नुयुः  
॥ ६ ॥ इदं कवचमत्यंतगुप्तं कुत्रापि नो वदेत् । शिष्याय भक्ति-  
युक्ताय साधकाय प्रकाशयेत् ॥ ७ ॥ शठाय परशिष्याय दत्त्वा  
मृत्युमवाप्नुयात् । त्रैलोक्यमंगलस्यास्य कवचस्य प्रजापतिः ॥ ८ ॥  
ऋषिश्छंदश्च गायत्री देवो नारायणः स्वयम् । धर्मार्थकाममोक्षेषु  
विनियोगः प्रकीर्तितः ॥ ९ ॥ प्रणवो मे शिरः पातु नमो नारा-  
यणाय च । भालं मे नेत्रयुगलमष्टाणो भुक्तिमुक्तिदः ॥ १० ॥  
कूर्तिं पायाच्छ्रोत्रयुग्मं चैकाक्षरः सर्वमोहनः । कूर्तिं कृष्णाय सदा  
घ्राणं गोविंदायेति जिह्विकाम् ॥ ११ ॥ गोपीजनपदवल्लभाय  
स्वाहाननं मम । अष्टादशाक्षरो मंत्रः कंठं पातु दशाक्षरः ॥ १२ ॥  
गोपीजनपदवल्लभाय स्वाहा भुजद्वयम् । कूर्तिं ग्लौं कूर्तिं श्यामलां-  
गाय नमः स्कन्धौ दशाक्षरः ॥ १३ ॥ कूर्तिं कृष्णः कूर्तिं करौ  
पायात् कूर्तिं कृष्णो मां गतोऽवतु । हृदयं भुवनेशानः कूर्तिं कृष्णः

क्लीं स्तनौ मम ॥ १४ ॥ गोपालायाग्निजायांतं कुक्षियुग्मं सदाऽवतु ।  
 क्लीं कृष्णाय सदा पातु पार्श्वयुग्ममनुत्तमः ॥ १५ ॥ कृष्ण-  
 गोविंदकौ पातां स्मराद्यौ ड्येयुतौ मनुः । अष्टाक्षरः पातु नाभिं  
 कृष्णेति द्व्यक्षरोऽवतु ॥ १६ ॥ पृष्ठं क्लीं कृष्णकं गलं क्लीं कृष्णाय  
 द्विठान्तकः । सक्थिनी सततं पातु श्रीं हीं क्लीं कृष्णठद्वयम्  
 ॥ १७ ॥ ऊरू सप्ताक्षरः पायात्रयोदशाक्षरोऽवतु । श्रीं हीं क्लीं  
 पदतो गोपीजनवल्लभदन्ततः ॥ १८ ॥ भाय स्वाहेति पायुं वै क्लीं  
 हीं श्रीं सदशार्णकः । जानुनी च सदा पातु हीं श्रीं क्लीं च दशा-  
 क्षरः ॥ १९ ॥ त्रयोदशाक्षरः पातु जंघे चक्राद्युदायुधः । अष्टा-  
 दशाक्षरो हीं-श्रीं-पूर्वको विंशदर्णकः ॥ २० ॥ सर्वांगं मे सदा  
 पातु द्वारकानायको बली । नमो भगवते पश्चाद्वासुदेवाय तत्परम्  
 ॥ २१ ॥ ताराद्यो द्वादशार्णोऽयं प्राच्यां मां सर्वदाऽवतु ।  
 श्रीं हीं क्लीं च दशार्णस्तु हीं क्लीं श्रीं षोडशार्णकः ॥ २२ ॥  
 गदाद्युदायुधो विष्णुर्मामग्नेर्दिशि रक्षतु । हीं श्रीं दशार्ण-  
 मंत्रोऽयं दक्षिणे मां सदाऽवतु ॥ २३ ॥ तारो नमो  
 भगवते रुक्मिणीवल्लभाय च । स्वाहेति षोडशार्णोऽयं नैर्ऋत्यां  
 दिशि रक्षतु ॥ २४ ॥ क्लीं हृषीके पदं शाय नमो मां वारुणोऽवतु ।  
 अष्टादशार्णः कामान्तो वायव्ये मां सदाऽवतु ॥ २५ ॥ श्रीं  
 मायाकामकृष्णाय गोविंदाय द्विठो मनुः । द्वादशार्णात्मको विष्णु-  
 रुत्तरे मां सदाऽवतु ॥ २६ ॥ वाग्भयं कामकृष्णाय हीं गोविंदाय  
 तत्परम् । श्रीं गोपीजनवल्लभांताय स्वाहा हस्तौ ततः ॥ २७ ॥  
 द्वाविंशत्यक्षरो मंत्रो मामैशान्ये सदाऽवतु । कालियस्य फणामध्ये  
 दिव्यं नृत्यं करोति तम् ॥ २८ ॥ नमामि देवकीपुत्रं नृत्यराजान-  
 मच्युतम् । द्वात्रिंशदक्षरो मंत्रोऽप्यधो मां सर्वदाऽवतु ॥ २९ ॥

कामदेवाय विद्महे पुष्पबाणाय धीमहि । तन्नोऽनंगः प्रचोदयादेषा  
मां पातु चोर्ध्वतः ॥ ३० ॥ इति ते कथितं विप्र ब्रह्ममंत्रौघवि-  
ग्रहम् । त्रैलोक्यमंगलं नाम कवचं ब्रह्मरूपकम् ॥ ३१ ॥ ब्रह्मणा  
कथितं पूर्वं नारायणमुखाच्छ्रुतम् । तव स्नेहान्मयाख्यातं प्रवक्तव्यं  
न कस्यचित् ॥ ३२ ॥ गुरुं प्रणम्य विधिवत्कवचं प्रपठेत्ततः ।  
सकृद्विस्त्रियथाज्ञानं स हि सर्वतपोमयः ॥ ३३ ॥ मंत्रेषु सकलेष्वेव  
देशिको नात्र संशयः । शतमष्टोत्तरं चास्य पुरश्चर्याविधिः स्मृतः  
॥ ३४ ॥ हवनादीन्दशांशेन कृत्वा तत्साधयेद्भुवम् । यदि स्यात्सिद्ध-  
कवचो विष्णुरेव भवेत्स्वयम् ॥ ३५ ॥ मंत्रसिद्धिर्भवेत्तस्य  
पुरश्चर्याविधानतः । स्पर्धामुद्धूय सततं लक्ष्मीर्वाणीं वसेत्ततः  
॥ ३६ ॥ पुष्पांजल्यष्टकं दत्त्वा मूलेनैव पठेत्सकृत् । दशवर्षसह-  
स्राणि पूजायाः फलमामुयात् ॥ ३७ ॥ भूर्जे विलिख्यांगुलिकां  
स्वर्णस्थां धारयेद्यदि । कंठे वा दक्षिणे बाहौ सोऽपि विष्णुर्न संशयः  
॥ ३८ ॥ अश्वमेधसहस्राणि वाजपेयशतानि च । महादानानि  
यान्येव प्रादक्षिण्यं भुवस्तथा ॥ ३९ ॥ कलां नार्हति तान्येव  
सकृदुच्चारणात्ततः । कवचस्य प्रसादेन जीवन्मुक्तो भवेन्नरः  
॥ ४० ॥ त्रैलोक्यं क्षोभयत्येव त्रैलोक्यविजयी भवेत् । इदं  
कवचमज्ञात्वा यजेद्यः पुरुषोत्तमम् । शतलक्षं प्रजप्तोऽपि न  
मंत्रस्तस्य सिध्यति ॥ ४१ ॥ इति श्रीनारदपंचरात्रे ज्ञानामृतसारे  
त्रैलोक्यमंगलं नाम कवचं संपूर्णम् ॥

३२६. श्रीबालरक्षा ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीकृष्णाय नमः ॥ अव्यादजोऽघ्निर्मणिमां-  
स्तव जान्वथोरु यज्ञोऽच्युतः कटितटं जठरं हयास्यः । हृत्केशव-  
स्त्वदुर ईश इनस्तु कंठं विष्णुर्भुजं मुखमुरुक्रम ईश्वरः कम् ॥ १ ॥

चत्रयग्रतः सहगदो हरिरस्तु पश्चात्त्वत्पार्श्वयोर्धनुरसी मधुहाऽ-  
जनश्च । कोणेषु शंख उरुगाय उपर्युर्पेन्द्रस्ताक्षर्यः क्षितौ हलधरः  
पुरुषः समंतात् ॥ २ ॥ इंद्रियाणि हृषीकेशः प्राणाद्भारायणोऽवतु ।  
श्वेतद्वीपपतिश्चित्तं मनो योगेश्वरोऽवतु ॥ ३ ॥ पृश्निगर्भश्च ते  
बुद्धिमात्मानं भगवान्परः । क्रीडंतं पातु गोविंदः शयानं पातु  
माधवः ॥ ४ ॥ व्रजंतमन्याद्वैकुण्ठ आसीनं त्वां श्रियःपतिः ।  
भुंजानं यज्ञभुक् पातु सर्वग्रहभयंकरः ॥ ५ ॥ डाकिन्यो यातु-  
धान्यश्च कृष्मांडा येऽर्भकग्रहाः । भूतप्रेतप्रिशाचाश्च यक्षरक्षो-  
विनायकाः ॥ ६ ॥ कोटरारेवतीज्येष्ठापूतनामातृकादयः । उन्मादा  
ये ह्यपस्सारा देहप्राणेंद्रियद्रुहः ॥ ७ ॥ स्वप्नदृष्टा महोत्पाता वृद्ध-  
बालग्रहाश्च ये । सर्वे नश्यंतु ते विष्णोर्नामग्रहणभीरवः ॥ ८ ॥  
इति श्रीमद्भागवते दशमस्कंधे गोपीकृतबालरक्षा संपूर्णा ॥

### ३२७. श्रीकृष्णस्तवराजः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीमहादेव उवाच ॥ शृणु देवि प्रवक्ष्यामि  
स्तोत्रं परमदुर्लभम् । यज्ज्ञात्वा न पुनर्गच्छेन्नरो निरययातनाम्  
॥ १ ॥ नारदाय च यत्प्रोक्तं ब्रह्मपुत्रेण धीमता । सनत्कुमारेण  
पुरा योगीन्द्रगुरुवर्त्मना ॥ २ ॥ श्रीनारद उवाच ॥ प्रसीद भग-  
वन्मह्यमज्ञानात्कुंठितात्मने । तवांग्रिपंकजरजोरागिणीं भक्तिमुत्त-  
माम् ॥ ३ ॥ अज प्रसीद भगवन्नमितद्युतिपंजर । अप्रमेय प्रसीदा-  
स्मद्दुःखहन्पुरुषोत्तम ॥ ४ ॥ स्वसंवेद्य प्रसीदास्मदानंदात्मन्नना-  
मय । अचिन्त्यसार विश्वात्मन्प्रसीद परमेश्वर ॥ ५ ॥ प्रसीद तुंग  
तुंगानां प्रसीद शिव शोभन । प्रसीद गुणगंभीर गंभीराणां महा-  
द्युते ॥ ६ ॥ प्रसीद व्यक्त विस्तीर्ण विस्तीर्णानामगोचर । प्रसीदा-  
र्द्रार्द्रजातीनां प्रसीदांतांतदायिनाम् ॥ ७ ॥ गुरोर्गरीयः सर्वेश

प्रसीदानंत देहिनाम् । जय माधव मायात्मन् जय शाश्वत शंख-  
 भृत् ॥ ८ ॥ जय शंखधर श्रीमन् जय नंदकनंदन । जय चक्र-  
 गदापाणे जय देव जनार्दन ॥ ९ ॥ जय रत्नवराबद्धकिरीटाक्रांतम-  
 स्तक । जय पक्षिपतिच्छायानिरुद्धार्ककरारुण ॥ १० ॥ नमस्ते  
 नरकाराते नमस्ते मधुसूदन । नमस्ते ललितापांग नमस्ते नरकांतक  
 ॥ ११ ॥ नमः पापहरेशान नमः सर्वभयापह । नमः संभूत-  
 सर्वात्मन्नमः संभृतकौस्तुभ ॥ १२ ॥ नमस्ते नयनातीत नमस्ते  
 भयहारक । नमो विभिन्नवेषाय नमः श्रुतिपथातिग ॥ १३ ॥  
 नमस्त्रिमूर्तिभेदेन सर्गस्थित्यंतहेतवे । विष्णवे त्रिदशारातिजिष्णवे  
 परमात्मने ॥ १४ ॥ चक्रभिन्नारिचक्राय चक्रिणे चक्रवल्लभ ।  
 विश्वाय विश्ववंद्याय विश्वभूतानुवर्तिने ॥ १५ ॥ नमोऽस्तु योगि-  
 ध्येयात्मन्नमोऽस्त्वध्यात्मरूपिणे । भक्तिप्रदाय भक्तानां नमस्ते  
 भक्तिदायिने ॥ १६ ॥ पूजनं हवनं चेज्या ध्यानं पश्चान्नमस्क्रिया ।  
 देवेश कर्म सर्वं मे भवेदाराधनं तव ॥ १७ ॥ इति हवनजपार्चा-  
 भेदतो विष्णुपूजानियतहृदयकर्मा यस्तु मंत्री चिराय । स खलु  
 सकलकामान् प्राप्य कृष्णांतरात्मा जननमृतिविमुक्तोऽप्युत्तमां  
 भक्तिमेति ॥ १८ ॥ गोगोपगोपिकावीतं गोपालं गोषु गोप्रदम् ।  
 गोपैरीड्यं गोसहस्रैर्नौमि गोकुलनायकम् ॥ १९ ॥ प्रीणयेदनया  
 स्तुत्या जगन्नार्थं जगन्मयम् । धर्मार्थकाममोक्षाणामाप्तये पुरुषो-  
 त्तमम् ॥ २० ॥ इति श्रीनारदपंचरात्रे ज्ञानामृतसारे श्रीकृष्ण-  
 स्तवराजः संपूर्णः ॥

### ३२८. भगवन्मानसपूजनम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ हृदंभोजे कृष्णः सजलजलदश्यामलतनुः  
 सरोजाक्षः स्रग्वी मुकुटकटकाद्याभरणवान् । शरद्राकानाथप्रतिम-



वदनः श्रीमुरलिकां वहन्ध्येयो गोपीगणपरिवृतः कुंकुमचितः ॥ १ ॥  
 पयोभोधेर्दीपान्मम हृदयमायाहि भगवन् मणिवातभ्राजत्कनकवर-  
 पीठं भज हरे । सुचिह्नौ ते पादौ यदुकुलज नेनेज्मि सुजलैर्गृहा-  
 णेदं दूर्वाफलजलवदर्व्यं मुररिपो ॥ २ ॥ त्वमाचामोपेंद्र त्रिदश-  
 सरिदंभोऽतिशिशिरं भजस्वेमं पंचामृतरचितमाप्लावमघहन् ।  
 धुनद्याः कार्लिंद्या अपि कनककुंभस्थितमिदं जलं तेन स्नानं कुरु  
 कुरु कुरुष्वाचमनकम् ॥ ३ ॥ तडिद्वर्णे वस्त्रे भयविजयकांताधि-  
 हरण प्रलंबारिभ्रातर्मृदुलमुपवीतं कुरु गले । ललाटे पाटीरं मृग-  
 मदयुतं धारय हरे गृहाणेदं माल्य शतदलतुलस्यादिरचितम्  
 ॥ ४ ॥ दशांगं धूपं सद्भरदचरणग्रेऽर्पितमये मुखं दीपेनेंदुप्रभ-  
 वरजसा देव कलये । इमौ पाणी वाणीपतिनुत सकर्पूररजसा  
 विशोध्याग्रे दत्तं सलिलमिदमाचाम नृहरे ॥ ५ ॥ सदातृप्ताब्जं  
 षड्सवदखिलव्यंजनयुतं सुवर्णामत्रे गोघृतचषकयुक्ते स्थितमिदम् ।  
 यशोदासूनो तत्परमदयग्राऽशान सखिभिः प्रसादं वाञ्छद्भिः सह  
 तदनु नीरं पिब विभो ॥ ६ ॥ सचंद्रं तांबूलं मुखरुचिकरं भक्षय  
 हरे फलं स्वादु प्रीत्या परिसलवदास्वादय चिरम् । सपर्यापर्याप्त्यै  
 कनकमणिजातं स्थितमिदं प्रदीपैरारार्तिं जलधितनयाश्लिष्ट रचये  
 ॥ ७ ॥ विजातीयैः पुष्पैरभिसुरभिभिर्बिल्वतुलसीयुतैश्चेमं पुष्पां-  
 जलिमजित ते मूर्ध्नि निदधे । तव प्रादक्षिण्यक्रमणमघविध्वंसि  
 रचितं चतुर्वारं विष्णो जनिपथगतिश्रांतविदुषा ॥ ८ ॥ नमस्कारो-  
 ऽष्टांगः सकलदुरितध्वंसनपटुः कृतं नृत्यं गीतं स्तुतिरपि रमा-  
 कांत त इमम् । तव प्रीत्यै भूयादहमपि च दासस्तव विभो कृतं  
 छिद्रं पूर्णं कुरु कुरु नमस्तेऽस्तु भगवन् ॥ ९ ॥ सदा सेव्यः कृष्णः  
 सजलघननीलः करतले दधानो दध्यन्नं तदनु नवनीतं मुरलि-

काम् । कदाचित्कान्तानां कुचकलशपत्रालिरचनासमासक्तं स्निग्धैः  
सह शिशुविहारं विरचयन् ॥ १० ॥ मणिकर्णाच्छया जातमिदं  
मानसपूजनम् । यः कुर्वीतोषसि प्राज्ञस्तस्य कृष्णः प्रसीदति  
॥ ११ ॥ इति श्रीमच्छंकराचार्यविरचितं भगवन्मानसपूजनं  
संपूर्णम् ॥

### ३२९. देवकृता गर्भस्तुतिः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ देवा ऊचुः ॥ जगद्योनिरयोनिस्वमनंतोऽव्यय  
एव च । ज्योतिःस्वरूपो ह्यनिशः सगुणो निर्गुणो महान् ॥ १ ॥  
भक्तानुरोधात्साकारो निराकारो निरंकुशः । निर्व्यूहो निखिलाधारो  
निःशंको निरुपद्रवः ॥ २ ॥ निरुपाधिश्च निर्लिप्तो निरीहो निघ-  
नांतकः । स्वात्मारामः पूर्णकामोऽनिमिषो नित्य एव च ॥ ३ ॥  
स्वेच्छामयः सर्वहेतुः सर्वः सर्वगुणाश्रयः । सर्वदो दुःखदो दुर्गो  
दुर्जनांतक एव च ॥ ४ ॥ सुभगो दुर्भगो वाग्मी दुराराध्यो दुर-  
त्ययः । वेदहेतुश्च वेदश्च वेदांगो वेदविद्विभुः ॥ ५ ॥ इत्येव-  
मुक्त्वा देवाश्च प्रणेमुश्च मुहुर्मुहुः । हर्षाश्रुलोचनाः सर्वे ववृषुः  
कुसुमानि च ॥ ६ ॥ द्विचत्वारिंशन्नामानि प्रातरुत्थाय यः पठेत् ।  
दृढां भक्तिं हरेर्दास्यं लभते वाञ्छितं फलम् ॥ ७ ॥ इत्येवं स्तवनं  
कृत्वा देवास्ते स्वालयं ययुः । बभूव जलवृष्टिश्च निश्चेष्टा मथुरा  
पुरी ॥ ८ ॥ इति देवकृता गर्भस्तुतिः संपूर्णा ॥

### ३३०. वसुदेवकृतं श्रीकृष्णस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ वसुदेव उवाच ॥ त्वामतीन्द्रियमव्यक्तमक्षरं  
निर्गुणं विभुम् । ध्यानासाध्यं च सर्वेषां परमात्मानमीश्वरम्  
॥ १ ॥ स्वेच्छामयं सर्वरूपं स्वेच्छारूपधरं परम् । निर्लिप्तं परमं  
ब्रह्म बीजरूपं सनातनम् ॥ २ ॥ स्थूलास्थूलतरं प्राप्तमतिसूक्ष्म-

दर्शनम् । स्थितं सर्वशरीरेषु साक्षिरूपमदृश्यकम् ॥ ३ ॥ शरीर-  
वंतं सगुणमशरीरं गुणोत्करम् । प्रकृतिं प्रकृतीशं च प्राकृतं प्रकृतेः  
परम् ॥ ४ ॥ सर्वेशं सर्वरूपं च सर्वातकरमव्ययम् । सर्वाधारं  
निराधारं निर्व्यूहं स्तौमि किं विभुम् ॥ ५ ॥ अनंतः स्तवनेऽशक्तो-  
ऽशक्ता देवी सरस्वती । यं वा स्तोतुमशक्तश्च पंचवक्रः षडाननः  
॥ ६ ॥ चतुर्मुखो वेदकर्ता यं स्तोतुमक्षमः सदा । गणेशो न  
समर्थश्च योगीन्द्राणां गुरोर्गुरुः ॥ ७ ॥ ऋषयो देवताश्चैव मुनीन्द्र-  
मनुमानवाः । स्वप्ने तेषामदृश्यं च त्वामेवं किं स्तुवंति ते ॥ ८ ॥  
श्रुतयः स्तवनेऽशक्ताः किं स्तुवंति विपश्चितः । विहायैवं शरीरं च  
बालो भवितुमर्हसि ॥ ९ ॥ वसुदेवकृतं स्तोत्रं त्रिसंध्यं यः पठे-  
न्नरः । भक्तिं दास्यमवाप्नोति श्रीकृष्णचरणांबुजे ॥ १० ॥ विशिष्टं  
पुत्रं लभते हरिदासं गुणान्वितम् । संकटं निस्तरेत्तूर्णं शत्रुभीतेः  
प्रमुच्यते ॥ ११ ॥ इति श्रीब्रह्मवैवर्ते महापुराणे वसुदेवकृतं  
कृष्णस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ३३१. श्रीवेंकटेश्वरमंगलस्तोत्रम् ।

श्रीवेंकटेश्वराय नमः ॥ श्रियः कांताय देवाय कल्याणनिधयेऽर्थि-  
नाम् । श्रीवेंकटनिवासाय श्रीनिवासाय मंगलम् ॥ १ ॥ लक्ष्मी-  
सविभ्रमालोकसद्मविभ्रमचक्षुषे । चक्षुषे सर्वलोकानां वेंकटेशाय  
मंगलम् ॥ २ ॥ श्रीवेंकटाद्रिशृंगाय मंगलाभरणांघ्रये । मंगलानां  
निवासाय श्रीनिवासाय मंगलम् ॥ ३ ॥ सर्वावयवसौंदर्यसंपदा  
सर्वचेतसाम् । सदा संमोहनायास्तु वेंकटेशाय मंगलम् ॥ ४ ॥  
नित्याय निरबधाय सत्यानंतचिदात्मने । सर्वातरात्मने श्रीमद्वेंकटे-  
शाय मंगलम् ॥ ५ ॥ स्वतः सर्वविदे सर्वशक्तये सर्वशेषिणे ।  
सुलभाय सुशीलाय वेंकटेशाय मंगलम् ॥ ६ ॥ परस्मै ब्रह्मणे

पूर्णकामाय परमात्मने । प्रसन्नपरतत्त्वाय वैकटेशाय मंगलम् ॥ ७ ॥  
 अकालतत्त्वविश्रांतावात्मानमनुपश्यताम् । अतृप्तामृतरूपाय वैकटे-  
 शाय मंगलम् ॥ ८ ॥ प्रायः स्वचरणौ पुंसां शरणत्वेन पाणिना ।  
 कृपया दृश्यते श्रीमद्वैकटेशाय मंगलम् ॥ ९ ॥ दयामृततरंगिण्य-  
 स्तरंगैरपि शीतलैः । अपांगैः सिंचते विश्वं वैकटेशाय मंगलम्  
 ॥ १० ॥ स्रग्भूषांबरहेतीनां सुषमावहमूर्तये । सर्वार्तिशमनायास्तु  
 वैकटेशाय मंगलम् ॥ ११ ॥ श्रीवैकुण्ठविरक्ताय स्वामिपुष्करिणी-  
 तटे । रमया रममाणाय वैकटेशाय मंगलम् ॥ १२ ॥ श्रीमत्सुंदर-  
 जामातृमुनिमानसवासिने । सर्वलोकनिवासाय श्रीनिवासाय मंग-  
 लम् ॥ १३ ॥ नमः श्रीवैकटेशाय शुद्धज्ञानस्वरूपिणे । वासुदेवाय  
 शांताय श्रीनिवासाय मंगलम् ॥ १४ ॥ मंगलाशासनपरैर्मदाचार्य-  
 पुरोगमैः । सर्वैश्च पूर्वैराचार्यैः सत्कृतायास्तु मंगलम् ॥ १५ ॥  
 इति श्रीवैकटेशमंगलस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ३३२. बालकृतं कृष्णस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ बाला ऊचुः ॥ यथा संरक्षितं ब्रह्मन्सर्वापत्स्वेव  
 नः कुलम् । तथा रक्षां कुरु पुनर्दावाग्नेर्मधुसूदन ॥ १ ॥ त्वमिष्ट-  
 देवताऽस्माकं त्वमेव कुलदेवता । स्रष्टा दाता च संहर्ता जगतां च  
 जगत्पते ॥ २ ॥ वह्निर्वा वरुणो वापि चंद्रो वा सूर्य एव च ।  
 यमः कुबेरः पवन ईशानाद्याश्च देवताः ॥ ३ ॥ ब्रह्मे शशेषधर्मेन्द्रा  
 मुनीन्द्रा मनवः स्मृताः । मानवाश्च तथा दैत्या यक्षराक्षसकिंनराः  
 ॥ ४ ॥ ये ये चराचराश्चैव सर्वे तव विभूतयः । आविर्भावस्तिरो-  
 भावः सर्वेषां च तवेच्छया ॥ ५ ॥ अभयं देहि गोविंद वह्नि-  
 संहरणं कुरु । वयं त्वां शरणं यामो रक्ष नः शरणागतान् ॥ ६ ॥  
 इत्येवमुक्त्वा ते सर्वे तस्थुर्ध्यात्वा पदांबुजम् । दूरीभूतस्तु दावाग्निः

श्रीकृष्णामृतदृष्टितः ॥ ७ ॥ दूरीभूते च दावाभौ ननृतुस्ते मुदा-  
 न्विताः । सर्वापदः प्रणश्यन्ति हरिस्मरणमात्रतः ॥ ८ ॥ इदं स्तोत्रं  
 महापुण्यं प्रातरुत्थाय यः पठेत् । वह्नितो न भवेत्तस्य भयं जन्मनि  
 जन्मनि ॥ ९ ॥ शत्रुग्रस्ते च दावाभौ विपत्तौ प्राणसंकटे । स्तोत्र-  
 मेतत्पठित्वा तु मुच्यते नात्र संशयः ॥ १० ॥ शत्रुसैन्यं क्षयं  
 याति सर्वत्र विजयी भवेत् । इह लोके हरेर्भक्तिमते दास्यं लभे-  
 द्भुवम् ॥ ११ ॥ इति बालकृतं श्रीकृष्णस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ३३३. गोपालस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीनारद उवाच ॥ नवीननीरदश्यामं नीलै-  
 दीवरलोचनम् । बलवीनंदनं वंदे कृष्णं गोपालरूपिणम् ॥ १ ॥  
 स्फुरद्दहिंदलोद्भङ्गनीलकुंचितमूर्धजम् । कदंबकुसुमोद्भङ्गवनमाला-  
 विभूषितम् ॥ २ ॥ गंडमंडलसंसर्गिचलत्कांचनकुंडलम् । स्थूल-  
 मुक्ताफलोदारहारोद्ध्योतितवक्षसम् ॥ ३ ॥ हेमांगदतुलाकोटि-  
 किरीटोज्ज्वलविग्रहम् । मंदमारुतसंक्षोभवलिगतांबरसंचयम् ॥ ४ ॥  
 रुचिरौष्ठपुटन्यस्तवंशीमधुरनिःस्वनैः । लसद्गोपालिकाचेतो मोहयंतं  
 मुहुर्मुहुः ॥ ५ ॥ बलवीवदनांभोजमधुपानमधुव्रतम् । क्षोभयंतं  
 मनस्तासां सस्मेरापांगवीक्षणैः ॥ ६ ॥ यौवनोद्भिन्नदेहाभिः संस-  
 क्ताभिः परस्परम् । विचित्रांबरभूषाभिर्गोपनारीभिरावृतम् ॥ ७ ॥  
 प्रभिन्नांजनकालिंदीदलकेलिकलोत्सुकम् । योधयंतं क्वचिद्गोपान्  
 व्याहरंतं गवां गणम् ॥ ८ ॥ कालिंदीजलसंसर्गिशीतलानिल-  
 सेचिते । कदंबपादपच्छाये स्थितं वृंदावने क्वचित् ॥ ९ ॥ रत्न-  
 भूधरसंलग्नरत्नासनपरिग्रहम् । कल्पपादपमध्यस्थहेममंडपिकाग-  
 तम् ॥ १० ॥ वसंतकुसुमामोदसुरभीकृतदिङ्मुखे । गोवर्धनगिरौ  
 रम्ये स्थितं रासरसोत्सुकम् ॥ ११ ॥ सव्यहस्ततलन्यस्तगिरिवर्यात-

पत्रकम् । खंडिताखंडलोन्मुक्तामुक्तासारघनाघनम् ॥ १२ ॥ वेणु-  
 वाद्यमहोल्लासकृतहुंकारनिःस्वनैः । सवत्सैरुन्मुखैः शश्वद्भोकुलैर-  
 भिवीक्षितम् ॥ १३ ॥ कृष्णमेवानुगायद्भिस्तच्चेष्टावशवर्तिभिः ।  
 दंडपाशोद्यतकरैर्गोपालैरुपशोभितम् ॥ १४ ॥ नारदाद्यैर्मुनिश्रेष्ठैर्वेद-  
 वेदांगपारगैः । प्रीतिसुखिग्धया वाचा स्तूयमानं परात्परम् ॥ १५ ॥  
 य एनं चिंतयेदेवं भक्त्या संस्तौति मानवः । त्रिसंध्यं तस्य  
 तुष्टोऽसौ ददाति वरमीप्सितम् ॥ १६ ॥ राजवल्लभतामेति  
 भवेत्सर्वजनप्रियः । अचलां श्रियमाप्नोति स वाग्मी जायते  
 ध्रुवम् ॥ १७ ॥ इति श्रीनारदपंचरात्रे ज्ञानामृतसारे गोपालस्तोत्रं  
 समाप्तम् ॥

### ३३४. कृष्णाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रियाश्लिष्टो विष्णुः स्थिरचरगुरुर्वेदविषयो  
 धियां साक्षी शुद्धो हरिरसुरहंताब्जनयनः । गदी शंखी चक्री  
 विमलवनमाली स्थिररुचिः शरण्यो लोकेशो मम भवतु कृष्णो-  
 ऽक्षिविषयः ॥ १ ॥ यतः सर्वं जातं वियदनिलमुख्यं जगदिदं  
 स्थितौ निःशेषं योऽवति निजसुखांशेन मधुहा । लये सर्वं स्वस्मिन्  
 हरति कलया यस्तु स विभुः शरण्यो लोकेशो मम भवतु कृष्णो-  
 ऽक्षिविषयः ॥ २ ॥ असूनायम्यादौ यमनियममुख्यैः सुकरुणै-  
 निरुध्येदं चित्तं हृदि विलयमानीय सकलम् । यमीड्यं पश्यंति  
 प्रवरमतयो मायिनमसौ शरण्यो लोकेशो मम० ॥ ३ ॥ पृथिव्यां  
 तिष्ठन्त्यो यमयति महीं वेद न धरा यमित्यादौ वेदो वदति जग-  
 तामीशममलम् । नियंतारं ध्येयं मुनिसुरनृणां मोक्षदमसौ शरण्यो  
 लोकेशो मम० ॥ ४ ॥ महेंद्रादिर्देवो जयति दितिजान्यस्य बलतो  
 न कस्य स्वातंत्र्यं क्वचिदपि कृतौ यत्कृतिमृते । कवित्वादेर्गर्व

परिहरति योऽसौ विजयिनः शरण्यो लोकेशो मम० ॥ ५ ॥  
 विना यस्य ध्यानं व्रजति पशुतां सूकरमुखां विना यस्य ज्ञानं  
 जनमृतिभयं याति जनता । विना यस्य स्मृत्या कृमिशतजनिं  
 याति स विभुः शरण्यो लोकेशो मम० ॥ ६ ॥ नरातंकोत्तंकः  
 शरणशरणो भ्रांतिहरणो घनश्यामो वामो व्रजशिशुवयस्योऽर्जुन-  
 सखः । स्वयंभूर्भूतानां जनक उचिताचारसुखदः शरण्यो लोकेशो  
 मम० ॥ ७ ॥ यदा धर्मग्लानिर्भवति जगतां क्षोभकरणी तदा  
 लोकस्वामी प्रकटितवपुः सेतुघृगजः । सतां धाता स्वच्छो निगम-  
 गुणगीतो व्रजपतिः शरण्यो लोकेशो मम० ॥ ८ ॥ इति हरि-  
 खिलास्माराधितः शंकरेण श्रुतिविशदगुणोऽसौ मातृमोक्षार्थमाद्यः ।  
 यतिवरनिकटे श्रीयुक्त आविर्बभूव स्वगुणवृत उदारः शंखचक्राब्ज-  
 हस्तः ॥ ९ ॥ इति श्रीमच्छंकराचार्यविरचितं कृष्णाष्टकं संपूर्णम् ॥

### ३३५. मोहिनीकृतं श्रीकृष्णस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ मोहिन्युवाच ॥ सर्वेन्द्रियाणां प्रवरं विष्णोरंशं  
 च मानसम् । तदेव कर्मणां बीजं तदुद्भव नमोऽस्तु ते ॥ १ ॥  
 स्वयमात्मा हि भगवान् ज्ञानरूपो महेश्वरः । नमो ब्रह्मन् जगत्त्र-  
 ष्टस्तदुद्भव नमोऽस्तु ते ॥ २ ॥ सर्वाजित जगज्जेतर्जीवजीव  
 मनोहर । रतिबीज रतिस्वामिन् रतिप्रिय नमोऽस्तु ते ॥ ३ ॥  
 शश्वद्योषिदधिष्ठान योषित्प्राणाधिकप्रिय । योषिद्वाहन योषास्त्र  
 योषिद्वंधो नमोऽस्तु ते ॥ ४ ॥ पतिसाध्यकराशेषरूपाधार  
 गुणाश्रय । सुगंधिवातसचिव मधुमित्र नमोऽस्तु ते ॥ ५ ॥  
 शश्वद्योनिक्ताधार स्त्रीसंदर्शनवर्धन । विदग्धानां विरहिणां  
 प्राणांतक नमोऽस्तु ते ॥ ६ ॥ अकृपा येषु तेऽनर्थं तेषां ज्ञानं  
 विनाशनम् । अनूहरूपभक्तेषु कृपासिंधो नमोऽस्तु ते ॥ ७ ॥

तपस्विनां च तपसां विघ्नबीजाय लीलया । मनः सकामं मुक्तानां  
 कर्तुं शक्त नमोऽस्तु ते ॥ ८ ॥ तपःसाध्यस्तथाराध्यः सदैव  
 पांचभौतिकः । पंचेन्द्रियकृताधार पंचबाण नमोऽस्तु ते ॥ ९ ॥  
 मोहिनीत्येवमुक्त्वा तु मनसा सा विधेः पुराः । विरराम नम्रवक्रा  
 बभूव ध्यानतत्परा ॥ १० ॥ उक्तं माध्यंदिने कांते स्तोत्रमेतन्म-  
 नोहरम् । पुरा दुर्वाससा दत्तं मोहिन्यै गंधमादने ॥ ११ ॥  
 स्तोत्रमेतन्महापुण्यं कामी भक्त्या यदा पठेत् । अभीष्टं लभते  
 नूनं निष्कलंको भवेद्भुवम् ॥ १२ ॥ चेष्टां न कुरुते कामः कदा-  
 च्चिदपि तं प्रियम् । भवेद्दरोगी श्रीयुक्तः कामदेवसमप्रभः । वनितां  
 लभते सार्ध्वीं पत्नीं त्रैलोक्यमोहिनीम् ॥ १३ ॥ इति श्रीमोहिनी-  
 कृतं कृष्णस्तोत्रं समाप्तम् ॥

### ३३६. ब्रह्मदेवकृतं कृष्णस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ब्रह्मोवाच ॥ रक्ष रक्ष हरे मां च निमग्नं  
 कामसागरे । दुष्कीर्तिजलपूर्णे च दुष्पारे बहुसंकटे ॥ १ ॥  
 भक्तिविस्मृतिबीजे च विपत्सोपानदुस्तरे । अतीव निर्मलज्ञान-  
 चक्षुःप्रच्छन्नकारणे ॥ २ ॥ जन्मोर्मिसंगसहिते योषिन्नकौघसंकुले ।  
 रतिस्त्रोतःसमायुक्ते गंभीरे घोर एव च ॥ ३ ॥ प्रथमामृतरूपे च  
 परिणामविषालये । यमालयप्रवेशाय मुक्तिद्वारातिविस्मृतौ  
 ॥ ४ ॥ बुद्ध्या तरण्या विज्ञानैरुद्धरास्मानतः स्वयम् । स्वयं च त्वं  
 कर्णधारः प्रसीद मधुसूदन ॥ ५ ॥ मद्विधाः कतिचिन्नाथ नियोज्या  
 भवकर्मणि । संति विश्वेश विधयो हे विश्वेश्वर माधव ॥ ६ ॥ न  
 कर्मक्षेत्रमेवेदं ब्रह्मलोकोऽयमीप्सितः । तथापि न स्पृहा कामे  
 त्वद्भक्तिव्यवधायके ॥ ७ ॥ हे नाथ करुणासिंधो दीनबंधो कृपां  
 कुरु । त्वं महेश महाज्ञाता दुःस्वप्नं मां न दर्शय ॥ ८ ॥ इत्युत्त्वा



जगतां धाता विरराम सनातनः । ध्यायं ध्यायं मत्पदाब्जं  
 शश्वत्सस्मार मामिति ॥ ९ ॥ ब्रह्मणा च कृतं स्तोत्रं भक्तियुक्तश्च  
 यः पठेत् । स चैवाकर्मविषये न निमग्नो भवेद्भुवम् ॥ १० ॥  
 मम मायां विनिर्जित्य स ज्ञानं लभते ध्रुवम् । इह लोके भक्तियुक्तो  
 मद्भक्तप्रवरो भवेत् ॥ ११ ॥ इति श्रीब्रह्मदेवकृतं कृष्णस्तोत्रं  
 संपूर्णम् ॥

### ३३७. श्रीकृष्णस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ वंदे नवघनश्यामं पीतकौशेयवाससम् ।  
 सानंदं सुंदरं शुद्धं श्रीकृष्णं प्रकृतेः परम् ॥ १ ॥ राधेशं राधिका-  
 प्राणवल्लभं बल्लवीसुतम् । राधासेवितपादाब्जं राधावक्षःस्थलस्थितम्  
 ॥ २ ॥ राधानुगं राधिकेष्टं राधापहतमानसम् । राधाधारं भवा-  
 धारं सर्वाधारं नमामि तम् ॥ ३ ॥ राधाहृत्पद्ममध्ये च वसंतं  
 संततं शुभम् । राधासहचरं शश्वद्राधाज्ञापारिपालकम् ॥ ४ ॥  
 ध्यायंते योगिनो योगान् सिद्धाः सिद्धेश्वराश्च यम् । तं ध्यायेत्स-  
 ततं शुद्धं भगवंतं सनातनम् ॥ ५ ॥ सेवंते सततं संतो ब्रह्मेश-  
 शेषसंज्ञकाः । सेवंते निर्गुणं ब्रह्म भगवंतं सनातनम् ॥ ६ ॥  
 निर्लिप्तं च निरीहं च परमात्मानमीश्वरम् । नित्यं सत्यं च परमं  
 भगवंतं सनातनम् ॥ ७ ॥ यं सृष्टेरादिभूतं च सर्वबीजं परात्परम् ।  
 योगिनस्तं प्रपद्यंते भगवंतं सनातनम् ॥ ८ ॥ बीजं नानावताराणां  
 सर्वकारणकारणम् । वेदावेद्यं वेदबीजं वेदकारणकारणम् । योगि-  
 नस्तं प्रपद्यंते भगवंतं सनातनम् ॥ ९ ॥ इत्येवमुक्त्वा गंधर्वः  
 पपात धरणीतले । ननाम दंडवद्भूमौ देवदेवं परात्परम् ॥ १० ॥  
 इति तेन कृतं स्तोत्रं यः पठेत्प्रयतः शुचिः । इहैव जीवनमुक्तश्च  
 परं याति परां गतिम् ॥ ११ ॥ हरिभक्तिं हरेर्दास्यं गोलोके च

निरामयः । पार्षदप्रवरत्वं च लभते नात्र संशयः ॥ १२ ॥ इति  
श्रीनारदपंचरात्रे श्रीकृष्णस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ३३८. श्रीकृष्णाष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अस्य श्रीकृष्णाष्टोत्तरशतनामस्तोत्रस्य श्रीशेष  
ऋषिः । अनुष्टुप् छंदः । श्रीकृष्णो देवता । श्रीकृष्णप्रीत्यर्थं  
श्रीकृष्णाष्टोत्तरशतनामजपे विनियोगः । शेष उवाच ॥ श्रीकृष्णः  
कमलानाथो वासुदेवः सनातनः । वसुदेवात्मजः पुण्यो लीला-  
मानुषविग्रहः ॥ १ ॥ श्रीवत्सकौस्तुभधरो यशोदावत्सलो हरिः ।  
चतुर्भुजात्तचक्रासिगदाशंखांबुजायुधः ॥ २ ॥ देवकीनंदनः श्रीशो  
नंदगोपप्रियात्मजः । यमुनावेगसंहारी बलभद्रप्रियानुजः ॥ ३ ॥  
पूतनाजीवितहरः शकटासुरभंजनः । नंदव्रजजनानंदी सच्चिदानंद-  
विग्रहः ॥ ४ ॥ नवनीतनवाहारो मुचुकुंदप्रसादकः । षोडशस्त्री-  
सहस्रेशस्त्रिभंगो मधुराकृतिः ॥ ५ ॥ शुक्रवागमृताब्धींदुर्गोविंदो  
गोविदां पतिः । वत्सपालनसंचारी धेनुकासुरभंजनः ॥ ६ ॥  
तृणीकृतनृणावर्तो यमलार्जुनभंजनः । उत्तालतालभेत्ता च तमाल-  
श्यामलाकृतिः ॥ ७ ॥ गोपगोपीश्वरो योगी सूर्यकोटिसमप्रभः ।  
इलापतिः परंज्योतिर्यादवेन्द्रो यदूद्वहः ॥ ८ ॥ वनमाली पीतवासाः  
पारिजातापहारकः । गोवर्धनाचलोद्धर्ता गोपालः सर्वपालकः  
॥ ९ ॥ अजो निरंजनः कामजनकः कंजलोचनः । मधुहा मथुरा-  
नाथो द्वारकानायको बली ॥ १० ॥ वृंदावनांतःसंचारी तुलसी-  
दामभूषणः । स्वमंतकमणेर्हर्ता नरनारायणात्मकः ॥ ११ ॥ कुब्जा-  
कृष्णांबरधरो मायी परमपूरुषः । मुष्टिकासुरचाणूरमहायुद्ध-  
विशारदः ॥ १२ ॥ संसारवैरी कंसारिर्मुंरारिर्नरकांतकः । अनादि-  
ब्रह्मचारी च कृष्णाव्यसनकर्षकः ॥ १३ ॥ शिशुपालशिरश्छेत्ता

दुर्योधनकुलांतकृत् । विदुराकूरवरदो विश्वरूपप्रदर्शकः ॥ १४ ॥  
 सत्यवाक् सत्यसंकल्पः सत्यभामारतो जयी । सुभद्रापूर्वजो विष्णु-  
 भीष्ममुक्तिप्रदायकः ॥ १५ ॥ जगद्गुरुर्जगन्नाथो वेणुवाद्यविशारदः ।  
 वृषभासुरविध्वंसी बाणासुरबलांतकृत् ॥ १६ ॥ युधिष्ठिरप्रतिष्ठाता  
 बर्हिर्बर्हावतंसकः । पार्थसारथिरन्यक्तो गीतामृतमहोदधिः ॥ १७ ॥  
 कालीयफणिमाणिक्यरंजितश्रीपदांबुजः । दामोदरो यज्ञभोक्ता  
 दानवेन्द्रविनाशनः ॥ १८ ॥ नारायणः परं ब्रह्म पद्मगाशनवाहनः ।  
 जलक्रीडासमासक्तगोपीवस्त्रापहारकः ॥ १९ ॥ पुण्यश्रीकस्तोर्थकरो  
 वेदवेद्यो दयानिधिः । सर्वतीर्थात्मकः सर्वग्रहरूपी परात्परः ॥ २० ॥  
 इत्येवं कृष्णदेवस्य नाम्नामष्टोत्तरं शतम् । कृष्णेन कृष्णभक्तेन  
 श्रुत्वा गीतामृतं पुरा ॥ २१ ॥ स्तोत्रं कृष्णप्रियकरं कृतं तस्मान्मया  
 पुरा । कृष्णनामामृतं नाम परमानंददायकम् ॥ २२ ॥ अनुपद्रव-  
 दुःखघ्नं परमायुष्यवर्धनम् । दानं श्रुतं तपस्तीर्थं यत्कृतं त्विह  
 जन्मनि ॥ २३ ॥ पठतां शृण्वतां चैव कोटिकोटिगुणं भवेत् ।  
 पुत्रप्रदमपुत्राणामगतीनां गतिप्रदम् ॥ २४ ॥ धनावहं दरिद्राणां  
 जयेच्छूनां जयावहम् । शिशूनां गोकुलानां च पुष्टिदं पुष्टिवर्धनम्  
 ॥ २५ ॥ वातग्रहज्वरादीनां शमनं शांतिमुक्तिदम् । समस्तकामदं  
 सद्यः कोटिजन्माघनाशनम् ॥ २६ ॥ अन्ते कृष्णस्मरणदं भवताप-  
 भयापहम् । कृष्णाय यादवेन्द्राय ज्ञानमुद्राय योगिने । नाथाय  
 रुक्मिणीशाय नमो वेदांतवेदिने ॥ २७ ॥ इमं मंत्रं महादेव जप-  
 न्नेव दिवानिशम् । सर्वग्रहानुग्रहभाक् सर्वप्रियतमो भवेत् ॥ २८ ॥  
 पुत्रपौत्रैः परिवृतः सर्वसिद्धिसमृद्धिमान् । निर्विश्य भोगानंतेऽपि  
 कृष्णसायुज्यमाप्नुयात् ॥ २९ ॥ इति श्रीनारदपंचरात्रे ज्ञानामृत-  
 सारे उमामहेश्वरसंवादे धरणीशेषसंवादे श्रीकृष्णाष्टोत्तरशतनाम-  
 स्तोत्रं संपूर्णम् ॥

## ३३९. इंद्रकृतं कृष्णस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ इंद्र उवाच ॥ अक्षरं परमं ब्रह्म ज्योतीरूपं  
 सनातनम् । गुणातीतं निराकारं स्वेच्छामयमनंतकम् ॥ १ ॥  
 भक्तध्यानाय सेवायै नानारूपधरं वरम् । शुक्ररक्तपीतश्यामं  
 युगानुक्रमणेन च ॥ २ ॥ शुक्रतेजः स्वरूपं च सत्ये सत्यस्वरू-  
 पिणम् । त्रेतायां कुंकुमाकारं ज्वलंतं ब्रह्मतेजसा ॥ ३ ॥ द्वापरे  
 पीतवर्णं च शोभितं पीतवाससा । कृष्णवर्णं कलौ कृष्णं परिपूर्णतमं  
 प्रभुम् ॥ ४ ॥ नवधाराधरोत्कृष्टश्यामसुंदरविग्रहम् । नंदैकनंदनं  
 वंदे यशोदानंदनं प्रभुम् ॥ ५ ॥ गोपिकाचेतनहरं राधाप्राणाधिकं  
 परम् । विनोदमुरलीशब्दं कुर्वंतं कौतुकेन च ॥ ६ ॥ रूपेणाप्रतिमेनैव  
 रत्नभूषणभूषितम् । कंदर्पकोटिसौंदर्यं विभ्रन्तं शांतमीश्वरम् ॥ ७ ॥  
 क्रीडंतं राधया सार्धं वृंदारण्ये च कुत्रचित् । कुत्रचिन्निर्जनेऽरण्ये  
 राधावक्षःस्थलस्थितम् ॥ ८ ॥ जलक्रीडां प्रकुर्वंतं राधया सह कुत्र-  
 चित् । राधिकाकबरीभारं कुर्वंतं कुत्रचिद्वने ॥ ९ ॥ कुत्रचिद्राधिका-  
 पादे दत्तवंतमलक्तकम् । राधाचर्विततांबूलं गृह्णंतं कुत्रचिन्मुदा  
 ॥ १० ॥ पश्यंतं कुत्रचिद्राधां पश्यंतीं वक्रचक्षुषा । दत्तवंतं च राधायै  
 कृत्वा मालां च कुत्रचित् ॥ ११ ॥ कुत्रचिद्राधया सार्धं गच्छंतं  
 रासमंडलम् । राधादत्तां गले मालां धृतवंतं च कुत्रचित् ॥ १२ ॥  
 सार्धं गोपालिकाभिश्च विहरंतं च कुत्रचित् । राधां गृहीत्वा  
 गच्छंतं तां विहाय च कुत्रचित् ॥ १३ ॥ विप्रपत्नीदत्तमन्नं भुक्तवंतं  
 च कुत्रचित् । भुक्तवंतं तालफलं बालकैः सह कुत्रचित् ॥ १४ ॥  
 वस्त्रं गोपालिकानां च हरंतं कुत्रचिन्मुदा । गवां गणं व्याहरंतं  
 कुत्रचिद्बालकैः सह ॥ १५ ॥ कालीयमूर्ध्नि पादाब्जं दत्तवंतं  
 च कुत्रचित् । विनोदमुरलीशब्दं कुर्वंतं कुत्रचिन्मुदा ॥ १६ ॥

गायन्तं रम्यसंगीतं कुत्रचिद्बालकैः सह । स्तुत्वा शक्रः स्तवेंद्रेण  
 प्रणनाम हरिं भिया ॥ १७ ॥ पुरा दत्तेन गुरुणा रणे वृत्रासुरेण  
 च । कृष्णेन दत्तं कृपया ब्रह्मणे च तपस्यते ॥ १८ ॥  
 एकादशाक्षरो मंत्रः कवचं सर्वलक्षणम् । दत्तमेतत्कुमाराय पुष्करे  
 ब्रह्मणा पुरा ॥ १९ ॥ तेन चांगिरसे दत्तं गुरवेंऽगिरसां मुने ।  
 इदमिन्द्रकृतं स्तोत्रं नित्यं भक्त्या च यः पठेत् ॥ २० ॥ इह प्राप्य  
 दृढां भक्तिमते दास्यं लभेद्भुवम् । जन्ममृत्युजराव्याधिशोकेभ्यो  
 मुच्यते नरः ॥ २१ ॥ न हि पश्यति स्वप्नेऽपि यमदूतं यमालयम्  
 ॥ २२ ॥ इति श्रीब्रह्मवैवर्ते महापुराणे कृष्णजन्मखण्डे इन्द्रकृतं  
 कृष्णस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ३४०. विप्रपत्नीकृतं कृष्णस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ विप्रपत्न्य ऊचुः ॥ त्वं ब्रह्म परमं धाम निरीहो  
 निरहंकृतिः । निर्गुणश्च निराकारः साकारः सगुणः स्वयम् ॥ १ ॥  
 साक्षिरूपश्च निर्लिप्तः परमात्मा निराकृतिः । प्रकृतिः पुरुषस्त्वं च  
 कारणं च तयोः परम् ॥ २ ॥ सृष्टिस्थित्यन्तविषये ये च देवास्त्रयः  
 स्मृताः । ते त्वदंशाः सर्वबीजा ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः ॥ ३ ॥ यस्य  
 लोम्नां च विवरे निखिलं विश्वमीश्वर । महाविराणमहाविष्णुस्त्वं  
 तस्य जनको विभो ॥ ४ ॥ तेजस्त्वं चापि तेजस्वी ज्ञानं ज्ञानी च  
 तत्परः । वेदेऽनिर्वचनीयस्त्वं कस्त्वां स्तोतुमिहेश्वरः ॥ ५ ॥ मह-  
 दादिसृष्टिसूत्रं पंचतन्मात्रमेव च । बीजं त्वं सर्वशक्तीनां सर्वशक्ति-  
 स्वरूपकः ॥ ६ ॥ सर्वशक्तीश्वरः सर्वः सर्वशक्त्याश्रयः सदा ।  
 त्वमनीहः स्वयंज्योतिः सर्वानंदः सनातनः ॥ ७ ॥ अहो आकार-  
 हीनस्त्वं सर्वविग्रहवानपि । सर्वेन्द्रियाणां विषयं जानासि नेंद्रियी  
 भवान् ॥ ८ ॥ सरस्वती जडीभूता यत्स्तोत्रे यन्निरूपणे । जडीभूतो

महेशश्च शेषो धर्मो विधिः स्वयम् ॥ ९ ॥ पार्वती कमला राधा  
सावित्री वेदसूरपि । वेदश्च जडतां याति के वा शक्ता विपश्चितः  
॥ १० ॥ वयं किं स्तवनं कुर्मः स्त्रियः प्राणेश्वरेश्वर । प्रसन्नो भव  
नो देव दीनबंधो कृपां कुरु ॥ ११ ॥ इति पेतुश्च ता विप्रपत्न्य-  
स्तच्चरणांबुजे । अभयं प्रददौ ताभ्यः प्रसन्नवदनेक्षणः ॥ १२ ॥  
विप्रपत्नीकृतं स्तोत्रं पूजाकाले च यः पठेत् । स गतिं विप्रपत्नीनां  
लभते नात्र संशयः ॥ १३ ॥ इति श्रीब्रह्मवैवर्ते महापुराणे कृष्ण-  
जन्मखंडे विप्रपत्नीकृतं कृष्णस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ३४१. गोपालविंशतिस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीमान् वेंकटनाथार्यः कवितार्किककेसरी ।  
वेदांताचार्यवर्यो मे संनिधत्तां सदा हृदि ॥ १ ॥ वंदे वृंदावनचरं  
बल्लवीजनवल्लभम् । जयंतीसंभवं धाम वैजयंतीविभूषणम् ॥ २ ॥  
वाचं निजांकरसिकां प्रसमीक्षमाणो वक्त्रारविंदविनिवेशितपांच-  
जन्यः । वर्णत्रिकोणरुचिरे वरपुंडरीके बद्धासनो जयति बल्लवचक्र-  
वर्ती ॥ ३ ॥ आम्नायगंधिरुचिरस्फुरिताधरोष्ठमस्त्राविलेक्षणमनुक्षण-  
मंदहासम् । गोपालडिंभवपुषं कुहनाजनन्याः प्राणस्तनंधयमवैमि  
परं पुमांसम् ॥ ४ ॥ आविर्भवत्त्वनिभृताभरणं पुरस्तादाकुंचितैक-  
चरणं निहितान्यपादम् । दध्ना निमन्थमुखरेण निबद्धतालं नाथस्य  
नंदभवने नवनीतनाट्यम् ॥ ५ ॥ कुंदप्रसूनविशदैर्दशनैश्चतुर्भिः  
संदश्य मातुरनिशं कुचचूचुकाग्रम् । नंदस्य वक्रमवलोकयतो मुरारे-  
र्मदस्मितं मम मनीषितमातनोतु ॥ ६ ॥ हर्तुं कुंभे विनिहितकरः  
स्वादु हैयंगवीनं दृष्ट्वा दामग्रहणचटुलां मातरं जातरोषाम् । पाया-  
दीषत्प्रचलितपदो नापगच्छन्न तिष्ठन् मिथ्यागोपः सपदि नयने  
मीलयन् विश्वगोप्ता ॥ ७ ॥ ब्रजयोषिदपांगवेदनीयं मथुराभाग्य-

मनन्यभोग्यमीडे । वसुदेववधूस्तनंधयं तत् किमपि ब्रह्म किशोर-  
भावदृश्यम् ॥ ८ ॥ परिवर्तितकंधरं भयेन स्मितफुल्लाधरपल्लवं  
स्मरामि । विटपित्वनिरासकं कयोश्चिद्विपुलोल्लखलकर्षकं कुमारम्  
॥ ९ ॥ निकटेषु निशामयामि नित्यं निगमांतैरधुनापि मृग्यमाणम् ।  
यमलार्जुनदृष्टबालकेलिं यमुनासाक्षिकयौवनं युवानम् ॥ १० ॥  
पदवीमदवीयसीं विमुक्तेरटवीसंपदमंबु वाहयंतीम् । अरुणाधरसा-  
भिलाषवंशां करुणां कारणमानुषीं भजामि ॥ ११ ॥ अनिमेष-  
निषेवणीयमक्षणोरजहद्यौवनमाविरस्तु चित्ते । कलहायितकुंतलं  
कलापैः करुणोन्मादकविभ्रमं मनो मे ॥ १२ ॥ अनुयायिमनोज्ञ-  
वंशनालैरवतु स्पर्शितबल्लवीविमोहैः । अनघस्मितशीतलैरसौ माम-  
नुकंपासरिदंबुजैरपांगैः ॥ १३ ॥ अधराहितचारुवंशनाला मुकुटा-  
लंबिमयूरपिच्छमालाः । हरिनीलशिलाविहंगलीलाः प्रतिभास्वंतु  
ममांतिमप्रयाणे ॥ १४ ॥ अखिलानवलोकयामि कालान्महिला-  
धीनभुजांतरस्य यूनः । अभिलाषपदं व्रजांगनानामभिलापक्रमदूर-  
माभिरूप्यम् ॥ १५ ॥ महसे महिताय मौलिना विनतेनांजलि-  
मंजनत्विवे । कलयामि विभुग्धबल्लवीवलयाभाषितमंजनत्विवे  
॥ १६ ॥ जयति ललितकृत्यं शिक्षको बल्लवीनां शिथिलवलयसिंजा-  
शीतलैर्हस्ततालैः । अखिलभुवनरक्षागोपवेषस्य विष्णोरधरमणि-  
सुधाया वंशवान्वंशनालः ॥ १७ ॥ चित्राकल्पः श्रवसि कलयल्लंग-  
लीकर्णपूरं बहोत्तंसस्फुरितचिकुरो बंधुजीवं दधानः । गुंजाबद्धा-  
मुरसि ललितां धारयन् हारयाष्टिं गोपस्त्रीणां जयति कितवः कोऽपि  
कौमारहारी ॥ १८ ॥ लीलायष्टिं करकिसलये दक्षिणे न्यस्य धन्यामंसे  
देव्याः पुलकनिबिडे सन्निविष्टान्यबाहुः । मेघश्यामो जयति ललितो  
मेखलादत्तवेणुर्गुंजापीडस्फुरितचिकुरो गोपकन्याभुजंगः ॥ १९ ॥

प्रत्यालीढस्मृतिमधिगतां प्राप्तगाढांकपालीं पश्चादीषन्मलितनयनां  
 प्रेयसीं प्रेक्षमाणः । भस्त्रायंत्रप्रणिहितकरो भक्तजीवातुरग्व्या-  
 द्वारि क्रीडानिबिडवसनो बल्लवीवल्लभो नः ॥ २० ॥ वासो  
 हृत्वा दिनकरसुतासंनिधौ बल्लवीनां लीलास्मेरो जयति ललिता-  
 मास्थितः कुंदशाखाम् । सत्रीडाभिस्तदनु वसनं ताभिरभ्यर्थ्यमानः  
 कामी कश्चित्करकमलयोरंजलिं याचमानः ॥ २१ ॥ इत्यनन्य-  
 मनसा विनिर्मितां वैकटेशकविना स्तुतिं पठन् । दिव्यवेणुरसिकः  
 समीक्षते दैवतं किमपि यौवतप्रियम् ॥ २२ ॥ इति गोपाल-  
 विंशतिस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ३४२. श्रीकृष्णलहरीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ कदा वृन्दारण्ये विपुलयमुनातीरपुलिने चरन्तं  
 गोविन्दं हलधरसुदामादिसहितम् । अहो कृष्ण स्वामिन् मधुरमुर-  
 लीमोहन विभो प्रसीदेति क्रोशन्निमिषमिव नेष्यामि दिवसान्  
 ॥ १ ॥ कदा कालिन्दीयैर्हरिचरणमुद्राङ्किततटैः स्मरन्गोपीनाथं  
 कमलनयनं सस्मितमुखम् । अहो पूर्णानन्दाम्बुजवदन भक्तैकललन  
 प्रसीदेति क्रोशन् ॥ २ ॥ कदाचित्खेलन्तं ब्रजपरिसरे गोपतनयैः  
 कुतश्चित्संप्राप्तं किमपि लसितं गोपललनम् । अये राधे किं वा  
 हरसि रसिके कञ्चक्युगं प्रसीदेति क्रोशन् ॥ ३ ॥ कदाचिद्गोपीनां  
 हसितचकितस्त्रिगधनयनं स्थितं गोपीवृन्दे नटमिव नटन्तं सुल-  
 लितम् । सुराधीशैः सर्वैः स्तुतपदमिदं श्रीहरिमिति प्रसीदेति  
 क्रोशन् ॥ ४ ॥ कदाचित्सच्छायाश्रितमभिमहान्तं यदुपतिं समाधि-  
 स्वच्छायां चल इव विलोलैकमकरम् । अये भक्तोदाराम्बुजवदन  
 नन्दस्य तनय प्रसीदेति क्रोशन् ॥ ५ ॥ कदाचित्कालिन्द्यास्तटतरु-  
 कदम्बे स्थितममुं स्मयन्तं साकृतं हृतवसनगोपीसुतपदम् । अहो



शक्रानन्दाम्बुजवदन गोवर्धनधर प्रसीदेति क्रोशन्० ॥ ६ ॥ कदा-  
चित्कान्तारे विजयसखमिष्टं नृपसुतं वदन्तं पार्थेति नृपसुतसखे  
बन्धुरिति च । अमन्तं विश्रान्तं श्रितमुरलिमास्यं हरिममी प्रसीदेति  
क्रोशन्० ॥ ७ ॥ कदा द्रक्ष्ये पूर्णं पुरुषममलं पङ्कजद्वयमहो विष्णो  
योगिन् रसिकमुरलीमोहन विभो । दयां कर्तुं दीने परमकरुणाब्धे  
समुचितं प्रसीदेति क्रोशन्निमिषमिव नेष्यामि दिवसान् ॥ ८ ॥ इति  
श्रीवासुदेवानन्दसरस्वतीविरचितं श्रीकृष्णलहरीस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ३४३. कृष्णद्वादशनामस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीकृष्ण उवाच ॥ किं ते नामसहस्रेण  
विज्ञातेन तवार्जुन । तानि नामानि विज्ञाय नरः पापैः प्रमुच्यते  
॥ १ ॥ प्रथमे तु हरिं विन्द्याद्वितीयं केशवं तथा । तृतीयं पद्मनाभं  
च चतुर्थं वामनं स्मरेत् ॥ २ ॥ पञ्चमं वेदगर्भं तु षष्ठं च मधु-  
सूदनम् । सप्तमं वासुदेवं च वराहं चाष्टमं तथा ॥ ३ ॥ नवमं  
पुण्डरीकाक्षं दशमं हि जनार्दनम् । कृष्णमेकादशं विन्द्याद्वादशं  
श्रीधरं तथा ॥ ४ ॥ द्वादशैतानि नामानि विष्णुप्रोक्ता-  
न्यनेकशः । सायंप्रातः पठेन्नित्यं तस्य पुण्यफलं शृणु ॥ ५ ॥  
चान्द्रायणसहस्राणि कन्यादानशतानि च । अश्वमेधसहस्राणि फलं  
प्राप्नोत्यसंशयः ॥ ६ ॥ अमायां पौर्णमास्यां च द्वादश्यां तु  
विशेषतः । प्रातःकाले पठेन्नित्यं सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ ७ ॥ इति  
श्रीमन्महाभारते अरण्यपर्वणि श्रीकृष्णद्वादशनामस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ३४४. श्रीगोपालाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ यस्माद्विश्वं जातमिदं चित्रमतर्क्यं यस्मिन्ना-  
नंदात्मनि नित्यं रमते वै । यत्रांते संयाति लयं चैतदशेषं तं  
गोपालं संततकालं प्रति वंदे ॥ १ ॥ यस्याज्ञानाज्जन्मजरारोग-

कदंबं ज्ञाते यस्मिन्नश्नयति तत्सर्वमिहाशु । गत्वा यत्रायाति  
 पुनर्नो भवभूर्मि तं गोपालं संततकालं प्रति वंदे ॥ २ ॥ तिष्ठन्न-  
 तर्थो यमयत्येतदजस्रं यं कश्चिन्नो वेद जनोऽप्यात्मनि संतम् ।  
 सर्वं यस्येदं च वशे तिष्ठति विश्वं तं गोपालं संततकालं प्रति वंदे  
 ॥ ३ ॥ धर्मोऽधर्मणेह तिरस्कारमुपैति काले यस्मिन्मत्स्यमुखै-  
 श्चारुचरित्रैः । नानारूपैः पाति तदा योऽवनिर्बिंबं तं गोपालं  
 संततकालं प्रति वंदे ॥ ४ ॥ प्राणायामैर्ध्वस्तसमस्तैर्द्रियदोषा रुद्ध्वा  
 चित्तं यं हृदि पश्यति समाधौ । ज्योतीरूपं योगिजना मोदनिमग्नास्तं  
 गोपालं संततकालं प्रति वंदे ॥ ५ ॥ भानुश्चंद्रश्चोडुगणश्चैव हुताशो  
 यस्मिन्नैवाभाति तडिच्चापि कदापि । यद्भासा चाभाति समस्तं  
 जगदेतत्तं गोपालं संततकालं प्रति वंदे ॥ ६ ॥ सत्यज्ञानं  
 मोदमवोचुर्निगमा यं यो ब्रह्मैद्राद्यादित्यगिरीशार्चितपादः । शेते-  
 ऽनंतोऽनंततनावंबुनिधौ यस्तं गोपालं संततकालं प्रति वंदे ॥ ७ ॥  
 शैवाः प्राहुर्यं शिवमन्ये गणनाथं शक्तिं चैकेऽर्कं च तथान्ये मति-  
 भेदात् । नानाकारैर्भाति य एकोऽखिलशक्तिस्तं गोपालं संततकालं  
 प्रति वंदे ॥ ८ ॥ श्रीमद्गोपालाष्टकमेतत् समधीते भक्त्या नित्यं  
 यो मनुजो वै स्थिरचेताः । हित्वा तूर्णं पापकलापं स समेति पुण्यं  
 विष्णोर्धाम यतो नैव निपातः ॥ ९ ॥ इति श्रीपरमहंसस्वामि-  
 ब्रह्मानंदविरचितं श्रीगोपालाष्टकं संपूर्णम् ॥

### ३४५. श्रीकृष्णाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ चतुर्मुखादिसंस्तुतं समस्तसात्वतानुतम् ।  
 हलायुधादिसंयुतं नमामि राधिकाधिपम् ॥ १ ॥ बकादिदैत्यकालकं  
 सगोपगोपिपालकम् । मनोहरासितालकं नमामि राधिकाधिपम्  
 ॥ २ ॥ सुरेंद्रगर्वभंजनं विरिंचिमोहभंजनम् । ब्रजांगनानुरंजनं

नमामि राधिकाधिपम् ॥ ३ ॥ मयूरपिच्छमंडनं गजेन्द्रदंतखंडनम् ।  
 नृशंसकंसदंडनं नमामि राधिकाधिपम् ॥ ४ ॥ प्रदत्तविप्रदारकं  
 सुदामधामकारकम् । सुरद्रुमापहारकं नमामि राधिकाधिपम् ॥ ५ ॥  
 धनंजयाजयावहं महाचमूक्षयावहम् । पितामहव्यथापहं नमामि  
 राधिकाधिपम् ॥ ६ ॥ मुनींद्रशापकारणं यदुप्रजापहारिणम् ।  
 धराभरावतारणं नमामि राधिकाधिपम् ॥ ७ ॥ सुवृक्षमूलशायिनं  
 मृगारिमोक्षदायिनम् । स्वकीयधाममायिनं नमामि राधिकाधिपम्  
 ॥ ८ ॥ इदं समाहितो हितं वराष्टकं सदा मुदा । जपञ्जनो जनु-  
 र्जरादितो द्रुतं प्रमुच्यते ॥ ९ ॥ इति श्रीपरमहंसस्वामिब्रह्मानंद-  
 विरचितं श्रीकृष्णाष्टकं संपूर्णम् ॥

### ३४६. सत्यव्रतोक्तदामोदरस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ सिंधुदेशोद्भवो विप्रो नाम्ना सत्यव्रतः सुधीः ।  
 विरक्त इंद्रियार्थैभ्यस्त्यक्त्वा पुत्रगृहादिकम् ॥ १ ॥ वृंदावने स्थितः  
 कृष्णमारिराध दिवानिशम् । निःस्वः सत्यव्रतो विप्रो निर्जनेऽव्यग्र-  
 मानसः ॥ २ ॥ कार्तिके पूजयामास प्रीत्या दामोदरं नृप । तृती-  
 येऽह्नि सकृद्भुङ्क्ते पत्रं मूलं फलं तथा ॥ ३ ॥ एवंभावसमायुक्तो  
 भक्त्या तद्गतमानसः । पूजयित्वा हरिं स्तौति प्रीत्या दामोदरा-  
 भिधम् ॥ ४ ॥ सत्यव्रत उवाच ॥ नमामीश्वरं सच्चिदानंदरूपं  
 लसत्कुंडलं गोकुले भ्राजमानम् । यशोदाभियोल्लखले धावमानं  
 परामृष्टमत्यंततो दूनगोप्या ॥ ५ ॥ रुदंतं मुहुर्नेत्रयुग्मं मृजंतं  
 कराम्भोजयुग्मेन सातंकनेत्रम् । मुहुः श्वासकं पत्रिरेखांककंठं  
 स्थितं नौमि दामोदरं भक्तवंद्यम् ॥ ६ ॥ वरं देव देहीश मोक्षा-  
 वर्धि वा न चान्यं वृणेऽहं वरेशादपीह । इदं ते वपुर्नाथ गोपाल-  
 बालं सदा मे मनस्याविरास्तां किमन्यैः ॥ ७ ॥ इदं ते मुखांभोज-

मल्यंतनीलैर्वृतं कुंतलैः स्निग्धवक्रैश्च गोप्या । मुहुश्चुंबितं बिंब-  
रक्ताधरं मे मनस्याविरास्तामलं लक्षलाभैः ॥ ८ ॥ नमो देव  
दामोदरानंत विष्णो प्रसीद प्रभो दुःखजालाब्धिमग्नम् । कृपा-  
दृष्टिवृष्ट्याऽतिदीनं च रक्ष गृहाणेश मामज्ञमेवाक्षिदृश्यम् ॥ ९ ॥  
कुबेरात्मजौ वृक्षमूर्तो च यद्वत्त्वया मोचितौ भक्तिभाजौ कृतौ च ।  
तथा प्रेमभक्तिं स्वकां मे प्रयच्छ न मोक्षे ग्रहो मेऽस्ति दामोदरेह  
॥ १० ॥ नमस्ते सुदान्ने स्फुरद्दीप्तघास्त्रे तथोरःस्थविश्वस्य धास्त्रे  
नमस्ते । नमो राधिकायै त्वदीयप्रियायै नमोऽनंतलीलाय देवाय  
तुभ्यम् ॥ ११ ॥ नारद उवाच ॥ सत्यव्रतद्विजस्तोत्रं श्रुत्वा दामो-  
दरो हरिः । विद्युल्लीलाचमत्कारो हृदये शनकैरभूत् ॥ १२ ॥ इति  
श्रीसत्यव्रतकृतदामोदरस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ३४७. श्रीकृष्णशरणाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ सर्वसाधनहीनस्य पराधीनस्य सर्वतः । पाप-  
पीनस्य दीनस्य श्रीकृष्णः शरणं मम ॥ १ ॥ संसारसुखसंप्राप्ति-  
सन्मुखस्य विशेषतः । बहिर्मुखस्य सततं श्रीकृष्णः शरणं मम  
॥ २ ॥ सदा विषयकामस्य देहारामस्य सर्वथा । दुष्टस्वभाववामस्य  
श्रीकृष्णः शरणं मम ॥ ३ ॥ संसारसर्पदृष्टस्य धर्मभ्रष्टस्य दुर्मतेः ।  
लौकिकप्राप्तिकष्टस्य श्रीकृष्णः शरणं मम ॥ ४ ॥ विस्मृतस्वीय-  
धर्मस्य कर्ममोहितचेतसः । स्वरूपज्ञानशून्यस्य श्रीकृष्णः शरणं  
मम ॥ ५ ॥ संसारसिन्धुमग्नस्य भग्नभावस्य दुष्कृतेः । दुर्भावलग्न-  
मनसः श्रीकृष्णः शरणं मम ॥ ६ ॥ विवेकधैर्यभक्त्यादिरहितस्य  
निरन्तरम् । विरुद्धकरणासक्तेः श्रीकृष्णः शरणं मम ॥ ७ ॥  
एतदृष्टकपाठेन ह्येतदुक्तार्थभावनात् । निजाचार्यपदांभोजसेवकोऽ-  
दैन्यमाप्नुयात् ॥ ८ ॥ इति श्रीकृष्णशरणाष्टकं संपूर्णम् ॥

## पांडुरंगस्तोत्राणि ।



समचरणसरोजं सांद्रनीलांबुदाभं  
जघननिहितपाणिं मंडनं मंडनानाम् ।  
तरुणतुलसिमालाकंधरं कंजनेत्रं  
सदयधवलहासं विट्ठलं चिंतयामि ॥

## अथ पांडुरंगस्तोत्राणि ।

३४८. विट्टलहृदयस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशायः नमः ॥ श्रीपार्वत्युवाच ॥ महाशम्भो देवदेव  
भक्तानुग्रहकारक । श्रीविट्टलाख्यं हृदयं तन्मे ब्रूहि सदाशिव  
॥ १ ॥ श्रीशंकर उवाच ॥ शृणु देवि महादेवि पार्वति प्राण-  
वल्लभे । गुह्याद्गुह्यतरं श्रेष्ठं नास्ति गुह्यमतः परम् ॥ २ ॥ जीवस्य  
जीवनं साक्षात्प्राणिनां प्राण उच्यते । योगिनां हि महागम्यं पाण्डु-  
रङ्गाभिधानकम् ॥ ३ ॥ अद्यापि महिमा तस्य सर्वथा ज्ञायते न  
हि । नित्यनूतनतत्क्षत्रस्योपमा नास्ति निश्चितम् ॥ ४ ॥ मुखं  
कञ्जेन तुलितं पद्मपत्रसमेक्षणम् । कथं साम्यं भवेद्देवि ह्यन्तरं  
महदन्तरम् ॥ ५ ॥ गजैरावतयोश्चैव अश्वोच्चैःश्रवसोस्तथा । स्पर्श-  
पाषाणयोश्चैव ह्यन्तरं महदन्तरम् ॥ ६ ॥ काश्याः शतगुणं श्रेष्ठं  
द्वारवत्याद्विलक्षयोः । एवं सर्वाणि तीर्थानि कलां नार्हन्ति कानि-  
चित् ॥ ७ ॥ तीर्थं क्षेत्रं दैवतं च मन्त्रः स्तोत्रं महाद्भुतम् । एतत्सर्वं  
यथाशक्त्या वर्णयामि मम प्रिये ॥ ८ ॥ एकदा क्षीरसंस्थाने देव-  
देवं जगद्गुरुम् । गतोऽहं पादपूजार्थं सुरेन्द्रब्राह्मणैः सह ॥ ९ ॥  
शेषनारदपक्षीन्द्रैर्लक्ष्मीकान्तं गणैः सह । प्रणम्य परमात्मानं तमु-  
वाच चतुर्मुखः ॥ १० ॥ ब्रह्मोवाच ॥ महाविष्णो जगन्नाथ सर्व-  
विश्वगुहाशय । तव यच्च प्रियं देव संस्थानं ब्रूहि केशव ॥ ११ ॥  
श्रीभगवानुवाच ॥ शृणु ब्रह्मन् महाशंभो अधिष्ठानं ममालयम् ।  
पाण्डुरङ्गमिति ख्यातं न साम्यं भुवनत्रये ॥ १२ ॥ पाण्डुरङ्गं च  
वैकुण्ठं तुलयित्वा मयाऽधुना । पाण्डुरङ्गं गुरुं मत्वा पूर्णत्वेना-  
स्थितोऽस्म्यहम् ॥ १३ ॥ नाहं तिष्ठामि क्षीराब्धौ नास्मि सूर्यैर्दु-

मण्डले । मन्नामकीर्तनस्थाने तत्र तिष्ठामि शंकर ॥ १४ ॥ कार्य-  
कारणकर्तृत्वे संभवक्षेत्रमुच्यते । तादृशं नास्ति तत्क्षेत्रं यत्र तिष्ठामि  
सर्वदा ॥ १५ ॥ सुखे संजयति ब्रह्म ब्रह्मबीजं प्रशस्यते । बीजेन  
व्यज्यते बिन्दुर्बिन्दोर्नादः प्रकीर्तितः ॥ १६ ॥ आहतोऽनाहतश्चेति  
द्विधा नादस्तु विद्यते । ॐकारोऽनाहतो मूर्तिराहतो नामकीर्तनम्  
॥ १७ ॥ बिन्दुनादात्मकं क्षेत्रं नादोऽव्यक्तः प्रदृश्यते । यत्र संकी-  
र्तनेनैव साक्षाद्ब्रह्ममयो भवेत् ॥ १८ ॥ कीदृशं धृतवान् रूपमि-  
त्याह परमेश्वरः । इष्टिकायां समपदं तत्त्वमस्यादिलक्षणम् ॥ १९ ॥  
कटिविन्यस्तहस्ताब्जं प्रणवाकृतिसौरसम् । ऊर्ध्वबीजसमाख्यातं  
पूर्णेन्दुमुखमण्डनम् ॥ २० ॥ सर्वभूषणशोभाढ्यमीदृशं मोक्षदं  
नृणाम् । अज्ञानजनबोधार्थं तिष्ठामीह जनार्दनः ॥ २१ ॥ विठ्ठलः  
परमो देवस्त्रयीरूपेण तिष्ठति । तीर्थं क्षेत्रं तथा देवो ब्रह्म ब्रह्मविदां  
वर ॥ २२ ॥ गुह्याद्गुह्यतरं देवं क्षेत्राणां क्षेत्रमुत्तमम् । चन्द्र-  
भागावरं तीर्थं न भूतं न भविष्यति ॥ २३ ॥ इति श्रुत्वा रमेशस्य  
वचनं परमामृतम् । ब्रह्मा नारदसंयुक्तो हृदयं कीर्तयन् ययौ  
॥ २४ ॥ इदं विठ्ठलहृदयं सर्वदारिद्र्यनाशनम् । सकृत्पठनमात्रेण  
लभते परमं पदम् ॥ २५ ॥ ॐमस्य हृदयमन्नस्य परब्रह्म  
ऋषिः स्मृतः । छन्दोऽनुष्टुप् प्रविख्यातो देवः श्रीविठ्ठलो महः  
॥ २६ ॥ ॐ नमो बीजमाख्यातं श्रीं पातु शक्तिरीडिता । ॐ श्रीं  
कुं कीलकं यस्य वेधको देवविठ्ठलः ॥ २७ ॥ त्रिबीजैरङ्गुलिन्यासः  
षडंगानि ततः परम् । ध्यानादिकं महादिग्यं हृदयं हृदये स्मरेत्  
॥ २८ ॥ ॐ अस्य श्रीविठ्ठलहृदयस्तोत्रमंत्रस्य परब्रह्म ऋषिः ।  
अनुष्टुप् छंदः । श्रीविठ्ठलः परमात्मा देवता । ॐ नम इति बीजम् ।  
ॐ श्रीं शक्तिः । ॐ श्रीं कुं कीलकम् । ॐ श्रीं विठ्ठलो वेधकः ।

श्रीविठ्ठलप्रीत्यर्थं जपे विनियोगः । ॐ श्रीं क्लीं अंगुल्यादिषडंग-  
न्यासः ॥ अथ ध्यानम् ॥ ॐ श्रीं क्लीं प्रहसितमुखचंद्रं प्रोल्लसत्पूर्ण-  
बिंबं प्रणमदभयहस्तं चारुनीलांबुदाभम् । समपदकमनीयं तत्त्व-  
बोधावगम्यं सदयवरददेवं विठ्ठलं तं नमामि ॥ २९ ॥ क्लीं श्रीं  
ॐ ॐ श्रीं क्लीम् ॥ पांडुरंगः शिखां पातु मूर्धानं पातु विठ्ठलः ।  
मस्तकं माधवः पातु तिलकं पातु श्रीकरः ॥ ३० ॥ भर्गः पातु  
भ्रुवोर्मध्ये लोचने विष्णुरोजसा । दृष्टिं सुदर्शनः पातु श्रोत्रे पातु  
दिगंबरः ॥ ३१ ॥ नासाग्रं सृष्टिसौंदर्यं ओष्ठौ पातु सुधार्णवः ।  
दन्तान् दयानिधिः पातु जिह्वां मे वेदवल्लभः ॥ ३२ ॥ तालुदेशं  
हरिः पातु रसनां गोरसप्रियः । त्रिबुक्तं चिन्मयः पातु ग्रीवां मे  
गरुडध्वजः ॥ ३३ ॥ कंठं तु कंबुकंठश्च स्कंधौ पातु महाबलः ।  
भुजौ गिरिधरः पातु बाहू मे मधुसूदनः ॥ ३४ ॥ कूर्परौ कृपया-  
विष्टः करौ मे कमलापतिः । अंगुलीरच्युतः पातु नखानि नर-  
केसरी ॥ ३५ ॥ वक्षः श्रीलाञ्छनः पातु स्तनौ मे स्तनलालसः ।  
हृदयं श्रीहृषीकेश उदरं परमामृतः ॥ ३६ ॥ नाभिं मे पद्मनाभश्च  
कुक्षिं ब्रह्मांडनायकः । कटिं पातु कटिकरो जघनं तु जनार्दनः  
॥ ३७ ॥ शिश्नं पातु स्मराधीशो वृषणे वृषभः पतिः । गुह्यं गुह्यतरः  
पातु ऊरू पातूरुविक्रमः ॥ ३८ ॥ जानू पातु जगन्नाथो जंघे मे  
मनमोहनः । गुल्फौ पातु गणाधीशः पादौ पातु त्रिविक्रमः ॥ ३९ ॥  
शरीरं चाखिलं पातु नरनारायणो हरिः । अग्रे ह्यग्रतरः पातु  
दक्षिणे दक्षकप्रियः ॥ ४० ॥ पृष्ठे पुष्टिकरः पातु वामे मे वासव-  
प्रभुः । पूर्वे पूर्वापरः पातु आग्नेय्यां चाग्निरक्षकः ॥ ४१ ॥ दक्षिणे  
दीक्षितार्थश्च नैर्ऋत्यामृतुनायकः । पश्चिमे वरुणाधीशो वायव्ये  
वातजापतिः ॥ ४२ ॥ उत्तरे धृतखड्गश्च ईशान्ये पातु ईश्वरः ।



उपरिष्टान्तु भगवानंतरिक्षे चिदंबरः ॥ ४३ ॥ भूतले धरणीनाथः  
 पाताले कूर्मनायकः । स्वर्गे पातु सुरेन्द्रेन्द्रो ब्रह्मांडे ब्रह्मणस्पतिः  
 ॥ ४४ ॥ अटव्यां नृहरिः पातु जीवने विश्वजीवनः । मार्गे पातु  
 मनोगम्यः स्थाने पातु स्थिरासनः ॥ ४५ ॥ सबाह्याभ्यन्तरं पातु  
 पुंडरीकवरप्रियः । विष्णुर्मे विषयान् पातु वासनाः पातु वामनः  
 ॥ ४६ ॥ कर्ता कर्मेन्द्रियं पातु ज्ञाता ज्ञानेन्द्रियं सदा । प्राणान् पातु  
 प्राणनाथ आत्मारामो मनादिषु ॥ ४७ ॥ जाग्रतिं मे जगद्ब्रह्म स्वप्नं  
 पातु सुतेजकः । सुषुप्तिं मे समाधीशस्तुर्या पातु मुनिप्रियः  
 ॥ ४८ ॥ भार्या पातु रमाकांतः पुत्रान् पातु प्रजानिधिः । कन्या मे  
 करुणानाथो बान्धवान् भक्तवत्सलः ॥ ४९ ॥ धनं पातु धनाध्यक्षो  
 धान्यं विश्वकुटुम्बकः । पशून्मे पालकः पातु विद्यां पातु कला-  
 निधिः ॥ ५० ॥ वाचस्पतिः पातु वादे सभायां विश्वमोहनः ।  
 कामक्रोधोद्भवात्पातु पूर्णकामो मनोरमः ॥ ५१ ॥ वस्त्रं रत्नं भूषणं  
 च नाम रूपं कुलं गृहम् । सर्वं सर्वात्मकः पातु शुद्धब्रह्मपरात्परः  
 ॥ ५२ ॥ क्लीं श्रीं ॐ ॐ श्रीं क्लीम् । विठ्ठलं मूर्ध्नि विन्यस्य ललाटे  
 श्रीकरं न्यसेत् । पाण्डुरङ्गं भ्रुवोर्मध्ये नेत्रयोर्व्यापकं न्यसेत्  
 ॥ ५३ ॥ कर्णयोर्निगमार्थं च गल्लयोर्वल्लभं न्यसेत् । नासिकायां  
 न्यसेत्कृष्णं मुखे वै माधवं न्यसेत् ॥ ५४ ॥ ओष्ठयोर्मुंरलीकान्तं  
 दन्तपङ्क्त्यां सुहासकम् । रसनायां रसाधीशं जिह्वाग्रे कीर्तनं  
 न्यसेत् ॥ ५५ ॥ कण्ठे न्यसेन्महाविष्णुं स्कन्धयोः कमलापतिम् ।  
 बाह्वोर्बलानुजं न्यस्य करे चक्रधरं न्यसेत् ॥ ५६ ॥ पाणितले  
 पद्मधरं कराग्रे वरदाभयम् । वक्षःस्थले वरेण्यं च हृदये श्रीहरिं  
 न्यसेत् ॥ ५७ ॥ उदरे विश्वभर्तारं नाभौ नाभिकरं न्यसेत् ।  
 कक्ष्यां न्यसेत्क्रियातीतमूरौ तु उद्धवप्रियम् ॥ ५८ ॥ जानुद्वये

न्यसेच्छक्तिं पादयोः पावनं न्यसेत् । सबाह्याभ्यन्तरं न्यस्य देवदेवं  
 जगद्गुरुम् ॥५९॥ क्लीं श्रीम् ॐ ॐ श्रीं क्लीम् । विठ्ठलाय नमस्तुभ्यं  
 नमो विज्ञानहेतवे । विष्णुजिष्णुस्वरूपाय श्रीविष्णवे नमो नमः  
 ॥ ६० ॥ नमः पुण्डरीकाक्षाय पूर्णबिम्बात्मने नमः । नमस्ते  
 पाण्डुरङ्गाय पावनाय नमो नमः ॥ ६१ ॥ नमः पूर्णप्रकाशाय  
 नमस्ते पूर्णतेजसे । पूर्णेश्वर्यस्वरूपाय पूर्णज्ञानात्मने नमः ॥ ६२ ॥  
 सच्चिदानन्दकन्दाय नमोऽनन्तसुखात्मने । नमोऽनन्ताय शान्ताय  
 श्रीरामाय नमो नमः ॥ ६३ ॥ नमो ज्योतिःस्वरूपाय नमो  
 ज्योतिर्मयात्मने । नमो ज्योतिःप्रकाशाय सर्वोत्कृष्टात्मने नमः  
 ॥ ६४ ॥ ॐ नमो ब्रह्मरूपाय नम ॐकारमूर्तये । निर्विकल्पाय  
 सत्याय शुद्धसत्त्वात्मने नमः ॥ ६५ ॥ महद्ब्रह्म नमस्तेऽस्तु सत्य-  
 संकल्पहेतवे । नमः सृष्टिप्रकाशाय गुणसाम्याय ते नमः ॥ ६६ ॥  
 ब्रह्मविष्णुमहेशाय नानावर्णात्मरूपिणे । सदोदिताय शुद्धाय गुणा-  
 तीताय ते नमः ॥ ६७ ॥ नमः सहस्रनाम्ने च नमः सहस्ररूपिणे ।  
 नमः सहस्रवक्त्राय सहस्राक्षाय ते नमः ॥ ६८ ॥ केशवाय नम-  
 स्तुभ्यं नमो नारायणाय च । माधवाय नमस्तेऽस्तु गोविन्दाय नमो  
 नमः ॥ ६९ ॥ श्रीविष्णवे नमस्तुभ्यं मधुसूदनरूपिणे । त्रिविक्रम-  
 सुदीर्घाय वामनाय नमो नमः ॥ ७० ॥ श्रीधराय नमस्तुभ्यं  
 हृषीकेशाय ते नमः । नमस्ते पद्मनाभाय दामोदराय ते नमः  
 ॥ ७१ ॥ नमस्ते संकर्षणाय वासुदेवाय ते नमः । प्रद्युम्नाय नम-  
 स्तेऽस्तु अनिरुद्धाय ते नमः ॥ ७२ ॥ नमः पुरुषोत्तमायाधोक्ष-  
 जाय ते नमो नमः । नमस्ते नारसिंहाय अच्युताय नमो नमः  
 ॥ ७३ ॥ नमो जनार्दनायास्तूपेन्द्राय च नमो नमः । श्रीहरये  
 नमस्तुभ्यं श्रीकृष्णाय नमो नमः ॥ ७४ ॥ नमः पंढरिनाथाय

भीमातीरनिवासिने । नमो ऋषिप्रसन्नाय वरदाय नमो नमः  
 ॥ ७५ ॥ इष्टिकारूढरूपाय समपादाय ते नमः । कटिविन्यस्त-  
 हस्ताय मुखब्रह्मात्मने नमः ॥ ७६ ॥ नमस्तीर्थस्वरूपाय  
 क्षेत्ररूपात्मने नमः । नमोऽस्तु मूर्तिमूर्ताय त्रिमूर्तये नमो नमः  
 ॥ ७७ ॥ नमस्ते बिन्दुतीर्थाय नमोऽमृतेश्वराय च । नमः पुष्कर-  
 तीर्थाय चंद्रभागाय ते नमः ॥ ७८ ॥ नमस्ते जानुदेवाय धीरावत्यै  
 नमो नमः । नमस्ते पुंडरीकाय भीमरथ्यै नमो नमः ॥ ७९ ॥  
 मुक्तिकेशप्रवराय वेणुवादात्मने नमः । नमस्तेऽनंतपादाय द्विपदाय  
 नमो नमः ॥ ८० ॥ नमो गोवत्सपादाय गोपालाय नमो नमः ।  
 नमस्ते पद्मतीर्थाय नरनारायणात्मने ॥ ८१ ॥ नमस्ते पितृतीर्थाय  
 लक्ष्मीतीर्थाय ते नमः । नमोऽस्तु शंखचक्राय गदापद्माय ते नमः  
 ॥ ८२ ॥ नमोऽश्वत्थनृसिंहाय कुंडलाख्यस्वरूपिणे । नमस्ते क्षेत्र-  
 पालाय महालिंगाय ते नमः ॥ ८३ ॥ नमस्ते रंगशालाय नमः  
 कीर्तनरूपिणे । नमो रुक्मिणिनाथाय महामूर्त्यै नमो नमः ॥ ८४ ॥  
 नमो वैकुण्ठनाथाय नमः क्षीराब्धिशायिने । सर्वब्रह्म नमस्तुभ्यमहं-  
 ब्रह्मात्मने नमः ॥ ८५ ॥ नमो नमो नमस्तुभ्यं नमस्तेऽस्तु नमो  
 नमः । क्लीं श्रीं ॐ । आद्यन्ते संपुटीकृत्य वीजैश्च प्राणवल्लभे  
 ॥ ८६ ॥ अष्टोत्तरशतं मंत्रान् हृदयं नमनैः सह । अनन्यैः कीर्तितं  
 यैश्च तेषामाज्ञां वहाम्यहम् ॥ ८७ ॥ यावान्यस्य यथा भावो  
 यन्नामन्यासपूर्वकम् । तावदेव हि विज्ञानं गदितं मदनुग्रहात्  
 ॥ ८८ ॥ श्रीशंकर उवाच ॥ इत्युक्तं वासुदेवोक्तं गोप्याद्गोप्यतरं  
 महत् । नित्यं संकीर्तनं यस्य प्राप्तमुक्तिर्न संशयः ॥ ८९ ॥ इदं  
 गुह्यं हि हृदयं विठ्ठलस्य महाद्भुतम् । शृणुयाच्छ्रद्धया युक्तो वैकुण्ठे  
 लभते रतिम् ॥ ९० ॥ एवमुक्त्वा महादेवः पार्वतीमनुकंपया । समा-

धिस्थोऽभवच्छंभुः सुस्मितः कमलाननः ॥ ९१ ॥ इति श्रीभवि-  
ष्योत्तरपुराणे पांडुरंगमाहात्म्ये श्रीविठ्ठलहृदयस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ३४९. विठ्ठलकवचम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ सूत उवाच ॥ शिरो मे विठ्ठलः पातु कपोलं  
मुद्गरप्रियः । नेत्रयोर्विष्णुरूपी च वैकुण्ठो घ्राणमेव च ॥ १ ॥  
मुनिसेव्यो मुखं पातु दन्तपङ्क्तिं सुरेश्वरः । विद्याधीशस्तु मे जिह्वां  
कण्ठं विश्वेशवन्दितः ॥ २ ॥ व्यापको हृदयं पातु स्कन्धौ पातु  
सुखप्रदः । भुजौ मे नृहरिः पातु करौ च सुरनायकः ॥ ३ ॥  
मध्यं पातु सुराधीशो नाभिं पातु सुरालयः । सुरवन्द्यः कटी पातु  
जानुनी कमलासनः ॥ ४ ॥ जङ्घे पातु हृषीकेशः पादौ पातु  
त्रिविक्रमः । निखिलं च शरीरं मे पातां गोविन्दमाधवौ ॥ ५ ॥  
अकारो व्यापको विष्णुरक्षरात्मक एव च । पावकः सर्वपापाना-  
मकाराय नमो नमः ॥ ६ ॥ तारकः सर्वभूतानां धर्मशास्त्रेषु  
गीयते । पुनातु विश्वभुवनं तोंकाराय नमो नमः ॥ ७ ॥ मूल-  
प्रकृतिरूपा या महामाया च वैष्णवी । तस्या बीजेन संयुक्तयकाराय  
नमो नमः ॥ ८ ॥ वैकुण्ठाधिपतिः साक्षाद्वैकुण्ठपददायकः ।  
वैजयन्तीसमायुक्तो विकाराय नमो नमः ॥ ९ ॥ स्नातः सर्वेषु  
तीर्थेषु पूतो यज्ञादिकर्मसु । पावनो द्विजपङ्कीनां ठकाराय नमो  
नमः ॥ १० ॥ वाहनं गरुडो यस्य भुजङ्गः शयनं तथा । वामभागे  
च लक्ष्मीश्च लकाराय नमो नमः ॥ ११ ॥ नारदादिसमायुक्तं  
वैष्णवं परमं पदम् । लभते मानवो नित्यं वैष्णवं धर्ममाश्रितः  
॥ १२ ॥ व्याधयो विलयं यान्ति पूर्वकर्मसमुद्भवाः । भूतानि च  
पलायन्ते मन्त्रोपासकदर्शनात् ॥ १३ ॥ इदं षडक्षरस्तोत्रं यो  
जपेच्छुद्ध्यान्वितः । विष्णोः सायुज्यमाप्नोति सत्यं सत्यं न संशयः  
॥ १४ ॥ इति श्रीपद्मपुराणे सूतशौनकसंवादे श्रीविठ्ठलकवचं संपूर्णम् ॥

३५०. श्रीविठ्ठलाष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रुत्वा नामसहस्रं श्रीविठ्ठलस्य गुणान्वितम् ।  
 पार्वती परिपप्रच्छ शंकरं लोकशंकरम् ॥ १ ॥ श्रीपार्वत्युवाच ॥  
 देवदेव महादेव देवानुग्रहविग्रह । अष्टोत्तरशतं नाम्नां तस्य देवस्य  
 मे वद ॥ २ ॥ जनः कलिमलादिग्धोऽलसः कामाविलो जडः ।  
 पाठाद्यस्य सकृद्वापि सौशील्यादियुतो भवेत् ॥ ३ ॥ तदहं श्रोतुमि-  
 च्छामि तवाज्ञानं न विद्यते ॥ सूत उवाच ॥ इत्युक्तो भार्यया  
 शंभुः संस्मरन् पुरुषोत्तमम् ॥ ४ ॥ कटिस्थितकरद्वन्द्वं जगाद  
 नगपुत्रिकाम् ॥ श्रीशंकर उवाच ॥ देवि लोकोपकाराय कृतः  
 प्रश्नस्त्वयानघे ॥ ५ ॥ हिताय सर्वजन्तूनां नाम्नामष्टोत्तरं शतम् ।  
 श्रीविठ्ठलस्य देवस्य वाग्मिसिद्धिप्रदं नृणाम् ॥ ६ ॥ अष्टोत्तरशत-  
 स्याहमृषिः प्रोक्तो मनीषिभिः । छन्दोऽनुष्टुब् देवता श्रीविठ्ठलः  
 परिकीर्तितः ॥ ७ ॥ ध्यानम् ॥ ध्यायेच्छ्रीविठ्ठलाख्यं सम-  
 पदकमलं पद्मपत्रायताक्षं गम्भीरस्निग्धहासं कटिनिहितकरं नील-  
 मेघावभासम् । विद्युद्वासो वसानं मणिमयमुकुटं कुण्डलोद्भासि-  
 गण्डं मायूरस्रग्विभूषाभयवरसहितं कौस्तुभोद्भासिताङ्गम् ॥ ८ ॥  
 ॐ ह्रीम् । विठ्ठलः पुण्डरीकाक्षः पुण्डरीकनिभेक्षणः । पुण्डरीका-  
 श्रमपदः पुण्डरीकजलाद्भुतः ॥ ९ ॥ पुण्डरीकक्षेत्रवासः पुण्डरीक-  
 वरप्रदः । शारदाधिष्ठितद्वारः शारदेन्दुनिभाननः ॥ १० ॥ नारदा-  
 धिष्ठितद्वारो नारदेशप्रपूजितः । भुवनाधीश्वरीद्वारो भुवनाधीश्वरी-  
 श्वरः ॥ ११ ॥ दुर्गाश्रितोत्तरद्वारो दुर्गमागमसंवृतः । क्षुल्लपेशी-  
 पिनद्धोरुगोपेष्ट्याश्लिष्टजानुकः ॥ १२ ॥ कटिस्थितकरद्वन्द्वो वरदा-  
 भयमुद्रितः । त्रेतातोरणपालस्थत्रिविक्रम इतीरितः ॥ १३ ॥ तितऊ-  
 क्षेत्रपोऽश्वत्थकोटीश्वरवरप्रदः । स एव करवीरस्थो नारीनाराय-

णीति च ॥ १४ ॥ नीरासंगमसंस्थश्च सैकतः प्रतिमार्चितः । वेणु-  
 नादेन देवानां मनःश्रवणमङ्गलः ॥ १५ ॥ देवकन्याकोटिकोटिनीरा-  
 जितपदाम्बुजः । पद्मतीर्थस्थिताश्चत्थो नरो नारायणो महान्  
 ॥ १६ ॥ चन्द्रभागासरोनीरकेलिलोलदिगम्बरः । ससध्रीचीत्सवी-  
 षूचीरितिश्रुत्यर्थरूपघृक् ॥ १७ ॥ ज्योतिर्मयक्षेत्रवासी सर्वोत्कृष्ट-  
 त्रयात्मकः । स्वकुण्डलप्रतिष्ठाता पञ्चायुधजलप्रियः ॥ १८ ॥ क्षेत्र-  
 पालाग्रपूजार्थी पार्वतीपतिपूजितः । चतुर्मुखस्तुतो विष्णुर्जगन्मोहन-  
 रूपघृक् ॥ १९ ॥ मन्नाक्षरावलीहृत्स्थकौस्तुभोरःस्थलप्रियः  
 स्वमन्त्रोज्जीवितजनः सर्वकीर्तनवल्लभः ॥ २० ॥ वासुदेवो दया-  
 सिन्धुर्गौगोपीपरिवारितः । युधिष्ठिरहतारातिर्मुक्तकेशी वरप्रदः  
 ॥ २१ ॥ बलदेवोपदेष्टा च रुक्मिणीपुत्रनायकः । गुरुपुत्रप्रदो  
 नित्यमहिमा भक्तवत्सलः ॥ २२ ॥ भक्तारिहा महादेवो भक्ता-  
 भिलषितप्रदः । सव्यसाची ब्रह्मविद्यागुरुर्मोहापकारकः ॥ २३ ॥  
 भीमामार्गप्रदाता च भीमसेनमतानुगः । गन्धर्वानुग्रहकरो ह्यप-  
 राधसहो हरिः ॥ २४ ॥ स्वप्नदर्शी स्वप्नदृश्यो भक्तदुःस्वप्नशान्ति-  
 कृत् । आपत्कालानुपेक्षी चानपेक्षोऽपेक्षितो जनैः ॥ २५ ॥ सत्यो-  
 पयाचनः सत्यसंधः सत्याभितारकः । सत्याजानी रमाजानी राधा-  
 जानी रथाङ्गभाक् ॥ २६ ॥ सिञ्चनः क्रीडनो गोपैर्दधिदुग्धापहा-  
 रकः । बोधिन्त्युत्सवयुक् तीर्थः शयन्युत्सवभूमिभाक् ॥ २७ ॥  
 मार्गशीर्षोत्सवाक्रान्तवेणुनादपदाङ्गभूः । दध्यन्नव्यञ्जनाभोक्ता  
 दधिभुक्कामपूरकः ॥ २८ ॥ विलान्तर्धानसत्केलिलोलुपो गोप-  
 वल्लभः । सखिनेत्रे पिधायाशु कोऽहंपृच्छाविशारदः ॥ २९ ॥ समा-  
 समप्रश्नपूर्वमुष्टिमुष्टिप्रदर्शिकः । कुटिलीलासु कुशलः कुटिलालक-  
 मण्डितः ॥ ३० ॥ सारीलीलानुसारी च वाहक्रीडापरः सदा । कार्णा-

टकीरतिरतो मङ्गलोपवनस्थितः ॥ ३१ ॥ माध्याह्नतीर्थपुरेक्षावि-  
स्मायितजगन्नयः । निवारितक्षेत्रविघ्नो दुष्टदुर्बुद्धिभञ्जनः ॥ ३२ ॥  
वालुकावृक्षपाषाणपशुपक्षिप्रतिष्ठितः । आशुतोषो भक्तवशः पांडु-  
रङ्गः सुपावनः ॥ ३३ ॥ पुण्यकीर्तिः परं ब्रह्म ब्रह्मण्यः कृष्ण एव  
च । अष्टोत्तरशतं नाम्नां विट्ठलस्य महात्मनः ॥ ३४ ॥ इति ते  
कथितं देवि पवित्रं मङ्गलं महत् । त्रिकालमेककालं वा यः  
पठेन्नियतः शुचिः ॥ ३५ ॥ करस्थाः सिद्धयस्तस्य सत्यं सत्यं  
वदाम्यहम् । अपुत्रो बहुपुत्रः स्यादविद्यः सर्वविद्यते ॥ ३६ ॥  
निर्धनो धनदो नूनं भवेदस्य निषेवणात् । अविनाभूतभार्यश्च  
जितारातिर्निरामयः ॥ ३७ ॥ बहुनोक्तेन किं देवि हरिवल्लभता-  
मियात् ॥ सूत उवाच ॥ श्रुत्वा तन्महदाश्चर्यमष्टोत्तरशतं परम्  
॥ ३८ ॥ पुनःपुनः प्रणम्येशं पार्वती वाक्यमब्रवीत् ॥ पार्वत्यु-  
वाच ॥ तत्क्षेत्रवसतिश्चैव तत्तीर्थस्यावगाहनम् ॥ ३९ ॥ तन्मूर्ति-  
दर्शनं चैव तन्नामावलिकीर्तनम् । देहि मे सर्वदा स्वामिन्नेकाग्र-  
मनसा विभो ॥ ४० ॥ श्रीशंकर उवाच ॥ तदस्तु तव देवेशि  
ममाप्येतन्मनीषितम् । इत्युक्त्वा प्रययौ तस्य निवासं परमा-  
दरात् ॥ ४१ ॥ इति श्रीपद्मपुराणे पञ्चोनषष्टिसाहस्र्यां संहितायां  
हररहस्ये उमामहेश्वरसंवादे विट्ठलनामाष्टोत्तरशतं संपूर्णम् ॥

### ३५१. पांडुरंगाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ महायोगपीठे तटे भीमरथ्यां वरं पुंडरीकाय  
दातुं मुनीन्द्रैः । समागत्य तिष्ठन्तमानन्दकंदं परब्रह्मलिंगं भजे पांडु-  
रंगम् ॥ १ ॥ तडिद्वाससं नीलमेघावभासं रमामंदिरं सुंदरं चित्प्र-  
काशम् । वरं त्विष्टिकायां समन्यस्तपादं परब्रह्मलिंगं भजे पांडु-  
रंगम् ॥ २ ॥ प्रमाणं भवाब्धेरिदं मामकानां नितंबः कराभ्यां धृतो

येन तस्मात् । विधातुर्वसत्यै धृतो नाभिकोशः परब्रह्मलिङ्गं भजे  
पांडुरंगम् ॥ ३ ॥ स्फुरत्कौस्तुभालंकृतं कंठदेशे श्रिया जुष्टकेयूरकं  
श्रीनिवासम् । शिवं शांतमीड्यं वरं लोकपालं परब्रह्मरूपं भजे  
पांडुरंगम् ॥ ४ ॥ शरच्चंद्रबिंबाननं चारुहासं लसत्कुंडलाक्रांत-  
गंडस्थलांगम् । जपारागबिंबाधरं कंजनेत्रं परब्रह्मलिङ्गं भजे पांडु-  
रंगम् ॥ ५ ॥ किरीटोज्ज्वलत्सर्वदिक्प्रांतभागं सुरैरर्चितं दिव्यरत्नैर-  
नर्घ्यैः । त्रिभंगाकृतिं बर्हमाल्यावतंसं परब्रह्मलिङ्गं भजे पांडुरंगम्  
॥ ६ ॥ विभुं वेणुनादं चरंतं दुरंतं स्वयं लीलया गोपवेषं दधान-  
नम् । गवां वृंदकानंददं चारुहासं परब्रह्मलिङ्गं भजे पांडुरंगम्  
॥ ७ ॥ अजं रुक्मिणीप्राणसंजीवनं तं परं धाम कैवल्यमेकं तुरी-  
यम् । प्रसन्नं प्रसन्नार्तिहं देवदेवं परब्रह्मलिङ्गं भजे पांडुरंगम् ॥ ८ ॥  
स्तवं पांडुरंगस्य वै पुण्यदं ये पठत्येकचित्तेन भक्त्या च नित्यम् ।  
भवांभोनिधिं तेऽपि तीर्त्वाऽन्तकाले हरेरालयं शाश्वतं प्राप्नुवन्ति  
॥ ९ ॥ इति श्रीमच्छंकराचार्यविरचितं पांडुरंगाष्टकं संपूर्णम् ॥

### ३५२. श्रीहयग्रीवाष्टोत्तरशतनामस्तोत्रम् ॥

श्रीगणेशाय नमः ॥ शृण्वन्तु ऋषयः सर्वे हयास्याष्टोत्तरं शतम् ॥  
हयग्रीवो महाविष्णुः केशवो मधुसूदनः । गोविंदः पुंडरीकाक्षो  
विष्णुर्विश्वंभरो हरिः ॥ १ ॥ आदित्यः सर्ववागीशः सर्वाधारः सना-  
तनः । निराधारो निराकारो निरीशो निरुपद्रवः ॥ २ ॥ निरंजनो  
निष्कलंको नित्यनृसो निरामयः । चिदानंदमयः साक्षी शरण्यः सर्व-  
दायकः ॥ ३ ॥ श्रीमाल्लोकत्रयाधीशः शिवः सारस्वतप्रदः । वेदो-  
द्धर्ता वेदनिधिर्बदवेद्यः प्रभूतनः ॥ ४ ॥ पूर्णः पूरयिता पुण्यः पुण्य-  
कीर्तिः परात्परः । परमात्मा परंज्योतिः परेशः पारंगः परः ॥ ५ ॥



सर्ववेदात्मको विद्वान् वेदवेदांतपारगः । सकलोपनिषद्वेद्यो  
निष्कलः सर्वशास्त्रकृत् ॥ ६ ॥ अक्षमालाज्ञानमुद्रायुक्तहस्तो वर-  
प्रदः । पुराणः पुरुषश्रेष्ठः शरण्यः परमेश्वरः ॥ ७ ॥ शांतो दांतो  
जितक्रोधो जितामित्रो जगन्मयः । जन्ममृत्युहरो जीवो जयदो  
जाड्यनाशनः ॥ ८ ॥ जपप्रियो जपस्तुत्यो जापकप्रियकृत्प्रभुः ।  
विमलो विश्वरूपश्च विश्वगोप्ता विधिस्तुतः ॥ ९ ॥ विधींद्रशिव-  
संस्तुत्यः शांतिदः क्षांतिपारगः । श्रेयःप्रदः श्रुतिमयः श्रेयसां पतिरी-  
श्वरः ॥ १० ॥ अच्युतोऽनंतरूपश्च प्राणदः पृथिवीपतिः । अव्यक्तो  
व्यक्तरूपश्च सर्वसाक्षी तमोहरः ॥ ११ ॥ अज्ञाननाशको ज्ञानी  
पूर्णचंद्रसमप्रभः । ज्ञानदो वाक्पतिर्यौगी योगीशः सर्वकामदः  
॥ १२ ॥ महायोगी महामौनी मौनीशः श्रेयसां पतिः । हंसः  
परमहंसश्च विश्वगोप्ता विराट् स्वराट् ॥ १३ ॥ शुद्धस्फटिकसंकाशो  
जटासंडलसंयुतः । आदिमध्यांतरहितः सर्ववागीश्वरेश्वरः ॥ १४ ॥  
नाम्नामष्टोत्तरशतं हयग्रीवस्य यः पठेत् । वेदवेदांगवेदांतशास्त्राणां  
पारगः कविः ॥ १५ ॥ वाचस्पतिसमो बुद्ध्या सर्वविद्याविशारदः ।  
महदैश्वर्यमासाद्य कलत्राणि च पुत्रकान् ॥ १६ ॥ अवाप्य सकलान्  
भोगानंते हरिपदं व्रजेत् ॥ इति पराशरपुराणे अगस्त्यनारदसंवादे  
हयग्रीवाष्टोत्तरशतनामस्तोत्रं संपूर्णम् ॥



# कल्किस्तोत्राणि ।

३५३. कल्किस्तवः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ राजान ऊचुः ॥ गद्यानि ॥ जय जय निज-  
मायया कल्पिताशेषविशेषकल्पनापरिणामजलाद्भुतलोकरयोपकार-  
माकलय्य मनुमनिशम्य पूरितमविजनाविजनाविभूतमहामीनशरीरं  
त्वं निजकृतधर्मसेतुसंरक्षणकृतावतारः ॥ १ ॥ पुनरिह जलधि-  
मथनादृतदेवदानवगणानां मंदराचलानयनव्याकुलितानां साहाय्ये-  
नादृतचित्तः पर्वतोद्धरणामृतप्राशनरचनावतारः कूर्माकारः प्रसीद  
परेश त्वं दीननृपाणाम् ॥ २ ॥ पुनरिह दितिजबलपरिलंघितवास-  
वसूदनादृत जितभुवनपराक्रमहिरण्याक्षनिधनपृथिव्युद्धरणसंकल्पा-  
भिनिवेशेन धृतकोलावतार पाहि नः ॥ ३ ॥ पुनरिह त्रिभुवन-  
जयिनो महाबलपराक्रमस्य हिरण्यकशिपोरर्दितानां देववराणां भय-  
भीतानां कल्याणाय दितिमुतवधप्रेप्सुर्ब्रह्मणो वरदानादवध्यस्य न  
शस्त्रास्त्रात्रिदिवास्वर्गमर्त्यपातालतले देवगंधर्बकिन्नरनरनागैरिति  
विचिंत्य नरहरिरूपेण नखाग्रभिन्नोऽहं दष्टदंतच्छदं त्यक्त्वासुं  
कृतवानसि ॥ ४ ॥ पुनरिह त्रिजगज्जयिनो बलेः सत्रे शक्रानुजो  
बटुवामनो दैत्यसंमोहनाय त्रिपदभूमियाज्जाच्छलेन विश्वकाय-  
स्तदुत्सृष्टजलसंस्पर्शविवृद्धमनोभिलाषस्त्वं भूतले बलेदौवारि-  
कत्वमंगीकृतमुचितं दानफलम् ॥ ५ ॥ पुनरिह हैहयादिनृपाणा-  
ममितबलपराक्रमाणां नानामदोर्लंघितमर्यादावर्मनां निधनाय  
भृगुवंशजो जामदग्न्यः पितृहोमधेनुहरणप्रवृद्धमन्युवशात् त्रिःस-  
प्तकृत्वो निःक्षत्रियां पृथिवीं कृतवानसि परशुरामावतारः ॥ ६ ॥  
पुनरिह पुलस्त्यवंशावतंसस्य विश्रवसः पुत्रस्य निशाचरस्य रावणस्य

लोकत्रयतापनस्य निधनमुररीकृत्य रविकुलजातदशरथात्मजो विश्वा-  
 मित्रादस्त्राण्युपलभ्य वने सीताहरणवशात्प्रवृद्धमन्युनाऽम्बुधिं वान-  
 रैर्निर्बध्य सगणं दशकंधरं हतवानसि रामावतारः ॥ ७ ॥ पुनरिह  
 यदुकुलजलधिकलानिधिः सकलसुरगणसेवितपादारविंद्वंद्वो विवि-  
 धदानवदैत्यदलनलोकत्रयदुरिततापनो वसुदेवात्मजो रामावतारो  
 बलभद्रस्त्वमसि ॥ ८ ॥ पुनरिह विधिकृतवेदधर्मानुष्ठानविहित-  
 नानादर्शनः सघृणः संसारकर्मत्यागविधिना ब्रह्माभासविलासचातुरीं  
 प्रकृतिविमाननामसंपादयन् बुद्धावतारस्त्वमसि ॥ ९ ॥ अधुना  
 कलिकुलनाशावतारो बौद्धपाखंडम्लेच्छादीनां च वेदधर्मसेतुपरि-  
 पालनाय कृतावतारः कल्किरूपेणास्मान् स्त्रीत्वनिरयादुद्धृतवानसि  
 तवानुकंपां किमिह कथयामः ॥ १० ॥ क्व ते ब्रह्मादीनामविजित-  
 विलासावतरं क्व नः कामावामाकुलितमृगतृष्णार्तमनसाम् । सुदु-  
 ष्राप्यं युष्मच्चरणजलजालोकनमिदं कृपापारावारः प्रमुदितदृशा-  
 श्वासय निजान् ॥ ११ ॥ इति श्रीकल्किपुराणेऽनुभागवते भविष्ये  
 द्वितीयांशे नृपकृतः कल्किस्तवः संपूर्णः ॥

### ३५४. कल्किस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ सुशांतोवाच ॥ जय हरेऽमराधीशसेवितं तव  
 पदांबुजं भूरिभूषणम् । कुरु ममाग्रतः साधु सत्कृतं त्यज महामते  
 मोहमात्मनः ॥ १ ॥ तव वपुर्जगद्रूपसंपदा विरचितं सतां मानसे  
 स्थितम् । रतिपतेर्मनोमोहदायकं कुरु विचेष्टितं कामलंपटम् ॥ २ ॥  
 तव यशो जगच्छोकनाशनं मृदुकथामृतं प्रीतिदायकम् । स्मित-  
 सुधोक्षितं चंद्रवन्मुखं तव करोत्यलं लोकमंगलम् ॥ ३ ॥ मम  
 पतिस्त्वयं सर्वदुर्जयो यदि तवाप्रियं कर्मणाचरेत् । जहि तदात्मनः

शत्रुमुद्यतं कुरु कृपां न चेदीदृगीश्वरः ॥ ४ ॥ महदहंयुतं पंच-  
मात्रया प्रकृतिजायया निर्मितं वपुः । तव निरीक्षणाल्लीलया जग-  
त्स्थितिलयोदकं ब्रह्मकल्पितम् ॥ ५ ॥ भूवियन्मरुद्धारितेजसां  
राशिभिः शरीरेंद्रियाश्रितैः । त्रिगुणया स्वया मायया विभो कुरु  
कृपां भवत्सेवनार्थिनाम् ॥ ६ ॥ तव गुणालयं नाम पावनं कलि-  
मलापहं कीर्तयन्ति ये । भवभयक्षयं तापतापिता मुहुरद्भो जनाः  
संसरन्ति नो ॥ ७ ॥ तव जनुः सतां मानवर्धनं जिनकुलक्षयं  
देवपालकम् । कृतयुगार्पकं धर्मपूरकं कलिकुलांतकं शं तनोतु मे  
॥ ८ ॥ मम गृहं पतिपुत्रनसृकं गजरथैर्ध्वजैश्चामरैर्धनैः । मणि-  
वरासनं सत्कृतिं विना तव पदाब्जयोः शोभयन्ति किम् ॥ ९ ॥  
तव जगद्गुणः सुंदरस्मितं मुखमनिदितं सुंदरारवम् । यदि न मे  
प्रियं वल्गुचेष्टितं परिकरोत्यहो मृत्युरस्त्विह ॥ १० ॥ हयचर  
भयहरकरहरशरणखरतरवरशर दशबलदमन । जय हतपरभर  
भववरनाशन शशधरशतसमरसभरमदन ॥ ११ ॥ इति श्रीकल्कि-  
पुराणे सुशांताकृतं कल्किस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ३५५. दशावतारस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ देवो नः शुभमातनोतु दशधा निर्वर्तयन्  
भूमिकां रङ्गे धामनि लब्धनिर्भररसैरध्यक्षितो भावुकैः । यद्भावेषु  
पृथग्विधेष्वनुगुणान्भावान्स्वयं बिभ्रती यद्भूमैरिह धर्मिणी विहरते  
नानाकृतिर्नायिका ॥ १ ॥ निर्मग्नः श्रुतिजालमार्गणदशादत्तक्षणैर्वी-  
क्षणैरन्तस्तन्वदिवारविन्दगहनान्यौदन्वतीनामपाम् । निष्प्रत्यूह-  
तरङ्गरिङ्गणमिथःप्रत्यूहपाथश्छटादोलारोहसदोहलं भगवतो मात्स्यं  
वपुः पातु नः ॥ २ ॥ अव्यासुर्भुवनत्रयीमनिभृतं कण्डूयनैरद्रिणा  
निद्राणस्य परस्य कूर्मवपुषो निःश्वासवातोर्मयः । यद्विक्षेपणसंस्कृतो-

दधिपयःप्रेङ्खोलपर्यङ्किकानित्यारोहणनिर्वृतो विहरते देवः सहैव  
 श्रिया ॥ ३ ॥ गोपायेदनिशं जगन्ति कुहनापोत्री पवित्रीकृत-  
 ब्रह्माण्डः प्रलयोर्मिषोषगुरुभिर्घोणारवैर्धुर्धुरैः । यदंष्ट्राङ्कुरकोटिगाढ-  
 घटनानिष्कम्पनित्यस्थितिर्ब्रह्मस्तम्बमसौदसौ भगवती मुक्तेव विश्वं-  
 भरा ॥ ४ ॥ प्रत्यादिष्टपुरातनप्रहरणग्रामः क्षणं पाणिजैरव्याघ्रीणि  
 जगन्त्यकुण्ठमहिमा वैकुण्ठकण्ठीरवः । यत्प्रादुर्भवनादवन्ध्यजठरा  
 यादृच्छिकाद्वेधसां या काचित्सहसा महासुरगृहस्थूणा पितामह्य-  
 भूत् ॥ ५ ॥ व्रीडाविद्धवदान्यदानवयशोनासीरघाटीभटस्रैयक्षं  
 मकुटं पुनन्नवतु नस्रैविक्रमो विक्रमः । यत्प्रस्तावसमुच्छ्रितध्वज-  
 पटीवृत्तान्तसिद्धान्तिभिः स्रोतोभिः सुरसिन्धुरष्टसु दिशासौधेषु  
 दोधूयते ॥ ६ ॥ क्रोधाग्निं जमदग्निपीडनभवं संतर्पयिष्यन्क्रमादक्ष-  
 त्रामपि संततक्षय इमां त्रिःसप्तकृत्वः क्षितिम् । दत्त्वा कर्मणि  
 दक्षिणां क्वचन तामास्कन्ध सिन्धुं वसन्नब्रह्मण्यमपाकरोतु भग-  
 वानाब्रह्मकीटं मुनिः ॥ ७ ॥ पारावारपयोविशोषणकलापारीण-  
 कालानलज्वालाजालविहारहारिविशिखव्यापारघोरक्रमः । सर्वा-  
 वस्थसकृत्प्रपन्नजनतासंरक्षणैकव्रती धर्मो विग्रहवानधर्मविरतिं धन्वी  
 स तन्वीत नः ॥ ८ ॥ फक्त्कौरवपट्टणप्रभृतयः प्रास्तप्रलम्बादय-  
 स्तालङ्कस्य तथाविधा विहृतयस्तन्वन्तु भद्राणि नः । क्षीरं शर्कर-  
 येव याभिरपृथग्भूताः प्रभूतैर्गुणैराकौमारकमस्वदन्त जगते कृष्णस्य  
 ताः केलयः ॥ ९ ॥ नाथायैव नमःपदं भवतु नश्चित्रैश्चरित्रक्रमै-  
 र्भूयोभिर्भुवनान्यमूनि कुहनागोपाय गोपायते । कालिंदीरसिकाय  
 कालियफणिस्फारस्फटावाटिकारङ्गोत्सङ्गविशङ्कचङ्कमधुरापार्यायच-  
 र्याय ते ॥ १० ॥ भाविन्या दशया भवन्निह भवध्वंसाय नः

कल्पतां कल्की विष्णुयशःसुतः कलिकथाकालुष्यकूलंकषः । निःशेष-  
 क्षतकण्टके क्षितितले धाराजलैवैर्ध्रुवं धर्मं कार्तियुगं प्ररोहयति  
 यन्निर्घ्निशधाराधरः ॥ ११ ॥ इच्छामीन विहारकच्छप महा-  
 पोत्रिन् यदृच्छाहरे रक्षावामन रोषराम करुणाकाकुत्स्थ हेलाहलिन् ।  
 क्रीडाबल्लव कल्कवाहन दशाकल्किन्निति प्रत्यहं जल्पन्तः पुरुषाः  
 पुनन्ति भुवनं पुण्यौघपण्यापणाः ॥ १२ ॥ विद्योदन्वति वेङ्कटेश्वर-  
 कवौ जातौ जगन्मङ्गलं देवेशस्य दशावतारविषयं स्तोत्रं विवक्षेत  
 यः । वक्त्रे तस्य सरस्वती बहुमुखी भक्तिः परा मानसे शुद्धिः  
 कापि तनौ दिशासु दशसु ख्यातिः शुभा जृम्भते ॥ १३ ॥ इति  
 श्रीवेङ्कटेशार्यविरचितं दशावतारस्तोत्रं संपूर्णम् ॥



काशीप्रांतविहारिणी विजयते गंगा मनोहारिणी ॥

शेषाहेरनुकारिणी हरशिरोवल्लीदलाकारिणी



शैलेंद्रादवतारिणी निजजले मज्जन्नोत्तारिणी

पारावतरिविहारिणीभवमयश्रेणीसमुत्सारिणी ।

## गंगादिनदीस्तोत्राणि ।

३५६. दशहरागंगास्तुतिः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ब्रह्मोवाच ॥ नमः शिवायै गंगायै शिवदायै  
नमोः नमः । नमस्ते रुद्ररूपिण्यै शांकर्यै ते नमो नमः ॥ १ ॥  
नमस्ते विश्वरूपिण्यै ब्रह्ममूर्त्यै नमो नमः । सर्वदेवस्वरूपिण्यै नमो  
भेषजमूर्तये ॥ २ ॥ सर्वस्य सर्वव्याधीनां भिषक्श्रेष्ठ्यै नमोऽस्तु  
ते । स्थाणुजंगमसंभूतविषहंश्र्यै नमो नमः ॥ ३ ॥ भोगोपभोग-  
दायिन्यै भोगवत्यै नमो नमः । मंदाकिन्यै नमस्तेऽस्तु स्वर्गदायै  
नमो नमः ॥ ४ ॥ नमस्त्रैलोक्यभूषायै जगद्धात्र्यै नमो नमः ।  
नमस्त्रिशुक्लसंस्थायै तेजोवत्यै नमो नमः ॥ ५ ॥ नंदायै लिंग-  
धारिण्यै नारायण्यै नमो नमः । नमस्ते विश्वमुख्यायै रेवत्यै ते नमो  
नमः ॥ ६ ॥ बृहत्यै ते नमस्तेऽस्तु लोकधात्र्यै नमो नमः । नमस्ते  
विश्वमित्रायै नंदिन्यै ते नमो नमः ॥ ७ ॥ पृथ्व्यै शिवामृतायै च  
सुवृषायै नमो नमः । शांतायै च वरिष्ठायै वरदायै नमो नमः  
॥ ८ ॥ उस्त्रायै सुखदोग्ध्यै च संजीविन्यै नमो नमः । ब्रह्मिष्ठायै  
ब्रह्मदायै दुरितघ्न्यै नमो नमः । प्रणतार्तिप्रभंजिन्यै जगन्मात्रे  
नमोऽस्तु ते ॥ ९ ॥ सर्वापत्प्रतिपक्षायै मंगलायै नमो नमः  
॥ १० ॥ शरणागतदीनार्तपरित्राणपरायणे । सर्वस्यातिहरे देवि  
नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ ११ ॥ निर्लेपायै दुर्गहंश्र्यै दक्षायै ते  
नमो नमः । परात्परतरे तुभ्यं नमस्ते मोक्षदे सदा ॥ १२ ॥ गंगे  
ममाग्रतो भूया गंगे मे देवि पृष्ठतः । गंगे मे पार्श्वयोरेहि त्वयि  
गंगेऽस्तु मे स्थितिः ॥ १३ ॥ आदौ त्वमंते मध्ये च सर्वं त्वं गां  
गते शिवे । त्वमेव मूलप्रकृतिस्त्वं हि नारायणः परः ॥ १४ ॥



गंगे त्वं परमात्मा च शिवस्तु नमः शिवे ॥ १५ ॥ य इदं यं  
 पठति स्तोत्रं भक्त्या नित्यं नरोऽपि यः । शृणुयाच्छ्रद्धया युक्तः  
 कायवाक्चित्तसंभवैः ॥ १६ ॥ दशधा संस्थितैर्दोषैः सर्वैरेव  
 प्रमुच्यते । सर्वान्कामानवाप्नोति प्रेत्य ब्रह्मणि लीयते ॥ १७ ॥  
 ज्येष्ठे मासि सिते पक्षे दशमी हस्तसंयुता । तस्यां दशम्यामेतच्च  
 स्तोत्रं गंगाजले स्थितः ॥ १८ ॥ यः पठेद्दशकृत्वस्तु दरिद्रो वापि  
 चाक्षमः । सोऽपि तत्फलमाप्नोति गंगां संपूज्य यत्नतः ॥ १९ ॥  
 भदत्तानामुपादानं हिंसा चैवाविधानतः । परदारोपसेवा च  
 कायिकं त्रिविधं स्मृतम् ॥ २० ॥ पारुष्यमनृतं चैव पैशुन्यं चापि  
 सर्वशः । असंबद्धप्रलापश्च वाङ्मयं स्याच्चतुर्विधम् ॥ २१ ॥ परद्रव्ये-  
 श्वभिध्यानं मनसाऽनिष्टचिंतनम् । वितथाभिनिवेशश्च मानसं  
 त्रिविधं स्मृतम् ॥ २२ ॥ एतानि दश पापानि हर त्वं मम  
 जाह्नवि । दशपापहरा यस्मात्तस्माद्दशहरा स्मृता ॥ २३ ॥  
 त्रयस्त्रिंशच्छतं पूर्वान् पितृनथ पितामहान् । उद्धरत्येव संसार-  
 न्मंत्रेणानेन पूजिता ॥ २४ ॥ नमो भगवत्यै दशपापहरायै गंगायै  
 नारायण्यै रेवत्यै शिवायै । दक्षायै अमृतायै विश्वरूपिण्यै नंदिन्यै ते  
 नमो नमः ॥ २५ ॥ सितमकरनिषण्णां शुभ्रवर्णां त्रिनेत्रां करधृत-  
 कलशोद्यत्सोत्पलामत्यभीष्टाम् । विधिहरिहररूपां सेंदुकोटीरजुष्टां  
 कलितसितदुकूलां जाह्नवीं तां नमामि ॥ २६ ॥ आदावादिपिता-  
 महस्य निगमव्यापारपात्रे जलं पश्चात्पन्नगशायिनो भगवतः  
 पादोदकं पावनम् । भूयः शंभुजटाविभूषणमणिर्जह्मोर्महर्षेरियं  
 कन्या कल्मषनाशिनी भगवती भागीरथी दृश्यते ॥ २७ ॥ गंगा  
 गंगेति यो ब्रूयाद्योजनानां शतैरपि । मुच्यते सर्वपापेभ्यो विष्णुलोकं  
 स गच्छति ॥ २८ ॥ इति धर्माब्धिस्था दशहरागंगास्तुतिः संपूर्णा ॥

## ३५७. शंकराचार्यकृतं गंगाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ भगवति तव तीरे नीरमात्राशनोऽहं विगत-  
विषयतृष्णः कृष्णमाराधयामि । सकलकलुषभंगे स्वर्गसोपानसंगे  
तरलतरतरंगे देवि गंगे प्रसीद ॥ १ ॥ भगवति भवलीलामौलि-  
माले तवांभःकणमणुपरिमाणं प्राणिनो ये स्पृशन्ति । अमरनगर-  
नारीचामरग्राहिणीनां विगतकलिकलंकातंकमंके लुठन्ति ॥ २ ॥  
ब्रह्मांडं खंडयती हरशिरसि जटावल्लिमुल्लासयन्ती स्वर्लोकादापतन्ती  
कनकगिरिगुहागंडशैलात्स्खलन्ती । क्षोणीपृष्ठे लुठन्ती दुरितचयचमू-  
र्निर्भरं भर्त्सयन्ती पाथोधिं पूरयन्ती सुरनगरसरित्पावनी नः पुनातु  
॥ ३ ॥ मज्जन्मातंगकुंभच्युतमदमदिरामोदमत्तालिजालं स्नानैः  
सिद्धांगनानां कुचयुगविगलत्कुंकुमासंगपिंगम् । सायंप्रातर्मुनीनां  
कुशकुसुमचयैश्छन्नतीरस्थतीरं पायान्नो गांगमंभः करिकलभकरा-  
क्रांतरंहस्तरंगम् ॥ ४ ॥ आदावादिपितामहस्य निगमव्यापारपात्रे  
जलं पश्चात्पन्नगशायिनो भगवतः पादोदकं पावनम् । भूयः  
शंभुजटाविभूषणमणिर्जहोर्महर्षेरियं कन्या कलमषनाशिनी भगवती  
भागीरथी दृश्यते ॥ ५ ॥ शैलेंद्रादवतारिणी निजजले  
मज्जन्नोत्तारिणी पारावारविहारिणी भवभयश्रेणीसमुत्सारिणी ।  
शेषाहेरनुकारिणी हरिशिरोवल्लीदलाकारिणी काशीप्रांतविहारिणी  
विजयते गंगा मनोहारिणी ॥ ६ ॥ कुतोऽवीचिर्वीचिस्तव यदि  
गता लोचनपथं त्वमापीता पीतांबरपुरनिवासं वितरसि । त्वदुत्संगे  
गंगे पतति यदि कायस्तनुभृतां तदा मातः शातक्रतवपदलामोऽ-  
प्यतिलघुः ॥ ७ ॥ गंगे त्रैलोक्यसारे सकलसुरवधूधौतविस्तीर्णतोये  
पूर्णब्रह्मस्वरूपे हरिचरणरजोहारिणि स्वर्गमार्गे । प्रायश्चित्तं यदि  
स्यात्तव जलकणिका ब्रह्महत्यादिपापे कस्त्वां स्तोतुं समर्थंखिजग-

दधहरे देवि गङ्गे प्रसीद ॥ ८ ॥ मातर्जाह्ववि शंभुसंगवलिते  
मौलौ निघायांजलिं त्वत्तीरे वपुषोऽवसानसमये नारायणांघ्रि-  
द्वयम् । सानंदं स्मरतो भविष्यति मम प्राणप्रयाणोत्सवो भूयाद्भ-  
क्तिरविच्युता हरिहराद्वैतात्मिका शाश्वती ॥ ९ ॥ गंगाष्टकमिदं  
पुण्यं यः पठेत्प्रयतो नरः । सर्वपापविनिर्मुक्तो विष्णुलोकं स गच्छति  
॥ १० ॥ इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्यश्रीमच्छंकराचार्यवि-  
रचितं गंगाष्टकस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ३५८. वाल्मीकिकृतं गंगाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ मातः शैलसुतासपत्नि वसुधाशृंगारहारावलि  
स्वर्गारोहणवैजयंति भवतीं भागीरथिं प्रार्थये । त्वत्तीरे वसतस्त्व-  
दंबु पिबतस्त्वद्वीचिषु प्रेखतस्त्वन्नाम स्मरतस्त्वदर्पितदृशः स्यान्मे  
शरीरव्ययः ॥ १ ॥ त्वत्तीरे तरुकोटरांतरगतो गंगे विहंगो वरं  
त्वद्वीरे नरकांतकारिणि वरं मत्स्योऽथवा कच्छपः । नैवान्यत्र मदां-  
घासिंधुरघटासंघट्टघंटारणत्कारत्रस्तसमस्तवैरिवनितालब्धस्तुतिर्भूपतिः  
॥ २ ॥ उक्षा पक्षी तुरग उरगः कोऽपि वा वारणो वाऽवारीणः  
स्यां जननमरणक्लेशदुःखासहिष्णुः । न त्वन्यत्र प्रविरलरणत्कंकण-  
क्वाणमिश्रं वारस्त्रीभिश्चमरमरुता वीजितो भूमिपालः ॥ ३ ॥  
काकैर्निष्कुषितं श्वभिः कवलितं गोमायुभिर्लुठितं स्रोतोभिश्चलितं  
तटांबुलुलितं वीचीभिरांदोलितम् । दिव्यस्त्रीकरचारुचामरमरुत्संवी-  
ज्यमानः कदा द्रक्ष्येऽहं परमेश्वरि त्रिपथगे भागीरथि स्वं वपुः  
॥ ४ ॥ अभिनवविसवल्ली पादपद्मस्य विष्णोर्मदनमथनमौलेर्मा-  
लतीपुष्पमाला । जयति जयपताका काप्यसौ मोक्षलक्ष्म्याः क्षपित-  
कलिकलंका जाह्नवी नः पुनातु ॥ ५ ॥ एतत्तालतमालसालसर-

लव्यालोलवल्लीलताच्छन्नं सूर्यकरप्रतापरहितं शंखेंदुकुंदोज्ज्वलम् ।  
 गंधर्वाभिरसिद्धकिन्नरवधूतुंगस्तनास्फालितं स्नानाय प्रतिवासरं  
 भवतु मे गांगं जलं निर्मलम् ॥ ६ ॥ गांगं वारि मनोहारि सुरारि-  
 चरणच्युतम् । त्रिपुरारिशिरश्चारि पापहारि पुनातु माम् ॥ ७ ॥  
 पापापहारि दुरितारि तरंगधारि शैलप्रचारि गिरिराजगुहाविदारि ।  
 झंकारकारि हरिपादरजोपहारि गांगं पुनातु सततं शुभकारि वारि  
 ॥ ८ ॥ गंगाष्टकं पठति यः प्रयतः प्रभाते वाल्मीकिना विरचितं  
 शुभदं मनुष्यः । प्रक्षाल्य गात्रकलिकल्मषपंकमाशु मोक्षं लभे-  
 त्पतति नैव नरो भवाब्धौ ॥ ९ ॥ इति श्रीवाल्मीकिविरचितं  
 गंगाष्टकं संपूर्णम् ॥

### ३५९. कालिदासकृतं गंगाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ कल्यक्षीणि करोटयः कति कति द्वीपिद्विपानां  
 त्वचः काकोलाः कति पन्नगाः कति सुधाधान्नश्च खंडाः कति ।  
 किं च त्वं च कति त्रिलोकजननि त्वद्वारिपूरोदरे मज्जजंतुकदंबकं  
 समुदयत्यैकैकमादाय यत् ॥ १ ॥ देवि त्वत्पुलिनांगणे स्थितिजुषां  
 निर्मौनिनां ज्ञानिनां स्वल्पाहारनिबद्धशुद्धवपुषां तार्णं गृहं श्रेयसे ।  
 नान्यत्र क्षितिमंडलेश्वरशतैः संरक्षितो भूपतेः प्रासादो ललनागणै-  
 रधिगतो भोगीन्द्रभोगोन्नतः ॥ २ ॥ तत्तत्तीर्थगतैः कदर्थनशतैः  
 किं तैरनर्थाश्रितैर्ज्योतिष्टोममुखैः किमीशविमुखैर्यज्ञैरवज्ञादृतैः ।  
 सूते केशववासवादिविबुधागाराभिरामां श्रियं गंगे देवि भवत्तटे  
 यदि कुटीवासः प्रयासं विना ॥ ३ ॥ गंगातीरमुपेत्य शीतलशिला-  
 मालंब्य हेमाचलीं यैराकर्णि कुतूहलाकुलतया कल्लोलकोलाहलः ।  
 ते शृण्वन्ति सुपर्वपर्वतशिलासिंहासनाध्यासनाः संगीतागमशुद्ध-  
 सिद्धरमणीमंजीरवीरध्वनिम् ॥ ४ ॥ दूरं गच्छ सकच्छगं च भवतो

नालोकयामो मुखं रे पाराक वराक साकमितरैर्नाकप्रदैर्गम्यताम् ।  
 सद्यः प्रोद्यतमंदमास्तरजःप्राप्ता कपोलस्थले गंगांभःकणिका  
 विमुक्तगणिकासंगाय संभाव्यते ॥ ५ ॥ विष्णोः संगतिकारिणी  
 हरजटाजूटाटवीचारिणी प्रायश्चित्तनिवारिणी जलकणैः पुण्यौघ-  
 विस्तारिणी । भ्रूभृत्कंदरदारिणी निजजले मज्जजनोत्तारिणी श्रेयः-  
 स्वर्गविहारिणी विजयते गंगा मनोहारिणी ॥ ६ ॥ वाचालं विकलं  
 खलं श्रितमलं कामाकुलं व्याकुलं चांडालं तरलं निपीतगरलं  
 दोषाविलं चाखिलम् । कुंभीपाकगतं तमंतककरादाकृष्य कस्तार-  
 येन्मातर्जह्नुनरेंद्रनंदिनि तव स्वल्पोदविन्दुं विना ॥ ७ ॥ श्लेष्म-  
 श्लेषणयानलेऽमृतबिले शोकाकुले व्याकुले कंठे घर्घरघोषनादमलिने  
 काये च संमीलति । यां ध्यायन्नपि भारभंगुरतरां प्राप्नोति सुक्तिं  
 नरः स्नातुश्चेतसि जाह्नवीनिवसतां संसारसंतापहृत् ॥ ८ ॥ इति  
 श्रीमत्कालिदासविरचितं गंगाष्टकस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ३६०. गंगाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ नमस्तेऽस्तु गंगे त्वदंगप्रसंगाद्भुजंगास्तुरंगाः  
 कुरंगाः प्लवंगाः । अनंगारिरंगाः ससंगाः शिवांगा भुजंगाधिपांगी-  
 कृतांगा भवन्ति ॥ १ ॥ नमो जह्नुकन्ये न मन्ये त्वदन्यैर्निसर्गैर्दु-  
 चिह्नादिभिर्लोकभर्तुः । अतोऽहं नतोऽहं सतो गौरतोये वसिष्ठादि-  
 भिर्गीयमानाभिधेये ॥ २ ॥ त्वदामज्जनात्सजनो दुर्जनो वा  
 विमानैः समानः समानैर्हि मानैः । समायाति तस्मिन्पुरारातिलोके  
 पुरद्वारसंरुद्धदिक्पाललोके ॥ ३ ॥ स्वरावासदंभोलिदंभोऽपि रंभा-  
 परीरंभसंभावनाधीरचेताः । समाकांक्षते त्वत्तटे वृक्षवाटीकुटीरे  
 वसन्नेतुमायुर्दिनानि ॥ ४ ॥ त्रिलोकस्य भर्तुर्जटाजूटबंधात्स्वसीमांत-  
 भागे मनाक्प्रस्खलंतः । भवान्या रूषा प्रौढसापत्नभावात्करेणा-

हतास्त्वत्तरंगा जयन्ति ॥ ५ ॥ जलोन्मज्जदैरावतोद्धानकुंभस्फुरत्प्र-  
स्खलत्सांद्रसिंदूररागे । क्वचित्पद्मिनीरेणुभंगे प्रसंगे मनः खेलतां  
जह्नुकन्यातरंगे ॥ ६ ॥ भवत्तीरवानीरवातोत्थधूलीलवस्पर्शतस्त-  
त्क्षणं क्षीणपापः । जनोऽयं जगत्पावने त्वत्प्रसादात्पदे पौरुहूतेऽपि  
धत्तेऽवहेलाम् ॥ ७ ॥ त्रिसंध्यानमल्लेखकोटीरनानाविधानेकरत्नांशु-  
बिंबप्रभाभिः । स्फुरत्पादपीठे हठेनाष्टमूर्तेर्जटाजूटवासे नताः स्मः  
पदं ते ॥ ८ ॥ इदं यः पठेदष्टकं जह्नुपुत्र्यास्त्रिकालं कृतं कालिदासेन  
रम्यम् । समायास्यतीन्द्रादिभिर्गीयमानं पदं कैशवं शैशवं नो  
लभेत्सः ॥ ९ ॥ इति श्रीकालिदासकृतं गंगाष्टकस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ३६१. गंगास्तवः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ सूत उवाच ॥ शृणुध्वं मुनयः सर्वे गंगास्तव-  
मनुत्तमम् । शोकमोहहरं पुंसामृषिभिः परिकीर्तितम् ॥ १ ॥  
ऋषय ऊचुः ॥ इयं सुरतरंगिणी भवनवारिधेस्तारिणी स्तुता हरि-  
पदांबुजादुपगता जगत्संसदः । सुमेरुशिखरामरप्रियजला मल-  
क्षालिनी प्रसन्नवदना शुभा भवभयस्य विद्राविणी ॥ २ ॥ भगीरथ-  
रथानुगा सुरकरींद्रदर्पापहा महेशमुकुटप्रभा गिरिशिरःपताका  
सिता । सुरासुरनरोरगैरजभवाच्युतैः संस्तुता विमुक्तिफलशालिनी  
कलुषनाशिनी राजते ॥ ३ ॥ पितामहकमंडलुप्रभवमुक्तिबीजा लता  
श्रुतिस्मृतिगणस्तुतद्विजकुलालवालावृता । सुमेरुशिखराभिदा निप-  
तिता त्रिलोकावृता सुधर्मफलशालिनी सुखपलाशिनी राजते ॥ ४ ॥  
चरद्विहगमालिनी सगरवंशमुक्तिप्रदा मुनींद्रवरनंदिनी दिवि मता  
च मंदाकिनी । सदा दुरितनाशिनी विमलवारिसंदर्शनप्रणामगुण-  
कीर्तनादिषु जगत्सु संराजते ॥ ५ ॥ महाभिषसुतांगना हिमगिरीश-  
कूटस्तना सफेनजलहासिनी सितमरालसंचारिणी । चलल्लहरि-

सत्करा वरसरोजमालाधरा रसोल्लसितगामिनी जलधिकामिनी  
राजते ॥ ६ ॥ क्वचिन्मुनिगणैः स्तुता क्वचिदनंतसंपूजिता क्वचित्कल-  
कलस्वना क्वचिदधीरयादोगणा । क्वचिद्रविकरोज्ज्वला क्वचिदुदग्र-  
पाताकुला क्वचिज्जनविगाहिता जयति भीष्ममाता सती ॥ ७ ॥ स  
एव कुशली जनः प्रणमतीह भागीरथीं स एव तपसां निधिर्जपति  
जाह्नवीमादरात् । स एव पुरुषोत्तमः स्मरति साधु मंदाकिनीं स  
एव विजयी प्रभुः सुरतरंगिणीं सेवते ॥ ८ ॥ तवामलजलाचितं  
खगशृगालमीनक्षतं चलल्लहरिलोलितं रुचिरतीरजंबालितम् । कदा  
निजवपुर्मुदा सुरनरोरगैः संस्तुतोऽप्यहं त्रिपथगामिनि प्रियमतीव  
पश्याम्यहो ॥ ९ ॥ त्वत्तीरे वसतिं तवामलजलस्नानं तव प्रेक्षणं  
त्वन्नामस्मरणं तवोदयकथासंलापनं पावनम् । गंगे मे तव सेवनैक-  
निपुणोऽप्यानंदितश्चादृतः स्तुत्वा चोद्गतपातको भुवि कदा शांतश्च-  
रिष्याम्यहम् ॥ १० ॥ इत्येतद्विषिभिः प्रोक्तं गंगास्तवनमुत्तमम् ।  
स्वर्ग्यं यशस्यमायुष्यं पठनाच्छ्रवणादपि ॥ ११ ॥ सर्वपापहरं पुंसां  
बलमायुर्विवर्धनम् । प्रातर्मध्याह्नसायाह्ने गंगासान्निध्यता भवेत्  
॥ १२ ॥ इत्येतद्गार्गवाख्यानं शुक्रदेवान्मया श्रुतम् । पठितं  
श्रावितं चात्र पुण्यं धन्यं यशस्करम् ॥ १३ ॥ अवतारं महाविष्णोः  
कल्केः परममद्भुतम् । पठतां शृण्वतां भक्त्या सर्वाशुभविनाशनम्  
॥ १४ ॥ इति श्रीकल्किपुराणेऽनुभागवते भविष्ये तृतीयांशे  
ऋषिकृतो गंगास्तवः संपूर्णः ॥

३६२. सत्यज्ञानानंदतीर्थकृतं गंगाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ यदवधि तव नीरं पातकी नैति गंगे तदवधि  
मलजालैर्नैव मुक्तः कलौ स्यात् । तव जलकणिकाऽलं पापिनां  
पापशुद्धौ पतितपरमदीनास्त्वं हि पासि प्रपन्नान् ॥ १ ॥ तव शिव-

जललेशं वायुनीतं समेत्य सपदि निरयजालं शून्यतामेति गंगे ।  
 शमलगिरिसमूहाः प्रस्फुटन्ति प्रचंडास्त्वयि सखि विशतां नः  
 पापशंका कुतः स्यात् ॥ २ ॥ तव शिवजलजालं निःसृतं यर्हि गंगे  
 सकलभुवनजालं पूतपूतं तदाऽभूत् । यमभटकलिवार्ता देवि लुप्ता  
 यमोऽपि व्यधिकृतवरदेहः पूर्णकामाः सकामाः ॥ ३ ॥ मधुमधुव-  
 नपूगै रत्नपूगैर्नृपूगैर्मधुमधुवनपूगैर्देवपूगैः सपूगैः । पुरहरपरमाणे  
 भासि मायेव गंगे शमयसि विषतापं देवदेवस्य वंद्यम् ॥ ४ ॥  
 चलितशशिकुलाभैरुत्तरंगैस्तरंगैरमितनदनदीनामंगसंगैरसंगैः । विह-  
 रसि जगदंडे खंडयंती गिरींद्रान् रमयसि निजकांतं सागरं कांत-  
 कांते ॥ ५ ॥ तव परमहिमानं चित्तवाचाममानं हरिहरविधिशक्रा  
 नापि गंगे विदन्ति । श्रुतिकुलमभिधत्ते शंकितं तं गुणांतं गुणगण-  
 सुविलापैर्नेति नेतीति सत्यम् ॥ ६ ॥ तव नुतिनतिनामान्यप्यबंधं  
 पावयन्ति ददति परमशांतिं दिव्यभोगान् जनानाम् । इति पतित-  
 शरण्ये त्वां प्रपन्नोऽस्मि मातर्ललिततरतरंगे चांग गंगे प्रसीद  
 ॥ ७ ॥ शुभतरकृतयोगाद्विश्वनाथप्रसादाद्भवहरवरविद्यां प्राप्य  
 काश्यां हि गंगे । भगवति तव तीरे नीरसारं निपीय मुदितहृदय-  
 कंजे नंदसूनुं भजेऽहम् ॥ ८ ॥ गंगाष्टकमिदं कृत्वा भुक्तिमुक्तिप्रदं  
 नृणाम् । सत्यज्ञानानंदतीर्थयतिना स्वर्पितं शिवे ॥ ९ ॥ तेन  
 प्रीणातु भगवान् शिवो गंगाधरो विभुः । करोतु शंकरः काश्यां  
 जनानां सततं शिवम् ॥ १० ॥ इति श्रीसत्यज्ञानानंदतीर्थयतिना  
 विरचितं गंगाष्टकं संपूर्णम् ॥

३६३. प्रयागराजमाहात्म्याष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ मुनय ऊचुः ॥ सुरमुनिदितिजेंद्रैः सेव्यते  
 योऽस्ततद्रैर्गुरुतरदुरितानां का कथा मानवानाम् । स भुवि सुकृत-



कर्तुर्वाञ्छितावासिहेतुर्जयति विजितयागस्तीर्थराजः प्रयागः ॥ १ ॥  
 श्रुतिः प्रमाणं स्मृतयः प्रमाणं पुराणमप्यत्र परं प्रमाणम् । यत्रास्ति  
 गंगा यमुना प्रमाणं स तीर्थराजो जयति प्रयागः ॥ २ ॥ न यत्र  
 योगाचरणप्रतीक्षा न यत्र यज्ञेष्टिविशिष्टदीक्षा । न तारकज्ञानगुरो-  
 रपेक्षा स तीर्थराजो जयति प्रयागः ॥ ३ ॥ चिरं निवासं न  
 समीक्षते यो ह्युदारचित्तः प्रददाति च क्रमात् । यः कल्पितार्थांश्च  
 ददाति पुंसः स तीर्थराजो ० ॥ ४ ॥ यत्राद्भुतानां न यमो नियंता  
 यत्रास्थितानां सुगतिप्रदाता । यत्राश्रितानाममृतप्रदाता स  
 तीर्थराजो ० ॥ ५ ॥ पुर्यः सप्त प्रसिद्धाः प्रतिवचनकरीस्तीर्थराजस्य  
 नार्यो नैकव्यान्मुक्तिदाने प्रभवति सुगुणा काशते ब्रह्म यस्याम् ।  
 सेयं राज्ञी प्रधाना प्रियवचनकरी मुक्तिदानेन युक्ता येन ब्रह्मांड-  
 मध्ये स जयति सुतरां तीर्थराजः प्रयागः ॥ ६ ॥ तीर्थावली यस्य  
 तु कंठभागे दानावली वल्गति पादमूले । व्रतावली दक्षिणपादमूले  
 स तीर्थराजो जयति प्रयागः ॥ ७ ॥ आज्ञापि यज्ञाः प्रभवोऽपि  
 यज्ञाः सप्तर्षिसिद्धाः सुकृतानभिज्ञाः । विज्ञापयंतः सततं हि काले  
 स तीर्थो ० ॥ ८ ॥ सितासिते यत्र तरंगचामरे नद्यौ विभाते मुनि-  
 भानुकन्यके । लीलातपत्रं वट एक साक्षात्स तीर्थराजो ज०  
 ॥ ९ ॥ तीर्थराजप्रयागस्य माहात्म्यं कथयिष्यति । शृण्वन्वा सततं  
 भक्त्या वाञ्छितं फलमामुयात् ॥ १० ॥ इति श्रीमत्स्यपुराणे  
 प्रयागराजमाहात्म्याष्टकं समाप्तम् ॥

### ३६४. काशीपंचकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ मनोनिवृत्तिः परमोपशांतिः सा तीर्थवर्या  
 मणिकर्णिका च । ज्ञानप्रवाहा विमलादिगंगा सा काशिकाहं निज-  
 बोधरूपा ॥ १ ॥ यस्यामिदं कल्पितमिंद्रजालं चराचरं भाति

मनोविलासम् । सच्चित्सुखैका परमात्मरूपा सा काशिका० ॥ २ ॥  
 कोशेषु पंचस्वधिराजमाना बुद्धिर्भवानी प्रतिदेहगेहम् । साक्षी  
 शिवः सर्वगतोऽन्तरात्मा सा काशिका० ॥ ३ ॥ काश्यां हि काश्यते  
 काशी काशी सर्वप्रकाशिका । सा काशी विदिता येन तेन प्राप्ता  
 हि काशिका ॥ ४ ॥ काशीक्षेत्रं शरीरं त्रिभुवनजननी व्यापिनी  
 ज्ञानगंगा भक्तिः श्रद्धा गयेयं निजगुरुचरणध्यानयोगः प्रयागः ।  
 विश्वेशोऽयं तुरीयः सकलजनमनःसाक्षिभूतोऽन्तरात्मा देहे सर्व  
 मदीये यदि वसति पुनस्तीर्थमन्यत्किमस्ति ॥ ५ ॥ इति श्रीमच्छं-  
 कराचार्यविरचितं काशीपंचकं संपूर्णम् ॥

### ३६५. यमुनाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ सुरारिकायकालिमाललामवारिधारिणी तृणी-  
 कृतत्रिविष्टपा त्रिलोकशोकहारिणी । मनोऽनुकूलकूलकुंजपुंजधूत-  
 दुर्मदा धुनोतु मे मनोमलं कलिंदनंदिनी सदा ॥ १ ॥ मलापहारिवारि-  
 पूरिभूरिमंडितामृता भृशं प्रपातकप्रपंचनातिपंडिता निशा । सुनंद-  
 नंदिनांगसंगरागरंजिता हिता धुनोतु ॥ २ ॥ लसत्तरंगसंगधूतभूत-  
 जातपातका नवीनमाधुरीधुरीणभक्तिजातचातका । तटांतवासदास-  
 हंससंसृताह्नि कामदा धुनोतु ॥ ३ ॥ विहाररासखेदभेदधीरतीर-  
 मारुता गता गिरामगोचरे यदीयनीरचारुता । प्रवाहसाहचर्यपूत-  
 मेदिनीनदीनदा धुनोतु ॥ ४ ॥ तरंगसंगसैकतांतरांतितं सदासिता  
 शरन्निशाकरांशुमंजुमंजरीसभाजिता । भवार्चनाप्रचारुणांबुनाधुना-  
 निशारदा धुनोतु ॥ ५ ॥ जलांतकेलिकारिचारुराधिकांगरागिणी  
 स्वभर्तुरन्यदुर्लभांगतांगतांशभागिनी । स्वदत्तसुसप्तसिंधुभेदनाति-  
 कोविदा धुनोतु ॥ ६ ॥ जलच्युताच्युतांगरागलंपटालिशालिनी  
 विलोलराधिकाकचांतचंपकालिमालिनी । सदावगाहनावतीर्णभर्तु-

भृत्यनारदा धुनोतु० ॥ ७ ॥ सदैव नंदनंदकेलिशालिकुंजमंजुला  
तटोत्थफुल्लमल्लिकाकदंबरेणुसूज्वला । जलावगाहिनां नृणां भवा-  
ब्धिसिंधुपारदा धुनोतु० ॥ ८ ॥ इति श्रीमच्छंकराचार्यविरचितं  
यमुनाष्टकं संपूर्णम् ॥

### ३६६. यमुनाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ कृपापारावारां तपनतनयां तापशमनीं मुरारि-  
प्रेयस्यां भवभयदवां भक्तिवरदाम् । वियज्जालान्मुक्तां श्रियमपि  
सुखाप्तेः प्रतिदिनं सदा धीरो नूनं भजति यमुनां नित्यफलदाम्  
॥ १ ॥ मधुवनचारिणि भास्करवाहिनि जाह्नविसंगिनि सिंधुसुते  
मधुरिपुभूषिणि माधवतोषिणि गोकुलभीतिविनाशकृते । जगदघ-  
मोचनि मानसदायिनि केशवकेलिनिदानगते जय यमुने जय भीति-  
निवारिणि संकटनाशिनि पावय माम् ॥ २ ॥ अयि मधुरे मधु-  
मोदविलासिनि शैलविहारिणि वेगभरे परिजनपालिनि दुष्टनिषूदिनि  
वाञ्छितकामविलासधरे । ब्रजपुरवासिजनार्जितपातकहारिणि विश्व-  
जनोद्धरिके जय यमुने जय भीतिनिवा० ॥ ३ ॥ अतिविपदम्बुधि-  
मग्नजनं भवतापशताकुलमानसकं गतिमतिहीनमशेषभयाकुलमाग-  
तपादसरोजयुगम् । ऋणभयभीतिमनिष्कृतिपातककोटिशतायुत-  
पुंजतरं जय यमुने० ॥ ४ ॥ नवजलदद्युतिकोटिलसत्तनुहेममया-  
भरंरजितके तडिदवहेलिपदांचलचंचलशोभितपीतसुचैलधरे । मणि-  
भयभूषणचित्रपटासनरंजितगंजितभानुकरे जय यमुने० ॥ ५ ॥  
शुभपुलिने मधुमत्तयदूद्भवरासमहोत्सवकेलिभरे उच्चकुलाचलराजि-  
तमौक्तिकहारमयाभररोदसिके । नवमणिकोटिकभास्करकंचुकिशोभि-  
ततारकहारयुते जय यमुने० ॥ ६ ॥ करिवरमौक्तिकनासिकभूषणवात-  
चमस्कृतचंचलके मुखकमलामलसौरभचंचलमत्तमधुव्रतलोचनिके ।

मणिगणकुंडललोलपरिस्फुरदाकुलगण्डयुगामलके जय यमुने०  
 ॥ ७ ॥ कलरवनूपुरहेममयाचितपादसरोरुहसारुणिके धिमिधिमि-  
 धिमिधिमितालविनोदितमानसमंजुलपादगते । तव पदपंकजमाश्रि-  
 तमानवचित्तसदाखिलतापहरे जय यमुने० ॥ ८ ॥ भवोत्तापां-  
 भोधौ निपतितजनो दुर्गतियुतो यदि स्तौति प्रातः प्रतिदिनमनन्या-  
 श्रयतया । हयाहेषैः कामं करकुसुमपुंजैरविरतां सदा भोक्ता भोगा-  
 न्मरणसमये याति हरिताम् ॥ ९ ॥ इति श्रीमत्परमहंसपरिवाजका-  
 चार्यश्रीमच्छंकराचार्यविरचितं यमुनाष्टकं संपूर्णम् ॥

### ३६७. नर्मदाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ सर्बिंदुसिंधुसुखलत्तरंगभंगरंजितं द्विषत्सु  
 पापजातजातकारि वारिसंयुतम् । कृतांतदूतकालभूतभीतिहारि-  
 वर्मदे त्वदीयपादपंकजं नमामि देवि नर्मदे ॥ १ ॥ त्वदंबुलीनदी-  
 नमीनदिव्यसंप्रदायकं कलौ मलौघभारहारि सर्वतीर्थनायकम् ।  
 सुमत्स्यकच्छनक्रचक्रचक्रवाकशर्मदे त्वदीयपादपंकजं नमामि देवि  
 नर्मदे ॥ २ ॥ महागभीरनीरपूरपापधूतभूतलं ध्वनत्समस्तपातकारि-  
 दारितापदाचलम् । जगल्लये महाभये मृकंडुसूनुहर्म्यदे त्वदीय-  
 पादपं० ॥ ३ ॥ गतं तदैव मे भयं त्वदंबु वीक्षितं यदा मृकंडु-  
 सूनुशौनकासुरारिसेवि सर्वदा । पुनर्भवाब्धिजन्मजं भवाब्धिदुःख-  
 वर्मदे त्वदीयपादपं० ॥ ४ ॥ अलक्षलक्षकिन्नरामरासुरादिपूजितं  
 सुलक्षनीरतीरधीरपक्षिलक्षकूजितम् । वशिष्ठशिष्टपिप्पलादिकर्दमा-  
 दिशर्मदे त्वदीयपाद० ॥ ५ ॥ सनत्कुमारनाचिकेतकश्यपात्रिषट्-  
 पदैर्धृतं स्वकीयमानसेषु नारदादिषट्पदैः । रवींदुरंतिदेवदेवराज-  
 कर्मशर्मदे त्वदीयपाद० ॥ ६ ॥ अलक्षलक्षलक्षपापलक्षसारसायुधं  
 ततस्तु जीवजंतुतंतुभुक्तिमुक्तिदायकम् । विरिंचिविष्णुशंकरस्वकीय-

धामवर्मदे त्वदीयपाद० ॥ ७ ॥ अहो मृतं स्वनं श्रुतं महेशकेश-  
जातटे किरातसूतवाडवेषु पंडिते शठे नटे । दुरंतपापतापहारिसर्व-  
जंतुशर्मदे त्वदीय० ॥ ८ ॥ इदं तु नर्मदाष्टकं त्रिकालमेव ये सदा  
पठंति ते निरंतरं न यांति दुर्गतिं कदा । सुलभ्यदेहदुर्लभं महेश-  
धामगौरवं पुनर्भवा नरा न वै विलोकयंति रौरवम् ॥ ९ ॥ इति  
श्रीमच्छंकराचार्यविरचितं नर्मदाष्टकस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

३६८. पुष्कराष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रिया युतं त्रिदेहतापपापराशिनाशकं मुनींद्र-  
सिद्धसाध्यदेवदानवैरभिष्टुतम् । तटेऽस्ति यज्ञपर्वतस्य मुक्तिदं  
सुखाकरं नमामि ब्रह्मपुष्करं सवैष्णवं सशंकरम् ॥ १ ॥ सदार्य-  
मासशुष्कपंचवासरे वरागतं तदन्यथांतरिक्षगं सुतंत्रभावानुगम् ।  
तदंबुपानमज्जनं दृशां सदामृताकरं नमामि० ॥ २ ॥ त्रिपुष्कर  
त्रिपुष्कर त्रिपुष्करेति संस्मरेत् स दूरदेशगोऽपि यस्तदंगपाप-  
नाशनम् । प्रपन्नदुःखभंजनं सुरंजनं सुधाकरं नमामि० ॥ ३ ॥  
मृकंडुमंकणौ पुलस्त्यकण्वपर्वतासिता अगस्त्यभार्गवौ दधीचिनारदौ  
शुकादयः । सपद्मतीर्थपावनैकदृष्टयो दयाकरं नमामि० ॥ ४ ॥  
सदा पितामहेक्षितं वराहविष्णुनेक्षितं तथाऽमरेश्वरेक्षितं सुरासुरैः  
समीक्षितम् । इहैव भुक्तिमुक्तिदं प्रजाकरं घनाकरं नमामि०  
॥ ५ ॥ त्रिदंडिदंडिब्रह्मचारितापसैः सुसेवितं पुरार्धचंद्रमासदेव-  
नंदिकेश्वराभिधैः । सवैद्यनाथनीलकंठसेवितं सुधाकरं नमामि०  
॥ ६ ॥ सुपंचधा सरस्वती विराजते यदंतरे तथैकयोजनायतं  
विभाति तीर्थनायकम् । अनेकदैवपैत्रतीर्थसागरं रसाकरं नमामि०  
॥ ७ ॥ यमादिसंयुतो नरस्त्रिपुष्करं निमज्जति पितामहश्च माधवो-  
ऽप्युमाधवः प्रसन्नताम् । प्रयाति तत्पदं ददात्ययत्नतो गुणाकरं

नमामि० ॥ ८ ॥ इदं हि पुष्कराष्टकं सुनीतिनीरजाश्रितं स्थितं  
मदीयमानसे कदापि माऽपगच्छतु । त्रिसंध्यमापठन्ति ये त्रिपुष्क-  
राष्टकं नराः प्रदीप्तदेहभूषणा भवन्ति मेशकिंकराः ॥ ९ ॥ इति  
श्रीपुष्कराष्टकं समाप्तम् ॥

### ३६९. श्रीमणिकर्णिकाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ त्वत्तीरे मणिकर्णिके हरिहरौ सायुज्यमुक्तिप्रदौ  
वादं तौ कुरुतः परस्परमुभौ जंतोः प्रयाणोत्सवे । मद्रूपो  
मनुजोऽयमस्तु हरिणा प्रोक्तः शिवस्तक्षणात्तन्मध्याद्भ्रुगुलांछनो  
गरुडगः पीतांबरो निर्गतः ॥ १ ॥ इंद्राद्यास्त्रिदशाः पतन्ति नियतं  
भोगक्षये ते पुनर्जायन्ते मनुजास्ततोऽपि पशवः कीटाः पतंगादयः ।  
ये मातर्मणिकर्णिके तव जले मज्जन्ति निष्कल्मषाः सायुज्येऽपि  
किरीटकौस्तुभधरा नारायणाः स्युर्नराः ॥ २ ॥ काशी धन्यतमा  
विमुक्तिनगरी सालंकृता गंगया तत्रेयं मणिकर्णिका सुखकरी  
मुक्तिर्हि तत्किंकरी । स्वर्लोकस्तुलितः सहैव विबुधैः काश्या समं  
ब्रह्मणा काशी क्षोणितले स्थिता गुरुतरा स्वर्गो लघुः खे गतः  
॥ ३ ॥ गंगातीरमनुत्तमं हि सकलं तत्रापि काश्युत्तमा तस्यां सा  
मणिकर्णिकोत्तमतमा यत्रेश्वरो मुक्तिदः । देवानामपि दुर्लभं  
स्थलमिदं पापौघनाशक्षमं पूर्वोपार्जितपुण्यपुंजगमकं पुण्यैर्जनैः  
प्राप्यते ॥ ४ ॥ दुःखांभोनिधिमग्नजंतुनिवहास्तेषां कथं निष्कृतिर्ज्ञा-  
त्वैतद्धि त्रिरंचिना विरचिता वाराणसी शर्मदा । लोकाः स्वर्गमुखा-  
स्ततोऽपि लघवो भोगांतपातप्रदाः काशी मुक्तिपुरी सदा शिवकरी  
धर्मार्थकामोत्तरा ॥ ५ ॥ एको वेणुधरो धराधरधरः श्रीवत्सभूषा-  
धरो योऽप्येकः किल शंकरो विषधरो गंगाधरो माधवः । ये  
मातर्मणिकर्णिके तव जले मज्जन्ति ते मानवा रुद्रा वा हरयो भवन्ति

बहवस्तेषां बहुत्वं कथम् ॥ ६ ॥ त्वत्तीरे मरणं तु मंगलकरं  
 देवैरपि श्लाघ्यते शक्रस्तं मनुजं सहस्रनयनैर्द्रष्टुं सदा तत्परः ।  
 आयातं सविता सहस्रकिरणैः प्रत्युद्गतोऽभूत्सदा पुण्योऽसौ  
 वृषगोऽथवा गरुडगः किं मंदिरं यास्यति ॥ ७ ॥ मध्याह्ने मणिक-  
 र्णिकासन्नपनजं पुण्यं न वक्तुं क्षमः स्त्रीयैरब्दशतैश्चतुर्मुखसुरो वेदार्थ-  
 दीक्षागुरुः । योगाभ्यासबलेन चंद्रशिखरस्तत्पुण्यपारं गतस्त्वत्तीरे  
 प्रकरोति सुसपुरुषं नारायणं वा शिवम् ॥ ८ ॥ कृच्छ्रैः कोटिशतैः  
 स्वपापनिधनं यच्चाश्वमेधैः फलं तत्सर्वं मणिकर्णिकासन्नपनजे पुण्ये  
 प्रविष्टं भवेत् । स्नात्वा स्तोत्रमिदं नरः पठति चेत्संसारपाथोनिधिं  
 तीर्त्वा पल्वलवत्प्रयाति सदनं तेजोमयं ब्रह्मणः ॥ ९ ॥ इति  
 श्रीमच्छंकराचार्यविरचितं श्रीमणिकर्णिकाष्टकस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ३७०. गङ्गालहरी ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ समृद्धं सौभाग्यं सकलवसुधायाः किमपि  
 तन्महेश्वर्यं लीलाजनितजगतः खण्डपरशोः । श्रुतीनां सर्वस्वं  
 सुकृतमथ मूर्तं सुमनसां सुधासौन्दर्यं ते सलिलमशिवं नः शमयतु  
 ॥ १ ॥ दरिद्राणां दैन्यं दुरितमथ दुर्वासनहृदां द्रुतं दूरीकुर्वन्सकृ-  
 दुपगतो दृष्टिसरणिम् । अपि द्रागाविद्याद्रुमदलनदीक्षागुरुरिह  
 प्रवाहस्ते वारां श्रियमयमपारां दिशतु नः ॥ २ ॥ उदञ्चन्मार्तण्ड-  
 स्फुटकपटहेरम्बजननीकटाक्षव्याक्षेपक्षणजनितसंक्षोभनिवहाः । भव-  
 न्तु त्वङ्गन्तो हरशिरसि गङ्गातनुभुवस्तरङ्गाः प्रोत्तुङ्गा दुरितभय-  
 भङ्गाय भवताम् ॥ ३ ॥ तवालम्बादम्ब स्फुरदलघुगर्वेण सहसा  
 मया सर्वेऽवज्ञासरणिमथ नीताः सुरगणाः । इदानीमौदास्यं भजसि  
 यदि भागीरथि तदा निराधारो हा रोदिमि कथय केषामिह पुरः  
 ॥ ४ ॥ स्मृतिं याता पुंसामकृतसुकृतानामपि च या हरत्यन्तस्तन्द्रां

तिमिरमिव चन्द्रांशुसरणिः । इयं सा ते मूर्तिः सकलसुरसंसेव्य-  
 सलिला ममान्तःसंतापं त्रिविधमपि पापं च हरताम् ॥ ५ ॥ अपि  
 प्राज्यं राज्यं तृणमिव परित्यज्य सहसा विलोलद्वानीरं तव जननि  
 तीरं श्रितवताम् । सुधातः स्वादीयः सलिलभरमानृसि पिबतां  
 जनानामानन्दः परिहसति निर्वाणपदवीम् ॥ ६ ॥ प्रभाते स्यान्तीनां  
 नृपतिरमणीनां कुचतटीगतो यावन्मातर्मिलति तव तोयैर्मृगमदः ।  
 मृगास्तावद्वैमानिकशतसहस्रैः परिवृता विशन्ति स्वच्छन्दं विमल-  
 वपुषो नन्दनवनम् ॥ ७ ॥ स्मृतं सद्यः स्वान्तं विरचयति शान्तं  
 सकृदपि प्रगीतं यत्पापं झटिति भवतापं च हरति । इदं तद्गङ्गेति  
 श्रवणरमणीयं खलु पदं मम प्राणप्रान्ते वदनकमलान्तर्विलसतु  
 ॥ ८ ॥ यदन्तः खेलन्तो बहुलतरसंतोषभरिता न काका नाकाधी-  
 श्वरनगरसाकाङ्क्षमनसः । निवासाल्लोकानां जनिमरणशोकापहरणं  
 तदेतत्ते तीरं श्रमशमनधीरं भवतु नः ॥ ९ ॥ न यत्साक्षाद्वैदैरपि  
 गलितभेदैरवसितं न यस्मिञ्जीवानां प्रसरति मनोवागवसरः ।  
 निराकारं नित्यं निजमहिमनिर्वासिततमो विशुद्धं यत्तत्त्वं सुरतटिनि  
 तत्त्वं न विषयः ॥ १० ॥ महादानैर्ध्यानैर्बहुविधवितानैरपि च  
 यन्न लभ्यं घोराभिः सुविमलतपोराशिभिरपि । अचिन्त्यं तद्विष्णोः  
 पदमखिलसाधारणतया ददाना केनासि त्वमिह तुलनीया कथय  
 नः ॥ ११ ॥ नृणामीक्षामात्रादपि परिहरन्त्या भवभयं शिवायास्ते  
 मूर्तेः क इह महिमानं निगदतु । अमर्षम्लानायाः परममनुरोधं  
 गिरिभुवो विहाय श्रीकण्ठः शिरसि नियतं धारयति याम् ॥ १२ ॥  
 विनिन्द्यान्युन्मत्तैरपि च परिहार्याणि पतितैरवाच्यानि ब्राह्मैः सपुलक-  
 मपास्थानि पिशुनैः । हरन्ती लोकानामनवरतमेनांसि कियतां  
 कदाप्यश्रान्ता त्वं जगति पुनरेका विजयसे ॥ १३ ॥ स्वलन्ती



स्वर्लोकादवनितलशोकापहतये जटाजूटग्रन्थौ यदसि विनिबद्धा  
पुरभिदा । अये निर्लोभानामपि मनसि लोभं जनयतां गुणाना-  
मेवायं तव जननि दोषः परिणतः ॥ १४ ॥ जडानन्धान्पङ्गून्  
प्रकृतिबधिरानुक्तिविकलान् ग्रहग्रस्तानस्ताखिलदुरितनिस्तारसरणीन् ।  
निलिम्पैर्निर्मुक्तानपि च निरयान्तर्निपततो नरानम्ब त्रातुं त्वमिह  
परमं भेषजमसि ॥ १५ ॥ स्वभावस्वच्छानां सहजशिशिराणामय-  
मपामपारस्ते मातर्जयति महिमा कोऽपि जगति । मुदा यं गायन्ति  
द्युतलमनवद्यद्युतिभृतः समासाद्याद्यापि स्फुटपुलकसान्द्राः सग-  
रजाः ॥ १६ ॥ कृतक्षुद्रैर्नस्कानथ झटिति संतप्तमनसः समुद्धर्तुं  
सन्ति त्रिभुवनतले तीर्थनिवहाः । अपि प्रायश्चित्तप्रसरणपथातीत-  
चरितान् नरान्दूरीकर्तुं त्वमिव जननि त्वं विजयसे ॥ १७ ॥  
निधानं धर्माणां किमपि च विधानं नवमुदां प्रधानं तीर्थानाममल-  
परिधानं त्रिजगतः । समाधानं बुद्धेरथ खलु तिरोधानमधियां  
श्रियामाधानं नः परिहरतु तापं तव वपुः ॥ १८ ॥ पुरो धावंधावं  
द्रविणमदिराघूर्णितदृशां महीपानां नानातरुणतरखेदस्य नियतम् ।  
ममैवायं मन्तुः स्वहितशतहन्तुर्जडधियो वियोगस्ते मातर्यदिह  
करुणातः क्षणमपि ॥ १९ ॥ मरुलीलालोललहरिलुलिताम्भोज-  
पटलीस्खलत्पांसुवातच्छुरणविसरत्कौङ्कुमरुचि । सुरस्त्रीवक्षोजक्षरद-  
गरुजम्बालजटिलं जलं ते जम्बालं मम जननजालं जरयतु  
॥ २० ॥ समुत्पत्तिः पद्मारमणपदपद्मामलनखान्निवासः कन्दर्प-  
प्रतिभटजटाजूटभवने । अथायं व्यासङ्गो हतपतितनिस्तारणविधौ न  
कस्मादुत्कर्षस्तव जननि जागर्ति जगति ॥ २१ ॥ नगेभ्यो यान्तीनां  
कथय तटिनीनां कतमया पुराणां संहर्तुः सुरधुनि कपर्दोऽधिरुरुहे ।  
कया वा श्रीभर्तुः पदकमलमक्षालि सलिलैस्तुलालेशो यस्यां तव

जननि दीयेत कविभिः ॥ २२ ॥ विघन्तां निःशङ्कं निरवधि समाधिं  
 विधिरहो सुखं शेषे शेतां हरिरविरतं नृत्यतु हरः । कृतं प्रायश्चित्तै-  
 रलमथ तपोदानयजनैः सवित्री कामानां यदि जगति जागर्ति  
 भवती ॥ २३ ॥ अनाथः स्नेहाद्रां विगलितगतिः पुण्यगतिदां  
 पतन्विश्वोद्धर्त्रीं गदविगलितः सिद्धभिषजम् । सुधासिन्धुं तृष्णा-  
 कुलितहृदयो मातरमयं शिशुः संप्राप्तस्त्वामहमिह विदध्याः  
 समुचितम् ॥ २४ ॥ विलीनो वै वैवस्वतनगरकोलाहलभरो गता  
 दूता दूरं क्वचिदपि परेतान्मृगयितुम् । विमानानां व्रातो विदलयति  
 वीथीर्दिविषदां कथा ते कल्याणी यदवधि महीमण्डलमगात् ॥ २५ ॥  
 स्फुरत्कामक्रोधप्रबलतरसंजातजटिलज्वरज्वालाजालज्वलितवपुषां  
 नः प्रतिदिनम् । हरन्तां संतापं कमपि मरुदुल्लासलहरीछटाश्चञ्च-  
 त्पाथः कणसरणयो दिव्यसरितः ॥ २६ ॥ इदं हि ब्रह्माण्डं सकल-  
 भुवनाभोगभवनं तरङ्गैर्यस्यान्तर्लुठति परितस्तिन्दुकमिव । स एष  
 श्रीकण्ठप्रविततजटाजूटजटिलो जलानां संघातस्तव जननि तापं  
 हरतु नः ॥ २७ ॥ त्रपन्ते तीर्थानि त्वरितमिह यस्योद्धृतिविधौ करं  
 कर्णे कुर्वन्त्यपि किल कपालिप्रभृतयः । इमं तं मामम्ब त्वमियम-  
 नुकम्पार्द्रहृदये पुनाना सर्वेषामघमथनदर्पं दलयसि ॥ २८ ॥  
 श्वपाकानां व्रातैरमितविचिकित्साविचलितैर्विमुक्तानामेकं किल सदन-  
 मेनःपरिषदाम् । अहो मामुद्धर्तुं जननि घटयन्त्याः परिकरं तव  
 श्लाघां कर्तुं कथमिव समर्थो नरपशुः ॥ २९ ॥ न कोऽप्येतावन्तं  
 खलु समयमारभ्य मिलितो यदुद्धारादाराद्भवति जगतो विस्मय-  
 भरः । इतीमामीहां ते मनसि चिरकालं स्थितवतीमयं संप्राप्तोऽहं  
 सफलयितुमम्ब प्रणय नः ॥ ३० ॥ श्ववृत्तिव्यासङ्गो नियतमथ  
 मिथ्याप्रलदनं कुतर्केष्वभ्यासः सततपरपैशुन्यमननम् । अपि श्रावं-

श्रावं मम तु पुनरेवं गुणगणानृते त्वत्को नाम क्षणमपि निरीक्षेत  
 वदनम् ॥ ३१ ॥ विशालाभ्यामाभ्यां किमिह नयनाभ्या खलु फलं  
 न याभ्यामालीढा परमरमणीया तव तनुः । अयं हि न्यङ्कारो  
 जननि मनुजस्य श्रवणयोर्ययोर्मातिर्यातस्तव लहरिलीलाकलकलः  
 ॥ ३२ ॥ विमानैः स्वच्छन्दं सुरपुरमयन्ते सुकृतिनः पतन्ति  
 द्राक्पापा जननि नरकान्तः परवशाः । विभागोऽयं तस्मिन्नशुभमय-  
 मूर्तौ जनपदे न यत्र त्वं लीलादलितमनुजाशेषकलुषा ॥ ३३ ॥  
 अपि घ्नन्तो विप्रानविरतमुशन्तो गुरुसतीः पिबन्तो मैरेयं पुनरप-  
 हरन्तश्च कनकम् । विहाय त्वय्यन्ते तनुमतनुदानाध्वरजुषामु-  
 पर्यम्ब क्रीडन्त्यखिलसुरसंभावितपदाः ॥ ३४ ॥ अलभ्यं सौरभ्यं  
 हरति नियतं यः सुमनसां क्षणादेव प्राणानपि विरहशस्त्रक्षत-  
 भृताम् । त्वदीयानां लीलाचलितलहरीणां व्यतिकरात् पुनीते सोऽपि  
 द्रागहह पवमानस्त्रिभुवनम् ॥ ३५ ॥ कियन्तः सन्त्येके नियतमिह  
 लोकार्थघटकाः परे पूतात्मानः कति च परलोकप्रणयिनः । सुखं  
 शेते मातस्तव खलु कृपातः पुनरयं जगन्नाथः शश्वत्त्वयि निहित-  
 लोकद्वयभरः ॥ ३६ ॥ भवत्या हि ब्रात्याधमपतितया खण्डपरि-  
 षत्परित्राणस्नेहः श्लथयितुमशक्यः खलु यथा । ममाप्येवं प्रेमा  
 दुरितनिवहेष्वम्ब जगति स्वभावोऽयं सर्वैरपि खलु यतो दुष्परिहरः  
 ॥ ३७ ॥ प्रदोषान्तर्नृत्यत्पुरमथनलीलोद्धृतजटातटाभोगप्रेङ्खलहरि-  
 भुजसंतानविधुतिः । बिलक्रीडक्रोडज्जलडमरुडंकारसुभगस्तिरोघत्तां  
 तापं त्रिदशतटिनीताण्डवविधिः ॥ ३८ ॥ सदैव त्वय्येवार्पितकुश-  
 लचिन्ताभरमिमं यदि त्वं मामम्ब त्यजसि समयेऽस्मिन्सुविषमे ।  
 तदा विश्वासोऽयं त्रिभुवनतलादस्तमयते निराधारा चेयं भवति  
 खलु निर्व्याजकरुणा ॥ ३९ ॥ कपर्दादुल्लस्य प्रणयमिलदर्धाङ्गयुवतेः

पुरारेः प्रेङ्खन्त्यो मृदुलतरसीमन्तसरणौ । भवान्या सापत्न्यस्फुरित-  
नयनं कोमलरुचा करेणाक्षिप्तास्ते जननि विजयन्तां लहरयः ॥ ४० ॥  
प्रपद्यन्ते लोकाः कति न भवतीमत्रभवतीमुपाधिस्तत्रायं स्फुरति  
यदभीष्टं वितरसि । शपे तुभ्यं मातर्मम तु पुनरात्मा सुरधुनि  
स्वभावादेव त्वय्यमितमनुरागं विधृतवान् ॥ ४१ ॥ ललाटे या  
लोकैरिह खलु सलीलं तिलकिता तमो हन्तुं धत्ते तरुणतरमार्तण्ड-  
तुलनाम् । विलुम्पन्ती सद्यो विधिलिखितदुर्वर्णसरणिं त्वदीया  
सन्मृत्स्ना मम हरतु कृत्स्नामपि शुचम् ॥ ४२ ॥ नरान्मूढांस्तत्त-  
जनपदसमासक्तमनसो हसन्तः सोल्लासं विकचकुसुमत्रातमिषतः ।  
पुनानाः सौरभ्यैः सततमलिनो नित्यमलिनान्सखायो नः सन्तु  
त्रिदशतटिनीतीतरवः ॥ ४३ ॥ यजन्येके देवान्कठिनतरसेवांस्त-  
दपरे वितानव्यासक्ता यमनियमरक्ताः कतिपये । अहं तु त्वन्नाम-  
स्मरणभृतकामस्त्रिपथगे जगज्जालं जाने जननि तृणजालेन सदृशम्  
॥ ४४ ॥ अविश्रान्तं जन्मावधि सुकृतजन्मार्जनकृतां सतां श्रेयः  
कर्तुं कति न कृतिनः सन्ति विबुधाः । निरस्तालम्बानामकृतसुकृतानां  
तु भवतीं विनामुष्मिल्लोके न परमवलोके हितकरम् ॥ ४५ ॥  
पयः पीत्वा मातस्तव सपदि यातः सहचरैर्विमूढैः संरन्तुं क्वचिदपि  
न विश्रान्तिमगमम् । इदानीमुत्सङ्गे मृदुपवनसंचारशिशिरे चिरा-  
दुच्चिद्रं मां सदयहृदये शायय चिरम् ॥ ४६ ॥ बधान द्रागेव  
द्रुढिमरमणीयं परिकरं किरीटे बालेन्दुं नियमय पुनः पन्नगगणैः ।  
न कुर्यास्त्वं हेलामितरजनसाधारणतया जगन्नाथस्यायं सुरधुनि  
समुद्धारसमयः ॥ ४७ ॥ शरच्चन्द्रश्वेतां शशिशकलश्वेतालमुकुटां  
करैः कुम्भाम्भोजे वरभयनिरासौ च दधतीम् । सुधाधाराकाराभरण-  
वसनां शुभ्रमकरस्थितां त्वां ये ध्यायन्त्युदयति न तेषां परि-

भवः ॥ ४८ ॥ दरस्मितसमुल्लसद्गदनकान्तिपूरामृतैर्भवज्वलनभर्जितान-  
 निशमूर्जयन्ती नरान् । चिदेकमयचन्द्रिकाचयचमत्कृतिं तन्वती  
 तनोतु मम शं तनोः सपदि शन्तनोरङ्गना ॥ ४९ ॥ मत्रैर्मौलित-  
 मौषधैर्विगलितं त्रस्तं सुराणां गणैः स्रस्तं सान्द्रसुधारसैर्विदलितं  
 गारुत्मतैर्ग्रावभिः । वीचिक्षालितकालियाहितपदे स्वर्लोककल्लोलिनि  
 त्वं तापं तिरयाधुना मम भवज्वालावलीढात्मनः ॥ ५० ॥ द्यूते  
 नागेन्द्रकृत्तिप्रमथगणमणिश्रेणिनन्दीन्दुमुख्यं सर्वस्वं हारयित्वा  
 स्वमथ पुरमिदि द्राक्पणीकर्तुकामे साकृतं हैमवत्या मृदुलहसितया  
 वीक्षितायास्तवाम्ब व्यालोलोल्लासिवल्गल्लहरिनटघटीताण्डवं नः  
 पुनातु ॥ ५१ ॥ विभूषितानङ्गरिपूत्तमाङ्गा सद्यः कृतानेकजनार्ति-  
 भङ्गा । मनोहरोत्तुङ्गचलत्तरङ्गा गङ्गा ममाङ्गान्यमलीकरोतु ॥ ५२ ॥  
 इमां पीयूषलहरीं जगन्नाथेन निर्मिताम् । यः पठेत्तस्य सर्वत्र  
 जायन्ते सुखसंपदः ॥ ५३ ॥ इति पण्डितजगन्नाथविरचिता  
 गङ्गालहरी संपूर्णा ॥

### ३७१. श्रीयमुनाष्टकम् ।

श्रीगणेशा नमः ॥ प्रणौमि यमुनामहं सकलसिद्धिहेतुं मुदा सुरारि-  
 पदपङ्कजस्स्फुरदमन्दरेणूत्कटाम् । तटस्थनवकाननप्रकटमोदपुष्पा-  
 म्बुना सुरासुरसुपूजितस्मरपितुः श्रियं विभ्रतीम् ॥ १ ॥ कलिन्द-  
 गिरिमस्तके पतदमन्दपूरोज्ज्वला विलासगमनोल्लसत्प्रकटगण्डशै-  
 लोन्नता । सघोषगतिदन्तुरा समधिरूढदोलोत्तमा मुकुन्दरतिवर्धिनी  
 जयति पद्मबन्धोः सुता ॥ २ ॥ भुवं भुवनपावनीमधिगतामने-  
 कस्वनैः प्रियाभिरिव सेवितां शुक्रमयूरहंसादिभिः । तरङ्गभुजकङ्क-  
 णप्रकटमुक्तिकावालुकानितम्बतटसुन्दरीं नमत कृष्णचन्द्रप्रियाम्  
 ॥ ३ ॥ अनन्तगुणभूषिते शिवविरिञ्चिदेवस्तुते घनाघननिभे सदा

ध्रुवपराशराभीष्टदे । विशुद्धमथुरातटे सकलगोपगोपीवृते कृपा-  
जलधिसंश्रिते मम मनः सुखं भावय ॥ ४ ॥ यया चरणपद्मजा  
मुररिपोः प्रियंभावुका समागमनतो भवेत्सकलसिद्धिदा सेवताम् ।  
तया सदृशतामियात्कमलजासपत्नीव यद्धरिप्रियकलिन्दजा मनसि  
मे सदा स्थीयताम् ॥ ५ ॥ नमोऽस्तु यमुने सदा तव चरित्रम-  
त्यद्भुतं न जातु यमयातना भवति ते पयःपानतः । यमोऽपि  
भगिनीसुतान् कथमु हन्ति दुष्टानपि प्रियो भवति सेवनात्तव हरेर्यथा  
गोपिकाः ॥ ६ ॥ ममास्तु तव सन्निधौ तनुनवत्वमेतावता न  
दुर्लभतमा रतिर्मु्ररिपौ मुकुन्दप्रिये । अतोऽस्तु तव लालना सुरधुनी  
परं संगमात्तवैव भुवि कीर्तिता न तु कदापि पुष्टिस्थितैः ॥ ७ ॥  
स्तुतिं तव करोति कः कमलजासपत्नि प्रिये हरेर्यदनुसेवया भवति  
सौख्यमामोक्षतः । इयं तव कथाधिका सकलगोपिकासंगमस्मर-  
श्रमजलाणुभिः सकलगात्रजैः संगमः ॥ ८ ॥ तवाष्टकमिदं मुदा  
पठति सूरकन्ये सदा समस्तदुरितक्षयो भवति वै मुकुन्दे रतिः ।  
तथा सकलसिद्धयो मुररिपुश्च संतुष्यति स्वभावविजयो भवेद्भदति  
वल्लभः श्रीहरेः ॥ ९ ॥ इति श्रीवल्लभाचार्यविरचितं श्रीयमुनाष्ट-  
कस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ३७२. गोदावर्यष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ वेदांतवस्तुजनखेदासहं कलितगोदावपुर्वहति  
भेदाय संसृतिभियाम् । मोदागमप्रचुरकेदारमस्तमितभेदां दृशं  
भवतु भेदात्तमात्तकरुणम् । गोदा नयन्ति कलितोदावहाः शमल-  
मोदाय भंगजविनोदा यदीयपवनाः । भो दानवा व्रजत नो दारकं  
भवति वो दागमय्यतुलकोदारतत्तटजुषि ॥ १ ॥ स्नानाय वा त्वयि  
न पानाय याति हतमानादरः सुधुनि का नाम तस्य जननी ।

दानादिसत्कृतिवितानानि कानि भवहानाय चेत्त्वमसि मानातिग-  
 स्वचरिते । धानासु वृष्टिरिव नानाविधानि शुभगानानि भावुक-  
 निधानानि सन्तु मयि ते । ध्यानाध्वनि प्रणययानाय देहि मति-  
 मानाय्य मह्यमयि जानासि कर्तुमुचितम् ॥ २ ॥ वारांनिधेर्गृहिणि  
 मारान्तकादृतविहारां कथं त्ववनिहारायमानसलिलाम् । त्वां राध-  
 यामि भवकारां गतः सुकृतभारार्चितां सततदारानुगोऽहमधमः ।  
 आरात्करिष्यसि कदारातिवेष्टितमगाराधिदैवतमपारावनव्रतधरे ।  
 धाराधरस्य किमु भाराय पल्लवमुदाराधिपे दिश विचाराय मोदम-  
 तुलम् ॥ ३ ॥ माताऽसि लोकमयि मा तापयाशु कुरु शांताधि-  
 मार्तसखि जातासि शर्वशिरसः । शातानि देहि जननान्तान् विना-  
 शय कृतान्ताद्धिभेमि ननु मां तारयातिमलिनम् । त्वां तारिणीं  
 विविधकांतारणिं कृतनितान्तारं क्व नु विधाता विहाय शरणम् ।  
 वातायनेन किमु याता सुखं भुजगपार्श्वधरो विषविघातादृते मुनि-  
 नुते ॥ ४ ॥ यामामनन्ति सरितामाद्यकां गिरिशमोदावहां प्रबलका-  
 मादिषड्भिपुहराम् । तां चिन्तयामि हृदि रामाभिभूषिततटाऽऽविरस्तु  
 मयि सा मान्यपूजितपदा । धामाविनश्वरमुदामादिशापनयदामानि  
 मोहमयलामाकृतानि गलतः । श्यामां मतिं नय विरामाय याति  
 बत यामादिभिर्वितिरामायुषो मम वृथा ॥ ५ ॥ बालाय किं  
 प्रणतपालापि नार्पयसि शालामनल्पगुणजालां कृपामृतप्रयीम् ।  
 कालासिराग्रसति बालाग्रभागमपि शालागमं किमु करालाधिपस्त्य-  
 जति माम् । भालाक्षराणि भवहालान्धकस्य पतितालापहन्नि शतधा  
 लान्तु नाशमयि मे । व्यालायते सुखविशालाक्षवर्तनमरालानि  
 नाशय मुधा लास्यकानि ललिते ॥ ६ ॥ या काचिद्द्भुतगुणा  
 कामधेनुरिव साकाङ्क्षमृग्यचरणा कामपूरणकरी । पाकाय कर्मज-

विपाकातुरायगुरुवाकादरं सुरपताका ददातु ननु सा । शाकाय  
जीव किमु हा कामनस्यमृतपाकादृते न भविताकालसर्पविजयः ।  
पाकारिरास्टति नाकाधिपोऽपि बत मा कापथे त्रिनट राकाजलां श्रय  
धुनीम् ॥ ७ ॥ देवास्तु दिव्यधुनि के वा भजद्वलहसेवाग्रहा जननि  
ते वारिबिन्दुपुरतः । हे वारिताखिलमले वायुजाधिपनुते वारणास्य-  
नमिते वामनीकृतविधे । रेवादिसर्वफलदे वागतीतविभवे वारया-  
शुभमये वासयस्व निकटे । ते वा स्तवार्थमतये वासनां दधति ये  
वान्तवन्निखिलमेवाकलय्य तटगाः ॥ ८ ॥ इति गोदावर्यष्टकं  
संपूर्णम् ॥

### ३७३. काश्यपकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ पापौघविध्वंसकरीं प्रसिद्धां श्रीजाह्नवीभूषित-  
दिव्यरूपाम् । निर्वाणदात्रीं निखिलैकपूज्यां शिवप्रियां चैव नमामि  
काशीम् ॥ १ ॥ देवासुरैर्वन्दितपादपद्मां गायन्ति मुनयः सुयशश्च  
दिव्याम् । प्रसिद्धवेदेषु प्रभावयस्याः शिवप्रियां चैव नमामि  
काशीम् ॥ २ ॥ मुमुर्षूणां चैव शिवप्रदायिनीं वैकुण्ठश्रेणिं गुणम-  
न्दिरां च । शिवाल्यां शोकविनाशिनीं च शिवप्रियां चैव नमामि  
काशीम् ॥ ३ ॥ विनाशशून्यां शिवरूपिणीं च मोहान्धकारस्य  
विनाशिनीं च । ब्रह्मात्मिकां कामप्रदायिनीं च शिवप्रियां वै  
प्रणमामि काशीम् ॥ ४ ॥ विशुद्धविज्ञानघनां त्रिदात्मिकां मोहाटवीं  
चैव दवाग्निभूताम् । शुद्धां सुशान्तां शिवभक्तिदायिनीं शिवप्रियां  
वै प्रणमामि काशीम् ॥ ५ ॥ भूतौघसंतापविनाशिनीं च लोकेश्वरै-  
र्वन्दितदिव्यरूपाम् । महाव्रतां गर्भनिवासकृन्तनीं शिवप्रियां वै  
प्रणमामि काशीम् ॥ ६ ॥ विज्ञानदात्रीं प्रणवस्वरूपां चिन्तामणिं  
भक्तिप्रदां च नित्याम् । गोलोकदात्रीं भवभक्तिदात्रीं शिवप्रियां वै



प्रणमामि काशीम् ॥ ७ ॥ बुद्धेः परां शंकरप्राणवल्लभां मोहार्णवं  
कुम्भसमुद्भवां च । पापेभव्याघ्रीं हरलोकदात्रीं शिवप्रियां वै  
प्रणमामि काशीम् ॥ ८ ॥ प्रातः प्रातः समुत्थाय यः पठेत्प्रयतः  
पुमान् । अन्यदेशेऽपि भक्त्या स काशीवासफलं लभेत् ॥ ९ ॥  
इति श्रीगोपालव्यासविरचितं काश्यप्टकं संपूर्णम् ॥

### ३७४. त्रिवेणीदशकस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ मुक्तामयालंकृतमुद्गवेणी भक्ताभयत्राणसुबद्ध-  
वेणी । मत्तालिगुञ्जन्मकरन्दवेणी श्रीमत्प्रयागे जयति त्रिवेणी ॥ १ ॥  
लोकत्रयैश्वर्यनिदानवेणी तापत्रयोच्चाटनबद्धवेणी । धर्मार्थकामाकल-  
नैकवेणी श्रीमत्प्रयागे ॥ २ ॥ मुक्ताङ्गनामोहनसिद्धवेणी भक्तान्तरा-  
नन्दसुबोधवेणी । वृत्त्यन्तरोद्वेगविवेकवेणी श्रीमत्प्रयागे ॥ ३ ॥  
दुग्धोदधिस्फूर्जसुभद्रवेणी नीलाभ्रशोभाललिता च वेणी । स्वर्ण-  
प्रभाभासुरमध्यवेणी श्रीमत्प्रयागे ॥ ४ ॥ विश्वेश्वरोत्तुङ्गकपर्दिवेणी  
विरञ्चिविष्णुप्रणतैकवेणी । त्रयी पुराणां सुरसार्थवेणी श्रीमत्प्रयागे ॥  
५ ॥ माङ्गल्यसंपत्तिसमृद्धवेणी मात्रान्तरन्यस्तनिदानवेणी ।  
परंपरापातकहारिवेणी श्रीमत्प्रयागे ॥ ६ ॥ निमज्जदुन्मज्जमनुष्य-  
वेणी त्रयोदयोभाग्यविवेकवेणी । विमुक्तजन्माविभवैकवेणी  
श्रीमत्प्रयागे ॥ ७ ॥ सौन्दर्यवेणी सुरसार्थवेणी माधुर्यवेणी  
महनीयवेणी । रत्नैकवेणी रमणीयवेणी श्रीमत्प्रयागे ॥ ८ ॥  
सारस्वताकारविधानवेणी कालिन्दकन्यामयलक्ष्यवेणी । भागीरथी-  
रूपमहेशवेणी श्रीमत्प्रयागे ॥ ९ ॥ श्रीमद्भवानीभवनैक-  
वेणी लक्ष्मीसरस्वत्यभिमानवेणी । माता त्रिवेणीत्रयिरत्नवेणी  
श्रीमत्प्रयागे ॥ १० ॥ त्रिवेणीदशकस्तोत्रं प्रातर्नित्यं पठेन्नरः ।

तस्य वेणी प्रसन्ना स्याद्विष्णुलोकं स गच्छति ॥ ११ ॥ इति  
श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्यश्रीमच्छंकराचार्यविरचितं त्रिवेणी-  
दशकस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ३७५. मुक्तिद्वारस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ सप्त पुर्यस्त्रयो ग्रामा नवारण्या नवोषराः ।  
चतुर्दश सुगुह्यानि मुक्तिस्थानानि भूतले ॥ १ ॥ अयोध्या मथुरा  
माया काशी काञ्ची अवन्तिका । पुरी द्वारावती चैव सप्तैता मुक्ति-  
दायकाः ॥ २ ॥ शालग्रामो महामेरुः संभलो हरिमंदिरे । नंदि-  
ग्रामः कौसले तु त्रयो ग्रामाः प्रकीर्तिताः ॥ ३ ॥ दण्डकं सैन्ध-  
वारण्यं जम्बुमालं च पुष्करम् । उत्पलावर्तमारण्यं नैमिषं कुरुजाङ्ग-  
लम् ॥ ४ ॥ अर्बुदं हिमवन्तं च नवारण्यानि वै विदुः । रेणुका  
सूकरः काशी कालिकालवटेश्वराः ॥ ५ ॥ कालञ्जरो महाकाल  
ऊषरा नव कीर्तिताः । कोकाकुब्जार्बुदाश्चैव मणिकुण्डस्तथा वटः  
॥ ६ ॥ शालग्रामं शूकरं च मथुरा च मम प्रिया । गया निष्क्रमणं  
चैव यत्र लोहार्गलो मम ॥ ७ ॥ प्रोतः स्वामी प्रभासं च बदरी  
मम चाश्रमः । द्विसप्तैतानि गुह्यानि मुक्तिस्थानानि भूतले ॥ ८ ॥  
यानि तीर्थानि वाराहो जगाद् धरणीं प्रति । तानि तीर्थानि विप्रर्षे  
तिष्ठन्ति नरविग्रहे ॥ ९ ॥ स्नानकाले सदा विद्वांस्तानि तीर्थानि  
संस्मरेत् । तत्तत्स्मरणमात्रेण तत्तत्स्नानफलं लभेत् ॥ १० ॥ ब्रह्म-  
रन्ध्रे स्थिताऽयोध्या सहस्रारं तु यद्विदुः । अष्टचक्रा नवद्वारा देवानां  
पूरयोध्यया ॥ ११ ॥ तस्यां हिरण्मयः कोश इत्येषा तैत्तिरी  
श्रुतिः । कर्मेन्द्रियाणि खलु पञ्च तथाऽपराणि ज्ञानेन्द्रियाणि मन-  
आदिचतुष्टयं च ॥ १२ ॥ मथुराणां हतं चक्रं हृदये योगिनो  
विदुः । यत्र वीरोऽभवत्कृष्णः सर्वलोकैकपालकः ॥ १३ ॥ मूला-

धारेऽभवन्माया सर्वाधारमयी यतः । आज्ञाचक्रं स्मृता काशी  
 जाबालश्रुतिमालिनी ॥ १४ ॥ स्वाधिष्ठानं स्मृता कान्ती मणि-  
 पूरमवन्तिका । विशुद्धं द्वारका प्रोक्ता सप्तपुर्यो यथाक्रमात् ॥ १५ ॥  
 आकण्ठात् पादपर्यन्तं शालग्रामः प्रकीर्तितः । आकण्ठात् कटिपर्यन्तं  
 प्रोच्यते हरिमन्दिरम् ॥ १६ ॥ आशिरः कण्ठपर्यन्तं नन्दिग्रामं  
 विदुर्बुधाः । उपस्थे यानि लोमानि तानि दण्डक उच्यते ॥ १७ ॥  
 श्मश्रूणि सैन्धवारण्यं प्रोच्यते मुनिपुङ्गवैः । चिबुके यानि लोमानि  
 जम्बुमालं हि तद्विदुः ॥ १८ ॥ हृदये यानि लोमानि तानि पुष्कर-  
 मुच्यते । दक्षिणे भ्रूलता बाहू उत्पलावर्तकाननम् ॥ १९ ॥ उत्तरे  
 नैमिषारण्यं विदुर्भ्रूल्लरीं बुधाः । कुरुक्षेत्रं मुनिप्रोक्तं दक्षिणस्तन-  
 मण्डलम् ॥ २० ॥ अर्बुदं च स्तनं वामं कथितं तत्त्ववादिभिः ।  
 तत्कुक्षौ हिमवन्तं च सर्वैर्वृद्धैश्च उच्यते ॥ २१ ॥ नवारण्यानि  
 चैतानि शरीरे सन्ति देहिनाम् । रेणुका कण्ठकूपस्था नासिकायां  
 तु सूकरम् । भ्रुवोर्मध्ये स्थिता काशी तदेवानंदकाननम् ॥ २२ ॥  
 भ्रुवोर्घ्राणस्य यः संधिरित्येषा शाश्वती श्रुतिः । वामपाणितले काली  
 कालेश्वरस्तथोत्तरे ॥ २३ ॥ वटेशो पादयोस्तद्वत्तलदेशे प्रकीर्त्यते ।  
 कालञ्जरो ललाटे स्यात् साक्षाच्छम्भोर्निकेतनम् ॥ २४ ॥ नाभिदेशे  
 महाकालस्तन्नाम्ना यत्र वै हरः । नाभिदेशे सदा विद्वांश्चिन्त्यते  
 मोक्षकांक्षिभिः ॥ २५ ॥ सव्यनासापुटं कौकागुदं कुञ्जाचलः  
 स्मृतः । दक्षिणेतरकक्षायां प्रोक्तः स ह्यर्बुदाचलः ॥ २६ ॥  
 राजदन्तबिलं तद्वत्प्रोच्यते मणिकर्णिका । प्रयागो नासिकाग्रे तु स  
 एव वट उच्यते ॥ २७ ॥ केषांचिद्द्वामपादाब्धौ न तु तत्त्वविदां  
 मतम् । इडाभागस्थिता गङ्गा पिङ्गला यमुना नदी ॥ २८ ॥ तयो-  
 र्मध्ये गता नाडी सुषुम्नाख्या सरस्वती । तासां योगे प्रयागः

स्यादिति तत्त्वविदो विदुः ॥ २९ ॥ शालग्रामं तु पादाग्रे सूकरं  
 दक्षनासिका । पुरीतन्मथुरा प्रोक्ता यत्र शेते हरिः स्वयम् ॥ ३० ॥  
 मुक्तौ प्रोक्तं गयाक्षेत्रं लिङ्गं निष्क्रमणं स्मृतम् । लोहार्गलो दन्त-  
 पंक्ती रसना प्रोतनायकः ॥ ३१ ॥ जङ्घसंधिर्हनु ग्रीवा प्रभासं  
 तप्यचक्षते । ब्रह्मस्वं बदरी प्रोक्तं नृदेहे मुनिसत्तम ॥ ३२ ॥  
 एतेषां स्मृतिमात्रेण सर्वं ज्ञानफलं लभेत् । एतद्ब्रह्मं मया प्रोक्तं  
 किमन्यच्छ्रोतुमिच्छसि ॥ ३३ ॥ क्षमातीर्थं तपस्तीर्थं तीर्थमिन्द्रिय-  
 निग्रहः । सर्वभूतदया तीर्थं ध्यानतीर्थं च उच्यते ॥ ३४ ॥ एतानि  
 सर्वतीर्थानि सप्तमध्यानि देहिनाम् । वसन्ति सर्वतीर्थेषु तत्र स्नानं  
 समाचरेत् ॥ ३५ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे मुक्तिद्वारस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ३७६. यमुनाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ब्रजाधिराजनन्दनांबुदाभगात्रचन्दनानुलेपग-  
 न्धवाहिनीं भवाब्धिबीजदाहिनीम् । जगन्नये यशस्विनीं लसत्सु-  
 धीपयस्विनीं भजे कलिन्दनन्दिनीं दुरन्तमोहभंजनीम् ॥ १ ॥  
 रसैकसीमराधिकापदाब्जभक्तसाधिकां तदङ्गरागपिञ्जरप्रभातपुञ्ज-  
 मंजुलाम् । स्वरोचिषातिमंजुलां कृताजनाधिगंजनां भजे ॥ २ ॥  
 ब्रजेन्द्रसूनुराधिकाहृदि प्रपूर्णमानयोर्महारसाब्धिपूरयोरिवातितीव्र-  
 वेगतः । बहिः समुच्छलन्नवप्रवाहरूपिणीमहं भजे ॥ ३ ॥  
 विचित्ररत्नबद्धसत्तटद्वयश्रियोज्ज्वलां विचित्रहंससारसाद्यनन्तपक्षि-  
 संकुलाम् । विचित्रहैममेखलां कृतातिदीनपालनां भजे ॥ ४ ॥  
 अवन्तिकाप्रियां हरेर्महाकृपास्वरूपिणीं विशुद्धभक्तिमुज्ज्वलां परे  
 रसात्मिकां विदुः । सुधास्रुतिं त्वलौकिकीं परेशवर्णरूपिणीं भजे ॥  
 ५ ॥ सुरेन्द्रवृन्दवन्द्यया रसादधिष्ठिते वने सदोपलब्धिमाधवा-  
 ङ्गतौकसद्रसोन्मदाम् । अतीवविह्वलामिवोच्छलत्तरङ्गदोर्लतां

भजे० ॥ ६ ॥ प्रफुल्लपङ्कजाननां लसन्नवोत्पलेक्षणां रथाङ्गनामयुग्म-  
स्तनीमुदारहंसकाम् । नितम्बचारुरोधसं हरेः प्रियां रसोज्ज्वलां भजे०  
॥ ७ ॥ समस्तवेदमस्तकैरगम्यवैभवां सदा महामुनीन्द्रनारदादिभिः  
सदैव भाविताम् । अतुल्यपामरैरपि श्रितां पुमर्थसारदां भजे०  
॥ ८ ॥ य एतदष्टकं बुधस्त्रिकालमादितः पठेत् कलिन्दनन्दिनीं हृदा  
विचिन्त्य विश्ववन्दिताम् । इहैव राधिकापतेः पदाब्जभक्तिमुत्तमा-  
मवाप्य स ध्रुवं भवेत्परत्र तुष्टयानुगः ॥ ९ ॥ इति श्रीगोस्वामि-  
विरचितं यमुनाष्टकं संपूर्णम् ॥

### ३७७. श्रीयमुनाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमाः ॥ मातर्देवि कलिन्दभूधरसुते नीलांबुजश्याम-  
लस्त्रिगधोद्यद्विमलोर्मिताण्डवधरे तुभ्यं नमस्कुर्महे । त्वं तुर्याऽप्यसि  
यत्प्रिया मुररिपोस्तद्वालयतारुण्ययोर्लीलानामवधायिकान्यमहिषी-  
वृन्देषु वंद्याधिकम् ॥ १ ॥ लोकान्यान्कलिकालकीलितमहादुष्कर्म-  
कृटांकितान् नेनिके दिवमुत्पतिष्यति हि सा गीर्वाणकूलंकषा ।  
तन्मातस्त्वयि संसृतिप्रसृमरक्लेशाभिभूतं मनः स्वर्निःश्रेणिमुपेतुम-  
र्कतनये श्रद्धां निबध्नाति नः ॥ २ ॥ सोच्चादं निपतन् कलिन्दशि-  
खरिप्रोत्तुङ्गशृङ्गांतराद्गच्छन् प्राच्यमपां निर्धिं जननि सद्द्वारां प्रवाह-  
स्तव । मध्येमार्गमवाप्तभूरिविषयाँस्तत्कालमुन्मार्जयन् दिश्यान्नः  
श्रियमुद्गरां मरकतश्यामाभिरामद्युतिः ॥ ३ ॥ शय्योत्थायमजस्र-  
मात्मसदनात्त्वां वीक्ष्य लक्ष्यां क्षणान्मातः प्रातरपोहयामि विततं  
दुष्पातकत्रातकम् । संधीभूय समूलकाषमखिलं संकृष्य सत्कर्मणां  
काण्डं द्रागपवर्गगमने येनार्गलीभूयते ॥ ४ ॥ नावासं द्युसदां न  
पन्नगपुरं नान्याश्च भोगस्थलीः श्लाघेऽहं परमत्र किं तु विपुला  
श्रीभारतीया भुवः । स्वेच्छाधावदुदग्रदुष्कलिकरिक्कीडाकृपाणायिता

यास्वेतास्तव वारिणां रविमुते चञ्चन्ति वीचिच्छटाः ॥ ५ ॥ त्वत्कूले  
निवसन् वसन्नवृजिनव्यूहोऽभिषुण्वन्मुहुः पायंपायमपायवारि मधुरं  
वारि ग्रहेशात्मजे । दूरीकृत्य ऋणत्रयं सफलययञ्जन्मात्मनो  
निर्भरानन्दास्वादनतत्परो गमयिता कालं कदाऽयं जनः ॥ ६ ॥  
नो तत्त्वावगमस्पृहा न विपुलायासः सतां संगतौ नो तत्तन्निगमा-  
गमोक्तविविधानुष्ठाननिष्ठापि च । येषां तेऽपि जनाः पतंगतनये  
भित्त्वा पितुर्मण्डलं सोदर्यं त्ववधीर्यं ते सुकृतिनो ब्रह्मात्मतां  
विभ्रति ॥ ७ ॥ वक्तुं ते महिमानमस्मि न विभुर्लोकैः विकुण्ठेऽप्यलं  
कंसारातिकुटुम्बिनि प्रकटयत्प्रीतिं परं कुण्ठिताम् । यद्वेदैरपि मृग्य-  
माणमनिशं तद्ब्रह्म मातर्यतस्त्वत्कूलस्थनिकुंजुमंजुवलयक्रोडेषु  
विक्रीडति ॥ ८ ॥ तैलिङ्गभूत्रिदशमण्डलमण्डनस्य पुर्यां मधोर्निव-  
सतोऽत्र रमेशसूरेः । तिष्ठन् कदाऽपि कुतुकात्तट एव तस्याः  
सनुर्व्यधास्तवमिमं तरणेः सुतायाः ॥ ९ ॥ इति रमेशसूरिसूनु-  
विरचितं यमुनाष्टकं संपूर्णम् ॥

### ३७८. अमृतलहरी ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ मातः पातकपातकारिणि तव प्रातः प्रयातस्तटं  
यः कालिन्दि महेन्द्रनीलपटलस्निग्धां तनुं वीक्षते । तस्यारोहति  
किं न धन्यजनुषः स्वान्तं नितान्तोल्लसन्नीलाम्भोधरवृन्दवन्दित-  
रुचिर्देवो रमावल्लभः ॥ १ ॥ नित्यं पातकभङ्गमङ्गलजुषां श्रीकण्ठ-  
कण्ठत्विषां तोयानां यमुने तव स्तवविधौ को याति वाचालताम् ।  
येषु द्वाग्विनिमज्ज्य सज्जतितरां रम्भाकराम्भोरुहस्फूर्जच्चाामरवीजि-  
तामरपदं जेतुं वराको नरः ॥ २ ॥ दानान्धीकृतगन्धसिन्धुरघटा-  
गण्डप्रणालीमिलद्भृङ्गालीमुखरीकृताय नृपतिद्वाराय बद्धोऽञ्जलिः ।  
त्वत्कूले फलमूलशालिनि मम श्लाघ्यासुरीकुर्वतो वृत्तिं हन्त मुनेः

प्रयान्तु यमुने वीतज्वरा वासराः ॥ ३ ॥ अन्तर्मौक्तिकपुञ्जमञ्जिम  
 बहिः स्निग्धेन्द्रनीलप्रभं मातर्मे मुदमातनोतु करुणावत्या भवत्याः  
 पयः । यद्रूपद्वयधारणादिव नृणामा चूडमामज्जतां तत्कालं तनुते-  
 तरां हरिहराकारामुदारां तनुम् ॥ ४ ॥ तावत्पापकदम्बडम्बरमिदं  
 तावत्कृतान्ताद्भयं तावन्मानसपद्मसद्मनि भवभ्रान्तेर्महानुत्सवः ।  
 यावल्लोचनयोः प्रयाति न मनागम्भोजिनीबन्धुजे नृत्यनुङ्गतरङ्गभ-  
 ङ्गिरुचिरो वारां प्रवाहस्तव ॥ ५ ॥ कालिन्दीति कदापि कौतुकव-  
 शात्त्वन्नामवर्णानिमान् व्यस्तानालपतां नृणां यदि करे खेलन्ति  
 संसिद्धयः । अन्तर्ध्वान्तकुलान्तकारिणि तव क्षिप्तामृते वारिणि  
 स्नातानां पुनरन्वहं स महिमा केनाधुना वर्ण्यते ॥ ६ ॥ स्वर्णस्तेय-  
 परानपेयरसिकान्पाथः कणास्ते यदि ब्रह्मघ्नान्गुरुतल्पगानपि परित्रातुं  
 गृहीतव्रताः । प्रायश्चित्तकुलैरलं तदधुना मातः परेताधिपप्रौढाहं-  
 कृतिहारिहृङ्कृतिमुचामग्रे तव स्रोतसाम् ॥ ७ ॥ पायं पायमपाय-  
 हारि जननि स्वादु त्वदीयं पयो नायं नायमनायनीमकृतिनां मूर्तिं  
 दृशोः कैशवीम् । स्मारं स्मारमपारपुण्यविभवं कृष्णेति वर्णद्वयं  
 चारं चारमितस्ततस्तव तटे मुक्तो भवेयं कदा ॥ ८ ॥ मातर्वारिणि  
 पापहारिणि तव प्राणप्रयाणोत्सवं संप्राप्तेन कृतां नरेण सहतेऽवज्ञां  
 कृतान्तोऽपि यत् । यद्वा मण्डलभेदनादुदयिनीश्चण्डद्युतिर्वेदनाश्चित्रं  
 तत्र किमप्रमेयमहिमा प्रेमा यदौत्पत्तिकः ॥ ९ ॥ संज्ञाकान्तसुते  
 कृतान्तभगिनि श्रीकृष्णनित्यप्रिये पापोन्मूलिनि पुण्यघात्रि यमुने  
 कालिन्दि तुभ्यं नमः । एवं स्नानविधौ पठन्ति खलु ये नित्यं गृही-  
 तव्रतास्तानामञ्जितसंख्यजन्मजनितं पापं क्षणादुज्झति ॥ १० ॥  
 अयं पण्डितराजेन श्रीजगन्नाथशर्मणा । स्ववः कलिन्दनन्दिन्या  
 निर्मलो निरमीयत ॥ ११ ॥ इति पण्डितराजश्रीजगन्नाथकृता-  
 मृतलहरी संपूर्णा ॥

## वेदांतस्तोत्राणि ।

### ३७९. आत्मपंचकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ नाहं देहो नेंद्रियाण्यंतरंगं नाहंकारः प्राणवर्गो  
 न बुद्धिः । दारापत्यक्षेत्रवित्तादिदूरः साक्षी नित्यः प्रत्यगात्मा  
 शिवोऽहम् ॥ १ ॥ रज्ज्वज्ञानाद्भाति रज्जुर्यथाऽहिः स्वात्माज्ञाना-  
 दात्मनो जीवभावः । आसोक्त्याऽहिभ्रांतिनाशे स रज्जुर्जीवो नाहं  
 देशिकोक्त्या शिवोऽहम् ॥ २ ॥ आभातीदं विश्वमात्मन्यसत्यं  
 सत्यज्ञानानंदरूपे विमोहात् । निद्रामोहात्स्वप्नवत्तत्र सत्यं शुद्धः  
 पूर्णो नित्य एकः शिवोऽहम् ॥ ३ ॥ मत्तो नान्यात्किंचिदत्रास्ति  
 विश्वं सत्यं बाह्यं वस्तु मायोपकृतम् । आदर्शातर्भासमानस्य तुल्यं  
 मय्यद्वैते भाति तस्माच्छिवोऽहम् ॥ ४ ॥ नाहं जातो न प्रवृद्धो न  
 नष्टो देहस्योक्ताः प्राकृताः सर्वधर्माः । कर्तृत्वादिश्चिन्मयस्यास्ति  
 नाहंकारस्यैव ह्यात्मनो मे शिवोऽहम् ॥ ५ ॥ नाहं जातो जन्ममृत्यु-  
 कुतो मे नाहं प्राणः श्रुत्पिपासे कुतो मे । नाहं चित्तं शोकमोहौ  
 कुतो मे नाहं कर्ता बंधमोक्षौ कुतो मे ॥ ६ ॥ इति श्रीमच्छंकरा-  
 चार्यविरचितमात्मपंचकस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ३८०. वैराग्यपंचकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ शिलं किमनलं भवेदनलमौदरं बाधितुं  
 पयः प्रसृतिपूरकं किमु न धारकं सारसम् । अयत्नमल-  
 मल्पकं पथि पटच्चरं कच्चरं भजंति विबुधा मुधा अहह  
 कुक्षितः कुक्षितः ॥ १ ॥ दुरीश्वरद्वारबहिर्वितर्दिकादुरासिकायै  
 रचितोऽयमंजलिः । यदंजनाभं निरपायमस्ति नो धनंजयस्यंदन-  
 भूषणं धनम् ॥ २ ॥ काचाय नीचं कमनीयवाचा मोचाफलस्वाद-  
 मुचा न याचे । दयाकुचेले धनदत्कुचेले स्थिते कुचेले श्रितमा-



कुचेले ॥ ३ ॥ क्षोणीकोणशतांशपालनखलहुर्वारवर्गानलक्षुभ्यक्षुद्र-  
नरेंद्रचादुरचनां धन्यां न मन्यामहे । देवं सेवितुमेव निश्चिनुमहे  
योऽसौ दयालुः पुरा धानामुष्टिमुचे कुचेलमुनये धत्ते स्म  
वित्तेशताम् ॥ ४ ॥ शरीरपतनावधि प्रभुनिषेवणापादनाद्विधन-  
धनंजयप्रशमदं धनं दंधनम् । धनंजयविवर्धनं धनमुदूढगोवर्धनं  
सुसाधनमबाधनं सुमनसां समाराधनम् ॥ ५ ॥ इति श्रीसर्वतंत्र-  
स्वतंत्रवेदांताचार्यकृतं वैराग्यपंचकं संपूर्णम् ॥

### ३८१. धन्याष्टकस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ तज्ज्ञानं प्रशमकरं यदिद्विद्याणां तज्ज्ञेयं यदु-  
पनिषत्सु निश्चितार्थम् । ते धन्या भुवि परमार्थनिश्चितेहाः शेषास्तु  
अमनिलये परिभ्रमंति ॥ १ ॥ आदौ विजित्य विषयान्मदमोहराग-  
द्वेषादिशत्रुगणमाहृतयोगराज्याः । ज्ञात्वाऽमृतं समनुभूय परात्म-  
विद्याकान्तासुखा वनगृहे विचरन्ति धन्याः ॥ २ ॥ त्यक्त्वा गृहे  
रतिमधोगतिहेतुभूतामात्मेच्छयोपनिषदर्थरसं पिबंतः । वीतस्पृहा  
विषयभोगपदे विरक्ता धन्याश्चरन्ति विजनेषु विरक्तसंगाः ॥ ३ ॥  
त्यक्त्वा ममाहमिति बंधकरे पदे द्वे मानावमानसदृशाः समदर्शि-  
नश्च । कर्तारमन्यमवगम्य तदर्पितानि कुर्वन्ति कर्मपरिपाकफलानि  
धन्याः ॥ ४ ॥ त्यक्त्वेषणात्रयमवेक्षितमोक्षमार्गा भैक्ष्यामृतेन  
परिकल्पितदेहयात्राः । ज्योतिः परात्परतरं परमात्मसंज्ञं धन्या  
द्विजा रहसि हृद्यवलोकयन्ति ॥ ५ ॥ नासन्न सन्न सदसन्न महन्न  
चाणु न स्त्री पुमान्न च नपुंसकमेकबीजम् । यैर्ब्रह्म तत्समनुपासित-  
मेकचित्तैर्धन्या विरेजुरितरे भवपाशबद्धाः ॥ ६ ॥ अज्ञानपंक-  
परिमग्नमपेतसारं दुःखालयं मरणजन्मजरावसक्तम् । संसारबंधन-  
मनित्यमवेक्ष्य धन्या ज्ञानासिना तदवशीर्य विनिश्चरन्ति ॥ ७ ॥

शान्तरनन्यमतिभिर्मधुरस्वभावैरेकत्वनिश्चितमनोभिरपेतमोहैः ।  
 साकं वनेषु विजितात्मपदस्वरूपं तद्वस्तु सम्यगनिशं विमृशंति  
 धन्याः ॥ ८ ॥ अहिमिव जनयोगं सर्वदा वर्जयेद्यः कुणपमिव  
 सुनारीं त्यक्तकामो विरागी । विषमिव विषयान् यो मन्यमानो  
 दुरंतान् जयति परमहंसो मुक्तिभावं समेति ॥ ९ ॥ संपूर्णं जगदेव  
 नंदनवनं सर्वेऽपि कल्पद्रुमा गांगं वारि समस्तवारिनिवहः पुण्याः  
 समस्ताः क्रियाः । वाचः प्राकृतसंस्कृताः श्रुतिशिरो वाराणसी  
 मेदिनी सर्वावस्थितिरस्य वस्तुविषया दृष्टे परब्रह्मणि ॥ १० ॥ इति  
 श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्यश्रीमच्छंकराचार्यविरचितं धन्याष्टक-  
 स्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ३८२. विज्ञाननौका ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ तपोयज्ञदानादिभिः शुद्धबुद्धिर्विरक्तो नृपादौ  
 पदे तुच्छबुद्ध्या । परित्यज्य सर्वं यदाप्नोति तत्त्वं परं ब्रह्म नित्यं  
 तदेवाहमस्मि ॥ १ ॥ दयालुं गुरुं ब्रह्मनिष्ठं प्रशांतं समाराध्य मत्या  
 विचार्य स्वरूपम् । यदाप्नोति तत्त्वं निदिध्यास्य विद्वान्परं ब्रह्म ०  
 ॥ २ ॥ यदानंदरूपं प्रकाशस्वरूपं निरस्तप्रपंचं परिच्छेदशून्यम् ।  
 अहं-ब्रह्मवृत्त्यैकगम्यं तुरीयं परं ब्रह्म ० ॥ ३ ॥ यदज्ञानतो भाति  
 विश्वं समस्तं विनष्टं च सद्यो यदात्मप्रबोधे । मनोवागतीतं विशुद्धं  
 विमुक्तं परं ब्रह्म ० ॥ ४ ॥ निषेधे कृते नेतिनेतीति वाक्यैः समा-  
 धिस्थितानां यदाभाति पूर्णम् । अवस्थात्रयातीतमेकं तुरीयं परं  
 ब्रह्म ० ॥ ५ ॥ यदानंदलेशैः समानंदि विश्वं यदाभाति सत्त्वे तदा-  
 भाति सर्वम् । यदालोचने रूपमन्यत्समस्तं परं ब्रह्म ० ॥ ६ ॥  
 अनंतं विशुं सर्वयोनिं निरीहं शिवं संगहीनं यदोकारगम्यम् ।  
 निराकारमत्युज्ज्वलं मृत्युहीनं परं ब्रह्म ० ॥ ७ ॥ यदानंदसिंधौ

निमग्नः पुमान्स्यादविद्याविलासः समस्तप्रपंचः । यदा न स्फुरत्यद्भुतं  
यन्निमित्तं परं ब्रह्म ० ॥ ८ ॥ स्वरूपानुसंधानरूपां स्तुतिं यः  
पठेदादराद्भक्तिभावो मनुष्यः । शृणोतीह वा नित्यमुद्युक्तचित्तो  
भवेद्विष्णुरत्रैव वेदप्रमाणात् ॥ ९ ॥ विज्ञाननावं परिगृह्य कश्चित्त-  
रेद्यदज्ञानमयं भवाब्धिम् । ज्ञानासिना यो हि विच्छिद्य तृष्णां  
विष्णोः पदं याति स एव धन्यः ॥ १० ॥ इति श्रीमच्छंकराचार्य-  
विरचिता विज्ञाननौका संपूर्णा ॥

### ३८३. मोहमुद्गरस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ मूढ जहीहि धनागमतृष्णां कुरु सद्बुद्धिं  
मनसि वितृष्णाम् । यल्लभसे निजकर्मोपात्तं वित्तं तेन विनोदय  
चित्तम् ॥ १ ॥ अर्थमनर्थं भावय नित्यं नास्ति ततः सुखलेशः  
सत्यम् । पुत्रादपि धनभाजां भीतिः सर्वत्रैषा कथिता नीतिः ॥ २ ॥  
मा कुरु जनधनयौवनगर्वं हरति निमेषात्कालः सर्वम् । मायामय-  
मिदमखिलं हित्वा ब्रह्मपदं त्वं प्रविशाशु विदित्वा ॥ ३ ॥  
नलिनीदलगतजलवत्तरलं तद्ब्रह्मजीवनमतिशयचपलम् । क्षणमपि  
सज्जनसंगतिरेका भवति भवार्णवतरणे नौका ॥ ४ ॥ यावज्जननं  
तावन्मरणं तावज्जननी जठरे शयनम् । इति संसारे स्फुटरदोषे  
कथमिव मानव तव संतोषः ॥ ५ ॥ कामं क्रोधं मोहं लोभं  
त्यक्त्वात्मानं भावय कोऽहम् । आत्मज्ञानविहीना मूढास्ते पच्यंते  
नरकनिगूढाः ॥ ६ ॥ सुरमंदिरतरुमूलनिवासः शय्या भूतलमजिनं  
वासः । सर्वपरिग्रहभोगत्यागः कस्य सुखं न करोति विरागः ॥ ७ ॥  
शत्रौ मित्रे पुत्रे बंधौ मा कुरु यत्नं विग्रहसंधौ । भव समचित्तः  
सर्वत्र त्वं वाञ्छस्यचिराद्यदि विष्णुत्वम् ॥ ८ ॥ त्वयि मयि  
चान्यत्रैको विष्णुर्न्यर्थं कुप्यसि सर्वसहिष्णुः । सर्वस्मिन्नपि पश्या-

त्मानं सर्वत्रोत्सृज भेदाज्ञानम् ॥ ९ ॥ प्राणायामं प्रत्याहारं नित्या-  
 नित्यविवेकविचारम् । जाप्यसमेतसमाधिविधानं कुर्ववधानं मह-  
 दवधानम् ॥ १० ॥ अष्टकुलाचलसप्तसमुद्राः ब्रह्मपुरंदरदिनकर-  
 रुद्राः । न त्वं नाहं नायं लोकस्तदपि किमर्थं क्रियते शोकः ॥ ११ ॥  
 सुखतः क्रियते रामाभोगः पश्चाद्धन्त शरीरे रोगः । यद्यपि लोके  
 मरणं शरणं तदपि न मुञ्चति पापाचरणम् ॥ १२ ॥ यावज्जीवो  
 निवसति देहे कुशलं तावत्पृच्छति देहे । गतवति वायौ देहापाये  
 भार्या बिभ्यति तस्मिन्काये ॥ १३ ॥ नलिनीदलगतजलवत्तरलं  
 तद्वज्जीवनमतिशयचपलम् । विद्धि व्याध्यभिमानग्रस्तं लोकं शोक-  
 हतं च समस्तम् ॥ १४ ॥ का तेऽष्टादशदेशे चिंता वातुल तव किं  
 नास्ति नियंता । यस्त्वां हस्ते सुदृढनिबद्धं बोधयति प्रभवादिविरु-  
 द्धम् ॥ १५ ॥ गुरुचरणांबुजनिर्भरभक्तः संसारादचिराद्भवमुक्तः ।  
 सेंद्रियमानसनियमादेवं द्रक्ष्यसि निजहृदयस्थं देवम् ॥ १६ ॥  
 इति श्रीमच्छंकराचार्यविरचितं मोहमुद्गरस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ३८४. चर्पटपंजरिकास्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ दिनमपि रजनी सायं प्रातः शिशिरवसंतौ  
 पुनरायातः । कालः क्रीडति गच्छत्यायुस्तदपि न मुंचत्याशावायुः  
 ॥ १ ॥ भज गोविंदं भज गोविंदं भज गोविंदं मूढमते । प्राप्ते  
 सन्निहिते मरणे नहि नहि रक्षति डुकुञ्करणे ( ध्रुवपदम् ) । अग्रे  
 वह्निः पृष्ठे भानू रात्रौ चुबुकसमर्पितजानुः । करतलभिक्षा तरुतल-  
 वासस्तदपि न मुंचत्याशापाशः । भज गोविंदं ॥ २ ॥ यावद्वित्तो-  
 पार्जनसक्तस्तावन्नजपरिवारो रक्तः । पश्चाद्धावति जर्जरदेहे वार्ता  
 पृच्छति कोऽपि न गेहे । भज गोविंदं भज ॥ ३ ॥ जटिलो मुंडी  
 लुंचितकेशः काषायांबरबहुकृतवेषः । पश्यन्नपि च न पश्यति मूढ

उदरनिमित्तं बहुकृतवेषः । भज गोविंदं० ॥ ४ ॥ भगवद्गीता  
किंचिदधीता गंगाजललवकणिका पीता । सकृदपि यस्य मुरारि-  
समर्चा तस्य यमः किं कुरुते चर्चा । भज गोविंदं भज० ॥ ५ ॥  
अंगं गलितं पलितं मुंडं दशनविहीनं जातं तुंडम् । वृद्धो याति  
गृहीत्वा दंडं तदपि न मुंचत्याशार्पिडम् । भज गोविंदं० ॥ ६ ॥  
बालस्तावत्क्रीडासक्तस्तरुणस्तावत्तरुणीरक्तः । वृद्धस्तावच्चिंतामग्नः  
परे ब्रह्मणि कोऽपि न लग्नः । भज गोविंदं० ॥ ७ ॥ पुनरपि  
जननं पुनरपि मरणं पुनरपि जननीजठरे शयनम् । इह संसारे  
खलु दुस्तारे कृपयाऽपारे पाहि मुरारे । भज गोविंदं० ॥ ८ ॥  
पुनरपि रजनी पुनरपि दिवसः पुनरपि पक्षः पुनरपि मासः ।  
पुनरप्ययनं पुनरपि वर्षं तदपि न मुंचत्याशामर्षम् । भज गोविंदं  
भज० ॥ ९ ॥ वयसि गते कः कामविकारः शुष्के नीरे कः  
कासारः । क्षीणे वित्ते कः परिवारो ज्ञाते तत्त्वे कः संसारः । भज  
गोविंदं भज० ॥ १० ॥ नारीस्तनभरजघननिवेशं दृष्ट्वा मिथ्या-  
मोहावेशम् । एतन्मांसवसादिविकारं मनसि विचारय वारंवारम् ।  
भज गोविंदं भज गो० ॥ ११ ॥ कस्त्वं कोऽहं कुत आयातः का  
मे जननी को मे तातः । इति परिभावय सर्वमसारं विश्वं त्यक्त्वा  
स्वप्नविचारम् । भज गोविंदं भज० ॥ १२ ॥ गेयं गीतानामसहस्रं  
ध्येयं श्रीपतिरूपमजस्रम् । नेयं सज्जनसंगे चित्तं देयं दीनजनाय  
च वित्तम् । भज गोविंदं० ॥ १३ ॥ यावज्जीवो निवसति देहे  
कुशलं तावत्पृच्छति गेहे । गतवति वायौ देहापाये भार्या बिभ्यति  
तस्मिन्काये । भज गोविंदं भज० ॥ १४ ॥ सुखतः क्रियते रामा-  
भोगः पश्चाद्धंत शरीरे रोगः । यद्यपि लोके मरणं शरणं तदपि न

मुंचति पापाचरणम् । भज गोविंदं भज० ॥ १५ ॥ रथ्याचर्पट-  
विरचितकंथः पुण्यापुण्यविवर्जितपंथः । नाहं न त्वं नायं लोकस्तदपि  
किमर्थं क्रियते शोकः । भज गोविंदं भज० ॥ १६ ॥ कुरुते  
गंगासागरगमनं व्रतपरिपालनमथवा दानम् । ज्ञानविहीने सर्वमनेन  
मुक्तिर्न भवति जन्मशतेन । भज गोविंदं भज० ॥ १७ ॥ इति  
श्रीमच्छंकराचार्यविरचितं चर्पटपंजरिकास्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ३८५. वाक्यसुधास्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ रूपं दृश्यं लोचनं दृक् दृग्दृश्यं दृक्त्वु मान-  
सम् । दृश्या धीवृत्तयः साक्षी दृगेव न तु दृश्यते ॥ १ ॥ नीलपीत-  
स्थूलसूक्ष्मह्रस्वदीर्घादिभेदतः । नानाविधानि रूपाणि पश्येल्लोचन-  
मेकधा ॥ २ ॥ आन्ध्यमान्द्यपटुत्वेषु नेत्रधर्मेषु चैकधा । सङ्कल्प-  
येन्मनःश्रोत्रत्वगादौ योज्यतामिदम् ॥ ३ ॥ कामसंकल्पसंदेहाः  
श्रद्धाश्रद्धे धृतीतरे । हीर्षीर्भीरित्येवमादीन्भासयत्येकधा चितिः  
॥ ४ ॥ नोदेति नास्तमायाति न वृद्धिं याति न क्षयम् । स्वयं  
विभात्यथान्यानि भासयेत्साधनं विना ॥ ५ ॥ चिच्छायावेशतो  
बुद्धौ भानं धीस्तु द्विधा स्थिता । एकाऽहंकृतिरन्या स्यादन्तःकरण-  
रूपिणी ॥ ६ ॥ छायाऽहंकारयोरैक्यं तप्तायःपिण्डवन्मतम् । तद-  
हंकारतादात्म्याद्देहश्चेतनतामियात् ॥ ७ ॥ अहंकारस्य तादात्म्यं  
चिच्छायादेहसाक्षिभिः । सहजं कर्मजं भ्रांतिजन्यं च त्रिविधं  
क्रमात् ॥ ८ ॥ संबन्धिनो सतोर्नास्ति निवृत्तिः सहजस्य तु । कर्म-  
क्षयात्प्रबोधाच्च निवर्तेते क्रमादुभे ॥ ९ ॥ अहंकारलये सुप्तौ भवे-  
द्देहोऽप्यचेतनः । अहंकृतिविकासोऽर्धः स्वप्नः सर्वस्तु जागरः  
॥ १० ॥ अन्तःकरणवृत्तिश्च चितिच्छायैक्यमागता । वासनां कल्प-  
येत्स्वप्ने बोधे तु विषयान्बहिः ॥ ११ ॥ मनोऽहंकृत्युपादानं लिङ्ग-

मेकं जडात्मकम् । अवस्थान्त्रयमन्वेति जायते त्रियते तथा ॥ १२ ॥  
 शक्तिद्वयं हि मायाया विक्षेपावृत्तिरूपकम् । विक्षेपशक्तिर्लिङ्गादि-  
 ब्रह्माण्डान्तं सृजेद्बहिः ॥ १३ ॥ सृष्टिर्नाम ब्रह्मरूपे सच्चिदानन्द-  
 वस्तुनि । अबधौ फेनादिवत्सर्वं नामरूपप्रसारणा ॥ १४ ॥ अन्तर्दृ-  
 ग्दृश्ययोर्भेदं बहिश्च ब्रह्मसर्गयोः । आवृणोत्यपरा शक्तिः सा संसा-  
 रस्य कारणम् ॥ १५ ॥ साक्षिणः पुरतो भातं लिङ्गं देहेन संयुतम् ।  
 चितिच्छायासमावेशाज्जीवः स्याद्वावहारिकः ॥ १६ ॥ अस्य जीव-  
 त्वमारोपात्साक्षिण्यप्यवभासते । आवृतौ तु विनष्टायां भेदे भाते  
 प्रयाति तत् ॥ १७ ॥ तथा सर्गब्रह्मणोश्च भेदमावृत्य तिष्ठति । या  
 शक्तिस्तद्ब्रह्माद्ब्रह्म विकृतत्वेन भासते ॥ १८ ॥ अत्राप्यावृत्तिनाशेन  
 विभाति ब्रह्मसर्गयोः । भेदस्तयोर्विकारः स्यात्सर्गेन ब्रह्मणि क्वचित्  
 ॥ १९ ॥ अस्ति भाति प्रियं रूपं नाम चेत्येशपंचकम् । आद्यत्रयं  
 ब्रह्मरूपं जगद्रूपं ततोऽद्वयम् ॥ २० ॥ खं वाय्वग्निजलोर्वीषु देव-  
 तिर्यङ्गरादिषु । अभिन्ना सच्चिदानन्दा भिद्येते रूपनामनी ॥ २१ ॥  
 उपेक्ष्य नामरूपे द्वे सच्चिदानन्दतत्परः । समाधिं सर्वदा कुर्याद्बृदये  
 चाथवा बहिः ॥ २२ ॥ सविकल्पो निर्विकल्पः समाधिर्द्विविधो  
 हृदि । दृश्यशब्दानुविद्धो यः सविकल्पः पुनर्द्विधा ॥ २३ ॥ कामा-  
 द्याश्चित्तगा दृश्यास्तत्साक्षित्वेन चेतनम् । ध्यायेद्दृश्यानुविद्धोऽयं स-  
 माधिः सविकल्पकः ॥ २४ ॥ असङ्गः सच्चिदानन्दः स्वप्रभो द्वैतवर्जितः ।  
 अस्मीति शब्दविद्धोऽयं समाधिः सविकल्पकः ॥ २५ ॥ स्वानुभूति-  
 रसावेशाद्दृश्यशब्दानुपेक्षते । निर्विकल्पसमाधिः स्यान्निर्वातस्थित-  
 दीपवत् ॥ २६ ॥ हृदीव बाह्यदेशेऽपि यस्मिन्कस्मिंश्च वस्तुनि ।  
 समाधिराद्यः सन्मात्रान्नामरूपपृथक्कृतिः ॥ २७ ॥ अखण्डैकरसं  
 वस्तु सच्चिदानन्दलक्षणम् । इत्यवच्छिन्नचिन्तेयं समाधिर्मध्यमो

भवेत् ॥ २८ ॥ स्तब्धीभावो रसास्वादात्तृतीयः पूर्ववन्मतः । एतैः  
 समाधिभिः षड्भिर्नयेत्कालं निरन्तरम् ॥ २९ ॥ देहाभिमाने  
 गलिते विज्ञाते परमात्मनि । यत्र यत्र मनो याति तत्र तत्र समा-  
 धयः ॥ ३० ॥ भिद्यते हृदयग्रन्थिच्छिद्यन्ते सर्वसंशयाः । क्षीयन्ते  
 चास्य कर्माणि तस्मिन्दृष्टे परावरे ॥ ३१ ॥ अवच्छिन्नश्चिदाभास-  
 स्तृतीयः स्वप्नकल्पतः । विज्ञेयस्त्रिविधो जीवस्तत्राद्यः पारमार्थिकः  
 ॥ ३२ ॥ अवच्छेदः कल्पितः स्यादवच्छेद्यं तु वास्तवम् । तस्मिञ्जीव-  
 त्वमारोपाद्ब्रह्मत्वं तु स्वभावतः ॥ ३३ ॥ अवच्छिन्नस्य रूपस्य  
 पूर्णेन ब्रह्मणैकता । तत्त्वमस्यादिवाक्यानि जगुर्नेतरजीवयोः ॥ ३४ ॥  
 ब्रह्मण्यवस्थिता माया विक्षेपावृतिरूपिणी । आवृत्या खण्डतां तस्मिन्  
 जगज्जीवौ प्रकल्पितौ ॥ ३५ ॥ जीवो धीस्थचिदाभासो भवेद्भोक्ता  
 हि कर्मकृत् । भोग्यरूपमिदं सर्वं जगत्स्याद्भूतभौतिकम् ॥ ३६ ॥  
 अनादिकालमारभ्य मोक्षात्पूर्वमिदं द्वयम् । व्यवहारे स्थितं तस्मा-  
 दुभयं व्यावहारिकम् ॥ ३७ ॥ चिदाभासस्थिता निद्रा विक्षेपावृति-  
 रूपिणी । आवृत्य जीवजगती पूर्वं नूत्ने तु कल्पयेत् ॥ ३८ ॥  
 प्रतीतकाल एवैते स्थितत्वात्प्रातिभासिके । न हि स्वप्नप्रबुद्धस्य पुनः  
 स्वप्नस्थितिस्तयोः ॥ ३९ ॥ प्रातिभासिकजीवो यस्तज्जगत्प्रातिभा-  
 सिकम् । वास्तवं मन्यतेऽन्यस्तु मिथ्येति व्यावहारिकः ॥ ४० ॥  
 व्यावहारिकजीवो यस्तज्जगद्वावहारिकम् । सत्यं प्रत्येति मिथ्येति  
 मन्यते पारमार्थिकः ॥ ४१ ॥ पारमार्थिकजीवस्तु ब्रह्मैक्यं पार-  
 मार्थिकम् । प्रत्येति वीक्षते नान्यद्वीक्षते त्वनृतात्मनः ॥ ४२ ॥  
 माधुर्यद्रवशैत्यादिजलधर्मास्तरङ्गके । अनुगम्याऽथ तन्निष्ठे फेनेऽप्य-  
 नुगता यथा ॥ ४३ ॥ साक्षिस्थाः सच्चिदानन्दाः सम्बन्धाद्वावहा-  
 रिके । तद्द्वारेणानुगच्छन्ति तथैव प्रातिभासिके ॥ ४४ ॥ लये



फेनस्य तद्धर्मा द्रवाद्यास्तु तरङ्गके । तस्यापि विलये नीरे तिष्ठन्त्येते  
 यथा पुरा ॥ ४५ ॥ प्रातिभासिकजीवस्य लये स्युर्व्यावहारिके ।  
 तल्लये सच्चिदानन्दाः पर्यवस्यन्ति साक्षिणि ॥ ४६ ॥ इति श्रीम-  
 द्द्रोविन्दभगवत्पूज्यपादशिष्यश्रीशंकराचार्यविरचितं वाक्यसुधास्तोत्रं  
 संपूर्णम् ॥

### ३८६. हस्तामलकस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ कस्त्वं शिशो कस्य कुतोऽसि गंता किं नाम  
 ते त्वं कुत आगतोऽसि । एतन्मयोक्तं वद चार्भक त्वं मत्प्रीतये  
 प्रीतिविवर्धनोऽसि ॥ १ ॥ हस्तामलक उवाच ॥ नाहं मनुष्यो न  
 च देवयक्षौ न ब्राह्मणक्षत्रियवैश्यशूद्रः । न ब्रह्मचारी न गृही  
 वनस्थो मिश्रुर्न चाहं निजबोधरूपः ॥ २ ॥ निमित्तं मनश्चक्षुरा-  
 दिप्रवृत्तौ निरस्ताखिलोपाधिराकाशकल्पः । रविलोकचेष्टानिमित्तं  
 यथा यः स नित्योपलब्धिस्वरूपोऽहमात्मा ॥ ३ ॥ यमङ्गयुष्णव-  
 द्धित्यबोधस्वरूपं मनश्चक्षुरादीन्यबोधात्मकानि । प्रवर्तत आश्रित्य  
 निष्कंपमेकं स नित्योपलब्धिस्वरूपोऽहं ॥ ४ ॥ मुखाभासको  
 दर्पणो दृश्यमानो मुखत्वात्पृथक्त्वेन नैवास्तु वस्तु । चिदाभासको  
 धीषु जीवोऽपि तद्वत् स नित्योपलब्धिस्वरूपो ॥ ५ ॥ यथा  
 दर्पणाभाव आभासहानौ मुखं विद्यते कल्पनाहीनमेकम् । तथा  
 धीवियोगे निराभासको यः स नित्योप० ॥ ६ ॥ मनश्चक्षुरादेर्वि-  
 युक्तः स्वयं यो मनश्चक्षुरादेर्मनश्चक्षुरादिः । मनश्चक्षुरादेरगम्य-  
 स्वरूपः स नित्योप० ॥ ७ ॥ य एको विभाति स्वतःशुद्धचेताः  
 प्रकाशस्वरूपोऽपि नानेव धीषु । शरावोदकस्थो यथा भानुरेकः  
 स नित्योपल० ॥ ८ ॥ यथाऽनेकचक्षुःप्रकाशो रविर्न क्रमेण प्रका-  
 शीकरोति प्रकाश्यम् । अनेका धियो यस्तथैकः प्रबोधः स

नित्योपल० ॥ ९ ॥ विवस्वत्यभातं यथारूपमक्षं प्रगृह्णाति  
 नाभातमेवं विवस्वान् । यदाभात आभासयत्यक्षमेकः स नित्यो-  
 पल० ॥ १० ॥ यथा सूर्य एकोऽप्स्वनेकश्चलासु स्थिरास्वप्यनन्य-  
 द्विभाव्यस्वरूपः । चलासु प्रभिन्नः सुधीष्वेक एव स नित्योपल०  
 ॥ ११ ॥ घनच्छन्नदृष्टिर्घनच्छन्नमर्कं यथा निष्प्रभं मन्यते चाति-  
 मूढः । तथा बद्धवद्भाति यो मूढदृष्टेः स नित्योपल० ॥ १२ ॥  
 समस्तोषु वस्तुष्वनुस्यूतमेकं समस्तानि वस्तूनि यन्न स्पृशंति ।  
 वियद्वत्सदा शुद्धमच्छस्वरूपः स नित्यो० ॥ १३ ॥ उपाधौ यथा  
 भेदता सन्मणीनां तथा भेदता बुद्धिभेदेषु तेऽपि । यथा चंद्रिकाणां  
 जले चंचलत्वं तथा चंचलत्वं तवापीह विष्णो ॥ १४ ॥ इति  
 श्रीमच्छंकराचार्यकृतं हस्तामलकस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ३८७. आत्मबोधः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ तपोभिः क्षीणपापानां शांतानां वीतरागि-  
 णाम् । मुमुक्षूणामपेक्ष्योऽयमात्मबोधो विधीयते ॥ १ ॥ बोधोऽन्य-  
 साधनेभ्यो हि साक्षान्मोक्षैकसाधनम् । पाकस्य वह्निवज्ज्ञानं विना  
 मोक्षो न सिद्ध्यति ॥ २ ॥ अविरोधितया कर्म नाविद्यां विनिवर्त-  
 येत् । विद्याऽविद्यां निहंत्येव तेजस्तिमिरसंघवत् ॥ ३ ॥ परिच्छिन्न  
 इवाज्ञानात्तन्नाशे सति केवलः । स्वयं प्रकाशते ह्यात्मा मेघापायै-  
 ऽशुमानिव ॥ ४ ॥ अज्ञानकलुषं जीवं ज्ञानाभ्यासाद्धि निर्मलम् ।  
 कृत्वा ज्ञानं स्वयं नश्येज्जलं कतकरेणुवत् ॥ ५ ॥ संसारः स्वप्न-  
 तुल्यो हि रागद्वेषादिसंकुलः । स्वकाले सत्यवद्भाति प्रबोधे सत्य-  
 वद्भवेत् ॥ ६ ॥ तावत्सत्यं जगद्भाति शुक्तिकारजतं यथा । यावन्न  
 ज्ञायते ब्रह्म सर्वाधिष्ठानमद्रयम् ॥ ७ ॥ सच्चिदात्मन्यनुस्यूते  
 नित्ये विष्णौ प्रकल्पिताः । व्यक्तयो विविधाः सर्वा हाटके कटका-

दिवत् ॥ ८ ॥ उपादानेऽखिलाधारे जगन्ति परमेश्वरे । सर्गस्थि-  
 तिलयान्यान्ति बहुदानीव वारिणि ॥ ९ ॥ यथाकाशो हृषीकेशो  
 नानोपाधिगतो विभुः । तद्भेदाद्भिन्नवद्भाति तन्नाशे सति  
 केवलः ॥ १० ॥ नानोपाधिवशादेव जातिवर्णाश्रमादयः ।  
 आत्मन्यारोपितास्तोये रसवर्णादिभेदवत् ॥ ११ ॥ पंचीकृत-  
 महाभूतसंभवं कर्मसंचितम् । शरीरं सुखदुःखानां भोगाय-  
 तनमुच्यते ॥ १२ ॥ पंचप्राणमनोबुद्धिर्देशेन्द्रियसमन्वितम् ।  
 अपंचीकृतभूतोत्थं सूक्ष्मांगं भोगसाधनम् ॥ १३ ॥ अनाद्य-  
 विद्याऽनिर्वाच्याकारणोपाधिरुच्यते । उपाधित्रितयादन्यमात्मा-  
 नमवधारयेत् ॥ १४ ॥ पंचकोशादियोगेन तत्तन्मय इव  
 स्थितः । शुद्धात्मा नीलवस्त्रादियोगेन स्फटिको यथा ॥ १५ ॥  
 वपुस्तुषादिभिः कोशैर्युक्तं युक्त्यावघाततः । आत्मानमंतरं शुद्धं  
 विविच्यात्तंडुलं यथा ॥ १६ ॥ सदा सर्वगतोऽप्यात्मा न सर्वत्राव-  
 भासते । बुद्धावेवावभासेत स्वच्छेषु प्रतिर्बिंबवत् ॥ १७ ॥ देहेन्द्रिय-  
 मनोबुद्धिप्रकृतिभ्यो विलक्षणम् । तद्वृत्तिसाक्षिणं विद्यादात्मानं राज-  
 वत्सदा ॥ १८ ॥ व्यापृतेर्ष्विन्द्रियेष्व्वात्मा व्यापारीवाविवेकिनाम् ।  
 दृश्यतेऽश्रेषु धावत्सु धावन्निव यथा शशी ॥ १९ ॥ आत्मचैतन्य-  
 माश्रित्य देहेन्द्रियमनोधियः । स्वकीयार्थेषु वर्तते सूर्यालोकं यथा  
 जनाः ॥ २० ॥ देहेन्द्रियगुणान्कर्माण्यमले सच्चिदात्मनि । अध्य-  
 स्यंत्यविवेकेन गगने नीलिमादिवत् ॥ २१ ॥ अज्ञानान्मनसोपाधेः  
 कर्तृत्वादीनि चात्मनि । कल्प्यन्तेऽबुगते चंद्रे चलनादिर्यथाभसः  
 ॥ २२ ॥ रागेच्छासुखदुःखादि बुद्धौ सत्यां प्रवर्तते । सुषुप्तौ नास्ति  
 तन्नाशे तस्माद्बुद्धेस्तु नात्मनः ॥ २३ ॥ प्रकाशोऽर्कस्य तोयस्य  
 शैत्यमग्नेर्यथोष्णता । स्वभावः सच्चिदानंदनित्यनिर्मलतात्मनः ॥ २४ ॥

आत्मनः सच्चिदंशश्च बुद्धेर्वृत्तिरिति द्वयम् । संयोज्य चावि-  
 वेकेन जानामीति प्रवर्तते ॥ २५ ॥ आत्मनो विक्रिया नास्ति  
 बुद्धेर्बोधो न जात्विति । जीवः सर्वमलं ज्ञात्वा कर्ता द्रष्टेति मुह्यति  
 ॥ २६ ॥ रज्जुसर्पवदात्मानं जीवं ज्ञात्वा भयं वहेत् । नाहं जीवः  
 परात्मेति ज्ञातं चेन्निर्भयो भवेत् ॥ २७ ॥ आत्मावभासयत्येको  
 बुद्ध्यादीनीन्द्रियाणि च । दीपो घटादिवत्स्वात्मा जडैस्तैर्नावभास्यते  
 ॥ २८ ॥ स्वबोधेनान्यबोधेच्छा बोधरूपतयात्मनः । न दीपस्या-  
 न्यदीपेच्छा यथा स्वात्मप्रकाशने ॥ २९ ॥ निषिध्य निखिलो-  
 पाधीन्नेतिनेतीति वाक्यतः । विद्यादैक्यं महावाक्यैर्जीवात्मपरमा-  
 त्मनोः ॥ ३० ॥ आविद्यकं शरीरादि दृश्यं बुहुदवत्क्षरम् । एतद्वि-  
 लक्षणं विद्यादहं ब्रह्मेति निर्मलम् ॥ ३१ ॥ देहान्यत्वान्न मे  
 जन्मजराकार्श्यलयादयः । शब्दादिविषयैः संगो निरिन्द्रियतया न  
 च ॥ ३२ ॥ अमनस्त्वान्न मे दुःखरागद्वेषभयादयः । अप्राणो  
 ह्यमनाः शुभ्र इत्यादिश्रुतिशासनात् ॥ ३३ ॥ निर्गुणो निष्क्रियो  
 नित्यो निर्विकल्पो निरंजनः । निर्विकारो निराकारो नित्यमुक्तोऽस्मि  
 निर्मलः ॥ ३४ ॥ अहमाकाशवत्सर्वबहिरंतर्गतोऽच्युतः । सदा  
 सर्वसमः शुद्धो निःसंगो निर्मलोऽचलः ॥ ३५ ॥ नित्यशुद्ध-  
 विमुक्तैकमखंडानंदमद्वयम् । सत्यं ज्ञानमनंतं यत्परं ब्रह्माहमेव तत्  
 ॥ ३६ ॥ एवं निरंतराभ्यस्ता ब्रह्मैवास्मीति वासनां । हरत्यविद्या-  
 विक्षेपान् रोगानिव रसायनम् ॥ ३७ ॥ विविक्तदेश आसीनो  
 विरागो विजितेंद्रियः । भावयेदेकमात्मानं तमनंतमनन्यधीः  
 ॥ ३८ ॥ आत्मन्येवाखिलं दृश्यं प्रविलाप्य धिया सुधीः । भाव-  
 येदेकमात्मानं निर्मलाकाशवत्सदा ॥ ३९ ॥ नामरूपादिकं सर्वं  
 विहाय परमार्थवित् । परिपूर्णचिदानंदस्वरूपेणावतिष्ठते ॥ ४० ॥

ज्ञातृज्ञानज्ञेयभेदः परात्मनि न विद्यते । त्विदानंदैकरूपत्वाद्दीप्यते  
 स्वयमेव हि ॥ ४१ ॥ एवमात्मारणौ ध्यानमथने सततं कृते ।  
 उदितावगतिर्ज्वाला सर्वाज्ञानेधनं दहेत् ॥ ४२ ॥ अरुणेनेव बोधेन  
 पूर्वं संतमसि हते । तत आविर्भवेदात्मा स्वयमेवांशुमानिव ॥ ४३ ॥  
 आत्मा तु सततं प्राप्तोऽप्यप्राप्तवदविद्यया । तन्नाशे प्राप्तवद्भाति  
 स्वकंठाभरणं यथा ॥ ४४ ॥ स्थाणौ पुरुषवद्भ्रांत्या कृता ब्रह्मणि  
 जीवता । जीवस्य तात्त्विके रूपे तस्मिन् दृष्टे निवर्तते ॥ ४५ ॥  
 तत्त्वत्स्वरूपानुभवादुत्पन्नं ज्ञानमंजसा । अहं-ममेति चाज्ञानं बाधते  
 दिग्भ्रमादिवत् ॥ ४६ ॥ सम्यग्विज्ञानवान् योगी स्वात्मन्येवाखिलं  
 स्थितम् । एवं च सर्वमात्मानमीक्षते ज्ञानचक्षुषा ॥ ४७ ॥ आत्मै-  
 वेदं जगत्सर्वमात्मनोऽन्यन्न विद्यते । मृदो यद्बद्धटादीनि स्वात्मानं  
 सर्वमीक्षते ॥ ४८ ॥ जीवन्मुक्तस्तु तद्विद्वान् पूर्वोपाधिगुणांस्त्यजेत् ।  
 सच्चिदानंदरूपत्वाद्भवेद्भ्रमरकीटवत् ॥ ४९ ॥ तीर्त्वा मोहार्णवं हत्वा  
 रागद्वेषादिराक्षसान् । योगी शान्तिसमायुक्तो ह्यात्मारामो विराजते  
 ॥ ५० ॥ बाह्यानित्यसुखासक्तिं हित्वाऽऽत्मसुखनिर्वृतः । घटस्थदीप-  
 वत्स्वच्छः स्वांतरेव प्रकाशते ॥ ५१ ॥ उपाधिस्थोऽपि तद्धर्मैर्न  
 लिप्तो व्योमवन्मुनिः । सर्वविन्मूढवत्तिष्ठेदसक्तो वायुवच्चरेत्  
 ॥ ५२ ॥ उपाधिविलयाद्विष्णौ निर्विशेषं विशेषमुनिः । जले जलं  
 वियद्व्योम्नि तेजस्तेजसि वा यथा ॥ ५३ ॥ यल्लाभान्नापरो लाभो  
 यत्सुखान्नापरं सुखम् । यज्ज्ञानान्नापरं ज्ञानं तद्ब्रह्मेत्यवधारयेत्  
 ॥ ५४ ॥ यद्दृष्ट्वा न परं दृश्यं यद्भूत्वा न पुनर्भवः । यज्ज्ञात्वा न  
 परं ज्ञेयं तद्ब्रह्मेत्यवधारयेत् ॥ ५५ ॥ तिर्यगूर्ध्वमधः पूर्णं सच्चिदा-  
 नंदमव्ययम् । अनंतं नित्यमेकं यत्तद्ब्रह्मेत्यवधारयेत् ॥ ५६ ॥ अत-  
 द्बावृत्तिरूपेण वेदांतैर्लक्ष्यतेऽव्ययम् । अखंडानंदमेकं यत्तद्ब्रह्मेत्यव-

धारयेत् ॥ ५७ ॥ अखंडानंदरूपस्य तस्यानंदलवाश्रिताः । ब्रह्मा-  
द्यास्तारतम्येन भवंत्यानंदिनोऽखिलाः ॥ ५८ ॥ तद्युक्तमखिलं वस्तु  
व्यवहारस्तदन्वितः । तस्मात्सर्वगतं ब्रह्म क्षीरे सर्पिरिवाखिले ॥ ५९ ॥  
अनण्वस्थूलमहस्वमदीर्घमजमव्ययम् । अरूपगुणवर्णाख्यं तद्ब्रह्मेत्य-  
वधारयेत् ॥ ६० ॥ यद्भासा भास्यतेऽर्कादि भास्यैर्यत्तु च भास्यते ।  
येन सर्वमिदं भाति तद्ब्रह्मेत्यवधारयेत् ॥ ६१ ॥ स्वयमंतर्बहिर्व्याप्य  
भासयन्नखिलं जगत् । ब्रह्म प्रकाशते वह्निप्रतप्सायसर्पिण्डवत् ॥ ६२ ॥  
जगद्विलक्षणं ब्रह्म ब्रह्मणोऽन्यन्न किंचन । ब्रह्मान्यद्भाति चेन्मिथ्या  
यथा मरुमरीचिका ॥ ६३ ॥ दृश्यते श्रूयते यद्यद्ब्रह्मणोऽन्यन्न  
तद्भवेत् । तत्त्वज्ञानाच्च तद्ब्रह्म सच्चिदानंदमद्वयम् ॥ ६४ ॥ सर्वगं  
सच्चिदात्मानं ज्ञानचक्षुर्निरीक्ष्यते । अज्ञानचक्षुर्नेक्षेत भास्वंतं  
भानुमंधवत् ॥ ६५ ॥ श्रवणादिभिरुद्दीप्तो ज्ञानाग्निपरितापितः ।  
जीवः सर्वमलान्मुक्तः स्वर्णवह्न्योतते स्वयम् ॥ ६६ ॥ हृदाकाशोदितो  
ह्यात्मा बोधभानुस्तमोपहृत् । सर्वव्यापी सर्वधारी भाति सर्व  
प्रकाशते ॥ ६७ ॥ दिग्देशकालाद्यनपेक्ष्य सर्वगं शीतादिहृन्नित्यसुखं  
निरंजनम् । यः स्वात्मतीर्थं भजते विनिष्क्रियः स सर्ववित्सर्व-  
गतोऽमृतो भवेत् ॥ ६८ ॥ इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्य-  
श्रीमच्छंकराचार्यकृत आत्मबोधः संपूर्णः ॥

### ३८८. आत्मावबोधस्तुतिः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तिषु शैशवकौमारवार्धकेष्वपि  
च । अनुवर्तमानमनिशं ब्रह्मास्म्यान्नायमस्तकावेद्यम् ॥ १ ॥  
सद्गुरुसेवननिरतैः स्वाश्रमवर्णोचितानि कर्माणि । कुर्वन्निर्विविदिषितं  
ब्रह्मास्म्यान्नायमस्तकावेद्यम् ॥ २ ॥ स्थूलात्सूक्ष्माद्धेतोर्देहाद्धेदेन यो-  
गनिष्णातैः । अनुचिन्त्यमानमसकृद्ब्रह्मास्म्यान्नायमस्तकावेद्यम् ॥ ३ ॥

यददेहमखिलदेहेष्वनवस्थेषु व्यवस्थितं विभु च । महदामभूत-  
मभयं ब्रह्मास्म्याम्नायमस्तकावेद्यम् ॥ ४ ॥ हृदयस्थितानशे-  
षांस्त्यक्त्वा कामान्समभ्रुतेऽत्रैव । यत्परहंसस्तदहं ब्रह्मास्म्याम्नायम-  
स्तकावेद्यम् ॥ ५ ॥ यद्बोधाज्जगदखिलं विभाति पुरुषस्य सत्यतया ।  
यद्बोधाच्च मृषा तद्ब्रह्मास्म्याम्नायमस्तकावेद्यम् ॥ ६ ॥ प्रविलाप्य  
दृश्यमानं मिथ्येत्याचार्यवाक्यतः शास्त्रात् । यत्प्राप्नोति नरस्तद्ब्रह्मा-  
स्म्याम्नायमस्तकावेद्यम् ॥ ७ ॥ यस्याज्ञानादखिलानर्थादिमकारणं  
शरीरादौ । आत्मत्वधीरभूत्तद्ब्रह्मास्म्याम्नायमस्तकावेद्यम् ॥ ८ ॥  
यत्साक्षात्कृतये हि श्रवणं मननं तथा ध्यानम् । प्राहुस्त्रय्यन्तास्त-  
द्ब्रह्मास्म्याम्नायमस्तकावेद्यम् ॥ ९ ॥ नद्यास्तीरे पुलिने गिरिमौलौ  
काननस्य कोणे यत् । ध्यायन्ति यतिवरास्तद्ब्रह्मास्म्याम्नायमस्तका-  
वेद्यम् ॥ १० ॥ यत्र स्थितो विजानातीन्द्रोपेन्द्रादिपदमनीषदिति ।  
तत्सुखविश्रान्तिपदं ब्रह्मास्म्याम्नायमस्तकावेद्यम् ॥ ११ ॥ श्रुत्या-  
चार्यकृपातो योगाभ्यासेन चेश्वरकटाक्षात् । प्रभवति यद्बोधस्तद्ब्रह्मा-  
स्म्याम्नायमस्तकावेद्यम् ॥ १२ ॥ यस्मिन्स्थितो न दुःखैरपि  
गुरुभिश्चाल्यते जातु । पुरुषः सुखरूपं तद्ब्रह्मास्म्याम्नायमस्तकावेद्यम्  
॥ १३ ॥ यत्पृथ्व्यादिषु तिष्ठद्यमयति यद्वेदनैव पृथ्व्यादिः ।  
अन्तर्याम्यभिधं तद्ब्रह्मास्म्याम्नायमस्तकावेद्यम् ॥ १४ ॥ उद्दालकः  
स्वपुत्रं यत्तत्त्वमसीति बोधयामास । सांभ्रामन्ते तदहं ब्रह्मास्म्या-  
म्नायमस्तकावेद्यम् ॥ १५ ॥ विषयासक्तहृदां यद्दूरे तदसक्तचेतसां  
निकटे । उपरतवरलभ्यं तद्ब्रह्मास्म्याम्नायमस्तकावेद्यम् ॥ १६ ॥  
सनकादिभ्यः पूर्वं वटमूले शंभुराह मौनेन । चिन्मुद्रया च  
यत्तद्ब्रह्मास्म्याम्नायमस्तकावेद्यम् ॥ १७ ॥ विनियम्य चक्षुरादी-

न्प्राणापानौ च चेतसा सह यत् । ध्यायन्ति योगिनस्तद्ब्रह्मास्म्या-  
न्नायमस्तकावेद्यम् ॥ १८ ॥ इति नृसिंहभारतीस्वामिविरचिता-  
त्मावबोधस्तुतिः संपूर्णा ॥

### ३८९. साधनपंचकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ वेदो नित्यमधीयतां तदुदितं कर्म स्वनुष्ठीयतां  
तेनेशस्य विधीयतामपचितिः काम्ये मतिस्त्यज्यताम् । पापौघः  
परिधूयतां भवसुखे दोषोऽनुसंधीयतामात्मेच्छा व्यवसीयतां निज-  
गृहात्तूर्णं विनिर्गम्यताम् ॥ १ ॥ संगः सत्सु विधीयतां भगवतो  
भक्तिर्दृढा धीयतां शांत्यादिः परिचीयतां दृढतरं कर्मांशु संत्यज्य-  
ताम् । सद्विद्वानुपसर्प्यतां प्रतिदिनं तत्पादुके सेव्यतां ब्रह्मैकाक्षर-  
मर्थ्यतां श्रुतिशिरोवाक्यं समाकर्ण्यताम् ॥ २ ॥ वाक्यार्थश्च  
विचार्यतां श्रुतिशिरःपक्षः समाश्रीयतां दुस्तर्कात्सुविरम्यतां श्रुतिम-  
तस्तर्कोऽनुसंधीयताम् । ब्रह्मैवास्मि विभाव्यतामहरहर्गर्वः परित्य-  
ज्यतां देहेऽहंमतिरुद्ध्यतां बुधजनैर्वादः परित्यज्यताम् ॥ ३ ॥  
क्षुब्धाधिश्च चिकित्स्यतां प्रतिदिनं भिक्षौषधं भुज्यतां स्वाद्वन्नं न तु  
याच्यतां विधिवशात्प्राप्तेन संतुष्यताम् । शीतोष्णादि विषह्यतां  
न तु वृथा वाक्यं समुच्चार्यतामौदासीन्यमभीप्स्यतां जनकूपानैष्ठुर्य-  
मुत्सृज्यताम् ॥ ४ ॥ एकांते सुखमास्यतां परतरे चेतः समाधी-  
यतां पूर्णात्मा सुसमीक्ष्यतां जगदिदं तद्वाधितं दृश्यताम् । प्राक्कर्म  
प्रविलाप्यतां चित्तिबलान्नाप्युत्तरैः श्लिष्यतां प्रारब्धं त्विह भुज्य-  
तामथ परब्रह्मात्मना स्थीयताम् ॥ ५ ॥ यः श्लोकपंचकमिदं पठते  
मनुष्यः संचिंतयत्यनुदिनं स्थिरतामुपेत्य । तस्यांशु संसृतिदवानल-  
तीव्रघोरतापः प्रशान्तिमुपयाति चित्तिप्रसादात् ॥ ६ ॥ इति  
श्रीमच्छंकराचार्यविरचितं साधनपंचकं संपूर्णम् ॥



३९०. प्रश्नोत्तरमालिका ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ किं साध्यं मनुजानां बुद्धेः शुद्धत्वमेव बहु-  
यत्नैः । किं त्याज्यं खलसङ्गो देहाहंकारममते च ॥ १ ॥ किं तीर्थं  
वेदशिरः किं देयं पात्र आत्मसंबोधः । किं भोग्यं सहजसुखं किं  
वाऽभोग्यं परेच्छया लब्धम् ॥ २ ॥ किं कष्टं यत्सत्यं किं वा  
सहजं परं ब्रह्म । कर्तव्यं किं सर्वैरात्माऽकर्तेति बुद्धिरेव सदा  
॥ ३ ॥ आदातुं संत्यक्तुं किमशक्यं ब्रह्म निजरूपम् । किं वा  
दुःखमबोधः किं सुखमात्मावबोधतः शान्तिः ॥ ४ ॥ विषमं विषं  
तु किं वा यत्किञ्चित्कस्यचिच्च या चिन्ता । परमामृतं तु किं वा  
श्रीगुरुवाक्यं कृपानिबिडम् ॥ ५ ॥ को गुरुरधिमन्तव्यो देशिक-  
शिष्यत्वबाधबोधयिता । अध्येतव्यं किं खलु यावद्वेदार्थदर्शकः  
प्रणवः ॥ ६ ॥ कोऽनध्यायोऽध्ययने यावत्सद्गुरुमलब्धवांस्तावत् ।  
कः प्रणवार्थस्तूष्णीं किं ध्येयं ध्येयमात्रसंत्यागः ॥ ७ ॥ कः शूरो  
दृष्ट्वात्रान्मायामेत्ता स्वयंप्रकाशज्ञः । किं चिन्त्यं मनुजैरिह चिन्ता-  
बीजं विचित्रजगत इति ॥ ८ ॥ किं पेशलं हि लोके विद्वच्चरितं  
विरुद्धशास्त्रमपि । सद्भक्त्या किं कार्यं सज्जनपदरजसि भूयसः  
स्नानम् ॥ ९ ॥ आबाल्यार्त्किं कार्यं निरहंकारेण साधुपदसेवा ।  
भाग्योदयस्तु को वा गुरुवचनादद्वितीयपदलाभः ॥ १० ॥ मुक्तैः  
किं कर्तव्यं प्रारब्धाधीनसदसताभोगः । पुंसां किं सर्वस्वं सच्चित्सुख-  
नामिका गुरोर्भूर्तिः ॥ ११ ॥ का कामधेनुरनघा वेदे देवे तथा  
गुरौ श्रद्धा । को वैद्यो रोगहरो ब्रह्मिष्ठः सदयहृदयगुरुराजः ॥ १२ ॥  
कः पुत्रः स्वोद्धर्ता ज्ञातस्वात्मैव चिन्मयः पुरुषः । कः सुखशायी  
लोके संसृतिमिथ्यात्वपक्वमतिवृत्तः ॥ १३ ॥ किं त्याज्यं साधुकृते  
चरिते कुत्सितमतिस्तु साधुजनैः । कः शत्रुर्दुःखकरो गुरुवचने

संशयो महाशत्रुः ॥ १४ ॥ कः शोभते नितान्तं निःस्पृहताशालि-  
निजबोधः । किं याच्यं सद्गुरुषु स्वोद्धारः सर्वदैन्यपरिहारः ॥ १५ ॥  
को वा मान्यः सिद्धो बालोऽपि ब्रह्मभावमतिमान् यः । का वा दरि-  
द्रसीमा मूढप्रियसिद्धयहंकृतिः प्रोक्ता ॥ १६ ॥ किं सोढव्यं विदुषा  
खलवचनं विषविनिर्मितं कठिनम् । स्थेयं कथं खलेषु स्वीयां  
निष्ठां दृढं समाच्छाद्य ॥ १७ ॥ इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्य-  
कृष्णानन्दसरस्वतीविरचिता प्रश्नोत्तरमालिका संपूर्णा ॥

### ३९१. अष्टाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ विश्वं सत्यं मनुते तनुते कर्माणि लोकसं-  
सिद्ध्यै । वाचा मिथ्या जगदिति जल्पति नो वेत्ति यो महाभ्रष्टः  
॥ १ ॥ ब्रह्मैवेदं जल्पति दोषादोषोत्तमाधमान् पश्यन् । नम्रो भूत्वा  
विचरस्यवधूतत्वं प्रदर्शयन् भ्रष्टः ॥ २ ॥ कृत्याकृत्यमशेषं त्यक्तुम-  
शक्तं श्रुतेरगोचरताम् । आत्मनि जल्पन्हास्यास्पदतामित्येष मानवो  
भ्रष्टः ॥ ३ ॥ पाशाष्टकसंकष्टश्छिद्यतनुर्मृष्टभोजनप्रीतः । शिष्टोऽहं  
मन्वानः कष्टमहो दुष्टमानवो भ्रष्टः ॥ ४ ॥ आत्मैवेदं जल्पन् लोको-  
त्तीरसहमानमेधावी । स्तुतिवाक्यानि श्रोतुं धावंस्तुष्टो न किं  
भवेद्भ्रष्टः ॥ ५ ॥ यस्मिन्स्वस्य च निष्ठा तद्धर्मिष्ठानशिष्टगणना-  
याम् । कुर्वन्कर्म हतोऽयं यद्यपि शिष्टो न किं भवेद्भ्रष्टः ॥ ६ ॥  
कर्तृत्वं भोक्तृत्वं मन्वानः स्वात्मनि प्रभौ शंभौ । रोदिति हा किं  
कृतमिति किं वा भोक्तव्यमित्यसौ भ्रष्टः ॥ ७ ॥ चिन्मात्रं  
स्वात्मानं देहं मन्वान एजते यमतः । सर्वात्मानमबुद्ध्वा ब्रह्मापि  
स्यादहो किल भ्रष्टः ॥ ८ ॥ अष्टाष्टकमेतद्यत्प्रविचारयतीह मानवो  
धन्यः । मान्यः स्याल्लोकेषु भ्रष्टत्वं वेत्ति निजचारित्रात् ॥ ९ ॥  
इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्यश्रीमत्कृष्णानन्दसरस्वतीविरचितं  
अष्टाष्टकं संपूर्णम् ॥

## ३९२. मनीषापंचकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ सत्याचार्यस्य गमने कदाचिन्मुक्तिदायकम् ।  
 काशीक्षेत्रं प्रति सहगौर्या मार्गे तु शंकरम् ॥ १ ॥ अंत्यवेषधरं  
 दृष्ट्वा गच्छ गच्छेति चाब्रवीत् । शंकरः सोऽपि चांडालस्तं पुनः प्राह  
 शंकरम् ॥ २ ॥ अन्नमयादन्नमयं ह्यथवा चैतन्यमेव चैतन्यात् ।  
 द्विजवर दूरीकर्तुं वाञ्छसि किं ब्रूहि गच्छ गच्छेति ॥ ३ ॥ किं  
 गंगांबुनि बिंबितेऽबरमणौ चंडालवाटीपयःपुरे चांतरमस्ति कांचन-  
 घटीमृत्कुंभयोर्वाबरे । प्रत्यग्वस्तुनि निस्तरंगसहजानंदावबोधाम्बुधौ  
 विप्रोऽयं श्वपचोऽयमित्यपि महान् कोऽयं विभेदभ्रमः ॥ ४ ॥  
 जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तिषु स्फुटतरा या संविदुज्जृम्भते या ब्रह्मादिपि-  
 पीलिकांततनुषु प्रोता जगत्साक्षिणी । सैवाहं न च दृश्यवस्त्विति  
 दृढप्रज्ञापि यस्यापि चेच्चांडालोऽस्तु स तु द्विजोऽस्तु गुरुरित्येषा  
 मनीषा मम ॥ ५ ॥ ब्रह्मैवाहमिदं जगच्च सकलं चिन्मात्रविस्तारितं  
 सर्वं चैतदविद्यया त्रिगुणयाऽश्लेषं मया कल्पितम् । इत्थं यस्य दृढा  
 मतिः सुखतरे नित्ये परे निर्मले चांडालोऽस्तु स तु ॥ ६ ॥  
 शश्वन्नश्वरमेव विश्वमखिलं निश्चित्य वाचा गुरोर्नित्यं ब्रह्म निरंतरं  
 विमृशता निर्व्याजशांतात्मना । भूतं भावि च दुष्कृतं प्रदहता संवि-  
 न्मये पावकं प्रारब्धाय समर्पितं स्वपुरित्येषा मनीषा मम ॥ ७ ॥  
 या तिर्यङ्गनरदेवताभिरहमित्यंतः स्फुटा गृह्यते यद्भासा हृदयाक्ष-  
 देहविषया भांति स्वतोऽचेतनाः । तां भास्यैः पिहितार्कमंडलनिभां  
 स्फूर्तिं सदा भावयन् योगी निर्वृतमानसो हि गुरुरित्येषा मनीषा मम  
 ॥ ८ ॥ यत्सौख्यांबुधिलेशलेशत इमे शक्रादयो निर्वृता यश्चित्ते  
 नितरां प्रशांतकलने लब्ध्वा मुनिर्निर्वृतः । यस्मिन्नित्यसुखांबुधौ  
 गलितधीर्ब्रह्मैव न ब्रह्मविद्यः कश्चित्स सुरेंद्रवंदितपदो नूनं मनीषा  
 मम ॥ ९ ॥ इति मनीषापंचकं संपूर्णम् ॥

## ३९३. कौपीनपञ्चकस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ वेदान्तवाक्येषु सदा रमन्तो भिक्षान्नमात्रेण  
 च तुष्टिमन्तः । अशोकवन्तः करुणैकवन्तः कौपीनवन्तः खलु  
 भाग्यवन्तः ॥ १ ॥ मूलं तरोः केवलमाश्रयन्तः पाणिद्वयं भोक्तु-  
 ममत्रयन्तः । कन्थामपि स्त्रीमिव कुत्सयन्तः कौपीनवन्तः खलु०  
 ॥ २ ॥ देहाभिमानं परिहृत्य दूरादात्मानमात्मन्यवलोकयन्तः ।  
 अहर्निशं ब्रह्मणि ये रमन्तः कौपीनवन्तः खलु० ॥ ३ ॥ स्वानन्द-  
 भावे परितुष्टिमन्तः स्वशान्तसर्वेन्द्रियवृत्तिषन्तः । नान्तं न मर्ध्यं  
 न बहिः स्मरन्तः कौपीनवन्तः खलु भाग्यवन्तः ॥ ४ ॥  
 पञ्चाक्षरं पावनमुच्चरन्तः पतिं पशूनां हृदि भावयन्तः । भिक्षा-  
 शना दिक्षु परिभ्रमन्तः कौपीनवन्तः खलु भाग्यवन्तः ॥ ५ ॥  
 इति कौपीनपञ्चकस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

## ३९४. परा पूजा ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ पूर्णस्यावाहनं कुत्र सर्वाधारस्य चासनम् ।  
 स्वच्छस्य पाद्यमर्घ्यं च शुद्धस्याचमनं कुतः ॥ १ ॥ निर्मलस्य कुतः  
 स्नानं वस्त्रं विश्वोदरस्य च । निरालंबस्योपवीतं पुष्पं निर्वासनस्य च  
 ॥ २ ॥ निर्लेपस्य कुतो गंधो रम्यस्याभरणं कुतः । नित्यवृत्तस्य  
 नैवेद्यस्तांबूलं च कुतो विभोः ॥ ३ ॥ प्रदक्षिणा ह्यनंतस्य ह्यद्वयस्य  
 कुतो नतिः । वेदवाक्यैरवेद्यस्य कुतः स्तोत्रं विधीयते ॥ ४ ॥  
 स्वयंप्रकाशमानस्य कुतो नीराजनं विभोः । अंतर्बहिश्च पूर्णस्य  
 कथमुद्गासनं भवेत् ॥ ५ ॥ एवमेव परा पूजा सर्वावस्थासु सर्वदा ।  
 एकबुद्ध्या तु देवेशे विधेया ब्रह्मवित्तमैः ॥ ६ ॥ इति परा पूजा  
 संपूर्णा ॥

## ३९५. वाक्यवृत्तिः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ सर्गस्थितिप्रलयहेतुमर्चित्यशक्तिं विश्वेश्वरं विदित-  
 तविश्वमनंतमूर्तिम् । निर्मुक्तबंधनमपारसुखांबुराशिं श्रीवल्लभं विम-  
 लबोधधनं नमामि ॥ १ ॥ यस्य प्रसादादहमेव विष्णुर्मय्येव सर्वं  
 परिकल्पितं च । इत्थं विजानामि सदात्मरूपस्तस्यांघ्रिपद्मं प्रणतोऽस्मि  
 नित्यम् ॥ २ ॥ तापत्रयार्कसंतप्तः कश्चिदुद्विग्नमानसः । शमादि-  
 साधनैर्युक्तः सद्गुरुं परिपृच्छति ॥ ३ ॥ अनायासेन येनास्मान्मुच्येयं  
 भवबंधनात् । तन्मे संक्षिप्य भगवन्कैवल्यं कृपया वद ॥ ४ ॥  
 साध्वी ते वचनव्यक्तिः प्रतिभाति वदामि ते । इदं तदिति विस्पष्टं  
 सावधानमनाः शृणु ॥ ५ ॥ तत्त्वमस्यादिवाक्योत्थं यज्जीवपर-  
 मात्मनोः । तादात्म्यविषयं ज्ञानं तदिदं मुक्तिसाधनम् ॥ ६ ॥  
 को जीवः कः परश्चात्मा तादात्म्यं वा कथं तयोः । तत्त्वमस्यादि-  
 वाक्यं वा कथं तत्प्रतिपादयेत् ॥ ७ ॥ अत्र ब्रूमः समाधानं कोऽन्यो  
 जीवस्त्वमेव हि । यस्त्वं पृच्छसि मां कोऽहं ब्रह्मैवासि न संशयः  
 ॥ ८ ॥ पदार्थमेव जानामि नाद्यापि भगवन् स्फुटम् । अहंब्रह्मेति  
 वाक्यार्थं प्रतिपद्ये कथं वद ॥ ९ ॥ सत्यमाह भवानत्र विज्ञानं  
 नैव विद्यते । हेतुः पदार्थबोधो हि वाक्यार्थावगतेरिह ॥ १० ॥  
 अंतःकरणतद्भृतिसाक्षी चैतन्यविग्रहः । आनंदरूपः सत्यः सन् किं  
 नात्मानं प्रपद्यसे ॥ ११ ॥ सत्यानंदस्वरूपं धीसाक्षिणं बोधविग्रहम् ।  
 चिंतयात्मतया नित्यं त्यक्त्वा देहादिगां धियम् ॥ १२ ॥ रूपादिमान्  
 यतः पिंडस्ततो नात्मा घटादिवत् । वियदादिमहाभूतविकारत्वाच्च  
 कुंभवत् ॥ १३ ॥ अनात्मा यदि पिण्डोऽयमुक्तहेतुबलान्मतः ।  
 करामलकवत्साक्षादात्मानं प्रतिपादय ॥ १४ ॥ घटद्रष्टा घटाद्भिन्नः

सर्वथा न घटो यथा । देहद्रष्टा तथा देहो नाहमित्यवधारय ॥ १५ ॥  
 एवमिन्द्रियदृष्टनाहमिन्द्रियाणीति निश्चिनु । मनो बुद्धिस्तथा प्राणो  
 नाहमित्यवधारय ॥ १६ ॥ संघातो हि तथा नाहमिति दृश्यविल-  
 क्षणम् । द्रष्टारमनुमानेन निपुणं संप्रधारय ॥ १७ ॥ देहेन्द्रिया-  
 दयो भावा हानादिव्यापृतिक्षमाः । यस्य सन्निधिमात्रेण सोऽह-  
 मित्यवधारय ॥ १८ ॥ अन्नादन्नविकारः सन्नयस्कांतवदेव यः ।  
 वृद्धार्दींश्चालयेत्प्रत्यक् सोऽहमित्यवधारय ॥ १९ ॥ अजडात्मवदा-  
 भांति यत्सांनिध्याज्जडा अपि । देहेन्द्रियमनः प्राणाः सोऽहमित्य-  
 वधारय ॥ २० ॥ अगमन्मे मनोऽन्यत्र सांप्रतं च स्थिरीकृतम् ।  
 एवं यो वेत्ति घीवृत्तिं सोऽहमित्यवधारय ॥ २१ ॥ स्वप्नजागरिते  
 सुप्तिं भावाभावौ धियां तथा । यो वेत्त्यविक्रियः साक्षात्सोऽहमित्य-  
 वधारय ॥ २२ ॥ घटावभासको दीपो घटादन्यो यथेष्यते । देहा-  
 वभासको देही तथाहं बोधविग्रहः ॥ २३ ॥ पुत्रवित्तादयो भावा  
 यस्य शेषतया प्रियाः । द्रष्टा सर्वप्रियतमः सोऽहमित्यवधारय  
 ॥ २४ ॥ परप्रेमास्पदतया मा न भूवमहं सदा- । भूयासमिति यो  
 द्रष्टा सोऽहमित्यवधारय ॥ २५ ॥ यः साक्षिलक्षणो बोधस्त्वं-  
 पदार्थः स उच्यते । साक्षित्वमपि बोद्धृत्वमविकारितयाऽऽत्मनः  
 ॥ २६ ॥ देहेन्द्रियमनःप्राणाहंकृतिभ्यो विलक्षणः । प्रोज्झिताशेष-  
 षड्भावविकारस्त्वंपदाभिधः ॥ २७ ॥ त्वमर्थमेवं निश्चित्य तदर्थं  
 चिंतयेत्पुनः । अतद्व्यावृत्तिरूपेण साक्षाद्विधिमुखेन च ॥ २८ ॥  
 निरस्ताशेषसंसारदोषोऽस्थूलादिलक्षणः । अदृश्यत्वादिगुणकः परा-  
 कृततमोमलः ॥ २९ ॥ निरस्तातिशयानंदः सत्यप्रज्ञानविग्रहः ।  
 सत्तास्त्रलक्षणः पूर्णः परात्मेति गीयते ॥ ३० ॥ सर्वज्ञत्वं परेशत्वं  
 तथा संपूर्णशक्तिता । वेदैः समर्थ्यते यस्य तद्ब्रह्मेत्यवधारय ॥ ३१ ॥

यज्जानात्सर्वविज्ञानं श्रुतिषु प्रतिपादितम् । मृदाद्यनेकदृष्टांतैस्तद्ब्रह्मे-  
 त्यवधारय ॥ ३२ ॥ यदानंत्यं प्रतिज्ञाय श्रुतिस्तास्सिद्धये जगौ ।  
 तत्कार्यत्वं प्रपंचस्य तद्ब्रह्मेत्यवधारय ॥ ३३ ॥ विजिज्ञास्यतया यच्च  
 वेदांतेषु मुमुक्षुभिः । समर्थ्यतेऽतियत्नेन तद्ब्रह्मेत्यवधारय ॥ ३४ ॥  
 जीवात्मना प्रवेशश्च नियंतृत्वं च तान् प्रति । श्रूयते यस्य वेदेषु  
 तद्ब्रह्मेत्यवधारय ॥ ३५ ॥ कर्मणां फलदातृत्वं यस्यैव श्रूयते श्रुतौ ।  
 जीवानां हेतुकर्तृत्वं तद्ब्रह्मेत्यवधारय ॥ ३६ ॥ तत्त्वंपदार्थौ निर्णीतौ  
 वाक्यार्थश्चिंत्यतेऽधुना । तादात्म्यमत्र वाक्यार्थस्तयोरेव पदार्थयोः  
 ॥ ३७ ॥ संसर्गो वा विशिष्टो वा वाक्यार्थो नात्र संमतः । अखंडै-  
 करसत्त्वेन वाक्यार्थो विदुषां मतः ॥ ३८ ॥ प्रत्यग्बोधो य आभाति  
 सोऽद्वयानंदलक्षणः । अद्वयानंदरूपश्च प्रत्यग्बोधैकलक्षणः ॥ ३९ ॥  
 इत्थमन्योन्यतादात्म्यप्रतिपत्तिर्यदा भवेत् । अब्रह्मत्वं त्वमर्थस्य  
 व्यावर्तेत तदैव हि ॥ ४० ॥ तदर्थस्य च पारोक्ष्यं यद्येवं किं ततः  
 शृणु । पूर्णानंदैकरूपेण प्रत्यग्बोधोऽवतिष्ठते ॥ ४१ ॥ तत्त्वमस्या-  
 दिवाक्यं च तादात्म्यप्रतिपादने । लक्ष्यौ तत्त्वंपदार्थौ द्वावुपादाय  
 प्रवर्तते ॥ ४२ ॥ हित्वा द्वौ शबलौ वाच्यो वाक्यं वाक्यार्थबोधने ।  
 यथा प्रवर्ततेऽस्माभिस्तथा व्याख्यातमादरात् ॥ ४३ ॥ आलंबन-  
 तथा भाति योऽस्मत्प्रत्ययशब्दयोः । अंतःकरणसंभिन्नबोधः स  
 त्वंपदाभिधः ॥ ४४ ॥ मायोपाधिर्जगद्योनिः सर्वज्ञत्वादिलक्षणः ।  
 पारोक्ष्यशबलः सत्याद्यात्मकस्तत्पदाभिधः ॥ ४५ ॥ प्रत्यक् परोक्ष-  
 तैकस्य सद्वितीयत्वपूर्णता । विरुध्यते यतस्तस्माल्लक्षणा संप्रवर्तते  
 ॥ ४६ ॥ मानांतरविरोधे तु मुख्यार्थस्य परिग्रहे । मुख्यार्थेना-  
 विनाभूते प्रतीतिर्लक्षणोच्यते ॥ ४७ ॥ तत्त्वमस्यादिवाक्येषु लक्षणा

भागलक्षणा । सोऽहमित्यादिवाक्यस्थपदयोरिव नापरा ॥ ४८ ॥  
 अहंब्रह्मेति वाक्यार्थबोधो यावद्दृढीभवेत् । शमादिसहितस्तावदभ्य-  
 सेच्छ्रवणादिकम् ॥ ४९ ॥ श्रुत्याचार्यप्रसादेन दृढो बोधो यदा  
 भवेत् । निरस्ताशेषसंसारनिदानः पुरुषस्तदा ॥ ५० ॥ विशीर्ण-  
 कार्यकरणो भूतसूक्ष्मैरनावृतः । विमुक्तकर्मनिगडः सद्य एव विमुच्यते  
 ॥ ५१ ॥ प्रारब्धकर्मवेगेन जीवन्मुक्तो यदा भवेत् । किञ्चित्काल-  
 मनारब्धकर्मबंधस्य संक्षये ॥ ५२ ॥ निरस्तातिशयानंदं वैष्णवं  
 परमं पदम् । पुनरावृत्तिरहितं कैवल्यं प्रतिपद्यते ॥ ५३ ॥ इति  
 श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्यश्रीमच्छंकराचार्यविरचिता वाक्यवृत्तिः  
 समाप्ता ॥

### ३९६. तत्त्वमसिस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ मनःकल्पितमेवेदं जगज्जीवेशकल्पनम् ॥  
 तदेकं सम्परित्यज्य निर्वाणमनुभूयताम् ॥ १ ॥ सति सर्वस्मिन्  
 सर्वज्ञत्वं सत्यल्पे वा स्वल्पज्ञत्वम् ॥ सर्वालपस्याभावे कस्माज्जी-  
 वेशौ वा तत्त्वमसि ॥ २ ॥ सत्यां व्यष्टौ जीवोपाधिः सति सर्व-  
 स्मिन्नीशोपाधिः ॥ व्यष्टिसमष्टयोर्ज्ञाने कस्माज्जीवेशौ वा तत्त्वमसि  
 ॥ ३ ॥ सत्यज्ञाने जीवत्वोक्तिर्मायासत्त्वे त्वीशत्वोक्तिः ॥ माया-  
 विद्याबाधे कस्माज्जीवेशौ वा तत्त्वमसि ॥ ४ ॥ सति वा कार्ये कार-  
 णतोक्तिः कारणसत्त्वे कार्यत्वोक्तिः ॥ कार्याकारणभावे कस्माज्जीवेशौ  
 वा तत्त्वमसि ॥ ५ ॥ सति भोक्तव्ये भोक्ताऽयं स्याद्दातव्ये वा दाता  
 स स्यात् ॥ भोग्यो विध्यो भावे कस्माज्जीवेशौ वा तत्त्वमसि  
 ॥ ६ ॥ सत्यज्ञाने गुरुणा बाध्यं सति वा द्वैते शिष्यैर्भाव्यम् ॥  
 अद्वैतात्मनि गुरुशिष्यौ कौ त्यज रे भेदं तत्त्वमसि ॥ ७ ॥ सत्य-



द्वैते प्राप्तौ यत्नः सति वा द्वैते बाधे यत्नः ॥ द्वैताद्वैते ते संकल्प-  
 सत्यज रे शेषं तत्त्वमसि ॥ ८ ॥ साक्षित्वं यदि दृश्यं सत्यं दृश्या-  
 सत्त्वे साक्षी त्वं कः ॥ उभयाभावे दर्शनमपि किं तूष्णीं भव रे  
 तत्त्वमसि ॥ ९ ॥ प्रज्ञानामलविग्रहनिजसुखजृम्भणमेतन्नेतरथा ॥  
 तस्मान्नैवादेयं हेयं तूष्णीं भव रे तत्त्वमसि ॥ १० ॥ ब्रह्मैवाहं  
 ब्रह्मैव त्वं ब्रह्मैकं वा नान्यत्किञ्चित् ॥ निश्चित्येत्यं निजसमसुख-  
 भुक्तूष्णीं भव रे तत्त्वमसि ॥ ११ ॥ एतत्स्तोत्रं प्रपठता विचार्य  
 गुरुवाक्यतः ॥ प्राप्यते ब्रह्मपदवी सत्यं सत्यं न संशयः ॥ १२ ॥  
 इति श्रीमत्परमहंसकृष्णानन्दसरस्वतीविरचितं तत्त्वमसिस्तोत्रं  
 संपूर्णम् ॥

ॐ

## संकीर्णस्तोत्राणि ।

३९७. कुन्तीस्तुतिः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ नमस्ये पुरुषं त्वाद्यमीश्वरं प्रकृतेः परम् ।  
अलक्ष्यं सर्वभूतानामन्तर्बहिरवस्थितम् ॥ १ ॥ मायाजवनिकाच्छ-  
न्नमज्ञाधोक्षजमव्ययम् । न लक्ष्यसे मूढदृशा नटो नाव्यधरो यथा  
॥ २ ॥ तथा परमहंसानां मुनीनाममलात्मनाम् । भक्तियोगविधा-  
नार्थं कथं पश्येमहि स्त्रियः ॥ ३ ॥ कृष्णाय वासुदेवाय देवकी-  
नन्दनाय च । नन्दगोपकुमाराय गोविन्दाय नमो नमः ॥ ४ ॥  
नमः पङ्कजनाभाय नमः पङ्कजमालिने । नमः पङ्कजनेत्राय नमस्ते  
पङ्कजाङ्गये ॥ ५ ॥ यथा हृषीकेश खलेन देवकी कंसेन रुद्धाति-  
चिरं शुचार्पिता । विमोचिताहं च सहात्मजा विभो त्वयैव नाथेन  
मुहुर्विपद्गणात् ॥ ६ ॥ विषान्महाभ्येः पुरुषाददर्शनादसत्सभाया  
वनवासकृच्छ्रतः । मृधेऽनेकमहारथास्त्रतो द्रौण्यस्त्रतश्चास्म  
हरेऽभिरक्षिताः ॥ ७ ॥ विपदः सन्तु नः शश्वत्तत्र तत्र जग-  
द्गुरो । भवतो दर्शनं यत् स्यादपुनर्भवदर्शनम् ॥ ८ ॥ जन्मैश्वर्य-  
श्रुतश्रीभिरेधमानमदः पुमान् । नैवाहृत्यभिधातुं वै त्वामकिंचन-  
गोचरम् ॥ ९ ॥ नमोऽकिंचनवित्ताय निवृत्तगुणवृत्तये । आत्मा-  
रामाय शान्ताय कैवल्यपतये नमः ॥ १० ॥ मन्ये त्वां कालमी-  
शानमनादिनिधनं विभुम् । समं चरन्तं सर्वत्र भूतानां यन्मिथः  
कलिः ॥ ११ ॥ न वेद कश्चिद्भगवंश्चिकीर्षितं तवेहमानस्य नृणां  
विडम्बनम् । न यस्य कश्चिद्द्वयितोऽस्ति कर्हिचिद्द्वेष्यश्च यस्मि-  
न्विषमा मतिर्नृणाम् ॥ १२ ॥ जन्म कर्म च विश्वात्मन्नजस्याकर्तु-  
रात्मनः । तिर्यङ्नृषिषु यादःसु तदत्यन्तविडम्बनम् ॥ १३ ॥

गोप्याददे त्वयि कृतागसि दाम तावद्या ते दशाश्रुकलिलाञ्जन-  
 संभ्रमाक्षम् । वक्रं निनीय भयभावनया स्थितस्य सा मां विमोह-  
 यति भीरपि यद्विभेति ॥ १४ ॥ केचिदाहुरजं जातं पुण्यश्लोकस्य  
 कीर्तये । यदोः प्रियस्यान्ववाये मलयस्येव चन्दनम् ॥ १५ ॥  
 अपरे वसुदेवस्य देवक्यां याचितोऽभ्यगात् । अजस्त्वमस्य क्षेमाय  
 वधाय च सुरद्विषाम् ॥ १६ ॥ भारावतरणायान्ये भुवो नाव इवो-  
 दधौ । सीदन्त्या भूरिभारेण जातो ह्यात्मभुवार्थितः ॥ १७ ॥  
 भवेऽस्मिन् क्लिश्यमानानामविद्याकामकर्मभिः । श्रवणस्मरणार्हाणि  
 करिष्यन्निति केचन ॥ १८ ॥ शृण्वन्ति गायन्ति गृणन्त्यभीक्ष्णशः  
 स्मरन्ति नन्दन्ति तवेहितं जनाः । त एव पश्यन्त्यचिरेण तावकं  
 भवप्रवाहोपरमं पदाम्बुजम् ॥ १९ ॥ अप्यद्य नस्त्वं स्वकृतेहित-  
 प्रभो जिहाससि स्वित् सुहृदोऽनुजीविनः । येषां न चान्यद्भवतः  
 पदाम्बुजात् परायणं राजसु योजितांहसाम् ॥ २० ॥ के वयं  
 नामरूपाभ्यां यदुभिः सह पाण्डवाः । भवतोऽदर्शनं यर्हि हृषी-  
 काणामिवेशितुः ॥ २१ ॥ नेयं शोभिष्यते तत्र यथेदानीं गदाधर ।  
 त्वत्पदैरङ्किता भाति स्वलक्षणविलक्षितैः ॥ २२ ॥ इमे जनपदाः  
 स्वृद्धाः सुपक्वौषधिवीरुधः । वनाद्रिनद्युदन्वन्तो ह्येधन्ते तव  
 वीक्षितैः ॥ २३ ॥ अथ विश्वेश विश्वात्मन् विश्वमूर्ते स्वकेषु मे ।  
 स्नेहपाशमिमं छिन्धि दृढं पाण्डुषु वृष्णिषु ॥ २४ ॥ त्वयि मेऽन-  
 न्यविषया मतिर्मधुपतेऽसकृत् । रतिमुद्ग्रहतादद्धा गङ्गैवौघमुदन्वति  
 ॥ २५ ॥ श्रीकृष्ण कृष्णसख वृष्ण्यृषभावनिधुर्ग्राजन्यवंशदहनान-  
 पवर्गवीर्य । गोविन्द गोद्विजसुरार्तिहरावतार योगेश्वराखिलगुरो  
 भगवन् नमस्ते ॥ २६ ॥ इति कुन्तीस्तुतिः संपूर्णा ॥

## ३९८. ब्रह्मस्तुतिः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ज्ञातोऽसि मेऽद्य सुचिरान्ननु देहभाजां  
 न ज्ञायते भगवतो गतिरित्यवद्यम् । नान्यत्त्वदस्ति भगवन्नपि  
 तन्न शुद्धं मायागुणव्यतिकराद्यदुरुर्विभासि ॥ १ ॥ रूपं  
 यदेतदवबोधरसोदयेन शश्वन्निवृत्ततमसः सदानुग्रहाय ।  
 आदौ गृहीतमवतारशतैकबीजं यन्नाभिपद्मभवनादहमाविरासम्  
 ॥ २ ॥ नातः परं परम यद्भवतः स्वरूपमानन्दमात्रमविकल्पम-  
 विद्धवर्चः । पश्यामि विश्वसृजमेकमविश्वमात्मन् भूतैर्द्रियात्मक-  
 मदस्त उपाश्रितोऽस्मि ॥ ३ ॥ तद्वा इदं भुवनमङ्गल मङ्ग-  
 लाय ध्याने स्म नो दर्शितं त उपासकानाम् । तस्मै नमो भग-  
 वतेऽनुविधेम तुभ्यं योऽनादृतो नरकभाग्भिरसत्प्रसङ्गैः ॥ ४ ॥  
 ये तु त्वदीयचरणाम्बुजकोशगन्धं जिघ्रन्ति कर्णविवरैः  
 श्रुतिवातनीतम् । भक्त्या गृहीतचरणः परया च तेषां नापैषि  
 नाथ हृदयाम्बुरुहात् स्वपुंसाम् ॥ ५ ॥ तावद्भयं द्रविण-  
 गेहसुहृन्निमित्तं शोकः स्पृहा परिभवो विपुलश्च लोभः । ताव-  
 न्ममेत्यसदवग्रह आर्तिमूलं यावन्न तैऽघ्निमभयं प्रवृणीत लोकः  
 ॥ ६ ॥ दैवेन ते हतधियो भवतः प्रसङ्गात् सर्वाशुभोपशमना-  
 द्विमुखैर्द्रिया ये । कुर्वन्ति कामसुखलेशलवाय दीना लोभाभि-  
 भूतमनसोऽकुशलानि शश्वत् ॥ ७ ॥ क्षुत्तृट्त्रिधातुभिरिमा  
 मुहुरर्धमानाः शीतोष्णवातवर्षैरितरेतराच्च । कामाग्निनाच्युत  
 रुषा च सुदुर्भरेण संपश्यतो मन उरुक्रम सीदते मे ॥ ८ ॥  
 यावत्पृथक्त्वमिदमात्मन इन्द्रियार्थं मायाबलं भगवतो जन  
 ईश पश्येत् । तावन्न संसृतिरसौ प्रतिसंक्रमेत व्यर्थापि दुःख-  
 निवहं वहती क्रियार्था ॥ ९ ॥ अह्नयापृतातर्करणा निशि निःश-

याना नानामनोरथधिया क्षणभङ्गनिद्राः । दैवाहृतार्थरचना  
 ऋषयोऽपि देव युष्मत्प्रसंगविमुखा इह संसरन्ति ॥ १० ॥  
 त्वं भावयोगपरिभावितहृत्सरोज आस्से श्रुतेक्षितपथो ननु  
 नाथ पुंसाम् । यद्यद्धिया त उरुगाय विभावयन्ति तत्तद्गुः  
 प्रणयसे सदनुग्रहाय ॥ ११ ॥ नातिप्रसीदति तथोपचितोपचारै-  
 राराधितः सुरगणैर्हृदि बद्धकामः । यत्सर्वभूतदयया सद-  
 लभ्ययैको नानाजनेष्ववहितः सुहृदन्तरात्मा ॥ १२ ॥ पुंसा-  
 मतो विविधकर्मभिरध्वराद्यैर्दानिन चोग्रतपसा व्रतचर्यया च ।  
 आराधनं भगवतस्तव सक्त्रियार्थो धर्मोऽर्पितः कर्हिचिद्धियते न  
 यत्र ॥ १३ ॥ शश्वत्स्वरूपमहसैव निपीतभेदमोहाय बोध-  
 धिषणाय नमः परस्मै । विश्वोद्भवस्थितिलयेषु निमित्तलीला-  
 रासाय ते नम इदं चकृमेश्वराय ॥ १४ ॥ यस्यावतारगुणकर्म-  
 विडम्बनानि नामानि येऽसुविगमे विवशा गृणन्ति । तेनैकजन्म-  
 शमलं सहसैव हित्वा संयान्त्यपावृतमृतं तमजं प्रपद्ये ॥ १५ ॥  
 यो वा अहं च गिरिशश्च विभुः स्वयं च स्थित्युद्भवप्रलयहेतव  
 आत्ममूलम् । भित्त्वा त्रिपाद्वृध एक उरुप्ररोहस्तस्मै नमो भगवते  
 भुवनद्रुमाय ॥ १६ ॥ लोको विकर्मनिरतः कुशले प्रमत्तः कर्म-  
 ण्ययं त्वद्गुदिते भवदर्चने स्वे । यस्तावदस्य बलवानिह जीविताशां  
 सद्यश्छिनत्त्यनिमिषाय नमोऽस्तु तस्मै ॥ १७ ॥ यस्माद्धिभेम्यह-  
 मपि द्विपरार्धधिष्यमध्यासितः सकललोकनमस्कृतं यत् । तेपे तपो  
 बहुसवोऽवरुहूत्समानस्तस्मै नमो भगवतेऽधिमेखाय तुभ्यम् ॥ १८ ॥  
 तिर्यङ्गानुष्यविबुधादिषु जीवयोनिष्वात्मेच्छयात्मकृतसेतुपरीप्सया  
 यः । रेमे निरस्तरतिरप्यवरुद्धदेहस्तस्मै नमो भगवते पुरुषोत्त-  
 माय ॥ १९ ॥ यो विद्ययानुपहतोऽपि दशार्धवृत्त्या निद्रामुवाह

जठरीकृतलोकयात्रः । अन्तर्जलेऽहिकशिपुस्पर्शानुकूलां भीमोर्मि-  
मालिनि जनस्य सुखं विवृण्वन् ॥ २० ॥ यन्नाभिपद्मभवनादह-  
मासमीड्य लोकत्रयोपकरणो यदनुग्रहेण । तस्मै नमस्त उदरस्थ-  
भवाय योगनिद्रावसानविकसन्नलिनेक्षणाय ॥ २१ ॥ सोऽयं  
समस्तजगतां सुहृदेक आत्मा सत्त्वेन यन्मृडयते भगवान्भगेन ।  
तेनैव मे द्दशमनुस्पृशताद्यथाहं स्रक्ष्यामि पूर्ववदिदं प्रणतप्रियोऽसौ  
॥ २२ ॥ एष प्रपन्नवरदो रमयात्मशक्त्या यद्यत् करिष्यति  
गृहीतगुणावतारः । तस्मिन् स्वविक्रममिदं सृजतोऽपि चेतो  
युञ्जीत कर्मशमलं च यथा विजह्याम् ॥ २३ ॥ नाभिहृदादिह  
सतोऽम्भसि यस्य पुंसो विज्ञानशक्तिरहमासमनन्तशक्तेः । रूपं  
विचित्रमिदमस्य विवृण्वतो मे मारीरिषीष्ट निगमस्य गिरां  
विसर्गः ॥ २४ ॥ सोऽसावदभ्रकरुणो भगवान् विवृद्धप्रेमस्मितेन  
नयनाम्बुरुहं विजृम्भन् । उत्थाय विश्वविजयाय च नो विषादं  
माध्व्या गिरापनयतात् पुरुषः पुराणः ॥ २५ ॥ इति ब्रह्मस्तुतिः  
संपूर्णा ॥

### ३९९. भीष्मस्तुतिः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ इति मतिरूपकल्पिता वितृष्णा भगवति  
सात्वतपुङ्गवे विभूम्नि । स्वसुखमुपगते क्वचिद्विहर्तुं प्रकृतिमुपेयुषि  
यद्भवप्रवाहः ॥ १ ॥ त्रिभुवनकमनं तमालवर्णं रविकरगौरवराम्बरं  
तन्धाने । वपुरलककुलावृताननाब्जं विजयसखे रतिरस्तु मेऽनवद्या  
॥ २ ॥ युधि तुरगरजोविधूम्नविश्वक्कवलुलितश्रमवार्यलंकृतास्ये ।  
मम निशितशरैर्विभिद्यमानत्वचि विलसत्कवचेऽस्तु कृष्ण आत्मा  
॥ ३ ॥ सपदि सखिवचो निशम्य मध्ये निजपरयोर्बलयो रथं  
निवेश्य । स्थितवति परसैनिकायुरक्षणा हतवति पार्थसखे रतिर्म-

मास्तु ॥ ४ ॥ व्यवहितपृतनामुखं निरीक्ष्य स्वजनवधाद्विमुखस्य  
दोषबुद्ध्या । कुमतिमहरदात्मविद्यया यश्चरणरतिः परमस्य तस्य  
मेऽस्तु ॥ ५ ॥ स्वनिगममपहाय मत्प्रतिज्ञामृतमधिकर्तुमवप्लुतो  
रथस्थः । धृतरथचरणोऽभ्ययाच्चलदुर्हरिरिव हन्तुमिभं गतोत्तरीयः  
॥ ६ ॥ शितविशिखहतो विशीर्णदंशः क्षतजपरिप्लुत आततायिनो  
मे । प्रसभमभिससार मद्गर्धार्थं स भवतु मे भगवान् गतिर्मुकुन्दः  
॥ ७ ॥ विजयरथकुटुम्ब आत्ततोत्रे धृतहयरश्मिनि तच्छ्रूयेक्षणीये ।  
भगवति रतिरस्तु मे मुमूर्षोर्यमिह निरीक्ष्य हता गताः सरूपम्  
॥ ८ ॥ ललितगतिविलासवल्गुहासप्रणयनिरीक्षणकल्पितोरुमानाः  
कृतमनुकृतवत्य उन्मदान्धाः प्रकृतिमगन् किल यस्य गोपवध्वः  
॥ ९ ॥ मुनिगणनृपवर्यसंकुलेऽन्तः सदसि युधिष्ठिरराजसूय  
एषाम् । अर्हणमुपपेद ईक्षणीयो मम दृशि गोचर एष  
आविरात्मा ॥ १० ॥ तमिममहमजं शरीरभाजां हृदि हृदि धिष्टि-  
तमात्मकल्पितानाम् । प्रतिदृशमिव नैकधार्कमेकं समधिगतोऽस्मि  
विधूतभेदमोहः ॥ ११ ॥ इति भीष्मस्तुतिः संपूर्णा ॥

### ४००. जीवस्तुतिः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ तस्योपसन्नमवितुं जगदिच्छयात्तनानातनोर्भुवि  
चलच्चरणारविन्दम् । सोऽहं ब्रजामि शरणं ह्यकुतोभयं मे येनेदृशी  
गतिरदर्शयसतोऽनुरूपा ॥ १ ॥ यस्त्वन्न बद्ध इव कर्मभिरावृतात्मा  
भूतेन्द्रियाशयमयीमवलम्ब्य मायाम् । आस्ते विशुद्धमविकारम-  
खण्डबोधमातप्यमानहृदयेऽवसितं नमामि ॥ २ ॥ यः पञ्चभूत-  
रचिते रहितः शरीरे छन्नोऽयथेन्द्रियगुणार्थचिदात्मकोऽहम् ।  
तेनाविकुण्ठमहिमानमृषिं तमेनं वन्दे परं प्रकृतिपूरुषयोः पुमांसम्  
॥ ३ ॥ यन्माययोरुगुणकर्मनिबन्धनेऽस्मिन् सांसारिके पथि

चरंस्तदभिभ्रमेण । नष्टस्मृतिः पुनरयं प्रवृणीत लोकं युक्त्या कया  
महदनुग्रहमन्तरेण ॥ ४ ॥ ज्ञानं यदेतददधात् कतमः स देव-  
स्रैकालिकं स्थिरचरेष्वनुवर्तितांशः । तं जीवकर्मपदवीमनुवर्तमाना-  
स्तापत्रयोपशमनाय वयं भजेम ॥ ५ ॥ देह्यन्यदेहविवरे जठराग्नि-  
नासृग्विण्मूत्रकूपपतितो भृशतप्तदेहः । इच्छन्नितो विवासितुं  
गणयन् स्वमासान् निर्वास्यते कृपणधीर्भगवन् कदा नु ॥ ६ ॥  
येनेदृशीं गतिमसौ दशमास्य ईश संग्राहितः पुरुदयेन भवादृशेन ।  
स्वेनैव तुष्यतु कृतेन स दीननाथः को नाम तत् प्रति विनाञ्जलि-  
मस्य कुर्यात् ॥ ७ ॥ पश्यत्ययं धिषणया ननु सप्तवध्रिः शारीरके  
दमशरीर्यपरः स्वदेहे । यत्सृष्टयास तमहं पुरुषं पुराणं पश्ये  
बहिर्हृदि च चैत्यमिव प्रतीतम् ॥ ८ ॥ सोऽहं वसन्नपि विभो  
बहुदुःखवासं गर्भान्न निर्जिगमिषे बहिरन्धकूपे । यत्रोपयात-  
मुपसर्पति देवमाया मिथ्यामतिर्यदनु संसृतिचक्रमेतत् ॥ ९ ॥  
तस्मादहं विगतविक्लव उद्धरिष्ये आत्मानमाशु तमसः सुहृदात्म-  
नैव । भूयो यथा व्यसनमेतदनेकरन्ध्रं मा मे भविष्यदुपसादित-  
विष्णुपादः ॥ १० ॥ इति जीवस्तुतिः संपूर्णा ॥

### ४०१. कर्दमस्तुतिः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ जुष्टं बताद्याऽखिलसत्त्वरारोः सांसिध्य  
मक्ष्णोस्तव दर्शनान्नः । यद्दर्शनं जन्मभिरीड्य सद्भिराशासते  
योगिनो रूढयोगाः ॥ १ ॥ ये मायया ते हतमेधसस्त्वत्पादार-  
विन्दं भवसिन्धुपोतम् । उपासते कामलवाय तेषां रासीश कामान्  
निरयेऽपि ये स्युः ॥ २ ॥ तथा स चाहं परिवोढुकामः समान-  
शीलां गृहमेधधेनुम् । उपेयिवान् मूलमशेषमूलं दुराशयः काम-  
दुघाङ्घ्रिपस्य ॥ ३ ॥ प्रजापतेस्ते वचसाधीश तन्त्या लोकः किलायं



कामहतोनुबद्धः । अहं च लोकानुगतो वहामि बलिं च शुक्ला-  
निमिषाय तुभ्यम् ॥ ४ ॥ लोकांश्च लोकानुगतान् पशूंश्च हित्वा  
श्रितास्ते चरणातपत्रम् । परस्परं त्वद्गुणवादसीधुपीयूषनिर्यापित-  
देहधर्माः ॥ ५ ॥ न तेऽजराक्षभ्रमिरायुरेषां त्रयोदशारं त्रिशतं  
षष्टिपर्व । षण्णेम्यनन्तच्छदि यत्रिणाभि करालस्रोतो जगदा-  
च्छिद्य धावत् ॥ ६ ॥ एकः स्वयं सन् जगतः सिसृक्षया द्वितीय-  
यात्मन्नधियोगमायया । सृजत्यदः पासि पुनर्ग्रसिष्यसे यथोर्ण-  
नाभिर्भगवन् स्वशक्तिभिः ॥ ७ ॥ नैतद्गताधीश पदं तवेप्सितं  
यन्मायया नस्तनुषे भूतसूक्ष्मम् । अनुग्रहायास्त्वपि यर्हि मायया  
लसत्तुलस्या तनुवा विलक्षितः ॥ ८ ॥ तं त्वानुभूत्योपरतक्रियार्थं  
स्वमायया वर्तितलोकतन्नम् । नमाम्यभीक्षणं नमनीयपादसरोज-  
मल्पीयसि कामवर्षम् ॥ ९ ॥ इति कर्दमस्तुतिः संपूर्णा ॥

### ४०२. गजेन्द्रस्तुतिः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ नमो भगवते तस्मै यत एतच्छिदा-  
त्मकम् । पुरुषायादिबीजाय परेशायाभिधीमहि ॥ १ ॥ यस्मि-  
न्निदं यतश्चेदं येनेदं य इदं स्वयम् । योऽस्मात्परस्माच्च परस्तं  
प्रपद्ये स्वयं भुवम् ॥ २ ॥ यः स्वात्मनीदं निजमाययार्पितं क्वचिद्  
विभातं क्व च तत् तिरोहितम् । अविद्धदृक् साक्ष्युभयं तदीक्षते  
स भात्ममूलोऽवतु मां परात् परः ॥ ३ ॥ कालेन पञ्चत्वमितेषु  
कृत्स्नशो लोकेषु पालेषु च सर्वहेतुषु । तमस्तदासीद्गहनं गभीरं  
यस्तस्य पारेऽभिविराजते विभुः ॥ ४ ॥ न यस्य देवा ऋषयः पदं  
विदुर्जन्तुः पुनः कोऽर्हति गन्तुमीरितुम् । यथा नटस्याकृति-  
भिर्विचेष्टतो दुरत्ययानुक्रमणः स माऽवतु ॥ ५ ॥ दिदृक्ष्वो यस्य  
पदं सुमङ्गलं विमुक्तसङ्गा मुनयः सुसाधवः । चरन्त्यलोकव्रतम-

व्रणं वने भूतात्मभूताः सुहृदः स मे गतिः ॥ ६ ॥ न विद्यते  
 यस्य च जन्मकर्म वा न नामरूपे गुणदोष एव वा । तथापि  
 लोकाप्ययसंभवाय यः स्वमायया तान्यनुकालमृच्छति ॥ ७ ॥  
 तस्मै नमः परेशाय ब्रह्मणेऽनन्तशक्तये । अरूपायोररूपाय नम  
 आश्चर्यकर्मणे ॥ ८ ॥ नम आत्मप्रदीपाय साक्षिणे परमात्मने ।  
 नमो गिरां विदूराय मनसश्चेतसामपि ॥ ९ ॥ सत्त्वेन प्रतिलभ्याय  
 नैष्कर्म्येण विपश्चिता । नमः कैवल्यनाथाय निर्वाणसुखसंविदे  
 ॥ १० ॥ नमः शान्ताय घोराय मूढाय गुणधर्मिणे । निर्विशेषाय  
 साम्याय नमो ज्ञानघनाय च ॥ ११ ॥ क्षेत्रज्ञाय नमस्तुभ्यं  
 सर्वाध्यक्षाय साक्षिणे । पुरुषायात्ममूलाय मूलप्रकृतये नमः  
 ॥ १२ ॥ सर्वेन्द्रियगुणद्रष्ट्रे सर्वप्रत्ययहेतवे । असता छाययो-  
 क्ताय सदाभासाय ते नमः ॥ १३ ॥ नमो नमस्तेऽखिलकारणाय  
 निष्कारणायद्भुतकारणाय । सर्वागमास्त्रायमहार्णवाय नमोऽप-  
 वर्गाय परायणाय ॥ १४ ॥ गुणारणिच्छन्नचिदूष्मपाय तत्क्षोभ-  
 विस्फूर्जितमानसाय । नैष्कर्म्यभावेन विवर्जितागमस्वयंप्रकाशाय  
 नमस्करोमि ॥ १५ ॥ मादृक्प्रपन्नपशुपाशविमोक्षणाय मुक्ताय  
 भूरिकरुणाय नमोऽलयाय । स्वांशेन सर्वतनुभृन्मनसि प्रतीत-  
 प्रत्यग्दृशे भगवते बृहते नमस्ते ॥ १६ ॥ आत्मात्मजासगृहवित्त-  
 जनेषु सकैर्दुष्प्रापणाय गुणसङ्गविवर्जिताय । मुक्तात्मभिः  
 स्वहृदये परिभाविताय ज्ञानात्मने भगवते नम ईश्वराय ॥ १७ ॥  
 यं धर्मकामार्थविमुक्तिकामा भजन्त इष्टां गतिमाप्नुवन्ति । किं  
 त्वाशिषो रात्यपि देहमव्ययं करोतु मेऽदभ्रदयो विमोक्षणम्  
 ॥ १८ ॥ एकान्तिनो यस्य न कंचनार्थं वाञ्छन्ति ये वै भग-  
 वत्प्रपन्नाः । अत्यद्भुतं तच्चरितं सुमङ्गलं गायन्ति आनन्दसमुद्र-

मन्नाः ॥ १९ ॥ तमक्षरं ब्रह्मपरं परेशमव्यक्तमाध्यात्मिगकयोग-  
म्यम् । अतीन्द्रियं सूक्ष्ममिवातिदूरमनन्तमाद्यं परिपूर्णमीडे  
॥ २० ॥ यस्य ब्रह्मादयो देवा वेदा लोकाश्चराचराः । नामरूप-  
विभेदेन फलव्या च कलया कृताः ॥ २१ ॥ यथाऽर्चिषोऽग्नेः  
सवितुर्गभस्तयो निर्यान्ति संयान्त्यसकृत् स्वरोचिषः । तथा  
यतोऽयं गुणसंप्रवाहो बुद्धिर्मनः खानि शरीरसर्गाः ॥ २२ ॥ स वै  
न देवासुरमर्त्यतिर्यङ् न स्त्री न षण्ढो न पुमान्न जन्तुः । नायं  
गुणः कर्म न सन्न चासन्नविषेधशेषो जयतादशेषः ॥ २३ ॥  
जिजीविषे नाहमिहामुयाकिमन्तर्बहिश्चावृतयेभ्योन्या । इच्छामि  
कालेन न यस्य विप्लवस्तस्यात्मलोकावरणस्य मोक्षम् ॥ २४ ॥  
सोऽहं विश्वसृजं विश्वमविश्वं विश्ववेदसम् । विश्वात्मानमजं ब्रह्म  
प्रणतोऽस्मि परं पदम् ॥ २५ ॥ योगरन्धितकर्माणो हृदि योग-  
विभाविते । योगिनो यं प्रपश्यन्ति योगेशं तं नतोऽस्म्यहम्  
॥ २६ ॥ नमो नमस्तुभ्यमसह्यवेगशक्तित्रयायाखिलधीगुणाय ।  
प्रपन्नपालाय दुरन्तशक्तये कदिन्द्रियाणामनवाप्यवर्त्मने ॥ २७ ॥  
नायं वेद स्वमात्मानं यच्छक्त्याहंधिया हतम् । तं दुरत्ययमाहात्म्यं  
भगवन्तमितोऽस्म्यहम् ॥ २८ ॥ इति गजेन्द्रस्तुतिः संपूर्णा ॥

### ४०३. हंसगुह्यस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ नमः परायावितथानुभूतये गुणत्रयाभासनिमि-  
त्तबन्धवे । अदृष्टधात्रे गुणतत्त्वबुद्धिभिर्निवृत्तमानाय दधे स्वयंभुवे  
॥ १ ॥ न यस्य सख्यं पुरुषोऽवैति सख्युः सखा वसन् संवसतः  
पुरेऽस्मिन् । गुणो यथा गुणिनो व्यक्तदृष्टेस्तस्मै महेशाय नमस्क-  
रोमि ॥ २ ॥ देहोऽसवोऽक्षा मनवो भूतमात्रा नात्मानमन्यं च  
विदुः परं यत् । सर्वं पुमान् वेद गुणांश्च तज्ज्ञो न वेद सर्वज्ञमनन्त-

मीडे ॥ ३ ॥ यदोपरामो मनसो नामरूपरूपस्य दृष्टस्मृतिसंप्र-  
मोषात् । य ईयते केवलया स्वसंस्थया हंसाय तस्मै शुचिसन्नने  
नमः ॥ ४ ॥ मनीषिणोऽन्तर्हृदि सन्निवेशितं स्वशक्तिभिर्नवभिश्च  
त्रिवृद्धिः । वह्निं यथा दारुणि पाञ्चदशयं मनीषया निष्कर्षन्ति  
गूढम् ॥ ५ ॥ स वै ममाशेषविशेषमायानिषेधनिर्वाणसुखानुभूतिः ।  
स सर्वनामा स च विश्वरूपः प्रसीदतामनिरुक्तात्मशक्तिः ॥ ६ ॥  
यद्यन्निरुक्तं वचसा निरूपितं धियाक्षभिर्वा मनसा वोत यस्य ।  
मा भूत् स्वरूपं गुणरूपं हि तत्तत् स वै गुणापायविसर्गलक्षणः  
॥ ७ ॥ यस्मिन् यतो येन च यस्य यस्मै यद्यो यथा कुरुते कार्यते  
च । परावरेषां परमं प्राक् प्रसिद्धं तद्ब्रह्म तद्धेतुरनन्यदेकम्  
॥ ८ ॥ यच्छक्तयो वदतां वादिनां वै विवादसंवादभुवो भवन्ति ।  
कुर्वन्ति चैषां मुहुरात्ममोहं तस्मै नमोऽनन्तगुणाय भूम्ने ॥ ९ ॥  
अस्तीति नास्तीति च वस्तुनिष्ठयोरेकस्थयोर्भिन्नविरुद्धधर्मयोः । अवे-  
क्षितं किं च न योगसांख्ययोः समं परं ह्यनुकूलं बृहत्तत् ॥ १० ॥  
योऽनुग्रहार्थं भजतां पादमूलमनामरूपो भगवाननन्तः । नामानि  
रूपाणि च जन्मकर्मभिर्भेजे स मह्यं परमः प्रसीदतु ॥ ११ ॥  
यः प्राकृतैर्ज्ञानपथैर्जनानां यथाशयं देहगतो विभाति । यथानिलः  
पार्थिवमाश्रितो गुणं स ईश्वरो मे कुरुतान्मनोरथम् ॥ १२ ॥  
इति हंसगुह्यस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ४०४. वृत्रस्तुतिः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अहं हरे तव पादैकमूलदासानुदासो भवि-  
तास्मि भूयः । मनः स्मरेतासुपतेर्गुणांस्ते गृणीत वाक्कर्म करोतु  
कायः ॥ १ ॥ न नाकपृष्ठं न च पारमेष्ठ्यं न सार्वभौमं न रसाधि-  
पत्यम् । न योगसिद्धीरपुनर्भवं वा समञ्जस त्वा विरहय्य कांक्षे  
॥ २ ॥ अजातपक्षा इव मातरं खगाः स्तन्यं यथा वत्सतराः

क्षुधार्ताः । प्रियं प्रियेव व्युषितं विषण्णा मनोऽरविन्दाक्ष दिदक्षते  
त्वाम् ॥ ३ ॥ ममोत्तमश्लोकजनेषु सख्यं संसारचक्रे भ्रमतः  
स्वकर्मभिः । त्वन्माययात्मात्मजदारगेहेष्वासक्तचित्तस्य न नाथ  
भूयात् ॥ ४ ॥ इति वृत्रस्तुतिः संपूर्णा ॥

४०५. ब्रह्मस्तुतिः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ नौमीड्य तेऽभवपुषे तडिदम्बराय गुञ्जावतंस-  
परिपिच्छलसन्मुखाय । वन्यस्रजे कवलवेत्रविषाणवेणुलक्ष्मश्रिये  
मृदुपदे पञ्चपाङ्गजाय ॥ १ ॥ अस्यापि देववपुषो मदनुग्रहस्य  
स्वेच्छामयस्य न तु भूतमयस्य कोऽपि । नेशे महि त्ववसितुं मन-  
सान्तरेण साक्षात्त्ववैव किमुतात्मसुखानुभूतेः ॥ २ ॥ ज्ञाने-  
प्रयासमुदपास्य नमन्त एव जीवन्ति सन्मुखरितां भवदीयवार्ताम् ।  
स्थाने स्थिताः श्रुतिगतां तनुवाङ्मनोभिर्ये प्रायशोऽजित जितो-  
ऽप्यसि तैस्त्रिलोक्याम् ॥ ३ ॥ श्रेयःश्रुतिं भक्तिमुदस्य ते विभो  
क्लिश्यन्ति ये केवलबोधलब्धये । तेषामसौ क्लेशल एव शिष्यते  
नान्यद्यथा स्थूलतुषावघातिनाम् ॥ ४ ॥ पुरेह भूमन् बहवोऽपि  
योगिनस्त्वदर्पितेहा निजकर्मलब्धया । विबुध्य भक्त्यैव कथोपनी-  
तया प्रपेदिरेऽञ्जोऽच्युत ते गतिं पराम् ॥ ५ ॥ तथापि भूमन्  
महिमाऽगुणस्य ते विबोद्धुमर्हत्यमलान्तरात्मभिः । अविक्रियात्  
स्वानुभवादरूपतो ह्यनन्यबोध्यात्मतया न चान्यथा ॥ ६ ॥  
गुणात्मनस्तेऽपि गुणान् विमातुं हितावतीर्णस्य क ईशिरेऽस्य ।  
कालेन यैर्वा विमिताः सुकल्पैर्भूपांसवः खे मिहिका द्युभासः  
॥ ७ ॥ तत्तेऽनुकंपां सुसमीक्षमाणो भुञ्जान एवात्मकृतं विपा-  
कम् । हृद्गावपुर्भिर्विदधन् नमस्ते जीवेत यो मुक्तिपदे स दाय-

भाक् ॥ ८ ॥ पश्येश मेऽनार्यमनन्त आद्ये परात्मनि त्वय्यपि  
मायिमायिनि । मायां वितत्येक्षितुमात्मवैभवं ह्यहं कियानैच्छ-  
मिवाचिरमौ ॥ ९ ॥ अतः क्षमस्वाच्युत मे रजोभुवो ह्यजानत-  
स्त्वत्पृथगीशमानिनः । अजाऽवलेपान्धतमोऽन्धचक्षुष एषोऽनु-  
कम्प्यो मयि नाथवानिति ॥ १० ॥ काहं तमोमहदहंखचराग्नि-  
वाभूसंवेष्टिताण्डघटसप्तवितस्तिकायः । क्कृद्विधाविगणितान्ड-  
पराणुचर्यावाताध्वरोमविवरस्य च ते महित्वम् ॥ ११ ॥ उत्क्षे-  
पणं गर्भगतस्य पादयोः किं कल्पते मातुरधोऽक्षजागसे । किमस्ति  
नास्ति व्यपदेशभूषितं तवास्ति कुक्षेः कियदप्यनन्तः ॥ १२ ॥  
जगन्नयान्तोदधिसंघ्रवोदे नारायणस्योदरनाभिनालात् । विनि-  
र्गतोऽजस्त्विति वाङ् न वै मृषा किंवीश्वरत्वान्न विनिर्ग-  
तोऽस्मि ॥ १३ ॥ नारायणस्त्वं न हि सर्वदेहिनामात्मास्यधीशा-  
खिललोकसाक्षी । नारायणोऽङ्गं नरभूजलायनात्तच्चापि । सत्यं  
न तवैव माया ॥ १४ ॥ तच्चेज्जलस्थं तव सज्जगद्गुः किं  
मे न दृष्टं भगवंस्तदैव । किं वा सुदृष्टं हृदि मे तदैव किं  
नो सपद्येव पुनर्व्यदर्शि ॥ १५ ॥ अत्रैव मायाधमनावतारे ह्यस्य  
प्रपञ्चस्य बहिः स्फुटस्य । कृत्स्नस्य चान्तर्जठरे जनन्या माया-  
त्वमेव प्रकटीकृतं ते ॥ १६ ॥ यस्य कुक्षाविदं सर्वं, सात्मं भाति  
यथा तथा । तत्त्वय्यपीह तत्सर्वं किमिदं मायया विना ॥ १७ ॥  
अद्यैव त्वद्वृत्तेऽस्य किं मम न ते मायात्वमादर्शितमेकोऽसि  
प्रथमं ततो व्रजसुहृद्दत्साः समस्ता अपि । तावन्तोऽसि' चतु-  
र्भुजास्तदखिलैः साकं मयोपासितास्तावन्त्येव जगन्त्यभूस्तद-  
मितं ब्रह्माद्वयं शिष्यते ॥ १८ ॥ अजानतां त्वत्पदवीमनात्म-  
न्यात्मात्मना भासि वितत्य मायाम् । सृष्टाचिवाहं जगतो विधान

इव त्वमेषोऽन्त इव त्रिनेत्र ॥ १९ ॥ सुरेष्वृषिष्वीश तथैव  
 नृष्वपि तिर्यक्षु यादःस्वपि तेऽजनस्य । जन्मासतां दुर्मदनिग्रहाय  
 प्रभो विधातः सदनुग्रहाय च ॥ २० ॥ को वेत्ति भूमन् भगवन्  
 परात्मन् योगेश्वरोतीर्भवतस्त्रिलोक्याम् । क्व वा कथं वा कति वा  
 कदेति विस्तारयन् क्रीडसि योगमायाम् ॥ २१ ॥ तस्मादिदं  
 जगदशेषमसत्स्वरूपं स्वप्नाभमस्तधिषणं पुरुदुःखदुःखम् । त्वय्येव  
 नित्यसुखबोधतनावनन्ते मायात उद्यदपि यत्सदिवावभाति  
 ॥ २२ ॥ एकस्त्वमात्मा पुरुषः पुराणः सत्यः स्वयंज्योतिरनन्त  
 आद्यः । नित्योऽक्षरोऽजस्रसुखो निरञ्जनः पूर्णोऽद्वयो मुक्त उपा-  
 धितोऽमृतः ॥ २३ ॥ एवंविधं त्वां सकलात्मनामपि स्वात्मान-  
 मात्मात्मतया विचक्षते । गुर्वर्कलब्धोपनिषत्सु चक्षुषा ये ते तरन्तीव  
 भवानृताम्बुधिम् ॥ २४ ॥ आत्मानमेवात्मतयाऽविजानतां तेनैव  
 जातं निखिलं प्रपञ्चितम् । ज्ञानेन भूयोऽपि च तत् प्रलीयते  
 रज्ज्वामहेर्भोगभवाभवौ यथा ॥ २५ ॥ अज्ञानसंज्ञौ भवबंधमोक्षौ  
 द्वौ नाम नान्यौ स्त ऋतज्ञभावात् । अजस्रचित्यात्मनि केवले परे  
 विचार्यमाणे तरणाविवाहनी ॥ २६ ॥ त्वामात्मानं परं मत्वा  
 परमात्मानमेव च । आत्मा पुनर्बहिर्भृग्य अहोऽज्ञजनताऽज्ञता  
 ॥ २७ ॥ अन्तर्भवेऽनन्तभवन्तमेव ह्यतत्त्यजन्तो मृगयन्ति  
 सन्तः । असन्तमप्यन्यहिमन्तरेण सन्तं गुणं तं किमु यन्ति  
 सन्तः ॥ २८ ॥ अथापि ते देव पदाम्बुजद्वयप्रसादलेशानुगृहीत  
 एव हि । जानाति तत्त्वं भगवन् महिम्नो न चान्य एकोऽपि चिरं  
 विचिन्वन् ॥ २९ ॥ तदस्तु मे नाथ स भूरिभागो भवेऽन्न वान्यत्र  
 तु वा तिरश्चाम् । येनाहमेकोऽपि भवज्जनानां भूत्वा निषेवे तव  
 पादपल्लवम् ॥ ३० ॥ अहोऽतिधन्या व्रजगोरमण्यः स्तन्यामृतं

पीतमतीव ते मुदा । यासां विभो वत्सतरात्मजात्मना यत्तृप्तये-  
 ऽद्यापि न चालमध्वराः ॥ ३१ ॥ अहो भाग्यमहो भाग्यं नन्द-  
 गोपव्रजौकसाम् । यन्मित्रं परमानन्दं पूर्णं ब्रह्म सनातनम्  
 ॥ ३२ ॥ एषां तु भाग्यमहिमाऽच्युत तावदास्तामेकादशैव हि  
 वर्यं वत भूरिभागाः । एतद्दृषीकचषकैरसकृत् पिबामः शर्वा-  
 दयोऽद्भ्युदजमध्वमृतासवं ते ॥ ३३ ॥ तद्भूरिभाग्यमिह जन्म  
 किमप्यटव्यां यद्भोकुलेऽपि कतमांगिरजोभिषेकम् । यज्जीवितं  
 तु निखिलं भगवान् मुकुन्दस्त्वद्यापि यत्पदरजः श्रुतिमृग्यमेव  
 ॥ ३४ ॥ एषां घोषनिवासिनामुत भवान् किं देव रातेति नश्चेतो  
 विश्वफलात् फलं त्वदपरं कुत्राप्ययन् मुह्यति । सद्देवादिव  
 पूतनाऽपि सकुला त्वामेव देवापिता यद्दामार्थसुहृद्वियात्म-  
 तनय प्राणाशयास्त्वत्कृते ॥ ३५ ॥ तावद्वागादयः स्तेनास्तावत्  
 कारागृहं गृहम् । तावन्मोहोऽघ्निनिगडो यावत् कृष्ण न ते  
 जनाः ॥ ३६ ॥ प्रपञ्चं निष्प्रपञ्चोऽपि विडम्बयसि भूतले ।  
 प्रपन्नजनतानन्दसन्दोहं प्रथितुं प्रभो ॥ ३७ ॥ जानन्त एव  
 जानन्तु किं बहूक्त्या न मे प्रभो । मनसो वपुषो वाचो वैभवं  
 तव गोचरः ॥ ३८ ॥ अनुजानीहि मां कृष्ण सर्वं त्वं वेत्सि  
 सर्वदृक् । त्वमेव जगतां नाथो जगदेतत्तवार्पितम् ॥ ३९ ॥  
 श्रीकृष्ण वृष्णिक्कुलपुष्करजोषदायिन् क्षमानिर्जरद्विजपशूदधिवृद्धि-  
 कारिन् । उद्धर्मशार्वरहर क्षितिराक्षसध्रुगाकल्पमार्कमर्हन् भगवन्  
 नमस्ते ॥ ४० ॥ इति ब्रह्मस्तुतिः ॥

४०६. गर्भस्तुतिः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ सत्यव्रतं सत्यपरं त्रिसत्यं सत्यस्य योनिं  
 निहितं च सत्ये । सत्यस्य सत्यमृतसत्यनेत्रं सत्यात्मकं त्वां शरणं



प्रपन्नाः ॥ १ ॥ एकायनोऽसौ द्विफलस्त्रिमूलश्चतुरसः पञ्च-  
 विधः षडात्मा । सप्तत्वगष्टविटपो नवाक्षो दशच्छदी द्विखगो  
 ह्यादिवृक्षः ॥ २ ॥ त्वमेक एवास्य सतः प्रसूतिस्त्वं सन्निधानं  
 त्वमनुग्रहश्च । त्वन्मायया संवृतचेतसस्त्वां पश्यन्ति नाना  
 न विपश्चितो ये ॥ ३ ॥ विभर्षि रूपाण्यवबोध आत्मा क्षेमाय  
 लोकस्य चराचरस्य । सत्त्वोपपन्नानि सुखावहानि सतामभद्राणि  
 मुहुः खलानाम् ॥ ४ ॥ त्वय्यम्बुजाक्षाखिलसत्त्वधास्त्रि समा-  
 धिनावेशितचेतसैके । त्वत्पादपोतेन महत्कृतेन कुर्वन्ति गोवत्स-  
 पदं भवाब्धिम् ॥ ५ ॥ स्वयं समुत्तीर्य सुदुस्तरं द्युमन् भवा-  
 र्णवं भीममदभ्रसौहृदाः । भवत्पदाम्भोरुहनावमत्र ते निधाय  
 याताः सदनुग्रहो भवान् ॥ ६ ॥ येऽन्येऽरविन्दाक्ष विमुक्तमानि-  
 नस्त्वय्यस्तभावादविशुद्धबुद्धयः । आरुह्य कृच्छ्रेण परं पदं ततः  
 पतन्त्यधोऽनादृतयुग्मदङ्गयः ॥ ७ ॥ तथा न ते माधव तावकाः  
 क्वचिद्भ्रश्यन्ति मार्गात्त्वयि बद्धसौहृदाः । त्वयाऽभिगुप्ता  
 विचरन्ति निर्भया विनायकानीकपमूर्धसु प्रभो ॥ ८ ॥ सत्त्वं  
 विशुद्धं श्रयते भवान् स्थितौ शरीरिणां श्रेयउपायनं वपुः ।  
 वेदक्रियायोगतपःसमाधिभिस्तवार्हणं येन जनः समीहते ॥ ९ ॥  
 सत्त्वं न चेद्धातरिदं निजं भवेद्विज्ञानमज्ञानभिदापमार्जनम् ।  
 गुणप्रकाशैरनुमीयते भवान् प्रकाशते यस्य च येन वा गुणः  
 ॥ १० ॥ न नामरूपे गुणजन्मकर्मभिर्निरूपितव्ये तव तस्य  
 साक्षिणः । मनोवचोभ्यामनुमेयवर्त्मनो देव क्रियायां प्रतियन्त्य-  
 थापि हि ॥ ११ ॥ शृण्वन् गृणन् संस्मरयंश्च चिन्तयन्नामानि  
 रूपाणि च मङ्गलानि ते । क्रियासु यस्त्वच्चरणारविन्दयोरा-  
 विष्टचेता न भवाय कल्पते ॥ १२ ॥ दिष्ट्या हरेऽस्या भवत

पदो भुवो भारोऽपनीतस्तव जन्मनेशितुः । दिष्ट्याङ्कितां त्वत्प-  
दकैः सुशोभनैर्द्रक्ष्याम गां द्यां च तवानुकम्पिताम् ॥ १३ ॥  
न तेऽभवस्येश भवस्य कारणं विना विनोदं बत तर्कयामहे । भवो  
निरोधः स्थितिरप्यविद्यया कृता यतस्त्वय्यभयाश्रयात्मनि  
॥ १४ ॥ मत्स्याश्वकच्छपनृसिंहवराहहंसराजन्यविप्रविबुधेषु कृता-  
वतारः । त्वं पासि नखिभुवनं च यथाधुनेश भारं भुवो हर  
यदूत्तम वन्दनं ते ॥ १५ ॥ दिष्ट्याम्ब ते कुक्षिगतः परः पुमानं-  
शेन साक्षाद्भगवान् भवाय नः । मा भूद्भयं भोजपतेर्मुमूर्षोर्गोप्ता  
यदूनां भविता तवात्मजः ॥ १६ ॥ इति गर्भस्तुतिः संपूर्णा ॥

### ४०७. गुह्यकस्तुतिः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ कृष्ण कृष्ण महायोगिंस्वमाद्यः पुरुषः  
परः । व्यक्ताव्यक्तमिदं विश्वं रूपं ते ब्राह्मणा विदुः ॥ १ ॥ त्वमेकः  
सर्वभूतानां देहस्वात्मेन्द्रियेश्वरः । त्वमेव कालो भगवान् विष्णु-  
रव्यय ईश्वरः ॥ २ ॥ त्वं महान् प्रकृतिः साक्षाद्रजःसत्त्वतमो-  
मयी । त्वमेव पुरुषोऽध्यक्षः सर्वक्षेत्रविकारवित् ॥ ३ ॥ गृह्यमाणै-  
स्त्वमग्राह्यो विकारैः प्राकृतैर्गुणैः । को न्विहार्हति विज्ञातुं प्राक्सिद्धं  
गुणसंवृतः ॥ ४ ॥ तस्मै तुभ्यं भगवते वासुदेवाय वेधसे । आत्म-  
द्योतगुणैश्छन्नमहिम्ने ब्रह्मणे नमः ॥ ५ ॥ यस्यावतारा ज्ञायन्ते  
शरीरेष्वशरीरिणः । तैस्तैरतुल्यातिशयैर्वीर्यैर्देहिष्वसंगतैः ॥ ६ ॥  
स भवान् सर्वलोकस्य भवाय विभवाय च । अवतीर्णोऽशभागेन  
सांप्रतं पतिराशिषाम् ॥ ७ ॥ नमः परमकल्याण नमः परम-  
मङ्गलम् । वासुदेवाय शान्ताय यदूनां पतये नमः ॥ ८ ॥ अनु-  
जानीहि नौ भूमंस्तवानुचरकिंकरौ । दर्शनं नौ भगवत ऋषेरा-

सीदनुग्रहात् ॥ ९ ॥ वाणी गुणानुकथने श्रवणौ कथायां हस्तौ च  
कर्मसु मनस्तव पादयोर्नः । स्मृत्यां शिरस्तव निवासजगत्प्रणामे  
दृष्टिः सतां दर्शनेऽस्तु भवत्तनूनाम् ॥ १० ॥ इति गुह्यकस्तुतिः संपूर्णा ॥

### ४०८. वेणुगीतम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ इत्थं शरत्स्वच्छजलं पद्माकरसुगन्धिना ।  
न्यविशद्वायुना वातं सगोगोपालकोऽच्युतः ॥ १ ॥ कुसुमित-  
वनराजिशुष्मिभृंगद्विजकुलघुष्टसरःसरिन्महीध्रम् । मधुपतिरव-  
गाह्य चारयन् गाः सहपशुपालबलश्रुकूज वेणुम् ॥ २ ॥ तद्भ्रज-  
स्त्रिय आश्रुत्य वेणुगीतं स्मरोदयम् । काश्चित् परोक्षं कृष्णस्य स्वस-  
खीभ्योऽन्ववर्णयन् ॥ ३ ॥ तद्दर्शयितुमारब्धाः स्मरन्त्यः कृष्ण-  
चेष्टितम् । नाशकन् स्मरवेगेन विक्षिप्तमनसो नृप ॥ ४ ॥ बर्हापीडं  
नटवरवपुः कर्णयोः कर्णिकारं बिभ्रद्वासः कनककपिशं वैजयन्तीं  
च मालाम् । रन्धान् वेणोरधरसुधया पूरयन् गोपवृन्दैर्वृन्दारण्यं  
स्वपदरमणं प्राविशद्गीतकीर्तिः ॥ ५ ॥ इति वेणुरवं राजन् सर्व-  
भूतमनोहरम् । श्रुत्वा ब्रजस्त्रियः सर्वा वर्णयन्त्योऽभिरेभिरे  
॥ ६ ॥ गोप्य ऊचुः ॥ अक्षण्वतां फलमिदं न परं विदामः सख्यः  
पशून्नुविवेशयतोर्वयस्यैः । वक्रं ब्रजेशसुतयोरनुवेणुजुष्टं यैर्वा  
निपीतमनुरक्तकटाक्षमोक्षम् ॥ ७ ॥ चूतप्रवालबर्हस्तबकोत्पलाब्ज-  
मालानुपृक्तपरिधानविचित्रवेषौ । मध्ये विरेजतुरलं पशुपालगोष्ठ्यां  
रङ्गे यथा नटवरौ क्व च गायमानौ ॥ ८ ॥ गोप्यः किमाचरदयं  
कुशलं स्म वेणुर्दामोदराधरसुधामपि गोपिकानाम् । भुंक्ते स्वयं  
यदवशिष्टरसं हृदिन्यो हृष्यत्त्वचोऽश्रु मुमुचुस्तरवो यथा-  
ऽऽर्याः ॥ ९ ॥ वृन्दावनं सखि भुवो वितनोति कीर्तिं यद्देवकी-

सुतपदाम्बुजलब्धलक्ष्मि । गोविन्दवेणुमनु मत्तमयूरनृत्यं प्रेक्ष्याद्वि-  
 सान्वपरताऽन्यसमस्तसत्त्वम् ॥ १० ॥ धन्याः स्म मूढमतयोऽपि  
 हरिण्य एता या नन्दनन्दनमुपात्तविचित्रवेषम् । आकर्ण्य वेणु-  
 रणितं सहकृष्णसाराः पूजां दधुर्विरचितां प्रणयावलोकैः ॥ ११ ॥  
 कृष्णं निरीक्ष्य वनितोत्सवरूपवेषं श्रुत्वा च तत्कणितवेणुविचित्र-  
 गीतम् । देव्यो विमानगतयः स्मरनुन्नसारा भ्रश्यत्प्रसूनकबरा  
 मुमुहुर्विनीव्यः ॥ १२ ॥ गावश्च कृष्णमुखनिर्गतवेणुगीतपीयूष-  
 मुत्तभितकर्णपुटैः पिबन्त्यः । शावाः स्तुतस्तनपयःकवलाः स्म  
 तस्थुर्गोविन्दमात्मनि दशाऽश्रुकलाः स्पृशन्त्यः ॥ १३ ॥ प्रायो  
 बताम्ब विहगा मुनयो वनेऽस्मिन् कृष्णेक्षितं तदुदितं कलवेणु-  
 गीतम् । आरुह्य ये द्रुमभुजान् रुचिरप्रवालान् शृण्वन्त्यमीलितदृशो  
 विगतान्यवाचः ॥ १४ ॥ नद्यस्तदा तदुपधार्य मुकुन्दगीतमावर्त-  
 लक्षितमनो भवभग्नवेगाः । आलिङ्गनस्थगितमूर्तिभुजैर्भुरारे-  
 र्गृह्णन्ति पादयुगलं कमलोपहाराः ॥ १५ ॥ दृष्ट्वातपे व्रजपशून्  
 सहरामगोपैः संचारयन्तमनुवेणुमुदीरयन्तम् । प्रेमप्रवृद्ध उदितः  
 कुसुमावलीभिः सख्युर्व्यधात् स्ववपुषाऽम्बुद आतपत्रम् ॥ १६ ॥  
 पूर्णाः पुलिन्द्य उरुगायपदाब्जरागश्रीकुङ्कुमेन दयितास्तनमण्डितेन ।  
 तद्दर्शनस्मररुजस्तृणरूपितेन लिम्पन्त्य आननकुचेषु जहुस्तदाधिम्  
 ॥ १७ ॥ हन्तायमद्विरबलाहरिदासवर्यो यद्रामकृष्णचरणस्पर्श-  
 प्रमोदः । मानं तनोति सहगोगणयोस्तयोर्यत्पानीयसूयवसकन्दर-  
 कन्दमूलैः ॥ १८ ॥ गा गोपकैरनुवनं नयतोरुदारवेणुस्वनैः कल-  
 पदैस्तनुभृत्सु सख्यः । अस्पन्दनं गतिमतां पुलकस्तरूणां निर्योग-  
 पाशकृतलक्षणयोर्विचित्रम् ॥ १९ ॥ एवंविधा भगवतो या वृन्दा-  
 वनचारिणः । वर्णयन्त्यो मिथो गोप्यः क्रीडास्तन्मयतां ययुः ॥ २० ॥  
 इति वेणुगीतं संपूर्णम् ॥ ॥

## ४०९. युगलगीतम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ वामबाहुकृतवामकपोलो वल्गितभ्रुरधरार्पित-  
वेणुम् । कोमलाङ्गुलिभिराश्रितमार्गं गोप्य ईरयति यत्र मुकुन्दः  
॥ १ ॥ व्योमयानवनिताः सह सिद्धैर्विस्मितास्तदुपधार्य सलज्जाः ।  
काममार्गणसमर्पितचित्ताः कश्मलं ययुरपस्मृतनीव्यः ॥ २ ॥  
हन्त चित्रमबलाः शृणुतेदं हारहास उरसि स्थिरविद्युत् । नन्द-  
सूनुरयमार्तजनानां नर्मदो यर्हि कूजितवेणुः ॥ ३ ॥ वृन्दशो व्रज-  
वृषा मृगगावो वेणुवाद्यहतचेतस आरात् । दन्तदष्टकवला धृतकर्णा  
निद्रिता लिखितचित्रमिवासन् ॥ ४ ॥ बर्हिणस्तबकधातुपला-  
शैर्बद्धमल्लपरिबर्हविडम्बः । कर्हिचित् सबल आलि स गोपैर्गाः  
समाह्वयति यत्र मुकुन्दः ॥ ५ ॥ तर्हि भग्गतयः सरितो वै  
तत्पदाम्बुजरजोऽनिलनीतम् । स्पृहयतीर्वयमिवाबहुपुण्याः प्रेम-  
वेपितभुजाः स्तिमितापः ॥ ६ ॥ अनुचरैः समनुवर्णितवीर्य आदि-  
पूरुष इवाचलभूतिः । वनचरो गिरितटेषु चरन्तीर्वेणुनाह्वयति  
गाः स यदा हि ॥ ७ ॥ वनलतास्तरव आत्मनि विष्णुं व्यञ्ज-  
यन्त्य इव पुष्पफलाढ्याः । प्रणतभारविटपा मधुधाराः प्रेमहृष्टत-  
नवः ससृजुः स्म ॥ ८ ॥ दर्शनीयतिलको वनमालादिव्यगन्ध-  
तुलसीमधुमत्तैः । अलिकुलैरलयुगीतमभीष्टमाद्रियन् यर्हि संधित-  
वेणुः ॥ ९ ॥ सरसि सारसहंसविहंगाश्रारुगीतहतचेतस एत्य ।  
हरिमुपासत ते यतचित्ता हन्त मीलितदृशो धृतमौनाः ॥ १० ॥  
सहबलः स्रगवतंसविलासः सानुषु क्षितिभृतो व्रजदेव्यः । हर्ष-  
यन् यर्हि वेणुरवेण जातहर्ष उपरम्भति विश्वम् ॥ ११ ॥ मह-  
दतिक्रमणशङ्कितचेता मन्दमन्दमनुगर्जति मेघः । सुहृदमभ्य-  
वर्षत्सुमनोभिश्छायया च विदधत् प्रतपत्रम् ॥ १२ ॥ विविध-

गोपचरणेषु विदग्धो वेणुवाद्य उरुधा निजशिक्षाः । तव सुतः  
 सति यदाधरबिम्बे दत्तवेणुरनयत् स्वरजातीः ॥ १३ ॥ सव-  
 नशस्तदुपधार्य सुरेशाः शक्रशर्वपरमेष्ठिपुरोगाः । कवय आनत-  
 कन्धरचित्ताः कश्मलं ययुरनिश्चिततत्त्वाः ॥ १४ ॥ निजपदाब्ज-  
 दलैर्ध्वजवज्रनीरजाङ्कुशविचित्रललामैः । व्रजभुवः शमयन् खुर-  
 तोदं वर्ष्मधुर्यगतिरीडितवेणुः ॥ १५ ॥ व्रजति तेन वयं सविलास-  
 वीक्षणार्पितमनोभववेगाः । कुजगतिं गमिता न विदामः कश्म-  
 लेन कबरं वसनं वा ॥ १६ ॥ मणिधरः क्वचिदागणयन् गा  
 मालया दयितगन्धतुलस्याः । प्रणयिनोऽनुचरस्य कदांसे प्रक्षिपन्  
 भुजमगायत यत्र ॥ १७ ॥ कणितवेणुरववञ्चितचित्ताः कृष्णमन्व-  
 सत कृष्णगृहिण्यः । गुणगणार्णमनुगत्य हरिण्यो गोपिका इव  
 विमुक्तगृहाशाः ॥ १८ ॥ कुन्ददामकृतकौतुकवेशो गोपगोधन-  
 वृतो यमुनायाम् । नन्दसूनुरनघे तव वत्सो नर्मदः प्रणयिनां  
 विजहार ॥ १९ ॥ मन्दवायुरुपवात्यनुकूलं मानयन् मलयज-  
 स्पर्शेन । बन्दिनस्तमुपदेवगणा ये वाद्यगीतबलिभिः परिवव्रुः  
 ॥ २० ॥ वत्सलो व्रजगवां यद्गग्धो वन्द्यमानचरणः पथि वृद्धैः ।  
 कृत्स्नगोधनमुपोह्य दिनान्ते गीतवेणुरनुगेडितकीर्तिः ॥ २१ ॥  
 उत्सवं श्रमरुचापि दृशीनामुन्नयन् खुररजश्चुरितस्रक् । दिस्स-  
 यैति सुहृदाशिष एष देवकीजठरभूरुडुराजः ॥ २२ ॥ मदविघूर्णि-  
 तलोचन ईषम्मानदः स्वसुहृदां वनमाली । बदरपाण्डुवदनो  
 मृदुगण्डं मण्डयन् कनककुण्डललक्ष्म्या ॥ २३ ॥ यदुपतिर्द्विर-  
 दराजविहारो यामिनीपतिरिवैष दिनान्ते । सुदितवक्त्र उपयाति  
 दुरन्तं मोचयन् व्रजगवां दिनतापम् ॥ २४ ॥ इति युगलगीतं संपूर्णम्

## ४१०. गोपिकागीतम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ जयति तेऽधिकं जन्मना व्रजः श्रयत  
इन्दिरा शश्वदत्र हि । दयित दृश्यतां दिक्षु तावकास्त्वयि  
धृतासवस्त्वां विचिन्वते ॥ १ ॥ शरदुदाशये साधुजातसत्सर-  
सिजोदर श्रीमुषा दृशा । सुरतनाथ तेऽशुल्कदासिका वरद  
निघ्नतो नेह किं वधः ॥ २ ॥ विषजलाप्ययाद्ब्यालराक्षसाद्वर्ष-  
मारुताद्वैद्युतानलात् । वृषमयात्मजाद्विश्वतोभयादृषभ ते वयं  
रक्षिता मुहुः ॥ ३ ॥ न खलु गोपिका नन्दनो भवानखिल-  
देहिनामन्तरात्मदृक् । विखनसार्थितो विश्वगुप्तये सख उदे-  
यिवान् सात्वतां कुले ॥ ४ ॥ विरचिताभयं वृष्णिधुर्यं ते  
चरणमीयुषां संसृतेर्भयात् । करसरोरुहं कान्त कामदं शिरसि  
धेहि नः श्रीकरग्रहम् ॥ ५ ॥ व्रजजनातिहन् वीरयोषितां  
निजजनस्मय ध्वंसनस्मित । भज सखे भवत्किंकरीः स्म नो  
जलरुहाननं चारु दर्शय ॥ ६ ॥ प्रणतदेहिनां पापकर्शनं तृण-  
चरानुगं श्रीनिकेतनम् । फणिफणार्पितं ते पदाम्बुजं कृणु कुचेषु  
नः कृन्धि हृच्छयम् ॥ ७ ॥ मधुरया गिरा वल्गुवाक्यया  
बुधमनोज्ञया पुष्करेक्षण । विधिकरीरिमा वीर मुह्यतीरधरसीधु-  
नाप्याययस्त्र नः ॥ ८ ॥ तव कथामृतं तसजीवनं कविभिरी-  
डितं कल्मषापहम् । श्रवणमङ्गलं श्रीमदाततं भुवि गृणन्ति  
ते भूरिदा जनाः ॥ ९ ॥ प्रहसितं प्रिय प्रेमवीक्षणं विहरणं च  
ते ध्यानमङ्गलम् । रहसि संविदो या हृदिसृष्टशः कुहक नो  
मनः श्लोभयन्ति हि ॥ १० ॥ चलसि यद्भजाच्चारयन्पशून्-  
लिनसुन्दरं नाथ ते पदम् । शिलतृणाङ्कुरैः सीदतीति नः  
कलिलतां मनः कान्त गच्छति ॥ ११ ॥ दिनपरिक्षये नील-

कुन्तलैर्वनरुहाननं बिभ्रदावृतम् । घनरजस्वलं दर्शयन् मुहुर्म-  
 नसि नः स्मरं वीर यच्छसि ॥ १२ ॥ प्रणतकामदं पद्मजार्चितं  
 धरणिमण्डनं ध्येयमापदि । चरणपङ्कजं शन्तमं च ते रमण  
 नः स्तनेष्वर्पयाधिहन् ॥ १३ ॥ सुरतवर्धनं शोकनाशनं  
 स्वरितवेणुना सुष्ठु चुम्बितम् । इतररागविस्मरणं नृणां वितर  
 वीर नस्तेऽधरामृतम् ॥ १४ ॥ अटति यद्भवानह्नि काननं  
 त्रुटिर्युगायते त्वामपश्यताम् । कुटिलकुन्तलं श्रीमुखं च ते  
 जड उदीक्षतां पक्षमकृद्दृशाम् ॥ १५ ॥ पतिसुतान्वय आतृ-  
 बान्धवानतिविलङ्घ्य तेऽन्यच्युतागताः । गतिविदस्तवोद्गीतमो-  
 हिताः कितव योषितः कस्त्यजेन्निशि ॥ १६ ॥ रहसि संविदं  
 हृच्छयोदयं प्रहसिताननं प्रेमवीक्षणम् । बृहदुरःश्रियो वीक्ष्य  
 धाम ते मुहुरतिस्पृहा मुह्यते मनः ॥ १७ ॥ ब्रजवनौकसां  
 व्यक्तिरङ्ग ते वृजिनहृदयलं विश्वमङ्गलम् । त्यज मनाक् च  
 नस्त्वत्स्पृहात्मनां स्वजनहृद्गुजां यन्निषूदनम् ॥ १८ ॥ यत्ते  
 सुजातचरणाम्बुरुहं स्तनेषु भीताः शनैः प्रिय दधीमहि कर्क-  
 शेषु । तेनाटवीमटसि तद्व्यथते न किंस्वित् कूर्पादिभिर्भ्रमति  
 धीर्भवदायुषां नः ॥ १९ ॥ इति गोपिकागीतं संपूर्णम् ॥

### ४११. अक्रूरस्तुतिः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ नतोऽस्म्यहं त्वाखिलहेतुहेतुं नारायणं पूरुष-  
 माद्यमव्ययम् । यन्नाभिजातादरविन्दकोशाद्ब्रह्माविरासीद्यत एष  
 लोकः ॥ १ ॥ भूस्तोयमग्निः पवनः खमादिर्महानजादिर्मन इन्द्रि-  
 याणि । सर्वेन्द्रियार्था विबुधाश्च सर्वे ये हेतवस्ते जगतोऽङ्गभूताः  
 ॥ २ ॥ नैते स्वरूपं विदुरात्मनस्ते ह्यजादयोऽनात्मतया गृहीताः ।  
 अजोऽनुबद्धः स गुणैरजाया गुणात् परं वेद न ते स्वरूपम् ॥ ३ ॥



त्वां योगिनो यजन्त्यद्वा महापुरुषमीश्वरम् । साध्यात्मं साधिभूतं च  
साधिदेवं च साधवः ॥ ४ ॥ त्रय्या च विद्यया केचित्त्वां वै वैतानिका  
द्विजाः । यजन्ते विततैर्यज्ञैर्नानारूपामराख्यया ॥ ५ ॥ एके  
त्वाखिलकर्माणि संन्यस्योपशमं गताः । ज्ञानिनो ज्ञानयज्ञेन यजन्ति  
ज्ञानविग्रहम् ॥ ६ ॥ अन्ये च संस्कृतात्मानो विधिनाभिहितेन ते ।  
यजन्ति त्वन्मयास्त्वां वै बहुमूर्त्यैकमूर्तिकम् ॥ ७ ॥ त्वामेवान्ये  
शिवोक्तेन मार्गेण शिवरूपिणम् । ब्रह्माचार्यविभेदेन भगवन् ससु-  
पासते ॥ ८ ॥ सर्व एव यजन्ति त्वां सर्वदेवमयेश्वरम् । येऽप्यन्य-  
देवताभक्ता यद्यप्यन्यधियः प्रभो ॥ ९ ॥ यथाद्रिप्रभवा नद्यः  
पर्जन्यापूरिताः प्रभो । विशन्ति सर्वतः सिन्धुं तद्वत्त्वां गतयो-  
न्ततः ॥ १० ॥ सत्त्वं रजस्तम इति भवतः प्रकृतेर्गुणाः । तेषु हि  
प्राकृताः प्रोता आब्रह्मस्थावरादयः ॥ ११ ॥ तुभ्यं नमस्तेऽस्त्वविष-  
क्तदृष्टये सर्वात्मने सर्वधियां च साक्षिणे । गुणप्रवाहोऽयमविद्यया  
कृतः प्रवर्तते देवनृतिर्यगात्मसु ॥ १२ ॥ अग्निर्मुखं तेऽवनिरंघ्रि-  
रीक्षणं सूर्यो नभो नाभिरथो दिशः श्रुतिः । द्यौः कं सुरेन्द्रास्तव  
बाहवोऽर्णवाः कुक्षिर्मरुत् प्राणबलं प्रकल्पितम् ॥ १३ ॥ रोमाणि  
वृक्षौषधयः शिरोरुहा मेघाः परस्यास्थिनखानि तेऽद्रयः । निमेषणं  
रात्र्यहनी प्रजापतिर्मेढ्रस्तु वृष्टिस्तव वीर्यमिव्यते ॥ १४ ॥ त्वय्य-  
व्ययात्मन् पुरुषे प्रकल्पिता लोकाः सपाला बहुजीवसंकुलाः । यथा  
जले संजिहते जलौकसोऽप्युदुम्बरे वा मशका मनोमये ॥ १५ ॥  
यानि यानीह रूपाणि क्रीडनार्थं विभर्षि हि । तैरामृष्टशुचो लोका  
मुदा गायन्ति ते यशः ॥ १६ ॥ नमः कारणमत्स्याय प्रलयाब्धि-  
चराय च । हयशीर्ष्णे नमस्तुभ्यं मधुकैटभमृत्यवे ॥ १७ ॥ अकू-  
पाराय बृहते नमो मन्दरधारिणे । क्षित्युद्धारविहाराय नमः सूकर-

मूर्तये ॥ १८ ॥ नमस्तेऽद्भुतसिंहाय साधुलोकभयापह । वामनाय  
 नमस्तुभ्यं क्रान्तत्रिभुवनाय च ॥ १९ ॥ नमो भृगूणां पतये द्दस-  
 क्षत्रवनच्छिदे । नमस्ते रघुवर्याय रावणान्तकराय च ॥ २० ॥  
 नमस्ते वासुदेवाय नमः संकर्षणाय च । प्रद्युम्नायानिरुद्धाय सात्वतां  
 पतये नमः ॥ २१ ॥ नमो बुद्धाय शुद्धाय दैत्यदानवमोहिने ।  
 म्लेच्छप्रायक्षत्रहन्त्रे नमस्ते कल्किरूपिणे ॥ २२ ॥ भगवन् जीव-  
 लोकोऽयं मोहितस्तव मायया । अहं-ममेत्यसद्ग्राहो भ्राम्यते कर्म-  
 वर्त्मसु ॥ २३ ॥ अहं चात्मात्मजागार दारार्थस्वजनादिषु ।  
 भ्रमामि स्वप्नकल्पेषु मूढः सत्यधिया विभो ॥ २४ ॥ अनित्याना-  
 त्मदुःखेषु विपर्ययमतिर्बहम् । द्वन्द्वारामस्तमोविष्टो न जाने त्वा-  
 त्मनः प्रियम् ॥ २५ ॥ यथा बुधो जलं हित्वा प्रतिच्छन्नं तदुद्भवैः ।  
 अभ्येति भृगुतृष्णां वै तद्गत्वाहं पराद्बुधुः ॥ २६ ॥ नोत्सहेऽहं  
 कृपणधीः कामकर्महतं मनः । रोद्धुं प्रमाथिभिश्चाक्षैर्हियमाणमित-  
 स्ततः ॥ २७ ॥ सोऽहं तवांश्च्युपगतोऽस्म्यसतां दुरापं तच्चाप्यहं  
 भवदनुग्रह ईश मन्ये । पुंसो भवेद्यर्हि संसरणापवर्गस्त्वय्यब्जनाभ  
 सदुपासनया मतिः स्यात् ॥ २८ ॥ नमो विज्ञानमात्राय सर्वप्रत्यय-  
 हेतवे । पुरुषेशप्रधानाय ब्रह्मणेऽनन्तशक्तये ॥ २९ ॥ नमस्ते वासु-  
 देवाय सर्वभूतक्षयाय च । हृषीकेश नमस्तुभ्यं प्रपन्नं पाहि मां  
 प्रभो ॥ ३० ॥ इत्यकूरस्तुतिः संपूर्णा ॥

### ४१२. भ्रमरगीतम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ मधुप कितवबन्धो मा स्पृशाङ्गिं सपत्न्याः  
 कुचविलुलितमाला कुङ्कुमश्मश्रुभिर्नः । वहतु मधुपतिस्तन्मानि-  
 नीनां प्रसादं यदुसदसि विडम्ब्यं यस्य दूतस्त्वमीदृक् ॥ १ ॥  
 सकृदधरसुधां स्वां मोहिनीं पाययित्वा सुमनस इव सद्यस्त-

त्यजेऽस्मान् भवादृक् । परिचरति कथं तत्पादपद्मं तु पद्मा ह्यपि  
 बत हृतचेता उत्तमश्लोकजल्पैः ॥ २ ॥ किमिह बहु षडङ्गे  
 गायसि त्वं यदूनामधिपतिमगृहाणामग्रतो नः पुराणम् ।  
 विजयसख सखीनां गीयतां तत्प्रसङ्गः क्षपितकुचरुजस्ते कल्प-  
 यन्तीष्टमिष्टाः ॥ ३ ॥ दिवि भुवि च रसायां काः स्त्रियस्तदुरापाः  
 कपटरुचिरहासभ्रूविजृम्भस्य याः स्युः । चरणरज उपास्ते यस्य  
 भूतिर्वयं का अपि च कृपणपक्षे ह्युत्तमश्लोकशब्दः ॥ ४ ॥ विसृज  
 शिरसि पादं वेद्यहं चाटुकारैरनुनयविदुषस्तेऽभ्येत्य दौत्यैर्मुकु-  
 न्दात् । स्वकृत इह विसृष्टा पत्यपत्यन्यलोका व्यसृजदकृतचेताः  
 किं नु सन्धेयमस्मिन् ॥ ५ ॥ मृगयुरिव कपीन्द्रं विव्यधे लुब्ध-  
 धर्मा स्त्रियमकृत विरूपां स्त्रीजितः कामयानाम् । बलिमपि बलि-  
 मत्त्वाऽवेष्टयद्वाङ्मवद्यस्तदलमसितसख्यैर्दुस्त्यजस्तत्कार्थः ॥ ६ ॥  
 यदनुचरितलीलाकर्णपीयूषविप्रुदसकृददनविधूतद्वन्द्वधर्मा विनष्टाः ।  
 सपदि गृहकुटुम्बं दीनमुत्सृज्य दीना बहव इह विहङ्गा भिक्षुचर्या  
 चरन्ति ॥ ७ ॥ वयमृतमिव जिह्वं व्याहृतं श्रद्धधानाः कुलिक-  
 रूतमिवाज्ञाः कृष्णवध्वो हरिण्यः । दृश्युरसकृदेतत्तन्नखस्पर्श-  
 तीव्रस्सररुज उपमन्त्रिन् भण्यतामन्यवार्ता ॥ ८ ॥ प्रियसख  
 पुनरागाः प्रेयसा प्रेषितः किं वरय किमनुरुन्धे माननीयोऽसि  
 मेऽङ्ग । नयसि कथमिहास्मान् दुस्त्यजद्वन्द्वपार्श्वं सततमुरसि सौम्य  
 श्रीर्वधूः साकमास्ते ॥ ९ ॥ अपि बत मधुपुर्यामार्यपुत्रोऽधुनास्ते  
 स्मरति स पितृगोहान् सौम्य बन्धूंश्च गोपान् । क्वचिदपि स  
 कथा नः किङ्करीणां गृणीते भुजमगुरुसुगन्धं मूर्ध्न्यर्धास्यत् कदा  
 नु ॥ १० ॥ इति भ्रमरगीतं संपूर्णम् ॥

## ४१३. मुचुकुन्दस्तुतिः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ विमोहितोऽयं जन ईश मायया त्वदीयया  
 त्वां न भजत्यनर्थदृक् । सुखाय दुःखप्रभवेषु सज्जते गृहेषु योषित्  
 पुरुषश्च वञ्चितः ॥ १ ॥ लब्ध्वा जनो दुर्लभमत्र मानुषं कथञ्चि-  
 दव्यङ्गमयत्नतोऽनघ । पादारविन्दं न भजत्यसन्मतिर्गृहान्धकूपे  
 पतितो यथा पशुः ॥ २ ॥ समेष कालोऽजित निष्फलो गतो  
 राज्यश्रियोन्नद्धमदस्य भूपते । मर्त्यात्मबुद्धेः सुतदारकोशभूष्वा-  
 सज्जमानस्य दुरन्तचिन्तया ॥ ३ ॥ कलेवरेऽस्मिन् घटकुड्य-  
 सन्निभे निरूढमानो नरदेव इत्यहम् । वृतो रथेभाश्वपदात्यनीकपैर्गा  
 पर्यटंस्त्वागणयन् सुदुर्मदः ॥ ४ ॥ प्रमत्तमुच्चैरिति कृत्यचिन्तया  
 प्रवृद्धलोभं विषयेषु लालसम् । त्वमप्रमत्तः सहसाऽभिपद्यसे  
 क्षुल्लेलिहानोऽहिरिवाखुमन्तकः ॥ ५ ॥ पुरा रथैर्हमपरिष्कृतैश्चरन्  
 मतङ्गजैर्वा नरदेवसंज्ञितः । स एव कालेन दुरत्ययेन ते कलेवरो  
 विट्कृमिभस्मसंज्ञितः ॥ ६ ॥ निर्जित्य दिक्चक्रमभूतविग्रहो वरा-  
 सनस्थः समराजवन्दितः । गृहेषु मैथुन्यसुखेषु योषितां क्रीडा-  
 मृगः पूरुष ईश नीयते ॥ ७ ॥ करोति कर्माणि तपःसु निष्ठितो  
 निवृत्तभोगस्तदपेक्षया ददत् । पुनश्च भूयेयमहं स्वराडिति प्रवृद्ध-  
 तर्षो न सुखाय कल्पते ॥ ८ ॥ भवापवर्गो भ्रमतो यदा भवे-  
 जनस्य तर्ह्यच्युत सत्समागमः । सत्संगमो यर्हि तदैव सद्गतौ  
 परावरेणो त्वयि जायते मतिः ॥ ९ ॥ मन्ये ममानुग्रह ईश ते कृतो  
 राज्यानुबन्धापगमो यदृच्छया । यः प्रार्थ्यते साधुभिरेकचर्यया  
 वनं विविक्षद्भिरखण्डभूमिपैः ॥ १० ॥ न कामयेऽन्यं तव पाद-  
 सेवनादकिञ्चनप्रार्थ्यतमाद्गरं विभो । आराध्य कस्त्वां ह्यपवर्गदं

हरे वृणीत आर्यो वरमात्मबन्धनम् ॥ ११ ॥ तस्माद्विसृज्याशिष  
ईश सर्वतो रजस्तमःसत्त्वगुणानुबन्धनाः । निरञ्जनं निर्गुणमद्वयं  
परं त्वां ज्ञप्तिमात्रं पुरुषं ब्रजाम्यहम् ॥ १२ ॥ चिरमिहवृजिनार्त-  
स्तप्यमानोऽनुतापैरवितृषषडमित्रो लब्धशान्तिः कथंचित् । शरणद  
समुपेतस्त्वत्पदाब्जं परात्मन्नभयमृतमशोकं पाहि मापन्नमीश ॥ १३ ॥  
इति मुचुकुन्दस्तुतिः संपूर्णा ॥

### ४१४. वेदस्तुतिः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ जय जय जह्यजामजित दोषगृभीतगुणां  
त्वमसि यदात्मना समवरुद्धसमस्तभगः । अगजगदोकसामखिल-  
शक्त्यवबोधक ते क्वचिदजयाऽत्मना च चरतोऽनुचरेन्निगमः ॥ १ ॥  
बृहदुपलब्धमेतदवयन्त्यवशेषतया यत उदयास्तमयौ विकृते-  
र्मृदिवाविकृतात् । अत ऋषयो दधुस्त्वयि मनोवचनाचरितं  
कथमयथा भवन्ति भुवि दत्तपदानि नृणाम् ॥ २ ॥ इति  
तव सूरयख्यधिपतेऽखिललोकमलक्षणकथामृताब्धिभवगाह्य  
तपांसि जहुः । किमुत पुनः स्वधामविधुताशयकालगुणाः परम  
भजन्ति ये पदमजस्तसुखानुभवम् ॥ ३ ॥ इत्य इव श्वसन्त्य-  
सुभृतो यदि तेऽनुविधा महदहमादयोऽण्डमसृजन् यदनुग्रहतः ।  
पुरुषविधोऽन्वयोऽत्र चरमोऽन्नमयादिषु यः सदसतः परं त्वमथ  
यदेष्ववशेषमृतम् ॥ ४ ॥ उदरमुपासते य ऋषिवर्मसु कूर्पदृशः  
परिसरपद्धतिं हृदयमारुणयो दहरम् । तत उदगादनन्त तव  
धाम शिरः परमं पुनरिह यत्समेत्य न पतन्ति कृतान्तमुखे  
॥ ५ ॥ स्वकृतविचित्रयोनिषु विशन्निव हेतुतया तरतमतश्चका-  
स्यनलघत् स्वकृतानुकृतिः । अथ वितथास्वमूष्ववितथं तव धाम  
समं विरजधियोऽन्वयन्त्यभिविपण्यव एकरसम् ॥ ६ ॥ स्वकृत-  
पुरेष्वमीष्वबहिरन्तरसंवरणं तव पुरुषं वदन्यखिलशक्तिघृतोऽश-

कृतम् । इति नृगतिं विविच्य कवयो निगमावपनं भवत  
 उपासतेऽङ्घ्रिमभवं भुवि विश्वसिताः ॥ ७ ॥ दुरवगमात्मतत्त्व-  
 निगमाय तवात्ततनोश्चरितमहामृताब्धिपरिवर्तपरिश्रमणाः ।  
 न परिलषन्ति केचिदपवर्गमपीश्वर ते चरणसरोजहंसकुलसङ्ग-  
 विसृष्टगृहाः ॥ ८ ॥ त्वदनुपथं कुलायमिदमात्मसुहृत्प्रियव-  
 च्छरति तथोन्मुखे त्वयि हिते प्रिय आत्मनि च । न बत रमन्त्यहो  
 असदुपासनयात्महनो यदनुशया भ्रमन्त्युरुभये कुशरीरभृतः  
 ॥ ९ ॥ निभृतमरुन्मनोऽक्षदृढयोगयुजो हृदि यन्मुनय उपासते  
 तदरयोऽपि ययुः स्मरणात् । स्त्रिय उरगेन्द्रभोगभुजदण्ड-  
 विषक्तधियो वयमपि ते समाः समदृशोऽघ्निसरोजसुधाः ॥ १० ॥  
 क इह नु वेद बत वरजन्मलयोऽग्रसरं यत उदगादृषि-  
 र्यमनु देवगणा उभये । तर्हि न सन्न चासदुभयं न च कालजवः  
 किमपि न तत्र शास्त्रमवकृष्य शयीत यदा ॥ ११ ॥ जनिमसतः  
 सतो मृत्तिमुतात्मनि ये च भिदां विपणमृतं स्मरन्त्युपदिशन्ति त  
 आरुपितैः । त्रिगुणमयः पुमानिति भिदा यदबोधकृता त्वयि न  
 ततः परत्र स भवेदवबोधरसे ॥ १२ ॥ सदिव मनस्त्रिवृत्त्वयि  
 विभात्यसदामनुजात् सदभिमृशन्त्यशेषमिदमात्मतयात्मविदः । नहि  
 विकृतिं त्यजन्ति कनकस्य तदात्मतया स्वकृतमनुप्रविष्टमिदमात्म-  
 तथावसितम् ॥ १३ ॥ तव परि ये चरन्त्यखिलसत्त्वनिकेततया  
 त उत पदाक्रमन्त्यविगणय्य शिरो निर्ऋतेः । परिवयसे पशूनिव  
 गिरा विबुधानपि तान् त्वयि कृतसौहृदाः खलु पुनन्ति न ये  
 विमुखाः ॥ १४ ॥ त्वमकरणः स्वराडखिलकारकशक्तिधरस्तव  
 बलिमुद्ग्रहन्ति समदन्त्यजयाऽनिमिषाः । वर्षभुजोऽखिलक्षितिपते-  
 रिव विश्वसृजो विदधति यत्र ये त्वधिकृता भवतश्चकिताः ॥ १५ ॥

स्थिरचरजातयः स्युरजयोत्थनिमित्तयुजो विहर उदीक्षया यदि  
 परस्य विमुक्त ततः । नहि परमस्य कश्चिदपरो न परश्च  
 भवेद्वियत इवापदस्य तव शून्यतुलां दधतः ॥ १६ ॥  
 अपरिमिता ध्रुवास्तनुभृतो यदि सर्वगतास्तर्हि न शास्यतेति नियमो  
 ध्रुव नेतरथा । अजनि च यन्मयं तदविमुच्य नियन्तु भवेत्  
 सममनुजानतां यदमतं मतदुष्टतया ॥ १७ ॥ न घटत उद्भवः  
 प्रकृतिपूरुषयोरजयोरुभययुजा भवन्त्यसुभृतो जलबुद्बुदवत् ।  
 त्वयि त इमे ततो विविधनामगुणैः परमे सरित इवार्णवे मधुनि  
 लिल्युरशेषरसाः ॥ १८ ॥ नृषु तव मायया भ्रमममीष्ववगत्य  
 भृशं त्वयि सुधियोऽभवे दधति भावमनुप्रभवम् । कथमनुवर्ततां  
 भवभयं तव यद्भुक्कुटिः सृजति मुहुस्त्रिणोमिरभवच्छरणेषु भयम्  
 ॥ १९ ॥ विजितहृषीकवायुभिरदान्तमनस्तुरगं य इह यतन्ति यन्तु-  
 मतिलोलमुपायखिदः । न्यसनशतान्विताः समवहाय गुरोश्चरणं  
 वणिज इवाज सन्त्यकृतकर्णधरा जलधौ ॥ २० ॥ स्वजनसुतात्मदार-  
 धनधामधरासुरथैस्त्वयि सति किं नृणां श्रयत आत्मनि सर्वरसे ।  
 इति सदजानतां मिथुनतो रतये चरतां सुखयति कोऽन्विह स्ववि-  
 हते स्वनिरस्तभगे ॥ २१ ॥ भुवि पुरुपुण्यतीर्थसदनान्यृषयो विम-  
 दास्त उत भवत्पदाम्बुजहृदोऽघभिदंघ्रिजलाः । दधति सकृन्मन-  
 स्त्वयि य आत्मनि निल्यसुखे न पुनरुपासते पुरुषसारहरावसथान्  
 ॥ २२ ॥ सत इदमुत्थितं सदिति चेन्ननु तर्कहतं व्यभिचरति क्व  
 च क्व च मृषा न तथोभययुक् । व्यवहृतये विकल्प इषितोऽन्ध-  
 परंपरया भ्रमयति भारती त उरुवृत्तिभिरुक्थजडान् ॥ २३ ॥ न  
 यदिदमग्र आस न भविष्यदतो निधनादनुमितमन्तरा त्वयि विभाति  
 मृषैकरसे । अत उपमीयते द्रविणजातिविकल्पपथैर्वितथमनोविला-

समृतमित्यवयन्त्यबुधाः ॥ २४ ॥ स यदजया त्वजामनुशयीत  
 गुणांश्च जुषन् भजति सरूपतां तदनु मृत्युमपेतभगः । त्वमुत  
 जहासि तामहिरिव त्वचमात्तभगो महसि महीयसेऽष्टगुणितेऽपरि-  
 मेयभगः ॥ २५ ॥ यदि न समुद्धरन्ति यतयो हृदि कामजटा दुर-  
 धिगमोऽसतां हृदि गतोऽस्मृतकण्ठमणिः । असुतृपयोगिनामुभय-  
 तोऽप्यसुखं भगवन्ननपगतान्तकादनधिरूढपदाद्भवतः ॥ २६ ॥  
 त्वदवगमी न वेत्ति भवदुत्थशुभाशुभयोर्गुणविगुणान्वयांस्तर्हि  
 देहभृतां च गिरः । अनुयुगमन्वहं सगुणगीतपरंपरया श्रवणभृतो  
 यतस्त्वमपवर्गगतिर्मनुजैः ॥ २७ ॥ द्युपतय एव ते न ययुरन्तमन-  
 न्ततया त्वमपि यदन्तराण्डनिचया ननु सावरणाः । ख इव  
 रजांसि वान्ति वयसा सह यच्छ्रुतयस्त्वयि हि फलन्त्यतन्निरसनेन  
 भवन्निधनाः ॥ २८ ॥ इति वेदस्तुतिः संपूर्णा ॥

### ४१५. देवस्तुतिः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ नताः स्म ते नाथ पदारविन्दं बुद्धीन्द्रिय-  
 प्राणमनोवचोभिः । यच्चिन्त्यतेऽन्तर्हृदि भावयुक्तैर्मुमुक्षुभिः  
 कर्ममयोरुपाशात् ॥ १ ॥ त्वं मायया त्रिगुणयात्मनि दुर्विभाव्यं  
 व्यक्तं सृजस्यवसि लुम्पसि तद्गुणस्थः । नैतैर्भवानजित कर्मभिर-  
 ज्यते वै यस्त्वे सुखेऽव्यवहितेऽभिरतोऽनवद्यः ॥ २ ॥ शुद्धिर्नृणां  
 न तु तथेद्व्य दुराशयानां विद्याश्रुताध्ययनदानतपःक्रियाभिः ।  
 सत्त्वात्मनामृषभ ते यशसि प्रवृद्धसच्छ्रद्धया श्रवणसंभृतया यथा  
 स्यात् ॥ ३ ॥ स्यान्नस्तवाङ्घ्रिरशुभाशयधूमकेतुः क्षेमाय यो  
 मुनिभिरार्द्रहृदोह्यमानः । यः सात्त्वतैः समविभूतय आत्मवद्भि-  
 र्व्यूहेऽर्चितः सवनशः स्वरतिक्रमाय ॥ ४ ॥ यश्चिन्त्यते प्रयत-  
 पाणिभिरध्वराग्नौ त्रय्या निरुक्तविधिनेश हविर्गृहीत्वा । अध्यात्म-



योग उत योगिभिरात्ममायां जिज्ञासुभिः परमभागवतैः परीष्टः  
 ॥ ५ ॥ पर्युष्टया तव विभो वनमालयेयं संस्पर्धिनी भगवती  
 प्रतिपत्निवच्छ्रीः । यः सुप्रणीतममुयार्हणमाददन्नो भूयात्  
 सदाङ्घ्रिरशुभाशयधूमकेतुः ॥ ६ ॥ केतुस्त्रिविक्रमयुतस्त्रिपतत्पताको  
 यस्ते भयाभयकरोऽसुरदेवचम्बोः । स्वर्गाय साधुषु खलेष्वितराय  
 भूमन् पादः पुनातु भगवन् भजतामघं नः ॥ ७ ॥ नस्योतगाव  
 इव यस्य वशे भवन्ति ब्रह्मादयस्तनुभृतो मिथुरर्घ्यमानाः । कालस्य  
 ते प्रकृतिपूरुषयोः परस्य शं नस्तनोतु चरणः पुरुषोत्तमस्य ॥ ८ ॥  
 अस्यासि हेतुरुदयस्थितिसंयमानामव्यक्तजीवमहतामपि कालमाहुः ।  
 सोऽयं त्रिणाभिरखिलापचये प्रवृत्तः कालो गभीररय उत्तम-  
 पूरुषस्त्वम् ॥ ९ ॥ त्वत्तः पुमान् समाधिगम्य ययास्य वीर्यं धत्ते  
 महान्तमिव गर्भममोघवीर्यः । सोऽयं तयानुगत आत्मन आण्ड-  
 कोशं हैमं ससर्ज बहिरावरणैरुपेतम् ॥ १० ॥ तत्तस्थुषश्च  
 जगतश्च भवानधीशो यन्माययोत्थगुणविक्रिययोपनीतान् । अर्था-  
 ङ्गुषन्नपि हृषीकपते न लिसो येऽन्ये स्वतः परिहृतादपि विभ्यति  
 स्म ॥ ११ ॥ स्मायावलोकलवदर्शितभावहारिभ्रमण्डलप्रहित-  
 सौरतमन्नशौण्डैः । पठ्यस्तु षोडशसहस्रमनङ्गबाणैर्यस्येन्द्रियं विम-  
 थितुं करणैर्न विभ्यः ॥ १२ ॥ विभ्यस्तवामृतकथोदवहा-  
 स्त्रिलोक्याः पादावनेजसरितः शमलानि हन्तुम् । आनुश्रवं श्रुति-  
 भिरङ्घ्रिजमङ्गसङ्गैस्तीर्थद्वयं शुचिषदस्त उपस्पृशन्ति ॥ १३ ॥  
 बादरायणिरुवाच ॥ इत्यभिष्टूय विबुधैः सेशः शतधृतिर्हरिम् ।  
 अभ्यभाषत गोविन्दं प्रणम्याम्बरमाश्रितः ॥ १४ ॥ ब्रह्मोवाच ॥  
 भूमेर्भारावताराय पुरा विज्ञापितः प्रभो । त्वमस्माभिरशेषात्मं-  
 स्तत्तथैवोपपादितम् ॥ १५ ॥ धर्मश्च स्थापितः सत्सु सत्यसन्धेषु

वै त्वया । कीर्तिंश्च दिक्षु विक्षिप्त्वा सर्वलोकमलापहा ॥ १६ ॥  
 अवतीर्य यदोर्वशे बिभ्रद्रूपमनुत्तमम् । कर्माण्युद्दामवृत्तानि हिताय  
 जगतोऽकृथाः ॥ १७ ॥ यानि ते चरितानीश मनुष्याः साधवः  
 कलौ । शृण्वन्तः कीर्तयन्तश्च तरिष्यन्त्यञ्जसा तमः ॥ १८ ॥  
 यदुवंशेऽवतीर्णस्य भवतः पुरुषोत्तम । शरच्छतं व्यतीयाय  
 पञ्चविंशाधिकं प्रभो ॥ १९ ॥ नाधुना तेऽखिलाधार देवकार्याव-  
 शेषितम् । कुलं च विप्रशापेन नष्टप्रायमभूदिदम् ॥ २० ॥ ततः  
 स्वधाम परमं विशस्व यदि मन्यसे । सलोकाँल्लोकपालान्नः पाहि  
 वैकुण्ठकिंकरान् ॥ २१ ॥ इति देवस्तुतिः सम्पूर्णा ॥

### ४१६. पाण्डवगीता ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ प्रह्लादनारदपराशरपुण्डरीकव्यासाम्बरीष-  
 शुक्रशौनकभीष्मदाल्भ्याः । रुक्माङ्गदार्जुनवसिष्ठविभीषणाद्या एता-  
 नहं परमभागवतान् नमामि ॥ १ ॥ लोमहर्षण उवाच ॥  
 धर्मो विवर्धति युधिष्ठिरकीर्तनेन पापं प्रणश्यति वृकोदर-  
 कीर्तनेन । शत्रुर्विनश्यति धनञ्जयकीर्तनेन माद्रीसुतौ कथयतां  
 न भवन्ति रोगाः ॥ २ ॥ ब्रह्मोवाच ॥ ये मानवा विगतराग-  
 पराऽपरज्ञा नारायणं सुरगुरुं सततं स्मरन्ति । ध्यानेन तेन हत-  
 किल्बिषचेतनास्ते मातुः पयोधररसं न पुनः पिबन्ति ॥ ३ ॥ इन्द्र  
 उवाच ॥ नारायणो नाम नरो नराणां प्रसिद्धचौरः कथितः पृथि-  
 ब्याम् । अनेकजन्मार्जितपापसंचयं हरत्यशेषं स्मृतमात्र एव यः ॥ ४ ॥  
 युधिष्ठिर उवाच ॥ मेघश्यामं पीतकौशेयवस्त्रं श्रीवरसाङ्गं कौस्तु-  
 भोद्भासिताङ्गम् । पुण्योपेतं पुण्डरीकायताक्षं विष्णुं वन्दे सर्व-  
 लोकैकनाथम् ॥ ५ ॥ भीमसेन उवाच ॥ जलौघमग्ना सचराचरा  
 धरा विषाणकोढ्याऽखिलविश्वमूर्तिना । समुद्धृता येन वराहरूपिणा

स मे स्वयम्भूर्भगवान् प्रसीदतु ॥ ६ ॥ अर्जुन उवाच ॥ अचिन्त्य-  
 मव्यक्तमनन्तमव्ययं विभुं प्रभुं भावितविश्वभावनम् । त्रैलोक्यविस्ता-  
 रविचारकारकं हरिं प्रपन्नोऽस्मि गतिं महात्मनाम् ॥ ७ ॥ नकुल  
 उवाच ॥ यदि गमनमधस्तात्कालपाशानुबन्धाद्यदि च कुलविहीने  
 जायते पक्षिकीटे । कृमिशतमपि गत्वा ध्यायते चान्तरात्म मम भवतु  
 हृदिस्था केशवे भक्तिरेका ॥ ८ ॥ सहदेव उवाच ॥ तस्य यज्ञ-  
 वराहस्य विष्णोरतुलतेजसः । प्रणामं ये प्रकुर्वन्ति तेषामपि  
 नमो नमः ॥ ९ ॥ कुन्त्युवाच ॥ स्वकर्मफलनिर्दिष्टां यां यां  
 योनिं ब्रजाम्यहम् । तस्यां तस्यां हृषीकेश त्वयि भक्तिर्दृढास्तु मे  
 ॥ १० ॥ माद्र्युवाच ॥ कृष्णे रताः कृष्णमनुस्मरन्ति रात्रौ च  
 कृष्णं पुनरुत्थिता ये । ते भिन्नदेहाः प्रविशन्ति कृष्णं हविर्यथा  
 मन्त्रहुतं हुताशे ॥ ११ ॥ द्रौपद्युवाच ॥ कीटेषु पक्षिषु मृगेषु  
 सरीसृपेषु रक्षःपिशाचमनुजेष्वपि यत्र तत्र । जातस्य मे भवतु  
 केशव त्वत्प्रसादात्त्वय्येव भक्तिरचलाऽन्यभिचारिणी च ॥ १२ ॥  
 सुभद्रोवाच ॥ एकोऽपि कृष्णस्य कृतः प्रणामो दशाश्वमेधाऽवभृथेन  
 तुल्यः । दशाश्वमेधी पुनरेति जन्म कृष्णप्रणामी न पुनर्भ-  
 वाय ॥ १३ ॥ अभिमन्युरुवाच ॥ गोविन्द गोविन्द हरे सुरारे  
 गोविन्द गोविन्द मुकुन्द कृष्ण । गोविन्द गोविन्द रथाङ्गपाणे  
 गोविन्द गोविन्द नमामि नित्यम् ॥ १४ ॥ छष्ट्युवाच ॥  
 श्रीराम नारायण वासुदेव गोविन्द वैकुण्ठ मुकुन्द कृष्ण ।  
 श्रीकेशवाऽनन्त नृसिंह विष्णो मां त्राहि संसारभुजङ्गदष्टम्  
 ॥ १५ ॥ सात्यकिरुवाच ॥ अप्रमेय हरे विष्णो कृष्ण दामोदरा-  
 ऽच्युत । गोविन्दाऽनन्त सर्वेश वासुदेव नमोऽस्तु ते ॥ १६ ॥  
 उद्धव उवाच ॥ वासुदेवं परित्यज्य योऽन्यदेवमुपासते । तृषितो

जाह्नवीतीरे कूपं खनति दुर्मतिः ॥ १७ ॥ धौम्य उवाच ॥  
 अपां समीपे शयनासनस्थिते दिवा च रात्रौ च यथाधिगच्छता ।  
 यद्यस्ति किञ्चित् सुकृतं कृतं मया जनार्दनस्तेन कृतेन तुष्यतु  
 ॥ १८ ॥ संजय उवाच ॥ आर्ता विषण्णाः शिथिलाश्च भीता  
 घोरेषु व्याघ्रादिषु वर्तमानाः । सङ्कीर्त्य नारायणशब्दमात्रं विमुक्त-  
 दुःखाः सुखिनो भवन्ति ॥ १९ ॥ अक्रूर उवाच ॥ अहमस्मि  
 नारायणदासदासो दासस्य दासस्य च दासदासः । अन्यो न ईशो  
 जगतो नराणां तस्माद्दहं धन्यतरोऽस्मि लोके ॥ २० ॥ विराट्  
 उवाच ॥ वासुदेवस्य ये भक्ताः शान्तास्तद्गतचेतसः । तेषां दासस्य  
 दासोऽहं भवेयं जन्मजन्मनि ॥ २१ ॥ भीष्म उवाच ॥ विपरी-  
 तेषु कालेषु परिक्षीणेषु बन्धुषु । त्राहि मां कृपया कृष्ण शरणा-  
 गतवत्सल ॥ २२ ॥ द्रोणाचार्य उवाच ॥ ये ये हताश्चक्रधरेण  
 दैत्यास्त्रैलोक्यनाथेन जनार्दनेन । ते ते गता विष्णुपुरीं नरेन्द्र  
 क्रोधोऽपि देवस्य वरेण तुल्यः ॥ २३ ॥ कृपाचार्य उवाच ॥  
 मज्जन्मनः फलमिदं मधुकैटभारे मत्प्रार्थनीयमदनुग्रह एष एव ।  
 त्वद्भृत्यभृत्यपरिचारकभृत्यभृत्यभृत्यस्य भृत्य इति मां स्मर लोक-  
 नाथ ॥ २४ ॥ अश्वत्थामोवाच ॥ गोविन्द केशव जनार्दन वासुदेव  
 विश्वेश विश्वं मधुसूदन विश्वरूप । श्रीपद्मनाभ पुरुषोत्तम देहि  
 दास्यं नारायणाऽच्युत नृसिंह नमो नमस्ते ॥ २५ ॥ कर्ण उवाच ॥  
 नान्यं वदामि न शृणोमि न चिन्तयामि नान्यं स्मरामि न भजामि  
 न चाश्रयामि । भक्त्या त्वदीयचरणाम्बुजमादरेण श्रीश्रीनिवास  
 पुरुषोत्तम देहि दास्यम् ॥ २६ ॥ धृतराष्ट्र उवाच ॥ नमो नमः  
 कारणवामनाय नारायणायामितविक्रमाय । श्रीशार्ङ्गचक्रासिगदा-  
 धराय नमोऽस्तु तस्मै पुरुषोत्तमाय ॥ २७ ॥ गान्धार्थ्युवाच ॥

त्वमेव माता च पिता त्वमेव त्वमेव बंधुश्च सखा त्वमेव । त्वमेव  
 विद्या द्रविणं त्वमेव त्वमेव सर्वं मम देवदेव ॥ २८ ॥ द्रुपद  
 उवाच ॥ यज्ञेशाच्युत गोविन्द माधवाऽनन्त केशव । कृष्ण  
 विष्णो हृषीकेश वासुदेव नमोऽस्तु ते ॥ २९ ॥ जयद्रथ उवाच ॥  
 नमः कृष्णाय देवाय ब्रह्मणेऽनन्तशक्तये । योगेश्वराय योगाय  
 त्वामहं शरणं गतः ॥ ३० ॥ विकर्ण उवाच ॥ कृष्णाय वासु-  
 देवाय देवकीनन्दनाय च । नन्दगोपकुमाराय गोविन्दाय नमो  
 नमः ॥ ३१ ॥ सोमदत्त उवाच ॥ नमः परमकल्याण नमस्ते  
 विश्वभावन । वासुदेवाय शान्ताय यदूनां पतये नमः ॥ ३२ ॥  
 विराट उवाच ॥ नमो ब्रह्मण्यदेवाय गोब्राह्मणहिताय  
 च । जगद्धिताय कृष्णाय गोविन्दाय नमो नमः ॥ ३३ ॥  
 शल्य उवाच ॥ अतसीपुष्पसंकाशं पीतवाससमच्युतम् ।  
 ये नमस्यन्ति गोविन्दं न तेषां विद्यते भयम् ॥ ३४ ॥  
 बलभद्र उवाच ॥ कृष्ण कृष्ण कृपालुस्त्वमगतीनां गतिर्भव ।  
 संसारार्णवमग्नानां प्रसीद पुरुषोत्तम ॥ ३५ ॥ श्रीकृष्ण उवाच ॥  
 कृष्ण कृष्णेति कृष्णेति यो मां स्मरति नित्यशः । जलं भित्त्वा  
 यथा पद्मं नरकादुद्धराम्यहम् ॥ ३६ ॥ नित्यं वदामि मनुजाः  
 स्वयमूर्ध्वबाहुर्यो मां मुकुन्द नरसिंह जनार्दनेति । जीवो जपत्य-  
 नुदिनं मरणे रणे वा पाषाणकाष्ठसदृशाय ददाम्यभीष्टम् ॥ ३७ ॥  
 ईश्वर उवाच ॥ सकृन्नारायणेत्युक्त्वा पुमान् कल्पशतत्रयम् ।  
 गङ्गादिसर्वतीर्थेषु स्नातो भवति पुत्रक ॥ ३८ ॥ सूत उवाच ॥ तत्रैव  
 गङ्गा यमुना च तत्र गोदावरी सिन्धुसरस्वती च । सर्वाणि तीर्थानि  
 वसन्ति तत्र यत्राच्युतोदारकथाप्रसङ्गः ॥ ३९ ॥ यम उवाच ॥ नरके  
 पच्यमाने तु यमेन परिभाषितम् । किं त्वया नार्चितो देवः केशवः

क्लेशनाशनः ॥ ४० ॥ नारद उवाच ॥ जन्मान्तरसहस्रेण तपोध्यान-  
 समाधिना । नराणां क्षीणपापानां कृष्णे भक्तिः प्रजायते ॥ ४१ ॥  
 प्रहाद उवाच ॥ नाथ योनिसहस्रेषु येषु येषु ब्रजाम्यहम् । तेषु  
 तेष्वचला भक्तिरच्युतास्तु सदा त्वयि ॥ ४२ ॥ या प्रीतिरविवे-  
 कानां विषयेष्वनपायिनी । त्वामनुस्मरतः सा मे हृदयान्माऽप-  
 सर्पतु ॥ ४३ ॥ विश्वामित्र उवाच ॥ किं तस्य दानैः किं तीर्थैः  
 किं तपोभिः किमध्वरैः । यो नित्यं ध्यायते देवं नारायणमनन्यधीः  
 ॥ ४४ ॥ जमदग्निरुवाच ॥ नित्योत्सवो भवेत्तेषां नित्यं नित्यं च  
 मङ्गलम् । येषां हृदिस्थो भगवान् मङ्गलायतनं हरिः ॥ ४५ ॥  
 भरद्वाज उवाच ॥ लाभस्तेषां जयस्तेषां कुतस्तेषां पराजयः । येषा-  
 मिन्दीवरश्यामो हृदयस्थो जनार्दनः ॥ ४६ ॥ गौतम उवाच ॥  
 गोकोटिदानं ग्रहणेषु काशी प्रयागगङ्गायुतकल्पवासः । यज्ञायुतं  
 मेरुसुवर्णदानं गोविन्दनाम्ना न समं न तुल्यम् ॥ ४७ ॥ अग्नि-  
 रुवाच ॥ गोविन्देति सदा स्नानं गोविन्देति सदा जपः । गोवि-  
 न्देति सदा ध्यानं सदा गोविन्दकीर्तनम् ॥ ४८ ॥ त्र्यक्षरं परमं  
 ब्रह्म गोविन्दत्र्यक्षरं परम् । तस्मादुच्चरितं येन ब्रह्मभूयाय कल्पते  
 ॥ ४९ ॥ श्रीबादरायणिरुवाच ॥ अच्युतः कल्पवृक्षोऽसावनन्तः  
 कामधेनवः । चिन्तामणिस्तु गोविन्दो हरेर्नाम विचिन्तयेत् ॥ ५० ॥  
 हरिरुवाच ॥ जयतु जयतु देवो देवकीनन्दनोऽयं जयतु जयतु  
 कृष्णो वृष्णिवंशप्रदीपः । जयतु जयतु मेघश्यामलः कोमलाङ्गो  
 जयतु जयतु पृथ्वीभारनाशो मुकुन्दः ॥ ५१ ॥ पिप्पलायन  
 उवाच ॥ श्रीमद्वृत्सिंहविभवे गरुडध्वजाय तापत्रयोपशमनाय  
 भवौषधाय । कृष्णाय वृश्चिकजलाग्निभुजङ्गरोगक्लेशव्ययाय हरये  
 गुरवे नमस्ते ॥ ५२ ॥ आविर्होत्र उवाच ॥ कृष्ण त्वदीयपदपङ्कज-  
 MPL Sastry Library Free Digitisation indoscripts.org (ISRT)

पञ्जरान्ते अद्यैव मे विशतु मानसराजहंसः । प्राणप्रयाणसमये  
 कफवातपित्तैः कण्ठावरोधनविधौ स्मरणं कुतस्ते ॥ ५३ ॥  
 विदुर उवाच ॥ हरेर्नामैव नामैव नामैव मम जीवनम् । कलौ  
 नास्त्येव नास्त्येव नास्त्येव गतिरन्यथा ॥ ५४ ॥ वसिष्ठ उवाच ॥  
 कृष्णेति मङ्गलं नाम यस्य वाचि प्रवर्तते । भस्मीभवन्ति तस्याशु  
 महापातककोटयः ॥ ५५ ॥ अरुन्धत्युवाच ॥ कृष्णाय वासुदेवाय  
 हरये परमात्मने । प्रणतक्लेशनाशाय गोविन्दाय नमो नमः  
 ॥ ५६ ॥ कश्यप उवाच ॥ कृष्णानुस्मरणादेव पापसंहृष्टपञ्जरम् ।  
 शतधा भेदमाप्नोति गिरिर्वज्रहतो यथा ॥ ५७ ॥ दुर्योधन  
 उवाच ॥ जानामि धर्मं न च मे प्रवृत्तिर्जानाम्यधर्मं न च मे  
 निवृत्तिः । केनापि देवेन हृदि स्थितेन यथा नियुक्तोऽस्मि तथा  
 करोमि ॥ ५८ ॥ यत्रस्य मम दोषेण क्षम्यतां मधुसूदन । अहं  
 यत्रं भवान् यस्मी मम दोषो न दीयताम् ॥ ५९ ॥ भृगुरुवाच ॥  
 नामैव तव गोविन्द नाम त्वत्तः शताधिकम् । ददात्युच्चारणा-  
 न्मुक्तिं भवानष्टाङ्गयोगतः ॥ ६० ॥ लोमश उवाच ॥ नमामि  
 नारायणपादपङ्कजं करोमि नारायणपूजनं सदा । वदामि नारायण-  
 नाम निर्मलं स्मरामि नारायणतत्त्वमव्ययम् ॥ ६१ ॥ शौनक  
 उवाच ॥ स्मृते सकलकल्याण भाजनं यत्र जायते । पुरुषस्तमजं  
 नित्यं व्रजामि शरणं हरिम् ॥ ६२ ॥ गर्ग उवाच ॥ नारायणेति  
 मन्त्रोऽस्ति वागस्ति वशवर्तिनी । तथापि नरके घोरे पतन्तीत्यद्भुतं  
 महत् ॥ ६३ ॥ दाल्भ्य उवाच ॥ किं तस्य बहुभिर्मन्त्रैर्भक्तिर्यस्य  
 जनार्दने । नमो नारायणायेति मन्त्रः सर्वार्थसाधकः ॥ ६४ ॥  
 वैशम्पायन उवाच ॥ यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः ।  
 तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम ॥ ६५ ॥ अग्निरुवाच ॥

हरिर्हरति पापानि दुष्टचित्तैरपि स्मृतः । अनिच्छयापि संस्पृष्टो  
दहत्येव हि पावकः ॥ ६६ ॥ परमेश्वर उवाच ॥ सकृदुच्चरितं येन  
हरिरित्यक्षरद्वयम् । बद्धः परिकरस्तेन मोक्षाय गमनं प्रति  
॥ ६७ ॥ पुलस्त्य उवाच ॥ हे जिह्वे रससारज्ञे सर्वदा मधुरप्रिये ।  
नारायणाख्यपीयूषं पिब जिह्वे निरन्तरम् ॥ ६८ ॥ व्यास  
उवाच ॥ सत्यं सत्यं पुनः सत्यं सत्यं सत्यं वदाम्यहम् । नास्ति  
वेदात्परं शास्त्रं न देवः केशवात्परः ॥ ६९ ॥ धन्वन्तरिरुवाच ॥  
अच्युतानन्तगोविन्दनामोच्चारणमेषजात् । नश्यन्ति सकला  
रोगाः सत्यं सत्यं वदाम्यहम् ॥ ७० ॥ मार्कण्डेय उवाच ॥  
स्वर्णदं मोक्षदं देवं सुखदं जगतो गुरुम् । कथं मुहूर्तमपि तं  
वासुदेवं न चिन्तयेत् ॥ ७१ ॥ अगस्त्य उवाच ॥ निमिषं  
निमिषार्धं वा प्राणिनां विष्णुचिन्तनम् । तत्र तत्र कुरुक्षेत्रं प्रयागो  
नैमिषं वनम् ॥ ७२ ॥ वामदेव उवाच ॥ निमिषं निमिषार्धं वा  
प्राणिनां विष्णुचिन्तनम् । कल्पकोटिसहस्राणि लभते वाञ्छितं  
फलम् ॥ ७३ ॥ शुक उवाच ॥ आलोढ्य सर्वशास्त्राणि विचार्य च  
पुनः पुनः । इदमेकं सुनिष्पन्नं ध्येयो नारायणः सदा ॥ ७४ ॥  
श्रीमहादेव उवाच ॥ शरीरे र्जर्जरीभूते व्याधिग्रस्ते कलेवरे ।  
औषधं जाह्नवीतोयं वैद्यो नारायणो हरिः ॥ ७५ ॥ शौनक  
उवाच ॥ भोजनाच्छादने चिन्तां वृथा कुर्वन्ति वैष्णवाः । योऽसौ  
विश्वम्भरो देवः स किं भक्तानुपेक्षते ॥ ७६ ॥ सनत्कुमार उवाच ॥  
यस्य हस्ते गदा चक्रं गरुडो यस्य वाहनम् । शङ्खचक्रगदापद्मी स  
मे विष्णुः प्रसीदतु ॥ ७७ ॥ एवं ब्रह्मादयो देवा ऋषयश्च तपो-  
धनाः । कीर्तयन्ति सुरश्रेष्ठमेवं नारायणं विभुम् ॥ ७८ ॥ इदं  
पवित्रमायुष्यं पुण्यं पापप्रणाशनम् । दुःस्वप्ननाशनं स्तोत्रं पाण्डवैः



परिकीर्तितम् ॥ ७९ ॥ यः पठेत् प्रातरुत्थाय शुचिस्तद्गतमानसः ।  
 गवां शतसहस्रस्य सम्यग्दत्तस्य यत्फलम् ॥ ८० ॥ तत्फलं  
 समवाप्नोति यः पठेदिति संस्तवम् । सर्वपापविनिर्मुक्तो विष्णुलोकं  
 स गच्छति ॥ ८१ ॥ गङ्गा गीता च गायत्री गोविन्दो गरुड-  
 ध्वजः । चतुर्गकारसंयुक्तः पुनर्जन्म न विद्यते ॥ ८२ ॥ गीतां यः  
 पठते नित्यं श्लोकार्धं श्लोकमेव वा । मुच्यते सर्वपापेभ्यो विष्णुलोकं  
 स गच्छति ॥ ८३ ॥ इति पाण्डवगीता संपूर्णा ॥

### ४१७. श्रीहरिहरात्मकस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ गोविंद माधव मुकुंद हरे मुरारे शंभो शिवेश  
 शशिशेखर शूलपाणे । दामोदराच्युत जनार्दन वासुदेव त्याज्या  
 भटा य इति संततमामनन्ति ॥ १ ॥ गंगाधरांधकरिपो हर नीलकंठ  
 वैकुण्ठ कैटभरिपो कमठाब्जपाणे । भूतेश खंडपरशो मृड चंडि-  
 केश त्याज्या भटा य इति संततमामनन्ति ॥ २ ॥ विष्णो नृसिंह  
 मधुसूदन चक्रपाणे गौरीपते गिरिश शंकर चंद्रचूड । नारायणा-  
 सुरनिबर्हण शार्ङ्गपाणे त्याज्या भटा य इति संततमा० ॥ ३ ॥  
 मृत्युंजयोत्र विषमेक्षण कामशत्रो श्रीकांत पीतवसनांबुदनील  
 शौरे । ईशान कृत्तिवसन त्रिदशैकनाथ त्याज्या भटा य० ॥ ४ ॥  
 लक्ष्मीपते मधुरिपो पुरुषोत्तमाद्य श्रीकंठ दिग्वसन शांत पिनाक-  
 पाणे । आनंदकंद धरणीधर पद्मनाभ त्याज्या भटा य इति०  
 ॥ ५ ॥ सर्वेश्वर त्रिपुरसूदन देवदेव ब्रह्मण्यदेव गरुडध्वज शंख-  
 पाणे । त्र्यक्षोरगाभरण बालमृगांकमौले त्याज्या भटा य० ॥ ६ ॥  
 श्रीराम राघव रमेश्वर रावणारे भूतेश मन्मथरिपो प्रमथाधिनाथ ।  
 चाणूरमर्दन हृषीकपते मुरारे त्याज्या भटा० ॥ ७ ॥ शूलिनिरीश

रजनीशकलावतंस कंसप्रणाशन सनातन केशिनाश । भर्गं त्रिनेत्र  
 भव भूतपते पुरारे त्याज्या भटा० ॥ ८ ॥ गोपीपते यदुपते वसु-  
 देवसूनो कर्पूरगौर वृषभध्वज भालनेत्र । गोवर्धनोद्धरण धर्मधुरीण  
 गोप त्याज्या भटा० ॥ ९ ॥ स्थाणो त्रिलोचन पिनाकधर स्सरारे  
 कृष्णानिरुद्ध कमलाकर कल्मषारे । विश्वेश्वर त्रिपथगार्द्रजटाकलाप  
 त्याज्या० ॥ १० ॥ अष्टोत्तराधिकशतेन सुचारुनाम्नां संदर्भितां  
 ललितरत्नकदंबकेन । सन्नायकां दृढगुणां निजकंठगां यः कुर्यादिमां  
 स्रजमहो स यमं न पश्येत् ॥ ११ ॥ गणावूचतुः ॥ इत्थं द्विजैर्द्र  
 निजभृत्यगणान्सदैव संशिक्षयेदवनिगान्स हि धर्मराजः । अन्येऽपि  
 ये हरिहराकधरा धरायां ते दूरतः पुनरहो परिवर्जनीयाः ॥ १२ ॥  
 अगस्त्य उवाच ॥ यो धर्मराजरचितां ललितप्रबंधां नामावलिं सकल-  
 कल्मषबीजहंतीम् । धीरोऽत्र कौस्तुभभृतः शशिभूषणस्य नित्यं जपे-  
 त्स्तनरसं न पिबेत्स मातुः ॥ १३ ॥ इति शृण्वन्कथां रम्यां शिव-  
 शर्मा प्रियेऽनघाम् । प्रहर्षवक्रः पुरतो ददर्शाप्सरसां पुरीम् ॥ १४ ॥  
 इति श्रीस्कंदपुराणे काशीखंडे धर्मराजविरचितं हरिहराष्टोत्तरस्तोत्रं  
 संपूर्णम् ॥

### ४१८. श्रीनृसिंहसरस्वतीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ कोट्यर्भकं कोटिसुचंद्रशांतं विश्वाश्रयं देव-  
 गणार्चितांग्रिम् । भक्तप्रियं त्वाऽत्रिसुतं वरेण्यं वंदे नृसिंहेश्वर पाहि  
 मां त्वम् ॥ १ ॥ मायातमोऽर्कं विगुणं गुणाढ्यं श्रीवल्लभं स्वीकृत-  
 भिक्षुवेषम् । सद्भक्तसेव्यं वरदं वरिष्ठं वंदे० ॥ २ ॥ कामादि-  
 षण्मत्तगजांकुशं त्वामानन्दकंदं परतत्त्वरूपम् । सद्धर्मगुप्त्यै विघृ-  
 तावतारं वंदे० ॥ ३ ॥ सूर्येन्दुगुं सज्जनकामधेनुं मृषोद्यपंचात्म-

कविश्वमस्मात् । उदेति यस्मिन्नमतेऽस्तमेति वंदे० ॥ ४ ॥ रक्ता-  
 ब्रपत्रायतकांतनेत्रं सहंडकुंडीपरिहापिताघम् । श्रितस्मितज्योत्स्नमु-  
 खेंदुशोभं वंदे० ॥ ५ ॥ नित्यं त्रयीमृग्यपदाब्जधूलिं निनादसद्वि-  
 न्दुकलास्वरूपम् । त्रितापतप्ताश्रितकल्पवृक्षं वंदे० ॥ ६ ॥ दैन्या-  
 धिभीकष्टदवाग्निमीड्यं योगाष्टकज्ञानसमर्पणोक्तम् । कृष्णानदीपंच-  
 सरिद्व्युतिस्थं वंदे० ॥ ७ ॥ अनादिमध्यांतमनंतशक्तिमतकर्क्यभावं  
 परमात्मसंज्ञम् । व्यतीतवाग्घृत्पथमद्वितीयं वंदे नृसिंहेश्वर पाहि  
 मां त्वम् ॥ ८ ॥ इति श्रीमद्वासुदेवानंदसरस्वतीविरचितं नृसिंह-  
 सरस्वतीस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ४१९. शिवरामाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ शिव हरे शिव रामसखे प्रभो त्रिविधताप-  
 निवारण हे विभो । अज जनेश्वर यादव पाहि मां शिव हरे विजयं  
 कुरु मे वरम् ॥ १ ॥ कमललोचन राम दयानिधे हर गुरो गज-  
 रक्षक गोपते । शिवतनो भव शंकर पाहि मां शिव हरे विजयं०  
 ॥ २ ॥ स्वजनरंजन मंगलमंदिरं भजति ते पुरुषं परमं पदम् ।  
 भवति तस्य सुखं परमद्भुतं शिवहरे वि० ॥ ३ ॥ जय युधिष्ठिर-  
 वल्लभ भूपते जय जयार्जित पुण्यपयोनिधे । जय कृपामय कृष्ण  
 नमोऽस्तु ते शिव हरे विजयं० ॥ ४ ॥ भवविमोचन माधव मापते  
 सुकविमानसहंस शिवारते । जनकजारत राघव रक्ष मां शिव हरे  
 विजयं० ॥ ५ ॥ अवनिमंडलमंगल मापते जलदसुंदर राम रमापते ।  
 निगमकीर्ति गुणार्णव गोपते शिव हरे विजयं० ॥ ६ ॥ पतितपावन  
 नाममयी लता तव यशो विमलं परिगीयते । तदपि माधव मां  
 किमुपेक्षसे शिव हरे विजयं० ॥ ७ ॥ अमरतापरदेव रमापते विजयत-

स्तव नामघनोपमा । मयि कथं करुणार्णव जायते शिव ह० ॥ ८ ॥  
 हनुमतःप्रिय चापकर प्रभो सुरसरिद्धृतशेखर हे गुरो । मम विभो  
 किमु विस्मरणं कृतं शिव ह० ॥ ९ ॥ नरहरेरतिरंजनसुंदरं पठति  
 यः शिवरामकृतस्तवम् । विशति रामरमाचरणांबुजे शिव ह०  
 ॥ १० ॥ प्रातरुत्थाय यो भक्त्या पठेदेकाग्रमानसः । विजयो जायते  
 तस्य विष्णुमाराध्यमामुयात् ॥ ११ ॥ इति श्रीरामानंदविरचितं  
 शिवरामस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ४२०. प्रश्नोत्तररत्नमालिका ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ कः खलु नालंक्रियते दृष्टादृष्टार्थसाधनपटी-  
 यान् । अनया कंठस्थितया प्रश्नोत्तररत्नमालिकया ॥ १ ॥ भगव-  
 न्किमुपादेयं गुरुवचनं हेयमपि च किमकार्यम् । को गुरुरधिगत-  
 तत्त्वः सत्त्वहितायोद्यतः सततम् ॥ २ ॥ त्वरितं किं कर्तव्यं सुधिया  
 संसारसंततिच्छेदः । किं मोक्षतरोर्वीजं सम्यग्ज्ञानं क्रियासिद्धम्  
 ॥ ३ ॥ कः पथ्यतरो धर्मः कः शुचिरिह यस्य मानसं शुद्धम् ।  
 कः पंडितो विवेकी किं विषमवधीरणा गुरुषु ॥ ४ ॥ किं संसारे  
 सारं बहुशो विचिंत्यमानमिदमेव । किं मनुजेष्विष्टतमं स्वपरहिता-  
 योद्यतं जन्म ॥ ५ ॥ मदिरेव मोहजनकः कः स्नेहः के च दस्यवो  
 विषयाः । का भववल्ली तृष्णा को वैरी यस्त्वनुद्योगः ॥ ६ ॥ कस्मा-  
 द्भयमिह मरणादीशादिह को विशिष्यतेऽरागी । कः शूरो यो  
 ललनालोचनबाणैर्न च व्यथितः ॥ ७ ॥ पातुं कर्णाजलिभिः किम-  
 मृतमिव युज्यते सदुपदेशः । किं गुरुताया मूलं यदेतदप्रार्थनं  
 नाम ॥ ८ ॥ किं गहनं स्त्रीचरितं कश्चतुरो यो न खंडितस्तेन । किं  
 दारिद्र्यमसंतोषः किं लाघवमधमतो याद्वा ॥ ९ ॥ किं जीवित-

मनवद्यं किं जाड्यं पाठतोऽप्यनभ्यासः । को जागर्ति विवेकी का  
निद्रा मूढता जंतोः ॥ १० ॥ नलिनीदलगतजलवत्तरलं किं यौवनं  
धनं चायुः । कथय पुनः के शशिनः किरणसमाः सज्जना एव ॥ ११ ॥  
को नरकः परवशता किं सौख्यं सर्वसंगविरतिर्या । किं साध्यं भूत-  
हितं च प्रियं किं प्राणिनामसवः ॥ १२ ॥ किं दानमनाकांक्षं किं  
मित्रं यन्निवर्तयति पापात् ॥ १३ ॥ कोऽलंकारः शीलं किं वाचां  
मंडनं सत्यम् । किमनर्थफलं मानः सुसंगतिः का सुखावहा मैत्री  
॥ १४ ॥ सर्वव्यसनविनाशे को दक्षः सर्वथा परित्यागी । कोऽधो  
योऽकार्यरतः को बधिरो यः शृणोति न हितानि ॥ १५ ॥ को  
मूको यः काले प्रियाणि वक्तुं न जानाति । किं मरणं मूर्खत्वं किम-  
नर्थं दत्तमवसरे यच्च ॥ १६ ॥ आमरणार्त्किं शल्यं प्रच्छन्नं यत्कृतं  
पापम् । कुत्र विधेयो यत्नो विद्याभ्यासो सदौषधे दाने ॥ १७ ॥  
अवधीरणा क्व कार्या खलपरयोषित्परधनेषु । काऽहर्निशमनुचिंत्या  
संसारसारता न तु प्रमदा ॥ १८ ॥ का प्रेयसी विधेया करुणा  
दीनेषु सज्जने मैत्री । कंठगतैरप्यसुभिः कस्यात्मा न वशमुपयाति  
॥ १९ ॥ मूर्खस्य विषादवतो गर्भवतोऽपि च कृतघ्नस्य । कः पूज्यः  
सद्वृत्तः कमधममाचक्षते चलितवृत्तम् ॥ २० ॥ केन जितं जगदेत-  
त्सत्यतिरिक्षावता पुंसा । कुत्र विधेयो वासः सज्जननिकटेऽथ वा  
काश्याम् ॥ २१ ॥ कस्मै नमस्क्रिया स्याद्देवानामपि दया प्रधान-  
स्य । कस्मादुद्वेजितव्यं संसारारण्यतः सुधिया ॥ २२ ॥ कस्य वशे  
प्राणिगणः सत्यप्रियभाषिणो विनतस्य । क्व स्थातव्यं न्याय्ये पथि  
दृष्टार्थलाभाय ॥ २३ ॥ विद्युद्विलसितचपलं किं दुर्जनसंगतिर्युवत-  
यश्च । कुलशीलनिष्प्रकंपाः के कलिकालेऽपि ससज्जना एव ॥ २४ ॥  
किं शोच्यं कार्पण्यं सति विभवे किं प्रशस्तमौदार्यम् । तनुतर-

विभवस्य प्रभविष्णोर्वा किं यत्सहिष्णुत्वम् ॥ २५ ॥ चिंतामणिरिव  
दुर्लभमिह किं कथयामि चतुर्भद्रम् । किं तद्भदेति भूयो विधूत-  
तमसो विशेषेण ॥ २६ ॥ दानं प्रिय वाक्सहितं ज्ञानमगर्वं क्षमा-  
न्वितं शौर्यम् । वित्तं त्यागसमेतं दुर्लभमेतच्चतुर्भद्रम् ॥ २७ ॥  
इत्येषा कंठगता प्रश्नोत्तररत्नमालिका येषाम् । ते मुक्ताभरणा इव  
विमलाश्चाभान्ति सत्समाजेषु ॥ २८ ॥ इति श्रीमत्परमहंस-  
परिव्राजकाचार्यश्रीमच्छंकराचार्यविरचिता प्रश्नोत्तररत्नमालिका  
संपूर्णा ॥

### ४२१. भगवत्प्रातःस्मरणम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ प्रातः स्मरामि फणिराजतनौ शयानं नागाम-  
रासुरनरादिजगन्निदानम् । वेदैः सहागमगणैरुपगीयमानं कांतार-  
केतनवतां परमं निधानम् ॥ १ ॥ प्रातर्भजामि भवसागरवारिपारं  
देवर्षिसिद्धनिवहैर्विहितोपहारम् । संदक्षदानवकदंबमदापहारं सौंदर्य-  
राशिजलराशिसुताविहारम् ॥ २ ॥ प्रातर्नमामि शरदंबरकांति-  
कांतं पादारविंदमकरंदजुषां भवांतम् । नानावतारहृतभूमिभरं  
कृतांतं पाथोजकंबुरथ पादकरं प्रशांतम् ॥ ३ ॥ श्लोकत्रयमिदं  
पुण्यं ब्रह्मानंदेन कीर्तितम् । यः पठेत्प्रातरुत्थाय सर्वपापैः प्रमुच्यते  
॥ ४ ॥ इति श्रीमत्परमहंसब्रह्मानंदस्वामिविरचितं श्रीभगवत्प्रातः-  
स्मरणं संपूर्णम् ॥

### ४२२. प्रातःस्मरणस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ प्रातः स्मरामि हृदि संस्फुरदात्मतत्त्वं सच्चि-  
त्सुखं परमहंसगतिं तुरीयम् । यत्स्वप्नजागरसुषुप्तमवैति नित्यं तद्ब्रह्म  
निष्कलमहं न च भूतसंघः ॥ १ ॥ प्रातर्भजामि मनसो वचसा-  
मगम्यं वाचो विभांति निखिला यदनुग्रहेण । यं नेतिनेतिवचनै-

निगमा अवोचुस्तं देवदेवमजमच्युतमाहुरग्रथम् ॥ २ ॥ प्रातर्नमामि  
तमसः परमर्कवर्णं पूर्णं सनातनपदं पुरुषोत्तमाख्यम् । यस्मिन्निदं  
जगदशेषमशेषमूर्तौ रज्जौ भुजंगम इव प्रतिभासितं वै ॥ ३ ॥  
श्लोकत्रयमिदं पुण्यं लोकत्रयविभूषणम् । प्रातःकाले पठेद्यस्तु स  
गच्छेत्परमं पदम् ॥ ४ ॥ इति श्रीमद्भगवत्पादाचार्यविरचितं  
प्रातःस्मरणस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ४२३. अश्वत्थस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीनारद उवाच ॥ अनायासेन लोकोऽयं  
सर्वान्कामानवाप्नुयात् । सर्वदेवात्मकं चैकं तन्मे ब्रूहि पितामह  
॥ १ ॥ ब्रह्मोवाच ॥ शृणु देवमुनेऽश्वत्थं शुद्धं सर्वात्मकं तरुम् ।  
यत्प्रदक्षिणतो लोकः सर्वान्कामान्समश्नुते ॥ २ ॥ अश्वत्थाद्दक्षिणे  
रुद्रः पश्चिमे विष्णुरास्थितः । ब्रह्मा चोत्तरदेशस्थः पूर्वं त्विन्द्रादि-  
देवताः ॥ ३ ॥ स्कंधोपस्कंधपत्रेषु गोविप्रमुनयस्तथा । मूलं वेदाः  
पयो यज्ञाः संस्थिता मुनिपुंगव ॥ ४ ॥ पूर्वादिदिक्षु संयाता  
नदीनदसरोब्धयः । तस्मात्सर्वप्रयत्नेन ह्यश्वत्थं संश्रयेद्बुधः ॥ ५ ॥  
त्वं क्षीर्यफलकश्चैव शीतलश्च वनस्पते । त्वामाराध्य नरो विद्यादै-  
हिकामुष्मिकं फलम् ॥ ६ ॥ चलद्दलाय वृक्षाय सर्वदाश्रित-  
विष्णवे । बोधितत्त्वाय देवाय ह्यश्वत्थाय नमो नमः ॥ ७ ॥  
अश्वत्थ यस्मात्त्वयि वृक्षराज नारायणस्तिष्ठति सर्वकाले । अतः  
श्रुतस्त्वं सततं तरूणां धन्योऽसि चारिष्टविनाशकोऽसि ॥ ८ ॥  
क्षीरदस्त्वं च येनेह येन श्रीस्त्वां निषेवते । सत्येन तेन वृक्षेन्द्र  
मामपि श्रीनिषेवताम् ॥ ९ ॥ एकादशात्मरुद्रोऽसि वसुनाथ-  
शिरोमणिः । नारायणोऽसि देवानां वृक्षराजोऽसि पिप्पल ॥ १० ॥  
अग्निगर्भः शमीगर्भो देवगर्भः प्रजापतिः । हिरण्यगर्भो भूगर्भो

यज्ञगर्भो नमोऽस्तु ते ॥ ११ ॥ आयुर्बलं यशो वर्चः प्रजाः पशु-  
 वसूनि च । ब्रह्म प्रज्ञां च मेधां च त्वं नो देहि वनस्पते ॥ १२ ॥  
 सततं वरुणो रक्षेत्वामारादृष्टिराश्रयेत् । परितस्त्वां निषेवंतां तृणानि  
 सुखमस्तु ते ॥ १३ ॥ अक्षिस्पंदं भुजस्पंदं दुःस्वप्नं दुर्विचिंतनम् ।  
 शत्रूणां च समुत्थानं ह्यश्वत्थ शमय प्रभो ॥ १४ ॥ अश्वत्थाय  
 वरेण्याय सर्वैश्वर्यप्रदायिने । नमो दुःस्वप्ननाशाय सुस्वप्नफलदायिने  
 ॥ १५ ॥ मूलतो ब्रह्मरूपाय मध्यतो विष्णुरूपिणे । अंततः शिव-  
 रूपाय वृक्षराजाय ते नमः ॥ १६ ॥ यं दृष्ट्वा मुच्यते रोगैः स्पृष्ट्वा  
 पापैः प्रमुच्यते । यदाश्रयाच्चिरंजीवी तमश्वत्थं नमाम्यहम् ॥ १७ ॥  
 अश्वत्थ सुमहाभाग सुभग प्रियदर्शन । इष्टकामांश्च मे देहि  
 शत्रुभ्यश्चापराभवम् ॥ १८ ॥ आयुः प्रजां धनं धान्यं सौभाग्यं  
 सर्वसंपदम् । देहि देव महावृक्ष त्वामहं शरणं गतः ॥ १९ ॥  
 ऋग्यजुःसाममंत्रात्मा सर्वरूपी परात्परः । अश्वत्थो वेदमूलोऽसा-  
 वृषिभिः प्रोच्यते सदा ॥ २० ॥ ब्रह्महा गुरुहा चैव दरिद्रो  
 व्याधिपीडितः । आवृत्य लक्षसंख्यं तत्स्तोत्रमेतत्सुखी भवेत्  
 ॥ २१ ॥ ब्रह्मचारी हविष्याशी त्वधःशायी जितेंद्रियः । पापोपह-  
 तचित्तोऽपि व्रतमेतत्समाचरेत् ॥ २२ ॥ एकहस्तं द्विहस्तं वा  
 कुर्याद्गोमयलेपनम् । अर्चेत्पुरुषसूक्तेन प्रणवेन विशेषतः ॥ २३ ॥  
 मौनी प्रदक्षिणं कुर्यात्प्रागुक्तफलभागभवेत् । विष्णोर्नामसहस्रेण  
 ह्यच्युतस्यापि कीर्तनात् ॥ २४ ॥ पदे पदांतरं गत्वा करचेष्टावि-  
 वर्जितः । वाचा स्तोत्रं मनो ध्याने चतुरंगं प्रदक्षिणम् ॥ २५ ॥  
 अश्वत्थः स्थापितो येन तत्कुलं स्थापितं ततः । धनायुषां समृद्धिस्तु  
 नरकात्तारयेत्पितृन् ॥ २६ ॥ अश्वत्थमूलमाश्रित्य शाकान्नोदक-  
 दानतः । एकस्मिन्भोजिते विप्रे कोटिब्राह्मणभोजनम् ॥ २७ ॥



अश्वत्थमूलमाश्रित्य जपहोमसुरार्चनात् । अक्षयं फलमाप्नोति ब्रह्मणो  
वचनं तथा ॥ २८ ॥ एवमाश्वासितोऽश्वत्थः सदाश्वासाय कल्पते ।  
यज्ञार्थं छेदितेऽश्वत्थे ह्यक्षयं स्वर्गमामुयात् ॥ २९ ॥ छिन्नो येन  
वृथाऽश्वत्थश्छेदिताः पितृदेवताः । अश्वत्थः पूजितो यत्र पूजिताः  
सर्वदेवताः ॥ ३० ॥ इति ब्रह्मनारदसंवादेऽश्वत्थस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ४२४. नवनागनामस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अनंतं वासुकिं शेषं पद्मनाभं च कंबलम् ।  
शंखपालं धृतराष्ट्रं तक्षकं कालियं तथा ॥ १ ॥ एतानि नव नामानि  
नागानां च महात्मनाम् । सायंकाले पठेन्नित्यं प्रातःकाले विशेषतः ।  
तस्य विषभयं नास्ति सर्वत्र विजयी भवेत् ॥ २ ॥ इति श्रीनव-  
नागनामस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ४२५. तुलसीकवचम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अस्या श्रीतुलसीकवचस्तोत्रमंत्रस्य, श्रीमहादेव  
ऋषिः, अनुष्टुप्छंदः, श्रीतुलसी देवता, मनसीप्सितकामना-  
सिद्ध्यर्थं जपे विनियोगः ॥ तुलसि श्रीमहादेवि नमः पंकजधारिणि ।  
शिरो मे तुलसी पातु भालं पातु यशस्विनी ॥ १ ॥ दृशौ मे  
पद्मनयना श्रीसखी श्रवणे मम । घ्राणं पातु सुगंधा मे मुखं च  
सुमुखी मम ॥ २ ॥ जिह्वां मे पातु शुभदा कंठं विद्यामयी मम ।  
स्कंधौ कल्लारिणी पातु हृदयं विष्णुवल्लभा ॥ ३ ॥ मध्यं मे पुण्यदा  
पातु नाभिं सौभाग्यदायिनी । कटिं कुंडलिनी पातु ऊरू नारद-  
वंदिता ॥ ४ ॥ जननी जानुनी पातु जंघे सकलवंदिता । नारायण-  
प्रिया पादौ सर्वांगं सर्वरक्षिणी ॥ ५ ॥ संकटे विषमे दुर्गे भये वादे  
महाहवे । नित्यं हि संध्ययोः पातु तुलसी सर्वतः सदा ॥ ६ ॥  
इतीदं परमं गुह्यं तुलस्याः कवचामृतम् । मर्त्यानाममृताथार्या

भीतानामभयाय च ॥ ७ ॥ मोक्षाय च मुमुक्षूणां ध्यायिनां  
 ध्यानयोगकृत् । वशाय वश्यकामानां विद्यायै वेदवादिनाम् ॥ ८ ॥  
 द्रविणाय दरिद्राणां पापिनां पापशांतये ॥ ९ ॥ अन्नाय क्षुधितानां  
 च स्वर्गाय स्वर्गमिच्छताम् । पशव्यं पशुकामानां पुत्रदं पुत्रकांक्षि-  
 णाम् ॥ १० ॥ राज्याय अष्टराज्यानामशांतानां च शांतये ।  
 भक्त्यर्थं विष्णुभक्तानां विष्णौ सर्वातरात्मनि ॥ ११ ॥ जाप्यं  
 त्रिवर्गसिद्ध्यर्थं गृहस्थेन विशेषतः । उद्यंतं चंडकिरणमुपस्थाय  
 कृतांजलिः ॥ १२ ॥ तुलसीकानने तिष्ठन्नासीनो वा जपेदिदम् ।  
 सर्वान्कामानवाप्नोति तथैव मम सन्निधिम् ॥ १३ ॥ मम प्रियकरं  
 नित्यं हरिभक्तिविवर्धनम् । या स्यान्मृतप्रजा नारी तस्या अंगं  
 प्रमार्जयेत् ॥ १४ ॥ सा पुत्रं लभते दीर्घजीविनं चाप्यरोगिणम् ।  
 वंध्याया मार्जयेदंगं कुशैर्मन्त्रेण साधकः ॥ १५ ॥ सापि संवत्स-  
 रादेव गर्भं धत्ते मनोहरम् । अश्वत्थे राजवश्यार्थी जपेदग्नेः सुरूप-  
 भाक् ॥ १६ ॥ पलाशमूले विद्यार्थी तेजोर्ध्वभिमुखो रवेः ।  
 कन्यार्थी चंडिकागेहे शत्रुहल्यै गृहे मम ॥ १७ ॥ श्रीकामो विष्णु-  
 गेहे च उद्याने स्त्री वशा भवेत् । किमत्र बहुनोक्तेन शृणु सैन्येश  
 तत्त्वतः ॥ १८ ॥ यं यं काममभिध्यायेत्तं तं प्राप्नोत्यसंशयम् ।  
 मम गेहगतस्त्वं तु तारकस्य वधेच्छया ॥ १९ ॥ जपन् स्तोत्रं च  
 कवचं तुलसीगतमानसः । मंडलात्तारकं हंता भविष्यति न संशयः  
 ॥ २० ॥ इति श्रीब्रह्मांडपुराणे तुलसीमाहात्म्ये तुलसीकवचं  
 संपूर्णम् ॥

### ४२६. तुलसीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ जगद्धात्रि नमस्तुभ्यं विष्णोश्च प्रियवल्लभे ।  
 यतो ब्रह्मादयो देवाः सृष्टिस्थित्यंतकारिणः ॥ १ ॥ नमस्तुलसि

कल्याणि नमो विष्णुप्रिये शुभे । नमो मोक्षप्रदे देवि नमः संपत्प्र-  
 दायिके ॥ २ ॥ तुलसी पातु मां नित्यं सर्वापन्न्योऽपि सर्वदा ।  
 कीर्तितापि स्मृता वापि पवित्रयति मानवम् ॥ ३ ॥ नमामि शिरसा  
 देवीं तुलसीं विलसत्तनुम् । यां दृष्ट्वा पापिनो मर्त्या मुच्यन्ते सर्व-  
 किल्बिषात् ॥ ४ ॥ तुलस्या रक्षितं सर्वं जगदेतच्चराचरम् । या  
 विनिर्हति पापानि दृष्ट्वा वा पापिभिर्नरैः ॥ ५ ॥ नमस्तुलस्यतितरां  
 यस्यै बद्धा बलिं कलौ । कलयन्ति सुखं सर्वं स्त्रियो वैश्यास्तथापरे  
 ॥ ६ ॥ तुलस्या नापरं किञ्चिद्देवतं जगतीतले । यथा पवित्रितो  
 लोको विष्णुसंगेन वैष्णवः ॥ ७ ॥ तुलस्याः पल्लवं विष्णोः  
 शिरस्यारोपितं कलौ । आरोपयति सर्वाणि श्रेयांसि वरमस्तके  
 ॥ ८ ॥ तुलस्यां सकला देवा वसन्ति सततं यतः । अतस्तामर्चये-  
 ल्लोके सर्वान्देवान्समर्चयन् ॥ ९ ॥ नमस्तुलसि सर्वज्ञे पुरुषोत्तम-  
 बल्लभे । पाहि मां सर्वपापेभ्यः सर्वसंपत्प्रदायिके ॥ १० ॥ इति  
 स्तोत्रं पुरा गीतं पुंडरीकेण धीमता । विष्णुमर्चयता नित्यं शोभनै-  
 स्तुलसीदलैः ॥ ११ ॥ तुलसी श्रीमहालक्ष्मीर्विद्याविद्या यश-  
 स्विनी । धर्म्या धर्मानना देवी देवदेवमनःप्रिया ॥ १२ ॥ लक्ष्मीः  
 प्रियसखी देवी द्यौर्भूमिरचला चला । षोडशैतानि नामानि  
 तुलस्याः कीर्तयन्नरः ॥ १३ ॥ लभते सुतरां भक्तिमते विष्णुपदं  
 लभेत् । तुलसी भूर्महालक्ष्मीः पद्मिनी श्रीहरिप्रिया ॥ १४ ॥  
 तुलसि श्रीसखि शुभे पापहारिणि पुण्यदे । नमस्ते नारदनुते  
 नारायणमनःप्रिये ॥ १५ ॥ इति श्रीपुंडरीककृतं तुलसीस्तोत्रं  
 संपूर्णम् ॥

४२७. वेदव्यासाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ कलिमलास्तविवेकदिवाकरं समवलोक्य तमो-

वलितं जनम् । करुणया भुवि दर्शितविग्रहं मुनिवरं तमहं सततं  
 भजे ॥ १ ॥ भरतवंशसमुद्धरणेच्छया स्वजननीवचसा परिचोदितः ।  
 अजनयत्तनयत्रितयं प्रभुर्मुनिवरं तमहं सततं भजे ॥ २ ॥ मति-  
 बलादि निरीक्ष्य कलौ नृणां लघुतरं कृपया निगमांबुधेः । सम-  
 करोदिह भागमनेकधा मुनिवरं तमहं सततं भजे ॥ ३ ॥ सकल-  
 धर्मनिरूपणसागरं विविधचित्रकथासमलंकृतम् । व्यरचयच्च  
 पुराणकदंबकं मुनिवरं तमहं सततं भजे ॥ ४ ॥ श्रुतिविरोधसम-  
 न्वयदर्पणं निखिलवादिमतांध्यविदारणम् । ग्रथितवानपि सूत्र-  
 समूहकं मुनिवरं तमहं सततं भजे ॥ ५ ॥ यदनुभाववशेन दिवं  
 गतः समधिगम्य महास्त्रसमुच्चयम् । कुरुचमूमजयद्विजयो द्रुतं  
 मुनिवरं तमहं सततं भजे ॥ ६ ॥ समरवृत्तविबोधसमीहया  
 कुरुवरेण मुदा कृतयाचनः । सपदि सूतमदादमलेक्षणं मुनिवरं  
 तमहं सततं भजे ॥ ७ ॥ वननिवासपरौ कुरुदंपती सुतशुचा तपसा  
 च विकर्षितौ । मृततनूजगणं समदर्शयन्मुनिवरं तमहं सततं भजे  
 ॥ ८ ॥ व्यासाष्टकमिदं पुण्यं ब्रह्मानन्देन निर्मितम् । यः पठे-  
 न्मनुजो नित्यं स भवेच्छास्त्रपारगः ॥ ९ ॥ इति श्रीमत्परमहंस-  
 ब्रह्मानंदस्वामिविरचितं वेदव्यासाष्टकं संपूर्णम् ॥

### ४२८. अभिलाषाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ कदा पक्षींद्रांसोपरिगतमजं कंजनयनं रमा-  
 संश्लिष्टांगं गगनरुचमापीतवसनम् । गदाशंखांभोजारिवरकरमा-  
 लोक्य सुचिरं गमिष्यत्येतन्मे ननु सफलतां नेत्रयुगलम् ॥ १ ॥  
 कदा क्षीराब्ध्यंतः सुरतरुवनांतर्मणिमये समासीनं पीठे जलधि-  
 तनयालिङ्गिततनुम् । स्तुतं देवैर्नित्यं मुनिवरकदंबैरभिनुतं स्तवैः  
 संस्तोष्यामि श्रुतिवचनगर्भैः सुरगुरुम् ॥ २ ॥ कदा मामाभीतं

भयजलधितस्तापसतनुं गता रागं गंगातटगिरिगुहावाससहनम् ।  
 लपंतं हे विष्णो सुरवर रमेशेति सततं समभ्येत्योदारं कमलनयनो  
 वक्ष्यति वचः ॥ ३ ॥ कदा मे हृत्पद्मे भ्रमर इव पद्मे प्रतिवसन्  
 सदा ध्यानाभ्यासादनिशमुपहूतो विभुरसौ । स्फुरज्योतीरूपो  
 रविरिव रमासेव्यचरणो हरिव्यत्यज्ञानाज्जनिततिमिरं तूर्णमखिलम्  
 ॥ ४ ॥ कदा मे भोगाशानिबिडभवपाशादुपरतं तपःशुद्धं बुद्धं  
 गुरुवचनतोदैरचपलम् । मनो मौनं कृत्वा हरिचरणयोश्चारु सुचिरं  
 स्थितिं स्थाणुप्रायां भवभयहरां यास्यति पराम् ॥ ५ ॥ कदा मे  
 संरुद्धाखिलकरणजालस्य परितो जिताशेषप्राणानिलपरिकरस्य  
 प्रजपतः । सदोकारं चित्तं हरिपदसरोजे धृतवतः समेव्यत्युल्लासं  
 मुहुरखिलरोमावलिरीयम् ॥ ६ ॥ कदा प्रारब्धांते परिशिथिलतां  
 गच्छति शनैः शरीरे चाक्षौधेऽप्युपरतवति प्राणपवने । वदत्यूर्ध्वं  
 शश्वन्मम वदनकंजे मुहुरहो करिष्यत्यावासं हरिरिति पदं पावन-  
 तमम् ॥ ७ ॥ कदा हित्वा जीर्णां त्वचमिव भुजंगस्तनुमिमां  
 चतुर्बाहुश्चक्रांबुजदरकरः पीतवसनः । घनश्यामो दूतैर्गगनगतिनीतो  
 नतिपरैर्गमिष्यामीशस्यांतिकमखिलदुःखांतकमिति ॥ ८ ॥ इति  
 श्रीमत्परमहंसब्रह्मानंदस्वामिविरचितमभिलाषाष्टकं संपूर्णम् ॥

### ४२९. श्रीहरिशरणाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ध्येयं वदंति शिवमेव हि केचिदन्ये शक्तिं  
 गणेशमपरे तु दिवाकरं वै । रूपैस्तु तैरपि त्रिभासि यतस्त्वमेव  
 तस्मात्त्वमेव शरणं मम शंखपाणे ॥ १ ॥ नो सोदरो न जनको  
 जननी न जाया नैवात्मजो न च कुलं विपुलं बलं वा । संदृश्यते  
 न किल कोऽपि सहायको मे तस्मात्त्वमेव शरणं मम शंखपाणे  
 ॥ २ ॥ नोपासिता मदमपास्य मया महांतस्तीर्थानि चास्तिकधिया

नहि सेवितानि । देवार्चनं च विधिवन्न कृतं कदापि तस्मात्त्वमेव शरणं मम शंखपाणे ॥ ३ ॥ दुर्वासना मम सदा परिकर्षयंती चित्तं शरीरमपि रोगगणा दहन्ति । संजीवनं च परहस्तगतं सदैव तस्मात्त्वमेव शरणं मम शंखपाणे ॥ ४ ॥ पूर्वं कृतानि दुरितानि मया तु यानि स्मृत्वाऽखिलानि हृदयं परिकंपते मे । ख्याता च ते पतितपावनता तु यस्मात्तस्मात्त्वमेव शरणं मम शंखपाणे ॥ ५ ॥ दुःखं जराजननजं विविधाश्च रोगाः काकश्चशूकरजनीर्निरये च पातः । ते विस्मृते फलमिदं विततं हि लोके तस्मात्त्वमेव शरणं मम शंखपाणे ॥ ६ ॥ नीचोऽपि पापवलितोऽपि विनिन्दितोऽपि ब्रूयात्तवाहमिति यस्तु किलैकवारम् । तं यच्छसीश निजलोकमिति व्रतं ते तस्मात्त्वमेव शरणं मम शंखपाणे ॥ ७ ॥ वेदेषु धर्मवचनेषु तथागमेषु रामायणेऽपि च पुराणकदंबके वा । सर्वत्र सर्वविधिना गदितस्त्वमेव तस्मात्त्वमेव शरणं मम शंखपाणे ॥ ८ ॥ इति श्रीपरमहंसब्रह्मानंदस्वामिविरचितं श्रीहरिशरणाष्टकं संपूर्णम् ॥

### ४३०. चतुःश्लोकीभागवतम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीभगवानुवाच । ज्ञानं परमगुह्यं मे यद्वि-  
ज्ञानसमन्वितम् । सरहस्यं तदंगं च गृहाण गदितं मया ॥ १ ॥  
यावानहं यथाभावो यद्रूपगुणकर्मकः । तथैव तत्त्वविज्ञानमस्तु ते  
मदनुग्रहात् ॥ २ ॥ अहमेवासमेवाग्रे नान्यद्यत्सदसत्परम् ।  
पश्चादहं यदेतच्च योऽवशिष्येत सोऽस्म्यहम् ॥ ३ ॥ ऋतेऽर्थं  
यत्प्रतीयेत न प्रतीयेत चात्मनि । तद्विद्यादात्मनो मायां यथाभासो  
यथा तमः ॥ ४ ॥ यथा महान्ति भूतानि भूतेषूच्चावचेष्वनु ।  
प्रविष्टान्यप्रविष्टानि तथा तेषु न तेष्वहम् ॥ ५ ॥ एतावदेव  
जिज्ञास्यं तत्त्वजिज्ञासुनाऽऽत्मनः । अन्वयव्यतिरेकाभ्यां यत्स्या-

त्सर्वत्र सर्वदा ॥ ६ ॥ एतन्मतं समातिष्ठ परमेण समाधिना ।  
भवान्कल्पविकल्पेषु न विमुह्यति कर्हिचित् ॥ ७ ॥ इति  
श्रीमद्भागवते महापुराणेऽष्टादशसाहस्र्यां संहितायां वैयासिक्यां  
द्वितीयस्कंधे भगवद्ब्रह्मसंवादे चतुःश्लोकीभागवतं संपूर्णम् ॥

### ४३१. सप्तश्लोकी गीता ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन्मामनुस्मरन् ।  
यः प्रयाति त्यजन्देहं स याति परमां गतिम् ॥ १ ॥ स्थाने हृषीकेश  
तव प्रकीर्त्या जगत्प्रहृष्यत्यनुरज्यते च । रक्षांसि भीतानि दिशो  
द्रवंति सर्वे नमस्यंति च सिद्धसंघाः ॥ २ ॥ सर्वतःपाणिपादं  
तत्सर्वतोऽक्षिशिरोमुखम् । सर्वतःश्रुतिमलोके सर्वमावृत्य तिष्ठति  
॥ ३ ॥ कविं पुराणमनुशासितारमणोरणीयांसमनुस्मरेद्यः । सर्वस्य  
धातारमर्चिन्त्यरूपमादित्यवर्णं तमसः परस्तात् ॥ ४ ॥ ऊर्ध्वमूल-  
मधःशाखमश्वत्थं प्राहुरव्ययम् । छंदांसि यस्य पर्णानि यस्तं वेद  
स वेदवित् ॥ ५ ॥ सर्वस्य चाहं हृदि संनिविष्टो मत्तः स्मृतिर्ज्ञान-  
मपोहनं च । वेदैश्च सर्वैरहमेव वेद्यो वेदांतकृद्वेदविदेव चाहम् ॥ ६ ॥  
मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु । मामेवैष्यसि युक्त्वै-  
वमात्मानं मत्परायणः ॥ ७ ॥ इति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु  
ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे सप्तश्लोकी गीता संपूर्णा ॥

### ४३२. सुदर्शनस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अम्बरीष उवाच ॥ त्वमग्निर्भगवान्सूर्यस्त्वं  
सोमो ज्योतिषां पतिः । त्वमापस्त्वं क्षितिवर्योम वायुर्मात्रेन्द्रियाणि  
च ॥ १ ॥ सुदर्शनं नमस्तुभ्यं सहस्राराच्युतप्रिय । सर्वास्त्रघाति-  
न्विप्राय स्वस्ति भूया इडस्पते ॥ २ ॥ त्वं धर्मस्त्वमृतं सत्यं  
त्वं यज्ञोऽखिलयज्ञभुक् त्वं लोकपालः सर्वात्मा त्वं तेजः पौरुषं

परम् ॥३॥ नमः सुनाभाखिलधर्मसेतवे ह्यधर्मशीलासुरधूमकेतवे ।  
 त्रैलोक्यगोपाय विशुद्धवर्चसे मनोजवायाद्भुतकर्मणे गृणे ॥ ४ ॥  
 त्वत्तेजसा धर्ममयेन संहृतं तमः प्रकाशश्च धृतो महात्मनाम् ।  
 दुरत्ययस्ते महिमा गिरां पते त्वद्रूपमेतत्सदसत्परावरम् ॥ ५ ॥  
 यदा विसृष्टस्वमनञ्जनेन वै बलं प्रविष्टोऽजित दैत्यदानवम् ।  
 बाहूदरोर्वद्विशिरोधराणि वृक्णन्नजस्रं प्रधने विराजसे ॥ ६ ॥ स  
 त्वं जगन्नाणखलप्रहाणये निरूपितः सर्वसहो गदाभृता । विप्रस्य  
 चास्मत्कुलदैवहेतवे विधेहि भद्रं तदनुग्रहो हि नः ॥ ७ ॥ यद्यस्ति  
 दत्तमिष्टं वा स्वधर्मो वा स्वनुष्ठितः । कुलं नो विप्रदैवं चेद्विजो  
 भवतु विज्वरः ॥ ८ ॥ यदि नो भगवान्प्रीत एकः सर्वगुणाश्रयः ।  
 सर्वभूतात्मभावेन द्विजो भवतु विज्वरः ॥ ९ ॥ इत्यंबरीषकृतं  
 सुदर्शनस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ४३३. भारतसावित्रीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ व्यास उवाच ॥ मातापिनृसहस्राणि पुत्रदार-  
 शतानि च । संसारेष्वनुभूतानि यान्ति यास्यन्ति चापरे ॥ १ ॥  
 हर्षस्थानसहस्राणि भयस्थानशतानि च । दिवसे दिवसे मूढमा-  
 विशन्ति न पण्डितम् ॥ २ ॥ ऊर्ध्वबाहुर्विरौम्येष न च कश्चिच्छृ-  
 णोति मे । धर्मादर्थश्च कामश्च स किमर्थं न सेव्यते ॥ ३ ॥ न  
 जातु कामान्न भयान्न लोभाद्धर्मं त्यजेज्जीवितस्यापि हेतोः । नित्यो  
 धर्मः सुखदुःखे त्वनित्ये जीवो नित्यो हेतुरस्य त्वनित्यः ॥ ४ ॥  
 इमां भारतसावित्रीं प्रातरुत्थाय यः पठेत् । स भारतफलं प्राप्य  
 परं ब्रह्माधिगच्छति ॥ ५ ॥ इति श्रीमहाभारते शतसाहस्र्यां  
 संहितायां वैयासिक्यां स्वर्गारोहणपर्वणि भारतसावित्रीस्तोत्रं  
 संपूर्णम् ॥



## ४३४. श्रीशङ्करदेशिकाष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ विदिताखिलशास्त्रसुधाजलधे महितोपनिष-  
 स्कथितार्थनिधे । हृदये कलये विमलं चरणं भव शंकरदेशिक मे  
 शरणम् ॥ १ ॥ करुणावरुणालय पालय मां भवसागरदुःख-  
 विदूनहृदम् । रचिताखिलदर्शनतत्त्वविदं भव शंकरदेशिक मे  
 शरणम् ॥ २ ॥ भवता जनता सुखिता भविता निजबोधविचारण-  
 चारुमते । कलेश्वरजीवविवेकविदं भव शंकरदेशिक मे शरणम्  
 ॥ ३ ॥ भव एव भवानिति मे नितरां समजायत चेतसि कौतु-  
 किता । मम वारय मोहमहाजलधिं भव शंकरदेशिक मे शरणम्  
 ॥ ४ ॥ सुकृतेऽधिकृते बहुधा भवतो भविता पददर्शनलालसता ।  
 अतिदीनमिमं परिपालय मां भव शंकरदेशिक मे शरणम् ॥ ५ ॥  
 जगतीमवितुं कलिताकृतयो विचरन्ति महामहसश्छलतः । अहि-  
 मांशुरिवात्र विभासि पुरो भव शंकरदेशिक मे शरणम् ॥ ६ ॥  
 गुरुपुंगव पुंगवकेतन ते समतामयतां न हि कोऽपि सुधीः ।  
 शरणागतवत्सल तत्त्वनिधे भव शंकरदेशिक मे शरणम् ॥ ७ ॥  
 विदिता न मया विशदैककला न च किंचन काञ्चनमस्ति गुरो ।  
 द्रुतमेव विधेहि कृपां सहजां भव शंकरदेशिक मे शरणम् ॥ ८ ॥  
 इति श्रीशङ्करदेशिकाष्टकं संपूर्णम् ॥

## ४३५. मृतसंजीवनकवचम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ सारात्सारतरं पुण्यं गुह्याद्गुह्यतरं शुभम् ।  
 महादेवस्य कवचं मृतसंजीवनाभिधम् ॥ १ ॥ समाहितमना  
 भूत्वा शृणुष्व कवचं शुभम् । श्रुत्वैतद्विव्यकवचं रहस्यं कुरु  
 सर्वदा ॥ २ ॥ वराभयकरो यज्वा सर्वदेवनिषेवितः । मृत्युंजयो

महादेवः प्राच्यां मां पातु सर्वदा ॥ ३ ॥ दधानः शक्ति-  
 मभयां त्रिमुखः षड्भुजः प्रभुः । सदाशिवोऽग्निरूपी मामाग्नेय्यां  
 पातु सर्वदा ॥ ४ ॥ अष्टादशभुजोपेतो दण्डाभयकरो विभुः ।  
 यमरूपी महादेवो दक्षिणस्यां सदाऽवतु ॥ ५ ॥ खड्गाभयकरो  
 धीरो रक्षोगणनिषेवितः । रक्षोरूपी महेशो मां नैर्ऋत्यां सर्वदाऽवतु  
 ॥ ६ ॥ पाशाभयभुजः सर्वरत्नाकरनिषेवितः । वरुणात्मा महादेवः  
 पश्चिमे मां सदाऽवतु ॥ ७ ॥ गदाभयकरः प्राणनायकः सर्वदा  
 गतिः । वायव्यां मारुतात्मा मां शंकरः पातु सर्वदा ॥ ८ ॥  
 शङ्खाभयकरस्थो मां नायकः परमेश्वरः । सर्वात्मान्तरदिग्भागे  
 पातु मां शंकरः प्रभुः ॥ ९ ॥ शूलाभयकरः सर्वविद्यानामधि-  
 नायकः । ईशानात्मा तथैशान्यां पातु मां परमेश्वरः ॥ १० ॥  
 ऊर्ध्वभागे ब्रह्मरूपी विश्वात्माऽघः सदाऽवतु । शिरो मे शंकरः  
 पातु ललाटं चन्द्रशेखरः ॥ ११ ॥ भ्रूमध्यं सर्वलोकेशस्त्रिनेत्रो  
 लोचनेऽवतु । भ्रूयुग्मं गिरिशः पातु कर्णौ पातु महेश्वरः  
 ॥ १२ ॥ नासिकां मे महादेव ओष्ठौ पातु वृषध्वजः । जिह्वां मे  
 दक्षिणामूर्तिर्दन्तान्मे गिरिशोऽवतु ॥ १३ ॥ मृत्युंजयो मुखं  
 पातु कण्ठं मे नागभूषणः । पिनाकी मत्करौ पातु त्रिशूली हृदयं  
 मम ॥ १४ ॥ पञ्चवक्त्रः स्तनौ पातु उदरं जगदीश्वरः । नाभिं  
 पातु विरूपाक्षः पार्श्वौ मे पार्वतीपतिः ॥ १५ ॥ कटिद्वयं गिरीशो  
 मे पृष्ठं मे प्रमथाधिपः । गुह्यं महेश्वरः पातु ममोरु पातु भैरवः  
 ॥ १६ ॥ जानुनी मे जगद्धर्ता जंघे मे जगदम्बिका । पादौ मे  
 सततं पातु लोकवन्द्यः सदाशिवः ॥ १७ ॥ गिरीशः पातु मे  
 भार्या भवः पातु सुतान्मम । मृत्युंजयो ममायुष्यं चित्तं मे  
 गणनायकः ॥ १८ ॥ सर्वांगं मे सदा पातु कालकालः सदाशिवः ।

एतत्ते कवचं पुण्यं देवतानां च दुर्लभम् ॥ १९ ॥ मृतसंजीवनं  
नाम्ना महादेवेन कीर्तितम् । सहस्रावर्तनं चास्य पुरश्चरणमीरितम्  
॥ २० ॥ यः पठेच्छृणुयान्नित्यं श्रावयेत्सुसमाहितः । स काल-  
मृत्युं निर्जित्य सदाऽऽयुष्यं समश्नुते ॥ २१ ॥ हस्तेन वा यदा स्पृष्ट्वा  
मृतं संजीवयत्यसौ । आधयो व्याधयस्तस्य न भवन्ति कदाचन  
॥ २२ ॥ कालमृत्युमपि प्राप्तमसौ जयति सर्वदा । अणिमादि-  
गुणैश्वर्यं लभते मानवोत्तमः ॥ २३ ॥ युद्धारम्भे पठित्वेदमष्टा-  
विंशतिवारकम् । युद्धमध्ये स्थितः शत्रुः सद्यः सर्वैर्न दृश्यते  
॥ २४ ॥ न ब्रह्मादीनि चास्त्राणि क्षयं कुर्वन्ति तस्य वै । विजयं  
लभते देवयुद्धमध्येऽपि सर्वदा ॥ २५ ॥ प्रातरुत्थाय सततं यः  
पठेत्कवचं शुभम् । अक्षयं लभते सौख्यमिह लोके परत्र च  
॥ २६ ॥ सर्वव्याधिविनिर्मुक्तः सर्वरोगविवर्जितः । अजरामरणो  
भूत्वा सदा षोडशवार्षिकः ॥ २७ ॥ विचरत्यखिलाँल्लोकान्प्राप्य  
भोगांश्च दुर्लभान् । तस्मादिदं महागोप्यं कवचं समुदाहृतम् ।  
मृतसंजीवनं नाम्ना दैवतैरपि दुर्लभम् ॥ २८ ॥ इति श्रीवसिष्ठ-  
विरचितं मृतसंजीवनकवचं संपूर्णम् ॥

४३६. नृसिंहसरस्वत्यष्टकम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ प्राग्ब्रह्मत्वमजोऽक्रियोऽपि बहुलः स्यामित्य-  
भूद्धीस्तया सृष्ट्वैवांडभुवं ततो जगदिदं सृष्टं सधर्मं गुणैः । स्वैः स्वं  
भो रमयन्विहंसि सदरीमत्रावतीर्यानिशं वंदे श्रीनृहरे सरस्वति वरं  
ते श्रीपदाब्जद्वयम् ॥ १ ॥ कल्याकृष्टहृदुज्झितक्रतुनरत्रस्ताध्वरा-  
शीर्मुदे प्राप्तः सूर्य इवोदितोऽस्यज महामोहांधकारं प्रसन् । सद्धर्मा-  
श्रमसेतुमत्र शिथिलप्रायं सुदार्ष्यं नयन्वंदे श्रीनृहरे ० ॥ २ ॥  
सर्वानंदनिधानरूपममलं सत्त्वं सुखं मूर्तिमत्प्रादुष्कृत्य जनत्रयांतर

मृगक्रीडावनं पावनम् । संसारावटमग्नमुद्धरसि भो स्वीकृत्य तुर्या-  
 श्रमं वंदे श्रीनृहरे० ॥ ३ ॥ मूके गां दशमंधके सुतनयं वंध्यासु  
 चासून्मृते सौभाग्यं विधवासु पल्लवमहो दत्तं सुशुक्लेन्धने । एवं-  
 भूत इयान् तवैष महिमा त्रैलोक्यसंस्थाक्षमो वंदे० ॥ ४ ॥  
 मुक्तावास मुमुक्षुकल्पविटपिन् भो कामिनां कामधुग्दारिद्र्यानल-  
 मेघदुष्कृतदवाग्ने तापिताराम ते । श्रुत्यन्विष्टरजःपदं श्रुतविवादा-  
 तीततत्त्वं महद्दं दे श्रीनृहरे० ॥ ५ ॥ भो योगीश्वरभावितं तव पदं  
 तीर्थाश्रयं सज्जनाजीवं कामिषु दैवतं च कमलालीलास्थलं निर्मलम् ।  
 विद्वद्वादकरंडकं सुकृतसंस्थानं महत्पावनं वंदे श्रीनृहरे० ॥ ६ ॥  
 वेदागोचर ते चरित्रममलं भक्तोऽत्र कः कृत्स्नशो वक्तुं वन्द्य  
 विनेन्दुभूतपवनात्मेतीह मूर्त्यष्टकम् । एतद्विश्वमयं तथान्यदिह वा  
 ॐकाररूपेशितुर्वन्दे० ॥ ७ ॥ कुंडीदंडकरे प्रशांतममलं संन्यासिरूपं  
 तव श्रीभीमामरजायुतिस्थितमध्येयं शरण्यं मयि । ज्ञानं तार-  
 कमीशसत्यमनिशं ब्रह्मन् स्थिरीकुर्वदो वंदे श्रीनृहरे सरस्वति वरं  
 ते श्रीपदाब्जद्वयम् ॥ ८ ॥ इति श्रीमद्रासुदेवानंदसरस्वतीविरचितं  
 नृसिंहसरस्वत्यष्टकं संपूर्णम् ॥

### ४३७. नृसिंहसरस्वतीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ विजयते जयते जय ते यतेरिह तमोहतमोह-  
 तमो नमः । हृदिकदायपदायसदा यदा तदुदयो न दयोनवियो-  
 नयः ॥ १ ॥ उदयते न यतेर्नयतेर्यदा मनसि कामनिकामगति-  
 स्तदा । यदुदयो हृदयौकसितेसिते भवति योऽवति योगिवरावरान्  
 ॥ २ ॥ भवति भावभवो विभवो यदा भवति कामनिकाममति-  
 स्तदा । भवति मानवगानवदुत्तमे भवतिरोधिरतो विरतोत्तमे ॥ ३ ॥  
 तव सतां वसतां मनसानसाप्रपदयोः पदयोरजसांजसा । सुसहितः

सहितस्तव तावता यदवतारवताजनताविता ॥ ४ ॥ कृतफलं तु  
 विहाय विहायसा सममजं भजतामज तामसात् । मिलति तारकमत्र  
 कमत्रसत्पदरजो भ्रमहारि महारिसत् ॥ ५ ॥ तदजरामरकोशविल-  
 क्षणं सहजधीगुणवेत्तकलक्षणम् । भुवनहेत्वघहृत्त्रिपुराधिकं तव न  
 जातु पदं कुपुराधिकम् ॥ ६ ॥ त्रिविधभेदपरं समदृश्यते त्रिविध-  
 भेदपरं कमदृश्यते । पदमिदं यदुद्धिचनमुद्धिया सदनिदं प्रजहात्य-  
 घनुद्धिया ॥ ७ ॥ अज नमो जनमोहनमोहनः प्रियनियाजयते  
 नयते नते । य इह वेदनिवेदनिवेदवेत्यज पदं जप तपदं पदम्  
 ॥ ८ ॥ इति श्रीमद्वासुदेवानंदसरस्वतीविरचितं नृसिंहसरस्वतीस्तोत्रं  
 संपूर्णम् ॥

### ४३८. कामाक्षीस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ शिवोऽपि शक्तियुक्तश्चेत्प्रभुः कार्याय  
 नान्यथा । स्वमायया विनेशस्य परस्यानुभवात्मनः ॥ १ ॥ न  
 घटेतार्थसम्बन्धस्ततो माया परावरा । यस्याः प्रभावं संवक्तुं ब्रह्माद्या  
 अप्यलं बलम् ॥ २ ॥ वैष्णवीयं महामाया सुरासुरमुनिस्तुता ।  
 शय्यां देवमयीं कृत्वा शेतेऽसाविति गीयते ॥ ३ ॥ सर्वे देवाश्च  
 मुनयो विषमे यां स्तुवन्ति हि । सृष्टिस्थितिविनाशानां हेतुरेका  
 सनातनी ॥ ४ ॥ विदुषोऽपि हठाच्चेतो महामोहाय यच्छति ।  
 अभक्तानां भक्तहेतुर्भक्तानां मुक्तिदा च सा ॥ ५ ॥ सर्वेष्वपि हि  
 भूतेषु चेतनेत्युच्यते ततः । स्वात्मारामः शिवोऽप्यत्र रत्यर्थमनुधा-  
 वति ॥ ६ ॥ माया चतुष्कपर्दाऽसौ युवतिर्नित्यनूतना । सुपेशा च  
 घृतास्थादौ वस्तेस्य वयुनान्यपि ॥ ७ ॥ भक्तिश्रद्धाघृतिही श्रीधी-  
 मेघाद्यैश्च सत्सु या । तृष्णालक्ष्म्यार्तिभीनिद्रातन्द्रारूपैरसत्सु च  
 ॥ ८ ॥ क्षणे क्षणे विमुह्यन्ति वशिनोऽप्यत्र योगिनः । सैषाऽनिर्व-

चनीयाऽर्च्या या कामाक्षीति विश्रुता ॥ ९ ॥ इति श्रीमद्वासुदेवानन्दसरस्वतीविरचितं कामाक्षीस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ४३९. अमृतसंजीवनस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ अथापरमहं वक्ष्येऽमृतसंजीवनं स्तवम् ।  
यस्यानुष्ठानमात्रेण मृत्युर्दूरात्पलायते ॥ १ ॥ असाध्याः कष्ट-  
साध्याश्च महारोगा भयंकराः । शीघ्रं नश्यन्ति पठनादस्यायुश्च  
प्रवर्धते ॥ २ ॥ शाकिनीडाकिनीदोषाः कुदृष्टिग्रहशत्रुजाः । प्रेत-  
वेतालयक्षोत्था बाधा नश्यन्ति चाखिलाः ॥ ३ ॥ दुरितानि  
समस्तानि नानाजन्मोद्भवानि च । संसर्गजविकाराणि विलीयन्तेऽस्य  
पाठतः ॥ ४ ॥ सर्वोपद्रवनाशाय सर्वबाधाप्रशान्तये । आयुः-  
प्रवृद्धये चैतत् स्तोत्रं परममद्भुतम् ॥ ५ ॥ बालग्रहाभिभूतानां  
बालानां सुखदायकम् । सर्वारिष्टहरं चैतद्बलपुष्टिकरं परम् ॥ ६ ॥  
बालानां जीवनायैतत् स्तोत्रं दिव्यं सुधोपमम् । मृतवत्सत्वहरणं  
चिरं जीवित्वकारकम् ॥ ७ ॥ महारोगाभिभूतानां भयव्याकुलि-  
तात्मनाम् । सर्वाधिव्याधिहरणं भयघ्नममृतोपमम् ॥ ८ ॥ अल्प-  
मृत्युश्चापमृत्युः पाठादस्य प्रणश्यति । जलाग्निविषशस्त्रारिनखि-  
श्टङ्गिभयं तथा ॥ ९ ॥ गर्भरक्षाकरं स्त्रीणां बालानां जीवन-  
प्रदम् । महारोगहरं नणामल्पमृत्युहरं परम् ॥ १० ॥ बाला  
वृद्धाश्च तरुणा नरा नार्यश्च दुःखिताः । भवन्ति सुखिनः पाठा-  
दस्य लोके चिरायुषः ॥ ११ ॥ अस्मात्परतरं नास्ति जीवनोपाय  
ऐहिकः । तस्मात्सर्वप्रयत्नेन पाठमस्य समाचरेत् ॥ १२ ॥ अयुता-  
वृत्तिकं वाथ सहस्रावृत्तिकं तथा । तदर्धं वा तदर्धं वा पठेदेतच्च  
भक्तितः ॥ १३ ॥ कलशे विष्णुमाराध्य दीपं प्रज्वालय यत्नतः ।  
सायं प्रातश्च विधिवत्स्तोत्रमेतत्पठेत्सुधीः ॥ १४ ॥ सर्पिषा हविषा

वाऽपि संयावेनाथ भक्तितः । दशांशमानतो होमं कुर्यात्सर्वार्थ-  
सिद्धये ॥ १५ ॥ नमो नमो विश्वविभावनाय नमो नमो लोक-  
सुखप्रदाय । नमो नमो विश्वसृजेश्वराय नमो नमो मुक्तिवरप्रदाय  
॥ १६ ॥ नमो नमस्तेऽखिललोकपाय नमो नमस्तेऽखिलकामदाय ।  
नमो नमस्तेऽखिलकारणाय नमो नमस्तेऽखिलरक्षकाय ॥ १७ ॥  
नमो नमस्ते सकलार्तिहर्त्रे नमो नमस्ते विरुजप्रकर्त्रे । नमो  
नमस्तेऽखिलविश्वधर्त्रे नमो नमस्तेऽखिललोकभर्त्रे ॥ १८ ॥ सृष्टं  
देव चराचरं जगदिदं ब्रह्मस्वरूपेण ते सर्वं तत्परिपाल्यते जगदिदं  
विष्णुस्वरूपेण ते । विश्वं संहितये तदेव निखिलं रुद्रस्वरूपेण ते  
संसिच्यामृतशीकरैर्हर महारिष्टं चिरं जीवय ॥ १९ ॥ यो धन्व-  
न्तरिसंज्ञया निगदितः क्षीराब्धितो निःसृतो हस्ताभ्यां जनजीवनाय  
कलशं पीयूषपूर्णं दधत् । आयुर्वेदमरीरचजनरुजां नाशाय स त्वं  
मुदा संसिच्या० ॥ २० ॥ स्त्रीरूपं वरभूषणांबरधरं त्रैलोक्यसंमोहनं  
कृत्वा पाययति स्म यः सुरगणान्पीयूषमत्युत्तमम् । चक्रे दैत्य-  
गणान्सुधाविरहितान् संमोह्य स त्वं मुदा संसिच्या० ॥ २१ ॥  
चाक्षुषोदधिसंष्ठावभूवेदपञ्जषाकृते । सिञ्च सिञ्चामृतकणैश्चिरं जीवय  
जीवय ॥ २२ ॥ पृष्ठमन्दरनिघूर्णनिद्राक्षकमठाकृते । सिञ्च सिञ्च०  
॥ २३ ॥ थाञ्जाछलबलित्रासमुक्तनिर्जरवामन । सिञ्च सिञ्च० ॥ २४ ॥  
धरोद्धारहिरण्याक्षघातक्रोडाकृते प्रभो । सिञ्च सिञ्च० ॥ २५ ॥ भक्त-  
त्रासविनाशात्तचण्डत्वनृहरे विभो । सिञ्च सिञ्च० ॥ २६ ॥ क्षत्रिया-  
रण्यसंछेदकुठारकर रैणुक । सिञ्च० ॥ २७ ॥ रक्षोराजप्रतापाब्धि-  
शोषणाशुग राघव । सिञ्च० ॥ २८ ॥ भूभारासुरसंदोहकालाग्रे  
रुक्मिणीपते । सिञ्च० ॥ २९ ॥ वेदमार्गरतानर्हविभ्रान्त्यै बुद्ध-  
रूपधृक् । सिञ्च० ॥ ३० ॥ कलिवर्णाश्रमास्पष्टधर्मर्द्ध्यै कल्कि-

रूपभाक् । सिञ्च० ॥ ३१ ॥ असाध्याः कष्टसाध्या ये महारोगा  
 भयङ्कराः । छिन्धि तानाशु चक्रेण चिरं जीवय जीवय ॥ ३२ ॥  
 अल्पमृत्युं चापमृत्युं महोत्पातानुपद्रवान् । भिन्धि भिन्धि गदा-  
 घातैश्चिरं जीवय जीवय ॥ ३३ ॥ अहं न जाने किमपि त्वदन्य-  
 त्समाश्रये नाथ पदाम्बुजं ते । कुरुष्व तद्यन्मनसीप्सितं ते सुक-  
 र्मणा केन समक्षमीयाम् ॥ ३४ ॥ त्वमेव तातो जननी त्वमेव  
 त्वमेव नाथश्च त्वमेव बन्धुः । विद्याधनागारकुलं त्वमेव त्वमेव  
 सर्वं मम देवदेव ॥ ३५ ॥ न मेऽपराधं प्रविलोकय प्रभोऽपराध-  
 सिन्धोश्च दयानिधिस्त्वम् । तातेन दुष्टोऽपि सुतः सुरक्ष्यते  
 दयालुता तेऽवतु सर्वदाऽस्मान् ॥ ३६ ॥ अहह विस्मर नाथ न  
 मां सदा करुणया निजया परिपूरितः । भुवि भवान् यदि मे नहि  
 रक्षकः कथमहो मम जीवनमत्र वै ॥ ३७ ॥ दह दह कृपया त्वं  
 व्याधिजालं विशालं हर हर करवालं चाल्पमृत्यो करालम् ।  
 निजजनपरिपालं त्वां भजे भावयालं कुरु कुरु बहुकालं जीवितं  
 मे सदाऽलम् ॥ ३८ ॥ न यत्र धर्माचरणं न दानं व्रतं न यागो  
 न च विष्णुचर्चा । न पितृगोविप्रवरामरार्चा स्वल्पायुषस्तत्र जना  
 भवन्ति ॥ ३९ ॥ क्लीं श्रीं क्लीं श्रीं नमो भगवते जनार्दनाय  
 सकलदुरितानि नाशय नाशय क्षरौमारोग्यं कुरु कुरु हीं दीर्घ-  
 मायुर्देहि देहि स्वाहा ॥ अस्य धारणतो जापादल्पमृत्युः प्रशा-  
 म्यति । गर्भरक्षाकरं स्त्रीणां बालानां जीवनं परम् ॥ ४० ॥  
 शतं पञ्चाशतं शकत्याथवा पञ्चाधिविंशतिम् । पुस्तकानां द्विजे-  
 भ्यस्तु दद्याद्दीर्घायुषाप्तये ॥ ४१ ॥ भूर्जपत्रे विलिख्येदं कण्ठे वा  
 बाहुमूलके । संधारयेद्गर्भरक्षा बालरक्षा च जायते ॥ ४२ ॥ सर्वे  
 रोगा विनश्यन्ति सर्वाबाधा प्रशाम्यति । कुद्वष्टिजं भयं नश्येत्तथा



प्रेतादिजं भयम् ॥ ४३ ॥ मया कथितमेतत्तेऽमृतसंजीवनं  
परम् । अल्पमृत्युहरं स्तोत्रं मृतवत्सत्त्वनाशनम् ॥ ४४ ॥ इति  
सुदर्शनसंहितोक्तममृतसंजीवनस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ४४०. बन्दीमोचनस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ ॐ अस्य श्रीबन्दीमोचनमन्त्रस्य कण्वऋषिः ।  
त्रिष्टुप् छन्दः ॥ ह्रीं बीजम् ॥ हूं कीलकम् ॥ मम बन्दीमोचनार्थे  
जपे विनियोगः ॥ 'ॐ ह्रीं हूं बन्दीदेव्यै नमः' ॥ इत्यष्टोत्तरशतं जपः ॥  
बन्दीं देवीं नमस्कृत्य वरदाभयशोभिताम् ॥ तदग्र्यां शरणं गच्छेत्  
शीघ्रं मोक्षं ददातु मे ॥ १ ॥ बन्दी कमलपत्राक्षी लौहशृङ्खल-  
भङ्गिनी । प्रसादं कुरु मे देवि शीघ्रं मोक्षं ॥ २ ॥ त्वं बन्दी त्वं  
महामाया त्वं दुर्गा त्वं सरस्वती । त्वं देवी रजनी चैव शीघ्रं मोक्षं ॥  
३ ॥ संसारतारिणी बन्दी सर्वकामप्रदायिनी । सर्वलोकेश्वरी  
देवी शीघ्रं मोक्षं ॥ ४ ॥ त्वं हीस्त्वमीश्वरी देवी ब्रह्माणी ब्रह्म-  
वादिनी ॥ त्वं वै कल्पक्षयं कर्त्री शीघ्रं मोक्षं ॥ ५ ॥ देवी धात्री  
धरित्री च धर्मशास्त्रार्थभाषिणी । दुश्चाम्बरागिणी देवी शीघ्रं मोक्षं ॥  
६ ॥ नमोऽस्तु ते महालक्ष्मि रत्नकुण्डलभूषिते । शिवस्यार्धा-  
ङ्गिनी चैव शीघ्रं मोक्षं ॥ ७ ॥ नमस्कृत्य महादुर्गा भयादुत्ता-  
रिणीं शिवाम् । महादुःखहरां चैव शीघ्रं मोक्षं ॥ ८ ॥ इदं स्तोत्रं  
महापुण्यं यः पठेन्नित्यमेव च । सर्वबन्धविनिर्मुक्तो मोक्षं स लभते  
क्षणात् ॥ ९ ॥ इति श्रीरुद्रयामलोकं बन्दीमोचनस्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ४४१. अश्विनीकुमारस्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ प्रपूर्वगौ पूर्वजौ चित्रभानू गिरा वां शंसामि  
तपसा ह्यनन्तौ । दिव्यौ सुपर्णौ विरजौ विमानावधिक्षिपन्तौ भुव-  
नानि विश्वा ॥ १ ॥ हिरण्ययो शकुनी सांपरायौ नासत्यदस्यौ

सुनसौ वैजयन्ती । शुक्लं वयन्तौ तरसा सुवेमावधिव्ययन्तावसितं  
 विवस्वतः ॥ २ ॥ ग्रस्तां सुपर्णस्य बलेन वर्तिकाममुञ्चतावश्विनौ  
 सौभगाय । तावत्सुवृत्तावनमन्तमाययावसत्तमा गा अरुणा उदा-  
 वहत् ॥ ३ ॥ षष्टिश्च गावस्त्रिशताश्च धेनव एकं वत्सं सुवते तं  
 दुहन्ति । नानागोष्ठा विहिता एकदोहनास्तावश्विनौ दुहतो धर्म-  
 मुक्थ्यम् ॥ ४ ॥ एकां नार्भिं सप्तशता अराः श्रिताः प्रधिष्वन्या  
 विंशतिरर्पिता अराः । अनेमिचक्रं परिवर्ततेऽजरं मायाश्विनौ सम-  
 नक्ति चर्षणी ॥ ५ ॥ एकं चक्रं वर्तते द्वादशारं षण्णाभिमेकाक्षम-  
 मृतस्य धारणम् । यस्मिन्देवा अधिविश्वे विषक्तास्तावश्विनौ मुञ्चतो  
 मा विषीतनम् ॥ ६ ॥ अश्विनाविन्दुममृतं वृत्तभूयौ तिरोधत्ता-  
 मश्विनौ दासपत्नी । हित्वा गिरिमश्विनौ गामुदाचरन्तौ तद्दृष्टि-  
 मह्लात्प्रथितौ बलस्य ॥ ७ ॥ युवां दिशौ जनयथो दशाग्ने सवानं  
 मूर्ध्नि रथयानं वियन्ति । तासां यातमृषयोऽनुप्रयान्ति देवा  
 मनुष्याः क्षितिमाचरन्ति ॥ ८ ॥ युवां वर्णान्विकुरूथो विश्वरूपां-  
 स्तेऽधिक्षियन्ते भुवनानि विश्वा । ते भानवोऽप्यनुसृताश्चरन्ति देवा  
 मनुष्याः क्षितिमाचरन्ति ॥ ९ ॥ तौ नासत्यावश्विनौ वां महेऽहं  
 स्रजं च यां विभृथः पुष्करस्य । तौ नासत्यावमृतावृतावृधावृते  
 देयास्तत्प्रपदे न सूते ॥ १० ॥ मुखेन गर्भं लभतां युवानौ गता-  
 सुरेतत्प्रपदेन सूते । सद्यो जातो मातरमत्ति गर्भस्तावश्विनौ मुञ्चतो  
 जीवसे गाम् ॥ ११ ॥ स्तोतुं न शक्नोमि गुणैर्भवन्तौ चक्षुर्विहीनः  
 पथि संप्रमोहः । दुर्गेऽहमस्मिन्पतितोऽस्मि कूपे युवां शरण्यौ  
 शरणं प्रपद्ये ॥ १२ ॥ इति श्रीमहाभारते आदिपर्वण्यश्विनीकुमार-  
 स्तोत्रं संपूर्णम् ॥

४४२. ब्रह्मज्ञानावलीमालास्तोत्रम् ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ सकृच्छ्रवणमात्रेण ब्रह्मज्ञानं यतो भवेत् ।  
 ब्रह्मज्ञानावलीमाला सर्वेषां मोक्षसिद्धये ॥ १ ॥ असंगोऽहमसंगो-  
 ऽहमसंगोऽहं पुनः पुनः । सच्चिदानन्दरूपोऽहमहमेवाहमव्ययः  
 ॥ २ ॥ नित्यशुद्धविमुक्तोऽहं निराकारोऽहमव्ययः । भूमानन्दस्वरू-  
 पोऽहमहमेवाहमव्ययः ॥ ३ ॥ नित्योऽहं निरवद्योऽहं निराकारोऽह-  
 मच्युतः । परमानन्दरूपोऽहमहमेवाहमव्ययः ॥ ४ ॥ शुद्धचैतन्य-  
 रूपोऽहमात्मारामोऽहमेव च । अखण्डानन्दरूपोऽहमहमेवाहमव्ययः  
 ॥ ५ ॥ प्रत्यक्चैतन्यरूपोऽहं शान्तोऽहं प्रकृतेः परः । शाश्वतानन्द-  
 रूपोऽहमहमेवाहमव्ययः ॥ ६ ॥ तत्त्वातीतः परात्माऽहं मध्यातीतः  
 परः शिवः । मायातीतः परं ज्योतिरहमेवाहमव्ययः ॥ ७ ॥ नाम-  
 रूपव्यतीतोऽहं चिदाकारोऽहमच्युतः । सुखबोधस्वरूपोऽहमह-  
 मेवाहमव्ययः ॥ ८ ॥ मायातत्कार्यदेहादि मम नास्त्येव सर्वदा ।  
 स्वप्रकाशैकरूपोऽहमहमेवाहमव्ययः ॥ ९ ॥ गुणत्रयव्यतीतोऽहं  
 ब्रह्मादीनां च साक्ष्यहम् । अनंतानन्दरूपोऽहमहमेवाहमव्ययः  
 ॥ १० ॥ अन्तर्यामिस्वरूपोऽहं कूटस्थः सर्वगोऽस्म्यहम् । परमा-  
 त्मस्वरूपोऽहमहमेवाहमव्ययः ॥ ११ ॥ निष्कलोऽहं निष्क्रयोऽहं  
 सर्वात्माद्यः सनातनः । अपरोक्षस्वरूपोऽहमहमेवाहमव्ययः ॥ १२ ॥  
 द्वंद्वदिसाक्षिरूपोऽहमचलोऽहं सनातनः । सर्वसाक्षिस्वरूपोऽहमह-  
 मेवाहमव्ययः ॥ १३ ॥ प्रज्ञानघन एवाहं विज्ञानघन एव च ।  
 अकर्ताहमभोक्ताहमहमेवाहमव्ययः ॥ १४ ॥ निराधारस्वरूपोऽहं  
 सर्वाधारोऽहमेव च । आप्तकामस्वरूपोऽहमहमेवाहमव्ययः ॥ १५ ॥  
 तापत्रयविनिर्मुक्तो देहत्रयविलक्षणः । अवस्थात्रयसाक्ष्यस्मि चाह-  
 मेवाहमव्ययः ॥ १६ ॥ दृग्दृश्यौ द्वौ पदार्थौ स्तः परस्परविल-

क्षणौ । दृग्ब्रह्म दृश्यं मायेति सर्ववेदान्तडिण्डिमः ॥ १७ ॥ अहं  
साक्षीति यो विद्याद्विविच्यैवं पुनः पुनः । स एव मुक्तः सो विद्वान्-  
निति वेदान्तडिण्डिमः ॥ १८ ॥ घटकुड्यादिकं सर्वं मृत्तिकामात्र-  
मेव च । तद्ब्रह्म जगत्सर्वमिति वेदान्तडिण्डिमः ॥ १९ ॥ ब्रह्म  
सत्यं जगन्मिथ्या जीवो ब्रह्मैव नापरः । अनेन वेद्यं सच्छास्त्रमिति  
वेदान्तडिण्डिमः ॥ २० ॥ अन्तर्ज्योतिर्बहिर्ज्योतिः प्रत्यग्ज्योतिः  
परात्परः । ज्योतिर्ज्योतिः स्वयंज्योतिरात्मज्योतिः शिवोऽस्म्यहम्  
॥ २१ ॥ इति ब्रह्मज्ञानावलीमालास्तोत्रं संपूर्णम् ॥

### ४४३. नृसिंहस्तुतिः ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ प्रलयरविकरालाकाररुक्चक्रवालं विरलय-  
दुरोचीरोचिताशान्तराल । प्रतिभयतमकोपात्युत्कटोच्चाट्टहासिन्  
दह दह नरसिंहासह्यवीर्याहितं मे ॥ १ ॥ सरसरभसपादापात-  
भाराभिरावप्रचकितचलसप्तद्वन्द्वलोकस्तुतस्त्वम् । रिपुरुधिरनिषेके-  
णैव शोणांघ्रिशालिन् दह दह नरसिंहासह्यवीर्याहितं मे ॥ २ ॥  
तव घनघनघोषो घोरमाघ्राय जंघापरिघमलघुमूरुव्याजतेजोगिरिं  
च । घनविघटितमागादैत्यजंघालसंघो दह दह नरसिंहासह्यवीर्या-  
हितं मे ॥ ३ ॥ कटकिकटकराजद्धाटकाग्रयस्थलाभा प्रकटपटत-  
टित्ते सत्कटिस्थातिपट्टी । कटुककटुकदुष्टाटोपट्टिप्रमुष्टौ दह  
दह नरसिंहासह्यवीर्याहितं मे ॥ ४ ॥ प्रखरनखरवज्रोत्खात-  
रूक्षादिवक्षःशिखरिशिखररक्तैराक्तसन्दोहदेह । सुवषलिभशुभ-  
कुक्षे भद्रगम्भीरनाभे दह दह नरसिंहासह्यवीर्याहितं मे ॥ ५ ॥  
स्फुरयति तव साक्षात्सैव नक्षत्रमाला क्षपितदितिजवक्षोव्यासनक्षत्र-  
मार्गम् । अरिदरधर जान्वासक्तहस्तद्वयाहो दह दह नरसिंहा-

सह्यवीर्याहितं मे ॥ ६ ॥ कटुविकटसटौघोद्धट्टनाद् अष्टभूयो-  
घनपटलविशालाकाशलब्धावकाशम् । करपरिघविमर्दप्रोद्यमं  
ध्यायतस्ते दह दह नरसिंहासह्यवीर्याहितं मे ॥ ७ ॥ हयलुठ-  
दलधिष्टोत्कण्ठदष्टोष्टविद्युत्सट शठकठिनोरःपीठभित्सुष्टु निष्ठाम् ।  
पठति नु तव कण्ठाधिष्ठघोरात्रमाला दह दह नरसिंहासह्यवीर्या-  
हितं मे ॥ ८ ॥ हतबहुमिहिराभासह्यसंहाररंहो हुतवह बहु-  
हेतिहेषिकानन्तहेति । अहितविहितमोहं संवहन् सैहमास्यं दह  
दह नरसिंहासह्यवीर्याहितं मे ॥ ९ ॥ गुरुगुरुगिरिराजत्कन्द-  
रान्तर्गते वा दिनमणिमणिशृंगे वांतवह्निप्रदीप्ते । दधदतिकटुदंष्ट्रे  
भीषणोज्जिह्वक्त्रे दह दह नरसिंहासह्यवीर्याहितं मे ॥ १० ॥  
अपरितविबुधाब्धिध्यानधैर्यं विदध्यद्विविधविबुधधीश्रद्धापितेन्द्रा-  
रिनाशम् । निदधदतिकटाहोद्धट्टनेद्धाट्टहासं दह दह नरसिंहा-  
सह्यवीर्याहितं मे ॥ ११ ॥ त्रिभुवनतृणमात्रत्राणतृष्णं तु नेत्र-  
त्रयमतिलघिताचिर्विष्टपाविष्टपादम् । नवतररविरत्नं धारयन् रूक्ष-  
वीक्षं दह दह नरसिंहासह्यवीर्याहितं मे ॥ १२ ॥ अमदभिभव-  
भूभृद्भूरिभूभारसद्भिद्भिदभिनव ( विभवभ्रू ) विदभ्रूविभ्रमादभ्र-  
शुभ्र । ऋभुभवभयभेत्तर्भासि भोभोविभाभिर्दह दह नरसिंहा-  
सह्यवीर्याहितं मे ॥ १३ ॥ श्रवणखचितचंचत्कुण्डलोच्चण्ड  
( लोल ) गण्ड भ्रुकुटिकटुललाटश्रेष्ठनासारुणोष्ठ । वरद सुरद  
राजत्केसरोत्सारितारे दह दह नरसिंहासह्यवीर्याहितं मे ॥ १४ ॥  
कचि ( प्रवि ) कचकचद्राजद्रत्नकोटीरशालिन् गलगतगलदु-  
स्तोदाररत्नांगदाढ्य । कनककटककांचीशिंजिनीमुद्रिकावन् दह  
दह नरसिंहासह्यवीर्याहितं मे ॥ १५ ॥ अरिदरमसिखेटौ बाण-  
चापे गदां सन्मुसलमपि कराभ्यामंकुशं पाशवर्यम् । करयुगल-

धृतान्नस्रग्विभिन्नारिवक्षो दह दह नरसिंहासह्यवीर्याहितं मे  
 ॥ १६ ॥ चट चट चट दूरं मोहय भ्रामयारीन् कडि कडि कडि कामं  
 ज्वालय स्फोटयस्व । जहि जहि जहि वेगं शात्रवं सानुबन्धं दह  
 दह नरसिंहासह्यवीर्याहितं मे ॥ १७ ॥ विधिभवविबुधेश-  
 भ्रामकाग्निस्फुलिंगप्रसविविकटदंष्ट्रोज्जिह्ववक्त्र त्रिनेत्र । कल कल  
 कल कामं पाहि मां ते सुभक्तं दह दह नरसिंहासह्यवीर्याहितं मे  
 ॥ १८ ॥ कुरु कुरु करुणांतां सांकुरां दैत्यपोते दिश दिश विशदां  
 मे शाश्वतीं देव दृष्टिम् । जय जय जय मूर्तेऽनार्तं जेतव्यपक्षं  
 दह दह नरसिंहासह्यवीर्याहितं मे ॥ १९ ॥ स्तुतिरियमहितघ्नी  
 सेविता नारसिंही तनुरिव परिशान्ता मालिनी साभितोऽलम् ।  
 तदखिलगुरुमाश्रयश्रीदरूपा लसद्भिः सुनियमनयकृत्यैः सद्गुणैर्नित्य-  
 युक्ता ॥ २० ॥ लिकुचतिलकसूनुः सद्वितार्थानुसारी नरहरि-  
 नुतिमेतां शत्रुसंहारहेतुम् । अकृत सकलपापध्वंसिनीं यः पठेत्तां  
 व्रजति नृहरिलोकं कामलोभाद्यसक्तः ॥ २१ ॥ इति श्रीमत्कवि-  
 कुलतिलक-त्रिविक्रमपंडिताचार्यसुत-श्रीमन्नारायणपंडिताचार्यकृता  
 श्रीनृसिंहस्तुतिः संपूर्णा ॥

### ४४४. करुणालहरी ।

श्रीगणेशाय नमः ॥ विषीदता नाथ विषानलोपमे विषादभूमौ  
 भवसागरे विभो । परं प्रतीकारमपश्यताधुना मयायमात्मा भवते  
 निवेदितः ॥ १ ॥ भवानलज्वालविलुप्तचेतनः शरण्य तेऽङ्घ्रिं शरणं  
 भयादयाम् । विभाव्य भूयोऽपि दयासुधाम्बुधे विधेहि मे नाथ  
 यथा यथेच्छसि ॥ २ ॥ विहाय संसारमहामरुस्थलीमलीकदेहादि-  
 मिलन्मरीचिकाम् । मनोमृगो मे करुणामृताम्बुधे विगाढुमीश

त्वयि गाढमीहते ॥ ३ ॥ त्वदङ्घ्रिफुल्लाम्बुजमध्यनिर्गलन्मरन्द-  
 निःस्यन्दनितान्तलम्पटः । मनोमिलिन्दो मम मुक्तचापलस्त्वदन्य-  
 मीशान तृणाय मन्यते ॥ ४ ॥ जगन्नयत्राणविधौ धृतव्रतं तवाङ्घ्रि-  
 राजीवमपास्य ये जनाः । शरण्यमन्यन्मृगयन्ति यान्ति ते  
 नितान्तमीशान कृतान्तदेहलीम् ॥ ५ ॥ रमासुखाम्भोजविकासन-  
 क्षमो जगन्नयोद्बोधविधानदीक्षितः । कदा मदज्ञानविभावरिं हरे  
 हरिष्यति त्वन्नयनारुणोदयः ॥ ६ ॥ सुरासुरस्वान्तचकोरचुम्बिता  
 समस्तसंतापचयापनोदिनी । महानिशीथे मम मानसे कदा  
 स्फुरिष्यति त्वन्मुखचन्द्रचन्द्रिका ॥ ७ ॥ सुयौवनापाण्डुरगण्ड-  
 मण्डलप्रतिस्फुरत्कुण्डलताण्डवाद्भुतम् । गदाग्रज त्वन्मुखफुल्ल-  
 पङ्कजं कदा मदक्षणोरतिथीभविष्यति ॥ ८ ॥ सुरापगतुङ्गतरङ्ग-  
 चालितां सुरासुरानीकललाटलालिताम् । कदा दधे देव दया-  
 मृतोदधे भवत्पदाम्भोरुहधूलिघोरणीम् ॥ ९ ॥ महाजवाश्छिन्न-  
 विवेकरश्मयो मदोद्धता देव मदक्षवाजिनः । हरे समासाद्य  
 तवाङ्घ्रिमन्दुरामपास्तवेगा दधतां सुशीलताम् ॥ १० ॥ पुरातनानां  
 वचसामगोचरं महेशितारं पुरुषोत्तमं पतिम् । अपास्य तं त्वां  
 निरपत्रपा सती सती मतिर्मे कथमन्यमेष्यति ॥ ११ ॥ न जाग्रता  
 स्वप्नगतेन वा मया समीहितं ते करुणालवाहते । गिरं मदीयां यदि  
 वेत्सि तात्त्विकीं तदा जगन्नायक मामुरीकुरु ॥ १२ ॥ अयि  
 दीनतरं दयानिधे दुरवस्थं सकलैः समुज्झितम् । अधुनापि न मां  
 निभालयन् भजसे हा कथमश्मचित्ताम् ॥ १३ ॥ सुमहन्ति  
 जगन्ति विभ्रतस्तव यो नाविरभून्मनागपि । स कथं परमाप्त-  
 देहिनां परमाणोर्मम धारणे श्रमः ॥ १४ ॥ नितरां विनयेन पृच्छते  
 सुविचार्योत्तरमत्र यच्छ मे । करितो गिरितोऽप्यहं गुरुस्वरितो

नोद्धरसे यदद्य माम् ॥ १५ ॥ न धनं न च राज्यसंपदो नहि  
 विद्यामिदमेकमर्थये । मयि धेहि मनागपि प्रभो करुणाभङ्गि-  
 तरङ्गितां दशम् ॥ १६ ॥ अयमत्यधमोऽपि निर्गुणो दयनीयो भवता  
 दयानिधे । वसतां फणिनां विषानलं किमु नानन्दयिता हि चन्दनः  
 ॥ १७ ॥ क्षुधितस्य नहि त्रपास्ति मे प्रतिरथ्यं प्रतिगृह्यतः कणान् ।  
 अकलङ्क यशस्करं न ते भवदीयोऽपि यदन्यमृच्छति ॥ १८ ॥  
 नितरां नरकेऽपि सीदतः किमु हीनं गलितत्रपस्य मे । भगवन्कुरु  
 सूक्ष्ममीक्षणं परतस्त्वां जनता किमालपेत् ॥ १९ ॥ नरके निज-  
 कर्मकल्पिता भजतो मे महतीरपि व्यथाः । इदमेकमसह्यमीक्षका  
 यदनाथं निगदन्ति मां विभो ॥ २० ॥ भृगदन्तिमुखान्मया सह  
 प्रतिरुद्धान्भवजालबन्धने । तव मामपहाय मुञ्चतः करुणा किं न  
 भिनत्ति मानसम् ॥ २१ ॥ निरुपाधिजनार्तिहारिणं भगवंस्त्वाम-  
 वगत्य तत्त्वतः । कृतपुण्यचयावहेलनं कथमब्जेक्षणं मामुपेक्षसे  
 ॥ २२ ॥ सततं निगमेषु शृण्वता वरद त्वां पतितानुपावनम् ।  
 पुरु पापमुपास्यतेऽनिशं त्वयि विश्वासधिया मया विभो ॥ २३ ॥  
 सुकृतं न कृतं पुरा कदाप्यथ सर्वं कृतमेव दुष्कृतम् । अधुना  
 गलितहिया मया भगवंस्त्वां प्रति किं निगद्यताम् ॥ २४ ॥  
 मदकामविमोहमत्सरा रिपवस्त्वत्पुर एव विह्वलम् । धृतशार्ङ्गगदा-  
 रिनन्दक प्रतिकर्षन्ति कथं न लज्जसे ॥ २५ ॥ अयि गर्तमुखे  
 गतः शिशुः पथिकेनापि निवार्यते जवात् । जनकेन पतन्भवार्णवे  
 न निवार्यो भवता कथं विभो ॥ २६ ॥ सुकृतप्रिय माऽन्यथास्तु  
 ते सुकृतिभ्यः सुखदस्य सुप्रथा । अपि पापमविभ्रतस्तु मां तव  
 विश्वंभरनाम दुर्लभम् ॥ २७ ॥ वचनैः पुरुषैरिह प्रभो यदि रोषं  
 समुपागतोऽसि मे । मुखरं कृतकोटिकल्मषं करुणाब्धे जगतो-



ऽपसारय ॥ २८ ॥ यदि वीक्ष्य ददासि मत्कृतिं न मयैव प्रतिगृह्यते  
 तदा । अथ चेन्नजमाशयं प्रभो परितुष्टः शिरसा वहामि तव  
 ॥ २९ ॥ पतितोऽप्यतिदुर्गतोऽपि सन्नकृतज्ञो निखिलागसां पदम् ।  
 भवदीय इतीरयंस्त्वया दयनीयस्त्रपयैव केवलम् ॥ ३० ॥ सुकृत-  
 प्रकृता जने त्वया कृतया किं कृपया कृपानिधे । यदि मादृशि सा  
 विधीयते तव कीर्तिर्वद कीदृशी तदा ॥ ३१ ॥ अयि शैशव-  
 लालितः शिशुः प्रतिबुद्धो जनकेन ताड्यते । न कदापि च  
 लालितस्त्वया किमु ताड्यो भगवन्कुर्मभिः ॥ ३२ ॥ अहमेव  
 हि दोषदूषितो भगवंस्त्वां समुपालभे मुधा । रमणीविरहज्वर-  
 ज्वलन्नमृतांशुं कुमतिर्विनिन्दति ॥ ३३ ॥ करुणाकर दुर्दशाकुलं  
 पतितालम्बन पापपञ्जरम् । अमृताम्बुनिधे महाज्वरं नहि जह्या  
 जगदीश जातु माम् ॥ ३४ ॥ कटुजल्पनमल्पकस्य मे नहि ते  
 कल्पयतु क्रुधं विभो । कुपितातुरबालभाषितं किमु गृह्णन्ति  
 मनाङ्गहाशयाः ॥ ३५ ॥ भुजगाहितकल्पितध्वजं स्फुरदाशा-  
 भुजगालिवेल्लितम् । जटिलज्वरकुञ्जराङ्कुश ज्वरजुष्टं न जहीहि  
 जातु माम् ॥ ३६ ॥ न वदामि न दुष्कृतं मया कृतमित्युक्तिमिमां  
 तु मे शृणु । मम भीतिमनीनशद्विभो पतितोद्धारक नाम तावकम्  
 ॥ ३७ ॥ अपि शर्वपितामहादिभिर्भजनीयः पुरुषोत्तमो हि यः ।  
 तमुपालभमानमुद्धतं धिगिमं मां धिगिमां धियं मम ॥ ३८ ॥  
 अथ सर्वमिदं मयोज्झितं भवतोऽन्यन्नहि किञ्चिदर्थये । मम मानस-  
 गोचरीभवत्वरविन्दाक्ष तवाद्भुतं वपुः ॥ ३९ ॥ हरिनीलमया-  
 वनीतले वरवृन्दाविपिने विलासिनि । मणिमण्डपमध्यविस्फुर-  
 द्विबुधक्षमारुहमूलमाश्रितम् ॥ ४० ॥ शिखिपिच्छमहामणिस्फुर-

न्मुकुटाकुञ्चितकान्तकुन्तलम् । कमनीयतरालकावलिभ्रमणभ्राजि-  
 ललाटसुन्दरम् ॥ ४१ ॥ शरदिन्दुसहोदराननं दलदम्भोजपलाश-  
 लोचनम् । अरुणाधरकान्तिदन्तुरस्फुटदन्तांशुविकासिताम्बरम्  
 ॥ ४२ ॥ दरपाण्डुरगण्डमण्डलप्रतिसर्पत्कमनीयकुण्डलम् । मणि-  
 मौक्तिकमञ्जुमञ्जरीमहनीयद्युतिरञ्जितश्रुति ॥ ४३ ॥ पृथुवर्तुल-  
 मौक्तिकावलीसुषमावेलितकान्तकन्धरम् । हरिनीलगिरिद्युतिद्रुहा  
 कमलामन्दिरवक्षसाञ्चितम् ॥ ४४ ॥ चरणाब्जनखावलम्बिनीं  
 भुजगाकारभुजान्तरागताम् । निबिडाभ्रमिव क्षणप्रभां बृहदुत्फुल्ल-  
 वनामलस्रजम् ॥ ४५ ॥ मणिकङ्कणकान्तिमांसलं दरफुल्लाम्बुज-  
 सुन्दरद्युति । पतितोद्धरणे दृढव्रतं कमनीयं करयोर्युगं दधत्  
 ॥ ४६ ॥ वररत्नमयाङ्गुलीयकावलिशोभामिलिताङ्गुलीगणैः ।  
 मुहुराकुलितेन वेणुना वशयत्प्राणभृतां मनःश्रुतीः ॥ ४७ ॥  
 उदरद्युतिनिभ्रगोच्छललहरीरूपकरोमराजिकम् । पशुपालविला-  
 सिनीलसन्नयनाकर्षणनाधिनिश्चितम् ॥ ४८ ॥ कनकद्रवगौरमम्बरं  
 दधतोरुद्वितयेन सुन्दरम् । उदयन्मणिनूपुरप्रभासरणिश्रेणिजटा-  
 लजानुक्रमम् ॥ ४९ ॥ अरिगीर्णगजेन्द्रगोपने दधता जाङ्घिकताम-  
 लौकिकीम् । त्रिजगन्महनीयमूर्तिना वरजङ्घायुगलेन शोभितम्  
 ॥ ५० ॥ कुलिशाङ्कुशकम्बुसाम्बुजध्वजचक्राद्यभिरामलक्ष्मणा ।  
 अरुणारुणक्रोमलत्विषा कमनीयेन तलेन राजितम् ॥ ५१ ॥  
 विधिशर्वमुखामरस्फुरन्मुकुटोन्निद्रमणिप्रभाकुलम् । नखचन्द्र-  
 मयूखमूर्च्छिताखिलतापं पदयोर्युगं दधत् ॥ ५२ ॥ सरतः सरणौ  
 सतो बहिः स्वपतो वाऽऽलपतो गृहान्तरे । वपुरीदृशमीश तावर्क  
 हृदयालम्बनमस्तु मे सदा ॥ ५३ ॥ नवनीरदनीलि-  
 मद्युतिर्नमनीयो निगमैर्निरन्तरम् । निरये निपतन्तमाशु मां

नयनेनापि सनाथयेद्विभुः ॥ ५४ ॥ प्रणिपत्य हरे भवन्तमद्धा  
विनिबद्धाञ्जलिरैकमेव याचे । जनुरस्तु कुले कृषीवलानामपि  
गोविन्दपदारविन्दभावः ॥ ५५ ॥ वाचा निर्मलया सुधामधुरया  
यां नाथ शिक्षामदास्तां स्वप्नेऽपि न संस्वराभ्यहमहंभावावृतो  
निस्त्रपः । इत्यागःशतशालिनं पुनरपि स्वीयेषु मा बिभ्रतस्त्वत्तो  
नास्ति दयानिधिर्यदुपते मत्तो न मत्तः परः ॥ ५६ ॥ पातालं  
व्रज याहि वा सुरपुरीमारोह मेरोः शिरः पारावारपरम्परां तर  
तथाप्याशा न शान्ता तव । आधिग्याधिजरापराहत यदि क्षेमं  
निजं वान्छसि श्रीकृष्णेति रसायनं रसय रे शून्यैः किमन्यैः श्रमैः  
॥ ५७ ॥ वज्रं पापमहीभृतां भवगदोद्रेकस्य सिद्धौषधं मिथ्या-  
ज्ञाननिशाविशालतमसस्तिग्मांशुबिम्बोदयः । क्रूरक्लेशमहीरुहा-  
मुरुतरज्वालाजटालः शिखी द्वारं निर्वृत्तिसन्नो विजयते कृष्णेति  
वर्णद्वयम् ॥ ५८ ॥ विशालविषयाटवीवलयलम्नदावानलप्रसृत्वर-  
शिखावलीविकलितं मदीयं मनः । अमन्दमिलदिन्दिरे निखिल-  
माधुरीमन्दिरे मुकुन्दमुखचन्दिरे चिरमिदं चकोरायताम् ॥ ५९ ॥  
सुरस्रोतस्विन्याः पुलिनमधितिष्ठन्नयनयोर्विधायान्तर्मुद्रामथ सपदि  
विद्राव्य विषयान् । विधूतान्तर्ध्वान्तो मधुरमधुरायां चिति कदा  
निमग्नः स्यां कस्यांचन नवनभस्याम्बुदरुचि ॥ ६० ॥ इति  
पण्डितराजश्रीजगन्नाथविरचिता करुणालहरी संपूर्णा ॥

### ४४५. शान्तिपाठः ।

ॐ यो ब्रह्माणं विदधाति पूर्वं यो वै वेदांश्च ग्रहिणोति तस्मै ।  
तं ह देवमात्मबुद्धिप्रकाशं मुमुक्षुर्वै शरणमहं प्रपद्ये ॥ १ ॥  
ॐ आप्यायन्तु ममाङ्गानि वाक् प्राणश्चक्षुः श्रोत्रमथो बलमिन्द्र-

याणि च । सर्वाणि सर्वं ब्रह्मोपनिषदं माहं ब्रह्म निराकुर्यां मा मा  
 ब्रह्म निराकरोदनिराकरणमस्त्वनिराकरणं मे अस्तु । तदात्मनि निरते  
 य उपनिषत्सु धर्मास्ते मयि सन्तु ते मयि सन्तु ॥ २ ॥ ॐ पूर्ण-  
 मदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुदच्यते । पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवाव-  
 शिष्यते ॥ ३ ॥ ॐ भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्ष-  
 भिर्यजत्राः । स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवांसस्तनूभिर्व्यशेम देवहितं यदायुः  
 ॥ ४ ॥ ॐ शं नो मित्रः शं वरुणः । शं नो भवत्वर्थमा । शं न  
 इन्द्रो बृहस्पतिः । शं नो विष्णुरुक्रमः । नमो ब्रह्मणे ।  
 नमस्ते वायो । त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मासि । त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्म  
 वदिष्यामि । ऋतं वदिष्यामि । सत्यं वदिष्यामि । तन्मामवतु ।  
 तद्वक्तारमवतु । अवतु माम् । अवतु वक्तारम् ॥ ५ ॥

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥

इति शान्तिपाठः संपूर्णः ॥

